MAED-03

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

शिक्षा में अनुसंधान पद्धतियाँ
Research Methods in Education

MAED-03

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

शिक्षा में अनुसंधान पद्धतियाँ
Research Methods in Education

पाठ्यक्रम अभिकल्प समिति

अध्यक्ष

प्रो. (डॉ.) नरेश दाधीच
कुलपति
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राजस्थान)

संयोजक / सदस्य

संयोजक

डॉ. दामीना चौधरी
सहआचार्य, शिक्षा
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)

सदस्य

1. **प्रो. सोहन वीर सिंह चौधरी**
   इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
   नई दिल्ली
2. **डॉ. अनिल शुक्ला**
   लखनऊ विश्वविद्यालय,
   लखनऊ (उ.प्र.)
3. **प्रो. मंजूलिका श्रीवास्तव**
   दूरस्थ शिक्षा परिषद
   इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
   नई दिल्ली
4. **प्रो. डी.आर. गोयल**
   एम.एस. विश्वविद्यालय
   बड़ौदा, गुजरात
5. **प्रो. एस.पी. मल्होत्रा**
   कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र

संपादन तथा पाठ लेखन

संपादक मंडल

1. **प्रो. (डॉ.) एस.पी. मल्होत्रा**
   आचार्य, शिक्षा
   कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र
2. **डॉ. विजय लक्ष्मी शर्मा**
   प्राचार्य
   श्री स्वरूप गोविन्द पारीक स्नातकोत्तर शिक्षा महाविद्यालय, जयपुर
3. **डॉ. राजपाल सिंह**
   प्रोफेसर व अधिष्ठाता (सेवानिवृत्त)शिक्षा संकाय
   वनस्थली विद्यापीठ, टोंक
4. **डॉ. दामीना चौधरी**
   सह आचार्य, शिक्षा
   वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)

लेखक

1. **प्रो. वाई.पी. अग्रवाल**
2. **डॉ. एच.सी. सिन्हा**
3. **डॉ. सरोज सक्सेना**
4. **डॉ. जे.एस. नेगी**
5. **डॉ. एम.एल. गुप्ता**
6. **डॉ. वाई.के. गुप्ता**
7. **डॉ. एम.एल. गुप्ता**
8. **डॉ. वी.एम. गुप्ता**
9. **डॉ. आर.एम. खण्डेलवाल**
10. **डॉ. वी.एल. गुप्ता**
11. **डॉ. वी.के. डंगाचय**
12. **डॉ. सरोजिनी उपाध्याय**

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

प्रो. नरेश दाधीच	**प्रो. अनाम जैतली**	**प्रो. पी.के. शर्मा**
कुलपति	निदेशक	प्रभारी
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	**संकाय विभाग**	**पाठ्य सामग्री उत्पादन एवं वितरण विभाग**

पाठ्यक्रम उत्पादन

योगेन्द्र गोयल
सहायक उत्पादन अधिकारी,
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

उत्पादन : जनवरी, 2008

इस सामग्री के किसी भी अंश को व. म. खु. वि., कोटा की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप मे 'मिमियोग्राफी' (चक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यत्र पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

व. म. खु. वि., कोटा के लिये कुलसचिव व. म. खु. वि., कोटा (राज.) द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित।

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)

अनुक्रमणिका

इकाई		पृष्ठ संख्या
1.	शैक्षिक अनुसंधान- अर्थ, विषय परिधि एवं महत्व	7
2.	शैक्षिक अनुसंधान : लक्ष्य/वैशिष्ट्य, बाधाएं, सीमाएं, नैतिक आधार व स्तर	24
3.	शैक्षिक शोध के क्षेत्र(1)	46
4.	शैक्षिक शोध के क्षेत्र(2)	69
5.	शिक्षा अनुसंधान के राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में वरीयता के क्षेत्र	86
6.	शोध समस्या - चयन और निर्माण	104
7.	प्राक्कल्पना	116
8.	दत्त- आवश्यकता, महत्व और प्रकार	126
9.	उपकरण व प्रविधियां	133
10.	मनोवैज्ञानिक, शैक्षिक व समाजमिति परीक्षण तथा उचित परीक्षण का चयन	152
11.	प्रतिचयन या न्यदर्श का महत्व, विधियां आकार व प्रतिचयन की त्रुटियां	171
12.	ऐतिहासिक अनुसंधान उपागम - अर्थ, आवश्यकता प्रक्रिया सोपान विशेषताएं एवं सीमाएं	182
13.	दार्शनिक उपागम - अर्थ, आवश्यकता, प्रक्रिया, सोपान, विशेषताएं एवं सीमाएं	200
14.	वर्णनात्मक अनुसन्धान उपागम - अर्थ, आवश्यकता, प्रक्रिया, सोपान, विशेषताएं एवं सीमाएं	215
15.	प्रयोगात्मक उपागम	237
16.	क्रियात्मक अनुसंधान	250
17.	दत्त की रेखाचित्रीय प्रस्तुति	264
18.	केन्द्रीय प्रवृत्तियों का मापन	274
19.	विचलनशीलता के माप	292
20.	सापेक्ष स्थानिक माप	311
21.	द्विपद एवं प्रसामान्य बण्टन	320
22.	प्राचलिक सांख्यिकी	332
23.	प्रसरण विश्लेषण	348
24.	सह-सम्बन्ध	356
25.	प्रतीपगमन विश्लेषण एवं पूर्वानुमान	367
26.	अप्राचलिक सांख्यिकी	375
27.	काई वर्ग मध्यांक तथा चिन्ह परीक्षण	386
28.	कम्प्यूटर, उसका महत्व व प्रयोग, आकड़ों के विश्लेषण मे कम्प्यूटर का स्थान	395
29.	सामान्यीकरण - अर्थ, आधार औचित्य और निहितार्थ	405
30.	अनुसंधान प्रायोजना	416
31.	शोध प्रबन्ध	432

शैक्षिक शोध पद्धति, कोटा खुला विश्वविद्यालय, कोटा
शैक्षिक अनुसंधान

प्रस्तावना :

प्रस्तुत पुस्तक शोध का अर्थ, शोध समस्या की परिभाषा एवं शोध समस्या के चयन के आधार तथा समस्या को परिभाषित करने की विधि इत्यादि का वर्णन है ।

साधारण रूप से शैक्षिक अनुसंधान की समस्याएँ शैक्षणिक संस्थाओं एवं उनकी व्यवस्थाओं तथा कार्यकर्ताओं से संबंधित होती है । इसलिए शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षा की जनसंख्या क्या होगी वह भी इन इकाईयों के माध्यम से प्रस्तुत की गई है ।

जनसंख्या में किसी गुण की वस्तुस्थिति का अध्ययन न्यादर्श के माध्यम से किया जाता है । इस पुस्तक में न्यादर्श चयन की विधियाँ, सांख्यिकी से संबंधित उल्लेख, अप्राचलिक तथा प्राचलिक सांख्यिकी का उल्लेख किया गया है ।

शोध की विधि साधारणतया शोध के उद्देश्यों एवं काल पर निर्भर करती है । यदि अतीत के बारे में जानना चाहते है तो ऐतिहासिक अनुसंधान विधि और वर्तमान स्थिति को जानना चाहते हैं तो सर्वेक्षण विधि का उपयोग किया गया है । इसी तरह अनुसंधान की अनेक विधियों का उपयोग किया गया है । मापन एवं अंकन हेतु मापन यंत्र, उपकरण एवं विधियों का प्रस्तुतिकरण किया गया है । आकड़ों को एकत्रित करने के पश्चात् उनके वितरण के आधार पर सांख्यिकी के उपयोग का उल्लेख किया गया गुणों के मध्य सहसंबंध या अन्य प्रकार के संबंधों को जानने के लिए अन्य सांख्यिकी विधियों का उल्लेख है ।

शोध की रूपरेखा तैयार करना एवं शोध के पश्चात् शोध प्रबन्ध लेखन का भी उल्लेख किया गया है ।

इकाई-1

शैक्षिक अनुसंधान - अर्थ, विषय परिधि एवं महत्व (Meaning, Scope, Need and Importance of Educational Research)

1.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

1.1 शैक्षिक अनुसंधान-परिचय एवं अर्थ (Educational research : Introduction & Meaning)

1.1.2 अनुसंधान की परिभाषाएँ (Definitions of Research)

1.1.3 परिभाषाओं की समीक्षा-वैज्ञानिकता के संदर्भ में (Criticism of Definitions -with reference to Scientific Criteria)

1.1.4 अनुसंधान-शिक्षा के संदर्भ में (Research-with reference to Education)

1.2 शैक्षिक अनुसंधान की विषय परिधि (Content area of Educational Research)

1.2.1 विषय परिधि का विवेचन (Discussion of subject/content area)

1.2.2 शिक्षार्थी (Learner)

1.2.3 शिक्षक (Teacher)

1.2.4 विषय वस्तु/शिक्षण सामग्री (Subject matter teaching material)

1.2.5 शिक्षण विधि (Teaching method)

1.2.6 शिक्षणालय-शैक्षिक, सहशैक्षिक क्रियाकलाप (Educational institution-Educational, Co-educational Activity)

1.3 शैक्षिक अनुसंधान की आवश्यकता एवं महत्व (Need and Importance of Educational Research)

1.4 स्वमूल्यांकन (Self-Assessment)

1.5 संदर्भ ग्रन्थ (References)

1.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aim and Objectives)

इस इकाई को सम्पन्न करने तथा अध्ययन करने के पश्चात् आप को इस योग्य होना चाहिये कि आप -

– "अनुसंधान' ' शब्द का अर्थ एवं प्रक्रिया से परिचित होकर विभिन्न परिभाषाओं की समीक्षा तक अध्ययन कर सकने में समर्थ हो सकें ।

- शिक्षा के संदर्भ में ' 'अनुसंधान' ' शब्द का अर्थ समझ सकें तथा शैक्षिक अनुसंधान के विभिन्न उद्देश्यों एवं लक्ष्यों की जानकारी कर सकें ।
- शैक्षिक अनुसंधान हेतु शिक्षा की विषय परिधि का विवेचन एवं वर्गीकरण के विभिन्न आधारों से परिचित हो सकें ।
- शैक्षिक अनुसंधान की ' 'अन्तर्संकायी प्रवृत्ति' ' होने के कारण इतिहास, दर्शन, मनोविज्ञान, समाजशास्त्रीय, वरीयतम विषयमत क्षेत्र से परिचित हो सके ।
- शैक्षिक अनुसंधान के प्रत्यक्ष वरीयतम क्षेत्र तथा पाठ्यक्रम-पाठ्यपुस्तकों, शिक्षण विधियों, शैक्षिक नियोजन एवं प्रशासन तथा शैक्षिक वित्त प्रबन्ध से सम्बन्धित शोध कार्य किये जाने हेतु विभिन्न वरीयतम सूचना से परिचित हो सके ।
- शिक्षा के नवीनतम आवश्यकता आधारित शोध क्षेत्र यथा शैक्षिक मापन एवं मूल्यांकन शैक्षिक-प्रौद्योगिकी, निर्देशन एवं परामर्श तथा शिक्षक-शिक्षा पूर्व एवं सेवारत वरीयतम शैक्षिक-अनुसंधान के विषय क्षेत्र एवं सम्बन्धित शोध करने की योग्यता, समस्याओं से जानकारी प्राप्त कर सके ।
- शैक्षिक-अनुसंधान की आवश्यकता एवं उसके महत्व का निम्न के संदर्भ में अध्ययन कर सकें समझ सके तथा विवेचना कर सकें-
  (अ) शिक्षालय एवं कक्षा का वातावरण लेकिन विभिन्नताओं से युक्त शिक्षार्थीगण ।
  (ब) शिक्षा की विभिन्न स्तरीय पुन: रचना हेतु अनुसंधान कार्य आवश्यक ।
  (स) औद्योगिक प्रगति के संदर्भ में शैक्षिक प्रगति एवं शिक्षा शोध आवश्यक ।
  (द) शैक्षिक अनुसंधान - केवल शिक्षा विशेषज्ञ का कार्य नहीं वरन् शिक्षकवर्ग का भी ।
  (य) शैक्षिक अनुसंधान का संबंध गवेषणा एवं सिद्धान्त प्रतिपादन तथा अनुसंधानकर्ता का दायित्व ।

1.1 शैक्षिक अनुसंधान-परिचय एवं अर्थ(Research Methodology-Introduction and Meaning)

1.1.1 परिचय - सृष्टि के प्रारम्भ से ही जब मानव पृथ्वी के पटल पर उदय हुआ, जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उसकी प्रभावी भूमिका एक अन्वेषी के रूप में रही, क्योंकि भगवान की सर्वोतम कृतियों में मानव का उद्भव उसकी सर्वोतम कृति थी । एक कृति जो जीवन्त थी, विचारवान थी तथा निरन्तर अपनी वर्तमान परिस्थितियों में कुछ न कुछ परिवर्तन की सोचा करती थी । उसका जिज्ञासा आधारित यह स्वभाव निरन्तर ज्ञानार्जन के लिए नये-नये अन्वेषण करने में संलग्न रहता था, नये-नये अभिवन एवं आयाम की खोज किया करता था, नित-नवीनतम ज्ञान एवं अनुभव प्राप्त करने की उसकी जिज्ञासा बनी रहती थी । कहने का तात्पर्य है कि अनुसंधान या खोज करने की मानवीय प्रवृत्ति अति प्राचीन एवं सृष्टि के प्रारम्भ से ही है।

अनुसंधान का अर्थ (Meaning of Research)- शोध, खोज, अनुसंधान, अन्वेषण एवं गवेषण आदि सभी शब्द शर्मा (1990) के अनुसार हिन्दी भाषा के पर्यायवाची शब्द है जिसे

आंग्ल भाषा में रिसर्च (Research) कहा जाता है । फ्रैंच शब्द सर्चियर (Cerchier) शब्द से इस मूल शब्द की उत्पत्ति हुई हैं । जिसका अर्थ है 'अधिक' ' सुनिश्चित होने के लिए पुन: खोजना । कभी-कभी जनसामान्य व्यक्ति, जो समस्याओं, जटिलताओं के बारे में अधिक चिन्तित नहीं होते हैं, को काई भी समस्या प्रतीत नहीं होती है । "सबसे भले वे मूढ़ जिन्हें नव्यापति जगति गति" । ऐसे लोग "प्रोब्लम-ब्लाइण्ड" हो जाते है जिन्हें निरन्तर 'स्व-पूर्णता' ही दृष्टिगोचर होती है । लेकिन फिर जैसे-जैसे वे ज्ञान के अगाध समुद्र में निरन्तर अवगाहन करते चले जाते है तो अनुभव करने लग जाते हैं कि उनके क्षेत्र में भी अनगिनत समस्याएँ है जो उनके द्वारा हल किये जाने या समाधान खोजे जाने के लिए उन जैसे जिज्ञासुओं की प्रतीक्षारत है । संक्षेप में अनुसंधान के अंतर्गत उन प्रश्नों, जिज्ञासाओं के हल खोजे जाने का प्रयास किया जाता है जिनका समाधान सम्बन्धित साहित्य में उपलब्ध नहीं या फिर ज्ञान के गर्त में इतना पड़ा है जिसकी खोज की जानी आवश्यक है ।

अनुसंधान-एक व्यवस्थित प्रक्रिया ((Research-A Planned Process) - अनुसंधान को एक व्यवस्थित प्रक्रिया कहा गया है, जो पूर्णरूपेण सुनियोजित है । जिसके द्वारा नवीन ज्ञान की खोज की जाती है, ज्वलन्त समस्याओं के हल खोजे जाते है तथा उन हल एवं समाधान को विधिवत प्रस्तुत किया जाता है । उन्हीं समाधान, नवीन खोजे गये ज्ञान के आधार पर विभिन्न विचारों, तथ्यों, संप्रतत्यों की नवीन विवेचना की जाती है । अंग्रेजी शब्द (research) रिसर्च का शाब्दिक अनुवाद है - पुन: अन्वेषण करना, खोजना, नवीन-नवीन तथ्यों की जानकारी देना । इसीलिए कहा जाता है कि शोध या अनुसंधान की कार्य प्रक्रिया निरन्तर जारी रहती है । शोध ज्ञान किसी भी एक सीमा तक पहुँच कर रूक नहीं जाता है, आगे बढ़ता ही जाता है । यद्यपि विज्ञान के सिद्धान्त तो शाश्वत हैं ही लेकिन उनका प्रतिपादन (Interpretation) तो निरन्तर होता ही रहता है ।

1.1.2 अनुसंधान की परिभाषाएँ (Definition of Research)-

अनुसंधान के क्षेत्र में इसकी अनेक परिभाषाएँ उपलब्ध है जिनमें से कुछ को यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है जिनसे "अनुसंधान' ' शब्द का अर्थ पूर्णरूपेण प्रक्रिया के रूप में स्पष्ट होता है ।

जान डब्ल्यू वैस्ट के अनुसार - अनुसंधान एक अधिक औपचारिक, क्रमिक एवं सघन प्रक्रिया है जिसमें वैज्ञानिक विधि के माध्यम से विश्लेषण को प्रयुक्त किया जाता है । इसमें अनुसंधान की व्यवस्थित संरचना को समाहित किया जाता है जिसके फलस्वरूप निष्कर्ष निकाले जाते है । परिणामत: औपचारिक अभिलेख तैयार किये जाता है ।

" Research is considered to be the more formal, systematic intensive process of carrying on the scientific method of analysis. It involves a more systematic pattern of investigation, usually resulting in more sort of formal record of procedures and a report of results and conclusions."

(John W. Best (1963)

करलिंगर अनुसंधान की परिभाषा में वैज्ञानिक विधि का प्रयोग कर रहे हैं - वैज्ञानिक अनुसंधान एक ऐसा व्यवस्थित, नियंत्रित, आनुभाविक तथा समालोचनात्मक अन्वेषण है जिससे प्राकृतिक घटनाओं में व्याप्त अनुमानित सम्बन्धों का अध्ययन परिकल्पनात्मक तर्क वाक्यों द्वारा किया जाता है ।

"Scientific research is systematic, controlled and critical investigation of hypothetical propositions about the presumed relations of any natural phenomenon."

F N Karlinger (1983)

जीजे मुले ने भी अनुसंधान की परिभाषा में वैज्ञानिकता को प्रतिस्थापित करते हुए विवेचित किया है - "शैक्षिक समस्याओं के समाधान के लिए व्यवस्थित रूप में विद्धतापूर्ण ढंग से वैज्ञानिक विधि के प्रयोग एवं विवेचना को ही अनुसंधान कहते है ।

"Systematic and scholarly applications of the scientific method interpreted in broader sense to the solution of educational problems".

G.J. Moule (1970)

पी.वी. यंग इसी कारण शोध को अन्वेषण से जोड़ते हुए कहते हैं कि अनुसंधान एक ऐसी "व्यवस्थित विधि है जिसके द्वारा नवीन तथ्यों की खोज की जाती है तथा प्राचीन तथ्यों की पुन: पुष्टि की जाती है" ।

"A systematic and refined technique of discovering new facts or verifying old facts".

P.V. Young (1956)

पी.एम. कुक अनुसंधान को परिभाषित करते हुए कहते है "यह किसी समस्या के प्रति ईमानदारी एवं व्यापक रूप में बुद्धिमत्ता से की गई खोज है जिसमें तथ्यों एवं सिद्धान्तों की विवेचना एवं अर्थ समाहित रहते है" ।

"An honest, exhaustive, scarching for the factors and their meaning with reference to a problem".

P.M. Cook (1975)

1.1.3 परिभाषाओं की समीक्षा-वैज्ञानिकता के संदर्भ में (Criticism of Definition-with reference to scientific term)- अनुसंधान शब्द की व्याख्या करने में सभी विद्वान इस बिन्दु पर तो एकमत है कि अनुसंधान में क्रमिकता तर्क सम्पतता; सघनता, अभिनवता, उद्देश्यपरकता के साथ-साथ वैज्ञानिकता भी समाहित है । जहां ईमानदारी के साथ सही एवं शुद्ध अन्वेषण किया जाता है तथा विज्ञान के सिद्धान्तों का प्रतिपादन एवं पुन: प्रतिपादन किया जाता है । अनुसंधान में सतर्कता से घटनाओं का अध्ययन किया जाता है, उनका विवेचन एवं वर्णन किया जाता है, उनके बारे में पूर्व कथन किया जाता है तथा सत्य परीक्षण पर आधारित तार्किक विश्लेषण किया जाता है । इसलिए वैज्ञानिक अर्थ में अनुसंधान प्राकृतिक प्रत्ययों (Natural

Phenomenon) में अनुमानित संबंधों में परिकाल्पनिक कथन की नियमित, नियंत्रित, अवलोकित एवं तार्किक खोज है ।

1.1.4 अनुसंधान-शिक्षा के संदर्भ में (Research-In references of education)- शैक्षिक अनुसंधान शैक्षिक पर्यावरण एवं परिस्थितियों में किया जाने वाला अभिनव, उद्देश्यपरक, क्रमिक एवं वैज्ञानिक अध्ययन है जो शिक्षा के क्षेत्र में प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से कार्यरत अध्यापक, प्रशासक, छात्र एवं शिक्षाशास्त्रीय मनोवैज्ञानिकगण शोधार्थियों तथा अन्य शिक्षा में रूचि रखने वाले विद्वानों द्वारा सम्पन्न किया जाता है । इस अनुसंधान का प्रमुख उद्देश्य होता है । शिक्षा क्षेत्र के विभिन्न पक्षों शैक्षिक संस्था, शिक्षा समस्या, पाठ्यक्रम, शिक्षण विधियों, मूल्यांकन प्रविधियों केनियोजन निर्माण, क्रियान्वयन एवं विभिन्न पक्षीय समस्याओं के समाधान में वैज्ञानिक अनुसंधान के मुख्य सिद्धान्तों का प्रयोग एवं परिपालन हो । शैक्षिक अनुसंधान का मुख्य कार्य अपने क्षेत्र में सुधार लाना है । शैक्षिक अनुसंधान नितान्त सैद्धान्तिक भी हो सकता है तथा औषधि विज्ञान की भांति व्यवहृत (Applied) भी, क्योंकि यह प्रमुख रूप से मानवीय क्रियाओं का क्षेत्र ही होता है । शैक्षिक अनुसंधान के प्रमुख लक्ष्य अथवा उद्देश्य निम्न रूप से विवेचित किये जा सकते है -

(1) शिक्षा के क्षेत्र में नवीन सिद्धान्तों, तथ्यों की खोज करके सत्य का प्रतिपादन करना एवं नवीन ज्ञान की खोज करना ।

(2) नवीन सिद्धान्तों के प्रतिपादन के साथ-साथ उनकी व्यावहारिक उपयोगिता सुनिश्चित करना ।

(3) शिक्षण सिद्धान्तों एवं अधिनियमों के प्रतिपादन के पश्चात् अभिप्रेरणा पुनर्बलन, अधिगम जैसे विभिन्न क्षेत्रों में प्रभावी एवं उपयुक्त शैक्षिक एवं सामाजिक वातावरण की खोज करना तथा शिक्षण प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाना ।

1.2 शैक्षिक अनुसंधान की विषय-परिधि (Subject area of educational research)

शैक्षिक अनुसंधान का अर्थ, परिचय, परिभाषाओं की व्याख्या एवं विश्लेषण से यह तो स्पष्ट है ही कि शिक्षा के क्षेत्र में सम्पादित किये जाने वाले अनुसंधान का लक्ष्य विभिन्न स्तरीय एवं विभिन्न वर्गीय समस्याओं से जुड़ा रहता है जिन से संबंधित विभिन्न सम्प्रत्ययों, नियमों एवं सिद्धान्तों का गहन अध्ययन किया जाता है, कार्यकारी संबंध निर्धारित किये जाते है, उनकी विवेचना की जाती है, निहित संबंध एवं प्रभाव का अध्ययन किया जाता है तथा आधारभूत पूर्व कथन भी किये जाते है । अत: किसी शैक्षिक समस्या पर अनुसंधान करने हेतु मन बनाने से पूर्व यह आवश्यक है कि "शैक्षिक अनुसंधान की विषय-परिधि" का गहन अध्ययन किया जाये ।

1.2.1 विषय परिधि विवेचन (Description of Subject Area)- विभिन्न शिक्षा शोध विशेषज्ञों ने अनुसंधान की विषय परिधि की विवेचना की है । ट्रेवर्स (1958) शिक्षा के क्षेत्र में मानव व्यवहार संबंधी सिद्धान्तों-नियमों की खोज, विवेचना एवं आधारित पूर्व कथन प्रक्रिया

को ही अध्ययन की विषय वस्तु मानते हैं । वेस्ट (1963) शैक्षिक अनुसंधान की विषय परिधि में सीखने-सिखाने के प्रक्रम एवं परिस्थितियों की खोज, विवेचना एवं संचालन को ही रखने का प्रभार करते. है । गुड-स्केट्स (1954) शैक्षिक अनुसंधान के विषय क्षेत्र परिधि में शिक्षार्थी, शिक्षक-विषय वस्तु एवं संबंधित शैक्षिक वातावरण को समाहित करते हैं । जिसमें मानव-कल्याण की परिकल्पना को साकार किया जा सके । विहटनी (1961) का मत है कि ज्वलन्त समस्याओं को खोज एवं उन पर कार्य करते के लिए शैक्षिक अनुसंधान के विषय क्षेत्र की विस्तार से व्याख्या की जानी आवश्यक हैं विद्वानों के मतानुसार निम्न को शैक्षिक अनुसंधान की परिधि में रखा जा सकता है।

(1) शिक्षार्थी
(2) शिक्षक
(3) विषय वस्तु/शिक्षण सामग्री
(4) शिक्षण विधि
(5) शिक्षणालय
(6) संपूर्ण वातावरण जहां शिक्षा के विभिन्न रूप निहित रहते है ।

1.2.2 शिक्षार्थी (Learner) - शैक्षिक अनुसंधान ही विषय परिधि का सबसे प्रमुख तत्व हैं ' शिक्षार्थी' जो किसी भी स्तर का हो, किसी भी वर्ग का हो, किसी भी आयु का हो तथा किसी भी सामाजिक सांस्कृतिक परिवेश से संबंधित हों उसका भलीभाँति अध्ययन किया जाना शिक्षा बोधका एक वरीयतम लक्ष्य है । किसी भी स्तर पर शिक्षार्थी को प्रदान की जाने वाली विषय वस्तु के समग्र अध्ययन किये जाने के साथ-साथ वरीयतम विषय वस्तु है । शिक्षार्थी का गहन रूप से अध्ययन किया जाना । शिक्षार्थी की रूचियों, कुशलताओं, उपलब्धियों, बौद्धिक योग्यताओं, उसकी पारिवारिक स्थिति एवं परिवार के अभिव्यक्त मूल्यों का अध्ययन पिछले दो दशकों में शोध के महत्वपूर्ण विषय बिन्दू रहे है । आत्म-प्रत्यय, समायोजन, व्यक्तित्व की विभिन्न विशेषताओं को शिक्षार्थी की रूचियों, प्रेरणाओं, आकांक्षाओं मूल्यों, शैक्षिक एवं व्यावसायिक उपलब्धियों के संदर्भ में अध्ययन किया जा चुका है । शिक्षा-मनोविज्ञान निर्देशन एवं परामर्श से संबंधित शोध कार्य में उपर्युक्त वर्णित बिन्दुओं का अध्ययन किया गया है । 1950 से लेकर 1975 तक 25 वर्ष के अन्तराल में शिक्षा मनोविज्ञान अथवा मनो सामाजिक शैक्षिक अध्ययन के अन्तर्गत अनेक "मनोवैज्ञानिक उपकरणो' का निर्माण हुआ है अथवा पाश्चात्य उपकरणों को भारतीय आवश्यकता एवं परिवेश के अनुसार माननीकृत किया गया है ।

शिक्षा, शिक्षण एवं मनोविज्ञान के क्षेत्र में शिक्षार्थी वर्ग की अधिगम प्रक्रिया संबंधित कक्षीय वातावरण के निर्माण पर भी शोध कार्य अथवा प्रायोजनाएं किसी न किसी रूप से सम्पादित की जा रही है । इन परियोजनाओं के निर्माण, क्रियान्वयन एवं मूल्यांकन में "अन्तर्संकायी कार्य विधि एवं उपागम" स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है । समाज के अपेक्षित-पिछडे रूढियों में पले जातिगत परिवारों के बच्चों की सामान्य आकांक्षाओं, अभिलाषाओं, बौद्धिक स्तर, प्रेरणाओं का अध्ययन किया जाना वर्तमान की महती शोध आवश्यकता है । शासन द्वारा प्रदान की जाने वाली विभिन्न सुविधाओं का इन जातियों एवं जन जातियों को विभिन्न आयु एवं

शैक्षिक स्तर के छात्रगण क्यों लाभ नहीं उठा पा रहे है यह शोध का प्रमुख विषय है । शिक्षा नियोजन. प्रशासक एवं शिक्षाशास्त्री बहुत चिन्तित है कि 'अनौपचारिक शिक्षा योजना' को लागू हूए इतने वर्ष हो चुके है - प्रौढ शिक्षा योजना इतने जोर शोर से लागू की जा रही है लेकिन चिन्ता का विषय है कि हम अभी तक "अनौपचारिक शिक्षा' एवं 'प्रौढ शिक्षा' केन्द्रों को शिक्षावर्ग के लिए अनुकूल नहीं बना पाये है । संभवत: इसका कारण हो सकता है कि हमारा शिक्षार्थीवर्ग की उपेक्षित आवश्यकताओं के खोजे जाने पर ध्यान ही न गया हो । शिक्षार्थीवर्ग की शैक्षिक-सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं, उत्प्रेरणाओं एवं रूचियों को वैज्ञानिक रूप से स्थानीय परिवेश में अध्ययन किया जाना अनुसंधान का विषय रहा है ।

अत: शैक्षिक अनुसंधान के विषय क्षेत्र का प्रथम वरीयतम विषय बिन्दु है । शिक्षार्थी का वैज्ञानिक अध्ययन, समग्रता-गहनता एवं निरन्तरता एवं वस्तुनिष्ठता के आधार पर । साथ ही विशेष रूप से पिछडे परम्परागत रूढिगत निर्धन परिवारों के अशिक्षित शिक्षणार्थीगण जो किसी भी स्तर आयु वर्ग अथवा शहरी/ ग्रामीण अंचल से संबंधित हो उनकी मानसिकता, दृष्टिकोण, बौद्धिक स्तर, रूचियों, आकांक्षाओं का अध्ययन किया जाना शोध का वरीयतम विषय क्षेत्र है ।

1.2.3 शिक्षक (Teacher)- शिक्षार्थी के पश्चात् दूसरा अन्य वरीयतम बिन्दु है। शिक्षक जो शिक्षा के हर स्तर पर शिक्षार्थी को प्रभावी अधिगम के लिए उपयुक्त पर्यावरण के निर्माण में प्रभावी भूमिका निभाता है । प्रभावी शिक्षण से संबंधित अनेक "शिक्षण-अनुदेशन व्यूह रचनाओं का निर्माण करता है तथा अधिगम प्रक्रिया को सरलीकृत करता है । किसी भी शैक्षिक स्तर का शिक्षक या अनुदेशक रहा हो या फिर "शिक्षक-प्रशिक्षक", शैक्षिक अनुसंधान का एक वरीयतम विषय बिन्दु है । जिस पर पर्याप्त शोध किया जा चुका है, किया जा रहा है तथा किया जाता रहेगा । "शिक्षक-शिक्षा' को प्रभावी बनाने, योग्य, मेधावी एवं शिक्षण कौशल में परम्परागत शिक्षक वर्ग की शिक्षा एवं इस से संबंधित विभिन्न अभिनव प्रयोग किये जाने की संस्तुति मुदालियर आयोग (1954) कोठारी आयोग (1966) राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1966 एवं विभिन्न नीति विषयक विभिन्न स्वरूप द्वारा ही जा चुकी है ।

यद्यपि शिक्षा मनोविज्ञान मापन एवं मूल्यांकन की सहायता से शिक्षावर्ग के चयन, प्रशिक्षण किये जाने संबंधित अनेक मनोवैज्ञानिक, उपकरणों पर गहन कार्य हुआ है - शैक्षिक अनुसंधान हेतु शिक्षक अभिरूचि, अभिवृत्ति, अभियोग्यता परीक्षण से संबंधित अनेक वैज्ञानिक उपकरण उपलब्ध है । लेकिन चिन्ता का आज भी विषय है कि हर स्तर पर शिक्षण संस्थाओं के लिए योग्य अध्यापक, अभ्यार्थियों का चुनाव नहीं हो पा रहा है । फिर पूर्व प्रशिक्षण के साथ-साथ शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर सेवारत प्रशिक्षण की आवश्यकता पर बल दिये जाते समय विभिन्न शोध परियोजनाओं के संचालन हेतु उन्हें नियोजित करना होगा । अत: शिक्षक वर्ग के पूर्व ज्ञान एवं सेवारत प्रशिक्षण के क्षेत्र में निम्न अनुसंधान कार्य विषय क्षेत्र को अधिक उपयोगितापरक एवं आवश्यक बनाने में सक्षम होगा -

(1) शिक्षक-शिक्षा के पाठ्यक्रम को वर्तमान शैक्षिक आवश्यकताओं के संदर्भ में नवीनतम बनाने के प्रयास ।

(2) सेवारत शिक्षक-प्रशिक्षण प्रसार का (Education Extension Units/Departments) प्रशिक्षण सामग्री, प्रशिक्षण विधि तथा प्रदत्त विषय वस्तु की दृष्टि से मूल्यांकन ।

(3) सेवारत प्रशिक्षण केन्द्रों की उपयोगिता का अध्ययन करने हेतु प्रभावी अनुमापन कार्यक्रम संचालन ।

(4) शिक्षक वर्ग की सतत् शिक्षा प्रक्रिया (Continuing Education) में आकाशवाणी दूरदर्शन कार्यक्रमों का योगदान ।

(5) पूर्व एवं सेवारत दोनों ही स्तरों पर शिक्षक-शिक्षार्थी अन्त: क्रिया विश्लेषण कार्यक्रम (Interactional Analysis Programme)

(6) उच्चस्तर माध्यमिक स्तरीय शिक्षक-शिक्षा के पाठ्यक्रम को द्विवर्षीय बनाये जाने की संभावनाओं एवं आवश्यकताओं का अध्ययन ।

(7) शिक्षक प्रशिक्षण में निहित नवीन उद्भावनाओं एवं प्रायोजनाओं यथा अवकाशकालीन बी.एड. पाठ्यक्रम, शिक्षक-शिक्षा के लिए खुले विश्वविद्यालय की उपयोगिता का अध्ययन ।

(8) सूक्ष्म शिक्षण प्रक्रिया (Micro Teaching Process) का सेवारत प्रशिक्षण पाठ्यक्रम में उपयोग ।

(9) शिक्षक-शिक्षा हेतु प्रशिक्षणार्थियों के चयन में उनके पूर्व शिक्षण अनुभव को प्रदान किया जाने वाले अधिभार की उपयोगिता ।

1.2.4 बिषय वस्तु/शिक्षा सामग्री (Content/Teaching Material)- अनुसंधान की विषय परिधि का एक प्रमुख विचारणीय घटक है विषय वस्तु या शिक्षा सामग्री, किसी भी शिक्षा के स्तर पर शिक्षार्थी को प्रदान की जाने वाली विषय वस्तु जिसे एक निश्चित समायावधि में शिक्षक को पूरा कराना है तथा जिस पर मूल्यांकन कार्य संपन्न किया जाये । जब तक अनुसंधान आधारित तथ्यों के आधार पर यह न निश्चित हो जाये कि शिक्षक को कक्षा में क्या पढाना नहीं है तब तक शिक्षण विधि के बारे में विचार करना उचित नहीं प्रतीत होता है किसी स्थान कक्षावर्ग विशेष की छात्रगत आवश्यकतानुसार पाठ्यक्रम का चयन विषय वस्तु का स्तरवार क्रमिक निर्धारण, उपर्युक्त पाठ्यपुस्तकों एवं पाठ्य विषय विवरणिकाओं की संरचना एवं उनकी उपयोगिता का मूल्यांकन एवं शोधपरक आवश्यकीय कार्य है । जो शिक्षा शोध की परिधि में आता है ।

प्राथमिक एवं माध्यमिक विद्यालयों के लिए किसी भी बोर्ड द्वारा प्रस्तावित पाठ्यक्रम में प्रस्तुत किये गये परिवर्तनों की वैधता को व्यावहारिक प्रमाणों तथा अनुसंधान द्वारा निरीक्षित किये जाने की आवश्यकता अनुभव होती है । समुदाय एवं व्यक्तियों की न्यूनतम आवश्यकताओं की संतुष्टि हेतु न्यूनतम आवश्यकता पाठ्यक्रम की खोज शिक्षा शोध की एक विशिष्ट परिधि होगी । इसी प्रकार सर्वोत्तम प्रकार की पाठ्यपुस्तकों के बारे में अन्वेषण किया जाना आवश्यक है । प्रचलित पाठ्यपुस्तकों की उपयुक्तता को सम्यक अनुसंधान द्वारा निरीक्षित किये जाने की आवश्यकता भी अनुभव होती है । प्रस्तावित संशोधन का मूल्यांकन करने हेतु पहले कुछ थोड़े से चुने हुए विद्यालयों में आरंभिक परियोजनाओं को लागू करना होगा जिसे प्रायोगिक अनुसंधान कहा जायेगा।

विषय वस्तु या नवीन थोड़े गये विषय बिन्दुओं की उपयुक्तता का मूल्यांकन करने के लिए जो भी प्रायोगिक अनुसंधान किया जायेगा उसके लिए विषय निर्धारित शैक्षिक उद्देश्यों, प्रचलित मान्यताओं एवं धारणाओं को ध्यान में रखना होगा तथा उसके बदलने के साथ-साथ विषय सामग्री के स्वरूप में भी परिवर्तन होता रहेगा तथा परिणामत: विषय वस्तु को समाहित करने वाली पाठ्यपुस्तकें भी बदल जायेगी । उदाहरणार्थ, 1950 से 60 के बीच प्राथमिक स्तरीय पाठ्यपुस्तकों का यदि गहन अध्ययन किया जाये तो यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि विषय वस्तु "गांधीवादी शैक्षिक दर्शन" से प्रभावित है । बेसिक शिक्षा, सिद्धान्तों तथा प्रतिपादकों का दर्शन विषय वस्तु यथा पाठ योजनाओं में समाहित है । डी. राधाकृष्णनन् आयोग की 1948 में प्रस्तुत संस्तुतियों के आधार पर कुछ एक प्रगतिशील विश्वविद्यालयों ने आध्यात्मिक/मूल्य के पाठ्यक्रम, पाठ्यक्रमीय क्रियाकलाप समाहित किये । आयोग की संस्तुतियों के प्रभाव का अध्ययन किया जा सकता है । वर्तमान के संदर्भ में शैक्षिक अनुसंधान के समक्ष एक प्रमुख चुनौती है कि "किस प्रकार भारतीय संस्कृति की मूल्यवान परम्पराओं, शाश्वत मूल्यों, एकता में अनेकता के सिद्धान्तों को विषयगत पाठ्यक्रम में समाहित किया जायें" ।

कोठारी आयोग ने प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर पर विषय वस्तु एवं पाठ्यक्रम को "व्यवसायपरक" व्यावहारिक तथा दैनिक जीवन के क्रियाकलापों तथा रोजगार से जोड़े जाने का सुझाव दिया। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 तथा उससे संबंधित निरंतर संशोधित परिशोधित दस्तावेज जो पूर्णत: नवीनतम अर्थात् 1992 का है निरन्तर पाठ्यक्रमीय क्रियाकलापों को रोजगारपरक एवं व्यवहारिक बनाने का सुझाव दे रहे है । शिक्षा को सीधे रोजगार और वह भी स्वत: रोजगार नियोजन (Self-Employment Opportunities) अवसरों से जोडने की सिफारिश कर रहे है। ऐसी परिस्थिति में सभी स्तरों पर विषय वस्तु को रोजगारपरक. शिक्षार्थी को पाठ्य-पाठन के मध्य अपने संबंधित पेशे के बारे में निरन्तर चिन्तित होने, पेशे या जीवनवृत्ति के बारे में अपने शैक्षिक क्रियाओं को प्रारम्भ से ही नियोजन करने के साथ-साथ शिक्षार्थीवर्ग को अपनी पेशा चेतना (Career Consciousness) जीवनवृत्ति के प्रति सजग बनाये जाने की दिशा में किया जाने वाला अनुसंधान कार्य विशेष उपयोगी रहेगा । शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर यथा प्राथमिक-माध्यमिक एवं उच्च प्राथमिक स्तर पर विभिन्न विषयों की विषयवस्तु को किस प्रकार संशोधित एवं परिशोधित किया जाये जिससे शिक्षार्थीगण प्रारम्भ से ही भविष्य के व्यवसाय के प्रति सजग हों तथा व्यवसायपरक शिक्षा के प्रति उनका स्वाभाविक लगाव हो जाए।

वर्तमान में हाईस्कूल, इण्टरमीडिएट/स्नातक स्तरीय पाठ्यक्रम में नवीन रोजगारपरक पाठ्यक्रम चलाये जा रहे है, जिनकी उपयोगिता का अध्ययन शोध आधारित प्रभावी अनुगमन कार्यक्रम (Effective Follow-ship Programme) आयोजित करके सुनिश्चित किया जा सकता है । सभी स्तरों पर इस प्रकार की उपयोगितापरक रोजगार-परक विषयवस्तु का निर्माण करने तथा मूल्यांकन किये जाने से संबंधित अनुसंधानजनित योजनाएं उपयोगी हो सकती हैं ।

अत: शिक्षार्थी की शैक्षिक व्यावसायिक एवं व्यावहारिक आवश्यकताओं के संदर्भ में विषय सामग्री संबंधित पाठ्यपुस्तकों पर किये जाने वाले अनुसंधान कार्य विषयवस्तु शिक्षण

सामग्री की परिधि में आयेंगे । इस पर दार्शनिक विचारधाराओं का अप्रत्यक्ष प्रभाव भी परिलक्षित होगा।

1.2.5 शिक्षण विधि (Method of Teaching) - शिक्षार्थी - शिक्षक एवं विषयवस्तु के पश्चात् एक अन्य वरीयतम विषय क्षेत्र है । शिक्षण विधि जिसके माध्यम से शिक्षार्थी तक शिक्षक अपनी विषयवस्तु को सम्प्रेषित कर सकता है । शिक्षा एवं प्रभावी शिक्षण के क्षेत्र में शिक्षा प्रौद्योगिकी ने एक नवीन आयाम का जन्म दिया है जिसके माध्यम से परम्परागत कक्षा-शिक्षण के तौर तरीकों में अभिनव परिवर्तन हुए हैं तथा शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को अधिक प्रभावी बनाये जाने हेतु शिक्षक-शिक्षार्थी के अन्तर्क्रियाकलापों का विधिवत् एवं वैज्ञानिक रूप से अध्ययन किया गया है ।

पिछले दशक के शोध कार्यों को विधिवत देखने से पता चलता है कि नवीन शिक्षण विधियों की विषयगत खोज किये जाने से संबंधित विभिन्न विषयगत शिक्षण विधि परक प्रायोगाधारित परियोजनाएं (Experimental Projects) संचालित की गई है जिन्हें हम "कक्षागत एवं विषयपरक शोध परियोजनाओं का भी नाम दे सकते है जिनमें परम्परागत शिक्षण विधि की तुलना में "अभिनव आवश्यकतापरक शिक्षण विधि की आयोजिता का अध्ययन छात्र वर्ग की शैक्षिक उपलब्धि विषयगत अभिव्यक्ति रूचि एवं सक्रियता के संदर्भ में किया गया है । विषय शीर्षक प्रस्तुत है उदाहरणार्थ-नागरिकशास्त्र के "शिक्षण को समाचार पत्र एवं पत्रिकाओं के विधिवत् अध्ययन से प्रभावी बनाने के उपाय तथा छात्र वर्ग की अर्जित शैक्षिक उपलब्धि एवं अभिव्यक्त रूचि का अध्ययन "। भूगोल की अभिनव शिक्षण विधि के माध्यम से छात्रों में अनेकता में एकता के भाव की समृद्धि का अध्ययन । अर्थशास्त्र के शिक्षण को प्रभावी एवं रूचिकर बनाने तथा छात्र वर्ग तक विषय वस्तु को प्रभावी ढंग से सम्प्रेषित करने में विभिन्न सुनियोजित छात्रगत क्रियाकलाप की प्रभावकारिता का अध्ययन । ये सभी विषयगत प्रायोगिक कक्षा योजनाएं क्रियात्मक अनुसंधान (Action Research) की विभिन्न स्वरूप रही है जिनमें कक्षा एवं विषय शिक्षक वर्ग के शिक्षण की प्रमुख भूमिका रही है तथा जिन्हें शिक्षा/प्रशिक्षण पद्धति महाविद्यालयों में स्थित विस्तार सेवा केन्द्रों (Extension Service Deptt.) तथा सतत् शिक्षा केन्द्रों (Centres of Continuing Education) के माध्यम से संचालित किया गया है । इन कक्षागत परियोजनाओं में कक्षा के शिक्षक को अपने विषय को प्रभावी ढंग से पढाने, छात्रों की विषयगत रूचि में समृद्धि करने तथा उनकी शैक्षिक उपलब्धि एवं विषयगत आकांक्षाओं के उच्चीकरण में पर्याप्त सहायता प्रदान की है । इस प्रकार की सभी परियोजनाओं में विषय शिक्षण की "परम्परागत" तथा "अभिनव" शिक्षण विधियों का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है तथा उनके प्रभावी स्वरूप को देखा गया है । छात्रों की विषयगत उपलब्धि अभिनव रूचि एवं सक्रियता को परतंत्र चर (Dependent Variables) के रूप में अध्ययन किया गया है तथा विषय शिक्षण की विभिन्न विधियों या उपागम 'स्वतंत्र चर (Independent Variables) रहे है । किसी एक विशेष कक्षा की विषयगत योग्यता के आधार पर छात्रों के दो समान समूहों पर समान अवधि तक 'परम्परागत' तथा "अभिनव ' शिक्षण विधि द्वारा पढाये

जाने पर अलग-अलग पडे प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन इस प्रकार की शोध परियोजनाओं के माध्यम से किया जाता है ।

शिक्षण विधि विषयगत शोध परियोजना के कुछ अन्य उदाहरण भी दिये जा सकते है यथा भूगोल अध्यापन में 'परिवीक्षित अध्ययन विधि तथा परम्परागत भाषण विधि की प्रभावोत्पादकता का तुलनात्मक अध्ययन । इसी प्रकार - "आग्ल भाषा शिक्षण के दौरान" जूनियर हाईस्कूल कक्षा आठवीं स्तर पर सीधी विधि एवं अनुवाद विधि का तुलनात्मक दृष्टि से प्रभावकारिता का अध्ययन। इस प्रकार की परियोजनाओं को संचालित करने में विद्वानों के अनुसार (कौशिक-पुरोहित तथा पाण्डेय 1972. सुखिया-मेहरोत्रा) अभिकल्प (Design) की दृष्टि से प्रायोगामक परियोजना के तीन प्रकार के अभिकल्प प्रस्तुत किये जा सकते है यथा एकांगी वर्ग अभिकल्प, (Single Group Design) समीकृत अभिकल्प तथा हेर-फेर वर्ग अभिकल्प (Routational Group Design)

शिक्षण विधियों के तुलनात्मक अध्ययन के साथ-साथ संपूर्ण शिक्षण अधिगम प्रक्रिया का वैज्ञानिक अध्ययन विभिन्न संबधितशिक्षण अनुदेशन चरों की पहचान, मापन एवं अध्ययन आदि एक दशक की बोध उपलब्धि रही है । प्रभावी सम्प्रेषण की दिशा में विभिन्न तकनीकी यंत्रों तथा रेडियो, टीवी., टेपरिकार्डर, बी.सी.आर की शैक्षिक उपयोगिता एवं प्रभावकारिता के संदर्भ में अनेक प्रायोगिक शोध परियोजनाओं का नियोजन, संचालन एवं मूल्यांकन किया गया है।

कक्षा शिक्षण के साथ शिक्षक प्रशिक्षण विधियों एवं संबंधित प्रशिक्षण कौशलों का अध्ययन भी शोध की एक नवीन दिशा रही है जिस पर आवश्यकतापरक शोध कार्य सम्पादित हुए है । 'सूक्ष्म शिक्षण कौशलों (Micro Teaching Skills) की शोध आधारित पहचान, व्याख्या विवेचना एवं शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों में उनका विकास आदि समय की आवश्यकता है। वर्तमान संदर्भ में शिक्षण अधिगम अनुदेशन के सुधार हेतु इलेक्ट्रानिक कम्प्यूटरों पर आधारित" बहुआयामी मॉडल (Multi Variable Models) पर किया जाने वाला शोध कार्य नवीनतम एवं आवश्यकता परक है ।

1.2.6 शिक्षणालय-शैक्षिक, सह-शैक्षिक क्रियाकलाप (School-Educational and Co-educational activities)- शिक्षार्थी-शिक्षक तथा शिक्षक विधियों की शैक्षिक शोध सम्यक व्याख्या के पश्चात् शिक्षा परिधि क्षेत्र में शिक्षणालय तथा उस से संबंधित क्रियाकलाप आते हैं । जिन पर अनुसंधान कार्य सम्पन्न किये बिना शिक्षा का कार्य अधूरा रहेगा । किसी भी स्तर पर शिक्षा संस्था का विशेष महत्व होता है, जहां पर शिक्षा के सैद्धान्तिक क्रियाकलापों को व्यावहारिक स्वरूप प्रदान किया जाता है । मनोवैज्ञानिक एवं दार्शनिक सिद्धान्तों एवं नियमों की व्यवहारपरक विवेचना की जाती है तथा सही मापने में सिद्धान्तों को अमली जामा भी पहनाया जाताहै । जहां संस्था का प्रधान एक सफल नियोजक के रूप में शिक्षक, अन्य कर्मचारी, छात्र वर्ग, अभिभावक वर्ग अधिकारी वर्ग, प्रबंध समिति के सदस्यों के साथ इसी प्रकार का तालमेल बिठाकर संस्था एवं छात्र हित में विभिन्न शैक्षिक सह शैक्षिक क्रियाकलाप आयोजित करता है तथा उनकी प्रभावकारिता को अध्ययन करता है ।

संस्था के प्रधान को प्रशासनिक, शैक्षिक, सहशैक्षिक सभी प्रकार के कार्यो का लेखा-जोखा रखना पडता है, कक्षा विद्यालय, क्रीड़ा स्थल, पुस्तकालय-वाचनालय, प्रयोगशाला आदि सभी कार्य विधिवत् देखने पडते है तथा संपूर्ण संस्था के शैक्षिक प्रशासनिक पर्यावरण का निर्माण एवं सृजन उसकी देख-रेख में सम्पन्न होता है । शैक्षिक प्रधान की कार्य शैली (working style) दर्शन, सोचने विचारने के तरीकों के आधार पर संपूर्ण रूप से विद्यालय संगठनात्मक पर्यावरण (School Organizational Climate) का निर्माण होता है । तथा विद्यालय की नियोजित कार्य शैली एवं सजित वातावरण के आधार पर शिक्षकगण अपने को ढालते हैं तथा छात्रों का विकास करते है, विद्यालय के प्रति वहां की कार्य शैली के प्रति, वहां के शैक्षिक नेतृत्व के प्रति, अपनी अवधारणाएं, सम्प्रत्यय विकसित करते है । विद्यालय की कार्य शैली प्रबंधकीय पर्यावरण के आधार पर शिक्षक एवं छात्र वर्ग की आकांक्षाएं, उपलब्धियां समायोजन के तौर तरीके विकसित होते हैं । यहां तक कि विद्यालय का संपूर्ण "सामूहिक गति विज्ञान" (Group Dynamics) सुनिश्चित होता है जो वर्तमान में शिक्षा शोध का विशेष बिन्दु है । किसी भी विद्यालय की प्रबंधकीय पर्यावरण व्यवस्था के समग्र एवं सघन अध्ययन के आधार पर शिक्षक एवं छात्र वर्ग की आकांक्षाओं - कार्य शैली उपलब्धियों एवं सीमाओं का व्यावहारिक अध्ययन किया जा सकता है जिससे कि विद्यालय से संबंधित सभी पक्ष चाहे ये शिक्षकगण हो, छात्रवर्ग हो, अभिभावकवर्ग, या अन्य कर्मचारी वर्ग सभी के शैक्षिक सामाजिक एवं व्यक्तिगत हित का अध्ययन किया जा सकता है तथा संस्था की प्रगति के मार्ग में आने वाली बाधाओं को सहज में ही दूर किया जा सकता है ।

शिक्षा बिभाग के साथ-साथ शिक्षालय के शैक्षिक प्रशासनिक एवं वित्तीय पक्ष का सघन अध्ययन भी शिक्षा शोध की परिधि में ही आयेगा । संस्था की शैक्षिक एवं वित्तीय समस्याओं का अध्ययन सुझाव प्रस्तुतीकरण प्रक्रिया में नवीन वित्तीय संसाधनों एवं श्रोतों की खोज, किसी भी स्तर पर छात्र वर्ग द्वारा ली जाने वाली फीस में बढोतरी का सबल आधार कैसे सुनिश्चित किया जाये । स्वयं पोषित शिक्षण संस्थाओं को कैसे विकसित किया जाये । संबंधित शैक्षिक प्रबंध के क्षेत्र में विद्वानों (सिन्हा, व 99, पृष्ठ 21-22) के मतानुसार शिक्षा से संबंधित किसी भी स्तर पर राज्य शिक्षा विभाग द्वारा किये जाने वाले शिक्षा व्यय का ब्यौरा, विभिन्न श्रोतों से शैक्षिक बजट की पूर्ति, शिक्षा एवं अन्य सेवाओं पर किये जाने वाले व्यय का तुलनात्मक अध्ययन से संबंधित अनेक शोध परियोजनाएं संचालित की जा सकती है । राजकीय सहायक अनुदान केन्द्रों यथा एनसीईआरटी., यूजीसी. द्वारा प्रदान किये जाने वाले अनुदान का संस्थाओं की प्रगति, कुशलता एवं उपलब्धियों के संदर्भ में तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है । अनुसूचित जाति-जनजाति, पिछडे वर्ग के विद्यालयी तथा महाविद्यालयी स्तर पर अध्ययनरत छात्रवर्ग को शासन द्वारा प्रदान की जाने वाली विभिन्न उत्प्रेरणाओं का प्रभाव उनके रहन-सहन के तौर-तरीके, शैक्षिक उपलब्धियों एवं शैक्षिक-आकांक्षाओं पर किसी प्रकार पडता हैं यह शोध अध्ययन का एक महत्वपूर्ण बिन्दु है । शिक्षालयों के विकास एवं प्रगति में किसी भी शिक्षा के स्तर पर किसी प्रकार का प्रदान किया जाने वाला अनुदान (आवर्तक अथवा अनावर्तक) अधिक उपयोगी रहेगा ।

1. 3 शैक्षिक अनुसंधान की आवश्यकता एवं महत्व (Need and Importance of Educational Research)

अनुसंधान की आवश्यकता तो एक प्रमुख वाक्य से स्वत: स्पष्ट है कि "ज्ञान के क्षेत्र. में शोध का कार्य निरन्तर जारी रहता है" - डा0 विनय मोहन शर्मा (1990) के अनुसार - शोध ज्ञान की किसी सीमा पर पहुंच कर रूक नहीं आता है, वह आगे बढता ही जाता है । चूंकि मन का स्वभाव ही मनन करता है, अत: शोध प्रक्रिया में किसी नवीन मान्यता एवं परिकल्पना का चुनाव कर उस से संबंधित तथ्य एकत्रित किये जाने है, उन्हें विश्लेषित एवं विवेचित कर परिणाम निरूपण किया जाता है, अत: इस प्रकार वैज्ञानिकता के आधार पर खोजे गये परिणाम की प्रस्तुति अपने में एक नवीन ज्ञान की आवश्यकता ही है । शिक्षा के क्षेत्र में अनुसंधान की आवश्यकताएं तो अत्यधिक है ही, क्योंकि जब शिक्षा का उद्देश्य शिक्षार्थी के व्यक्तित्व का विकास करना है ही तो फिर उसके विकास से संबंधित नाना प्रकार की क्रिया-प्रतिक्रियाओं के प्रभाव का अध्ययन किया जाना भी आवश्यक है । यह केवल शैक्षिक अनुसंधान की व्यवस्थित क्रमिक एवं वैज्ञानिक अध्ययन प्रक्रिया के आधार पर ही है जिस में शिक्षार्थी के मानसिक, शारीरिक संवेगात्मक एवं सामाजिक विकास से संबंधित विभिन्न क्रियाओं एवं उनमें निहित आपसी सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है । उदाहरणार्थ-सोचने की विभिन्न विधियों का अध्ययन तथा शिक्षार्थी के व्यक्तित्व, अभिक्षमताओ रूचियों, अभिप्रेरणाओं तथा मूल्यों के विकास के संदर्भ में अध्ययन, जिसमें शिक्षार्थी को प्रदान किये जाने वाला शैक्षिक पर्यावरणीय प्रभाव भी सम्मिलित है ।

एक विचारणीय विषय और भी है कि क्या कारण है कि एक ही प्रकार के विद्यालयी अथवा कक्षागत क्रियाकलाप का प्रभाव विभिन्न शिक्षार्थियों पर भिन्न-भिन्न पडता दिखलाई पडता है । उदाहरणार्थ -कक्षा में अध्यापक तो एक ही है, लेकिन उसके व्यक्तित्व का प्रभाव अलग-अलग शिक्षार्थियों पर अलग-अलग पडता है । यही सब कुछ अध्ययन किया जाना शैक्षिक अनुसंधान का प्रमुख कलेवर है । कक्षागत पर्यावरण के संदर्भ में जहां शिक्षार्थी अनेक बौद्धिक-शैक्षिक स्तर से युक्त है, उनके लिए विभिन्न अभिनव शिक्षण विधियों का कुशल ढंग से अन्वेषण किया जाना आवश्यक है जिससे कि शिक्षार्थियों की आयु बुद्धि, अभिक्षमता रूचि एवं कौशल पर पडे, विभिन्न प्रकार के प्रभाव का अध्ययन किये जाने हेतु विभिन्न प्रकार की अनुसंधान योजनाओं का निर्माण किया जाना समय तथा समाज की एक आवश्यकता भी है ।

भारतीय शिक्षाशास्त्रियों एवं विचारकों (सुखिया-मेहरोत्रा एवं मेहरोत्रा 1973, पृष्ठ 3, सिन्हा, 1979 पृष्ठ 9- 10, शर्मा- 1985, पृष्ठ 19 एवं मुले 1980 पृष्ठ 4) की यह प्रबल धारणा रही है कि शिक्षा की पुन: रचना एवं संगठन के लिए अनुसंधान अनिवार्य आधार है, विशेष रूप से पाठ्यचर्चा, पाठ्यक्रम, पाठन विधि एवं शिक्षा की व्यवस्था के संदर्भ में । उनका दृढ मत है कि क्रमबद्ध अनुसंधान पर आधारित निर्णय-निष्कर्ष निश्चितरूप से समय, धन, शक्ति की बचत कर असफलताआ को सफलताओं में परिवर्तन करेंगे तथा समाज एवं राष्ट्र की प्रगति का पथ प्रदर्शित करेंगे ।

अधिकतर शिक्षाशास्त्री एवं विचारक यह स्वीकार भी करते आये हैं कि शैक्षिक अनुसंधान शिक्षा के हर स्तर पर नया ढांचा खड़ा करने में सफल होगा तथ हर स्तर पर परम्परागत पाठ्यक्रम, उपकरण, शिक्षण विधि एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में नयापन दिखाकर विभिन्न समस्याओं के हल प्रस्तुत करेगा । ऐसा भी देखने को मिला है कि हमारे देश के औद्योगिकरण में तो वृद्धि हुई है परन्तु इस प्रगति एवं उन्नति का लाभ जन साधारण को कम मिला है क्योंकि औद्योगिक प्रगति के साथ-साथ सामाजिक प्रगति नहीं हो पाई है । परम्परावादी मूल्य, मान्यताएं, रीति-रिवाज एवं रहने सहने के तरीके एवं सोच में अधिक आशतीत परिवर्तन नहीं हुआ है, जिसके लिए हमारी शिक्षा प्रक्रिया पर ही प्रश्न चिन्ह लगाया जाता है । यह सुनिश्चित ही है कि जनमानस की विचार प्रक्रिया एवं दृष्टिकोण में परितर्वन लाने के लिए शिक्षा को ही आगे आना होगा तथा जिसका प्रबल आधार होगा शैक्षिक अनुसंधान । यह एक सर्वमान्य सत्य है कि अनुसंधान मस्तिष्क को विशाल एवं अनुसंधानकर्ता के दृष्टिकोण को विभिन्न पूर्वाग्रहों से मुक्त करता है तथा निष्पक्षता को विकसित करता है । शैक्षिक शोध के आधार पर नियोजित एवं प्रायोजित परियोजनाओं के संचालन से अध्यापन एवं प्रशासन में नवीनता आती है, उदासीनता कम होती है तथा व्यक्तिगत दृष्टिकोण में वैज्ञानिकता का विकास होता है । मानव की जिज्ञासु-प्रवृति निश्चित रूप से उसकी प्रगति का आधार बन कर ही रहेगी ।

शैक्षिक अनुसंधान केवल विशेषज्ञों का क्षेत्र नहीं है । विद्वानों (कामथ 1947, लाहेरी 1957, कोरे 1953, सिद्ध 1985 - पृष्ठ 11, तथा सुखिया-मेहरोत्रा 1973 पृष्ठ 12) के अनुसार कोई भी शिक्षक प्रशासक या शिक्षा का जिज्ञासु जिसमें सामान्य समझदारी है, बुद्धि एवं सूझ है किसी भी शिक्षा संबंधी समस्या पर अनुसंधान कर सकता है, जिससे वह अपना कार्य पूर्व से और बेहतर ढंग से सम्पन्न कर सकें तथा उसके कार्य में अभिनवपन भी परिलक्षित हो । शैक्षिक अनुसंधान के आधार पर प्राप्त की गई उपलब्धियों से प्रयोगकर्ता के कृत प्रयासो में परिश्रम को कम करेगी, कार्य प्रक्रिया के दौरान अपव्यय को रोका जाना सम्मव हो सकेगा, व्यक्तिगत दक्षता में वृद्धि संभव होगी, कार्य में सजीवता दृष्टिगोचर होगी तथा ऐसे व्यक्तिगत सामाजिक प्रतिष्ठा प्राप्त करने के अधिकारी स्वत: बन जायेगी ।

यह कहा जाना उपयुक्त ही प्रतीत होता है कि शैक्षिक अनुसंधान का संबंध सिद्धान्त एवं अन्वेषण से बहुत निकटता का है । सामान्यत: सिद्धान्तों के आधार पर गवेषणा की जानी संभव होती है । दूसरी ओर गन्वेषण के आधार पर ही नवीन सिद्धान्तों की खोज की जानी संभव होती है । नवीन सैद्धान्तिक संकल्पनाओं का जन्म भी तो गवेषणा से ही होता है, जिसमें अज्ञात को ज्ञात करने का विधिवत् धैर्ययुक्त प्रयास किया जाता है, ज्ञान की पिपासा को शान्त किया जाता है, भौतिक एवं आध्यात्मिक रहस्यों को तथ्य रूप प्रदान किये जाने का प्रयास किया जाता है । इसीलिए शिक्षा के साहित्य में अनुसंधान एक चमत्कारपूर्ण आश्चर्य है, जिसका अनुसंधानकर्ता अन्त में चौंक कर हृदय से स्वागत करता है तथा दृष्टि से ओझल तथ्यों को प्रकाश रूप में प्रस्तुत करने का विधिवत प्रयास किया करता है । अत: शिक्षा के क्षेत्र में ज्ञान के आवरण में छिपे तथ्यों को निरावरण करने का कार्य अनुसंधानकर्ता का ही है जो परिश्रम, धैर्य, लगन, तपस्या एवं निष्ठापूर्वक अर्जित ज्ञान से नवीन ज्ञान सृजन एवं अन्वेषण करता है ।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है किमौलिक रूप से शिक्षा के प्रत्येक क्षेत्र में सैद्धान्तिक वैचारिक एवं व्यावहारिक परिवर्तन लाने के लिए अनुसंधान परम आवश्यक एवं महत्वपूर्ण है । हमारा मौलिक चिन्तन तो तभी होगा जब हम स्वयं अन्वषी हो, दृष्टि से ओझल नवीन तथ्यों को खोजन की विधिवत् तैयारी करें तथा सत्य का उद्घाटन करने की हमारे अन्दर अभीप्सा हों।

1.4 स्वमूल्यांकन (Self Assessment):

प्रश्न- 1 "वैज्ञानिक अनुसंधान एक व्यवस्थित, नियंत्रित एवं सूक्ष्म अन्वेषण है" -करलिंघर के द्वारा "अनुसंधान" के विषय में प्रस्तुत इस पंक्ति को शैक्षिक अनुसंधान के संदर्भ में विवेचित करें ।

प्रश्न-2 "अनुसंधान" क्या हैं 7 "अन्वेषण" "गवेषणा" एवं "खोज" आदि शब्दों की सहायता से इस अनुसंधान शब्द को स्पष्ट करें ।

प्रश्न-3 "ज्ञान के क्षेत्र में" अवगाहन करने के पश्चात् ही अनगिनत समस्याओं का आभास होता है जिनका समाधान शोध के माध्यम से किया जाता है" - शिक्षा के संदर्भ में इस कथन को स्पष्ट करें ।

प्रश्न-4 शिक्षा के क्षेत्र में अनुसंधान किया जाना क्यों आवश्यक हैं? शिक्षा के विकास एवं संबंधित समस्याओं के हल में अनुसंधान किस प्रकार सहायक होता है? उदाहरण देते हुए विवेचना करें ।

प्रश्न-5 तथ्यों का केवल मात्र प्रतिवेदन, परिभाषिकरण एवं तथ्य एकत्रीकरण चाहें, उसे संख्यातमक रूप ही क्यों न दिया हो, शैक्षिक अनुसंधान नहीं है । शैक्षिक अनुसंधान के कार्य एवं उपयोगिता के विषय में उपर्युक्त विचार की समीक्षा कीजिए ।

प्रश्न-6 शैक्षिक अनुसंधान के क्षेत्र से आप क्या समझते हैं? शैक्षिक अनुसंधान हेतु आप विषय एवं क्षेत्रवार वर्गीकरण किस प्रकार करना चाहेंगे? अपना मत प्रस्तुत करें ।

प्रश्न-7 वर्तमान में शैक्षिक अनुसंधान हेतु कौन-कौन से नवीनतम विषय शीर्षक चुनौतियों के रूप में शोधार्थियों के समक्ष हैं? किन्ही दो क्षेत्रों की विवेचना करें ।

लघुत्तरीय प्रश्न (Short answer type questions)

प्रश्न-1 "हमारे संस्कृतिक विकास का गुप्त रहस्य अनुसंधान में निहित है" । जे.डब्लू. वेस्ट के उक्त कथन की विवेचना की दो पृष्ठ में कीजिए ।

प्रश्न-2 शिक्षा के क्षेत्र से संबंधित छात्र, अध्यापक, प्राचार्य, एवं प्रशासन वर्ग को शैक्षिक अनुसंधान से प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से संलग्न रहना क्यों आवश्यक हैं? स्पष्ट करें ।

प्रश्न-3 अनुसंधान शिक्षा की प्रगति के लिए क्यों आवश्यक है? ये कौन-कौन से क्षेत्र है जहां शैक्षिक अनुसंधान बहुत आवश्यक हैं?

प्रश्न-4 शिक्षा की विषय परिधि के संदर्भ में अनुसंधान की संभावनाएं व्यक्त करते हुए पांच-पांच वरीयतम उप क्षेत्र लिखिए-

(अ) शैक्षिक प्रौद्योगिकी

(ब) शैक्षिक नियोजन एवं प्रशासन

(स) निर्देशन एवं परामर्श

(द) शिक्षक-शिक्षा

(य) शैक्षिक मापन एवं मूल्यांकन

प्रश्न-5 शैक्षिक अनुसंधान केवल विशेषज्ञों का ही क्षेत्र नहीं वरन् कोई भी शिक्षा-जिज्ञासु एवं शिक्षक किसी भी ज्वलन्त समस्या पर शोध कार्य कर सकता है । उक्त कथन स्पष्ट करें ।

1.5 संदर्भ ग्रंथ (References)

वैस्ट, जे. डब्लयू	:	रिसर्च इन एजूकेशन, नयी दिल्ली, प्रेटिंग हाल 1963, पृष्ट 1-14
कुक, डी.आर. एवं लाफलियर:	:	गाइड आफ एजूकेशनल रिसर्च, बोस्टन, एलेन एवं बेकन,1075 पृष्ट 195
गुड, सीवी एवं स्केट्स, डी.ई.	:	मैथड्स आफ रिसर्च न्यूयोर्क : एलिशन सैन्चूरी, 1954
कोरे, एस. एम.	:	ऐक्शन रिसर्च टू इम्पूर्व स्कूल प्रैक्टिसेज, न्यूयार्क, टीचर्स कालेज कोलम्बिया यूनीवर्सिटी, 1953
कलिंगर एफ.ए	:	फाउन्डेशन्स आफ बिहेवियर रिसर्च, दिल्ली सुरजीत पब्लिकेशन्स 1983 पृष्ठ 6-13,11
मोले, जी॰जे	:	दी साइंस आफ एजूकेशनल रिसर्च. न्यूयार्क वान रोस्ट्रड़ रीन्होल्ड 1970
मुले, एस. एव सवर्थनाम वी.ई	:	रिसर्च मैथड्स इन एक्सटैशन एजूकेशन, नयी दिल्ली. मानसायन, 1980, पृष्ठ 2:5
शर्मा, आर. ए.	:	शिक्षा अनुसंधान, मेरठ इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ, 1985-86 पृष्ठ 15-24, 431-442
शर्मा सिन्हा, एच.सी	:	शैक्षिक उानुसंधान, नयी दिल्ली विकास पब्लिशिंग हाउस, 1979, पृष्ठ 7-11, 15-28'
शर्मा, बी.एम.	:	शोध प्रविधि, नयी दिल्ली-नेशनल पब्लिशिंग हाउस, 1980 पृष्ठ 1-1815-18
सिद्ध के.एस.	:	मैथड्स आफ रिसर्च इन एजूकेशन, नयी दिल्ली, स्टरलिंग पब्लिशर्स, 1985, पृष्ठ 1-3, 35-51
सुखिया, एस.पी. मेहरोत्रा, पी.वी. एवं मेहरोत्रा, आर.एन.	:	शैक्षिक अनुसंधान के मूल तत्व, आगरा, विनोद पुस्तक मन्दिर, 1973, पृष्ठ 3- 13, 60-87
ट्रेवर्स, आर.एम.डब्लू	:	एन इन्ट्रोडैक्शन एजूकेशनल रिसर्च, न्यूयार्क मैकमिलन एण्ड कम्पनी, 1985

यंग, माईकल	:	इनोवेशन्स एण्ड रिसर्च इन एजूकेशन लंदन, कटलेज एण्ड केगनवाल 1967 पृष्ठ 26
विह्यूअनी, एफ.एल.	:	दी एलीमेन्ट्स आफ रिसर्च. नयी दिल्ली, प्रैटिस हाल, 1959
लहरी, जे.	:	रिसर्च एण्ड एक्सपैरीमेट्स इन एजूकेशन इन इंडिया एजूकेशनल इंडिया वाल्यूम नं. 4, नवम्बर 1957, पृष्ठ 148- 155

इकाई-2

शैक्षिक अनुसंधान / लक्ष्य 'वैशिष्ट्य, बाधाएं, सीमाएं, नैतिक आधार एवं स्तर (सैद्धान्तिक, अनुप्रयुक्त एवं क्रियात्मक अनुसंधान)

(Characteristics, Constraint and limitations, ethical considerations and levels) (Theoritical, Applied, Action) of Educational Research)

2.0 उद्देश्य एवं लक्ष्य (Aims and Objectives)

2.1 शैक्षिक अनुसंधान - लक्षण/ वैशिष्ट्य (Educational Research-Characteristics)

2.1.1 शैक्षिक अनुसंधान - सबल आधार-शिक्षा दर्शन
(Educational Research-Characteristics)

2.1.2 शैक्षिक अनुसंधान - एक धैर्ययुक्त, उत्साहपरक सतत् कार्य
(Educational Research-Philosophical basis of Education)

2.1.3 शैक्षिक अनुसंधान - उद्देश्यपरक होने के साथ वैज्ञानिक भी
(Educational Research-Objectives and Scientific criteria based)

2.1.4 शैक्षिक अनुसंधान - तर्कयुक्त सामान्यीकरण पर आधारित
(Educational Research-Logical and Generalised Criteria based)

2.1.5 शैक्षिक अनुसंधान - जटिल एवं प्रामाणिक स्तर से युक्त
(Educational Research-Complicated and Standardized based))

2.1.6 शैक्षिक अनुसंधान - तार्किक चिन्तन प्रक्रिया पर आधारित
(Educational Research-Based on logical thinking)

2.1.7 शैक्षिक अनुसंधान - अन्त: अनुशासन उपागम पर शोध आधारित
(Educational Research-based on inter disciplinary approach)

2.1.8 शैक्षिक अनुसंधान - शोध परिणाम शत प्रतिशत प्राकृतिक विज्ञानों के अनुसंधान के समान यथार्थ या सटीक नहीं ।
(Conclusion of Educatinal Research are not as precise as conclusion of natural science)

2.1.9 शैक्षिक अनुसंधान - केवल विशेषज्ञों का क्षेत्र नहीं ।
(Educational Research is not only the area of educational expert)

2.1.10 शैक्षिक अनुसंधान - केवल यांत्रिक क्रिया मात्र नहीं ।
(Research Education-not only instrumental)

2.2 शैक्षिक अनुसंधान-बाधाएं
(Educational Research-Constraints)

2.3 शैक्षिक अनुसंधान-सीमाएं
(Educational Research delimitations)

2.3.1 अनुसंधानकर्ता की स्वयं की सीमाएं

2.3.2 डिग्री आधारित मध्यम स्तरीय शोध कार्य-एक विचारणीय सीमा

2.3.3 अनुसंधान कार्य प्रक्रिया जनित सीमाएं

2.3.4 अनुसंधान - ज्ञान की परिधि की द्रुतगत से विकसित करने में सक्षम/एक विशिष्ट सीमा

2.3.5 अनुसंधान कार्य - केबल बिभागीय अनुसंधान हेतु - एक विशिष्ट टीका

2.3.6 शोध कार्य -संचालन - सम्पादन एवं प्रकाशन हेतु में वित्तीय असुविधा अनुपलब्धि एवं अपर्याप्तता एक विचारणीय सीमा

2.3.7 विशिष्ट शैक्षिक कार्यक्रमों से संलग्न व्यक्तियों को नवीनतम शोध कार्य जनित परिणामों की अनुपलब्धता एक सीमा

2.3.8 समुचित निर्देशन एवं प्रेंरणा का अभाव - एक विशिष्ट विचारणीय सीमा शोध

2.3.9 संस्कृति के अभाव

2.4 शैक्षिक अनुसंधान नीतिगत विवेचन (Educational Research Ethical Consideration)

2.4.1 अनुसंधान - प्रभाद रहित एक पवित्र कार्य

2.4.2 अनुसंधान कार्य में अनुसंधानकर्ता की ज्ञानार्जन तीव्र उत्कंठा एवं जिज्ञासा ।

2.4.3 अनुसंधान कार्य सम्पादन के बीच ईमानदारी समझदारी एवं तर्कसम्पतता का मार्ग अनुसरण

2.4.4 अनुसंधानकर्ता की लगन-परिश्रम. सूझबूझ एवं गहन स्वाध्याय से युक्त कार्य ।

2.4.5 सत्यता, धैर्य एवं कार्य संलग्नता से युक्त अनुसरण

2.5 शैक्षिक अनुसंधान के विभिन्न प्रकार

2.5.1 मौलिक अनुसंधान (Fundamental Research)

2.5.2 व्यव्हय/अनुपप्रयुक्त अनुसंधान (Applied Research)

2.5.3 क्रियात्मक अनुसंधान (Action Research)

2.6 स्वमूल्यांकन (Self Assessment)

2.7 संदर्भ ग्रन्थ (References)

2.0 उद्देश्य एवं लक्ष्य (Aims and Objectives)

इस इकाई की समाप्ति पर आप इस योग्य हो सकेंगे कि आप -

शैक्षिक अनुसंधान की विभिन्न विशेषताओं का अध्ययन कर यह समझ सकेंगे कि यह एक उद्देश्यपरक, जटिल, प्रामाणिक, तार्किक एवं धैर्ययुक्त, उत्साहपरक प्रक्रिया है जिसका सबल आधार शिक्षा दर्शन है तथा जो अन्त: अनुशासन पर आधारित है ।

शैक्षिक अनुसंधान की विभिन्न विशेषताओं के साथ इसकी कार्य प्रक्रिया के नियोजन एवं सम्पादन में अनेक सीमाएं एवं बाधाएं भी है, जिनकी अनुसंधानकर्ता का निरन्तर अनुभूति होती है।

शैक्षिक अनुसंधान के, इसकी कार्य प्रणाली एवं रचनात्मक प्रक्रिया के आधार पर, अनेक रूप एवं स्तर हैं - यथा मौलिक अनुसंधान, अनुप्रयुक्त अनुसंधान एवं क्रियात्मक अनुसंधान - जिनकी अपनी अपनी विशेषताएं हैं ।

2.1 शैक्षिक अनुसंधान-वैशिष्ट्य (Characteristics of Educational Research)

परिचय - शैक्षिक अनुसंधान का अर्थ, क्षेत्र, आवश्यकता एवं महत्व के अध्ययन के पश्चात् शैक्षिक अनुसंधान की प्रमुख विशेषताओं के बारे में गहन अध्ययन किया जाना आवश्यक प्रतीत है, जिससे कि इसकी विशेषताओं के संदर्भ में शिक्षा शोध की सीमाओं के बारे में जानकारी कराई जा सकें, संबंधित नीतिगत विवेचन प्रस्तुत किया जा सके तथा शैक्षिक अनुसंधान के प्रमुख त्रिस्तरीय प्रारूपों यथा मौलिक, व्यवहृत एवं क्रियात्मक अनुसंधान पर विस्तार से चर्चा की जा सकें ।

"शैक्षिक अनुसंधान" चूंकि शैक्षिक वरीयतम बिन्दुओं पर आधारित नवीन ज्ञान के अन्वेषण एवं विवेचना को समाहित करता हुआ योजनाबद्ध प्राथमिक स्त्रोतों पर आधारित, विशेषज्ञतापरक एक खोज पूर्ण कार्य है, अत: इसकी विशेषताएं एवं लक्षण भी स्वयंसिद्ध है, जिन्हें निम्न रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

2.1.1 शैक्षिक अनुसंधान - सबल आधार शिक्षा दर्शन - शैक्षिक अनुसंधान का अपना स्वयं का दर्शन होता है, इसकी प्रमुख मान्यताएं होती है - यह वैज्ञानिक कार्य विधि है, जिसके आधार पर संबंधित सिद्धान्तों का अन्वेषण एवं विवेचना की जाती है । शिक्षा क्षेत्र में ज्वलंत एवं जटिल समस्याओं के वैज्ञानिक हल खोजे जाने तथा उनके विभिन्न पक्षों पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन करने तथा शोध प्रक्रिया के दौरान सदैव यह ध्यान में रखा जाना आवश्यक होता है कि कहीं शिक्षा एवं जीवन के शाश्वत मूल्यों एवं मान्यताओं को अनदेखी न कर दी जाये । यदि कहीं अधिक वास्तविक एवं व्यावहारिक बननेकी दिशा में हम जीवन के मौलिक सिद्धान्तों एवं मूल्यों को ध्यान में रखना भूल गये तो निश्चित रूप से हमारी शोध प्रक्रिया में वैज्ञानिकता गौण हो जायेगी तथा हम शोध के सबल आधार को खो देंगे ।

2.1.2 शैक्षिक अनुसंधान- एक धैर्ययुक्त उत्साहपरक सतत् कार्य - चूंकि शिक्षा के क्षेत्र में किया जाने वाला अनुसंधान एक धैर्ययुक्त, उत्साहपरक सतत प्रक्रिया है, अत: अनुसंधानकर्ताओं से आशा की जाती है कि वे कार्य प्रक्रिया के संचालन में अनावश्यक शीघ्रता न करें तथा धैर्यपूर्वक संबंधित साहित्य का अध्ययन करने के पश्चात् ही शोध कार्य की रूप रेखा का निर्माण करें तथा अनुसंधान के सोपानों में क्रमिकता बनाये रखें । विषय शीर्षक चाहें पूर्णरूपेण सैद्धान्तिक हो या व्यावहारिक अथवा कार्यपरक, अनुसंधान की रूप रेखा निर्माण से पूर्ण गहन अध्ययन तो करना ही होगा । शोधकर्ताको रूप रेखा निर्माण के पश्चात् तथ्यों या प्रदत्तों के संकलन हेतु उपकरण - निर्माण एवं कार्य प्रक्रिया के सुनिश्चितीकरण में असीम धैर्य से कार्य करना होगा । अध्ययन प्रक्रिया संचालन के दौरान सभी प्रकार की आने वाली बाधाओं को दूर करने में अपने उत्साह में कमी नहीं आने देनी होगी । विशेष रूप से तथ्यों के निरूपण के पश्चात् परिणाम-निरूपण के दौरान तो की जाने वाली असावधानी एवं शीघ्रता शोध उपलब्धियों में अर्थ का अनर्थ कर देंगी । अत: यह स्पष्ट है कि शिक्षा शोध प्रक्रिया के संचालन में शोधकर्ता का प्रारंभ से अन्त तक असीम धैर्य एवं उत्साह एवं सततता ही उसे निश्चित रूप से सफलता एवं संतोष प्रदान करेगी ।

2.1.3 शैक्षिक अनुसंधान - उद्देश्य परक होने के साथ-साथ वैज्ञानिक भी - शैक्षिक अनुसंधान की वैज्ञानिकता के विषय से पहले भी चर्चा की जा चुकी है । यहां स्पष्ट करना आवश्यक है कि शिक्षा शोध एक प्रयोजनपरक कार्य के साथ ही विज्ञान-निष्ठ है, और इसके कार्य सोपान एवं विधि पूर्णत: विज्ञान सम्मत है । उदाहरणार्थ- कक्षा के मेधावी छात्रों का अध्ययन एवं निर्देशन कार्य, एक सोद्धेश्य शोध-परियोजना तो है, साथ ही आवश्यक है कि कक्षा के मेधावी छात्रों की खोज एवं उनका चयन एक वैज्ञानिक कार्य प्रक्रिया पर आधारित हो, जिसके लिए विश्वसनीय एवं वैध उपकरणों (शैक्षिक एवं मनोवैज्ञानिक) की सहायता लेनी होगी । उनकी कई वर्षो की प्रगति एवं उपलब्धियों का वैज्ञानिक अध्ययन करना होगा । शिक्षक वर्ग द्वारा भी उनकी शैक्षिक उपलब्धि एवं सहभागिता के आधार पर उन्हें योग्यता के संदर्भ में वर्ग क्रमित करना होगा । फिर उनकी खोज एवं चयन करने के पश्चात उन्हें शैक्षिक एवं कार्यसार्थक निर्देशन प्रदान कराने की संपूर्ण प्रक्रिया वैज्ञानिक विधि पर ही आधारित होगी । तत्पश्चात् शोध उपलब्धियों की प्रस्तुति भी पूर्णत: वैज्ञानिक होगी, जहां पर वस्तुनिष्ठता को ही स्थान दिया जायेगा, पूर्वाग्रह एवं आत्मनिष्ठता को नहीं । यहां यह भी निरन्तर ध्यान में रखना होगा कि कहीं भी वर्तमान शोध-धर्म अपने पूर्व विवेचित उद्देश्यों एवं लक्ष्यों से हट कर इधर-उधर तो नहीं जा रहा है, कि कार्य प्रक्रिया पूर्व विवेचित उद्देश्यों को ही निरन्तर सामने रख कर चलाई जा रही है ।

2.1.4 शैक्षिक अनुसंधान तर्क सम्मत सामान्यीकरण पर आधारित - शैक्षिक शोध सामान्यत: सिद्धान्तों के सामान्यीकरण पर चल देता है । सामान्यीकरण की क्रिया वैज्ञानिकता के लिए हुए रहती है, जिस पर आधारित एक-एक निश्चित क्रिया विधि होती है तथ संबंधित प्रश्नों का एकत्रीकरण होता है । यही कारण है कि अनुसंधानकर्ता निष्पक्ष भाव से शोध कार्य सम्पादित करता है तथा शोध कार्य के निष्कर्षो को ज्यों का त्यों स्वीकार करता है । यही

कारण है कि जहां कभी भी पूर्वाग्रह की शंका हो वहां अध्ययन से संबंधित परिकल्पनाओं का निर्माण किया जाता है। यदि पूर्व ज्ञान, अनुभव, अन्य सूचना व तर्क सम्मत विवेचन के आधार पर परिकल्पनाएं बनायी जाती है तभी वे वैज्ञानिक विधि के अन्तर्गत आयेगी । परिकल्पना निर्माण में निष्पक्ष एवं वस्तुनिष्ठ होना आवश्यक है । चाहें परिकल्पना दिशात्मक अथवा शून्य-अन्तर हों । यह इसलिये कि शोधकर्ता का वैज्ञानिक दृष्टिकोण बना रहे तथा अपने अदम्य साहस को वह उस समय तक बनाये रखें अब तक कि शोध कार्य के निष्कर्ष उसकी आशा के अनुरूप न आयें । बेस्ट ने (1963, पृष्ठ 8) कहा है कि, चाहे शोध निष्कर्ष कितनी ही चौंकाने वाली क्यों न हो, उसे अप्रसिद्ध क्यों न प्रदान करें, फिर भी उसे अपना साहस खोना नहीं पडता है तथा बाहय बलों से प्रभावित हुए बगैर अपनी निष्कर्षो को प्रस्तुत करता है, चाहे अन्ततोगत्वा इन को समाजिक अनुमोदन न प्राप्त हो । इस विचारधारा को सुविधा-मेहरोत्रा आदि (1973, पृष्ठ 9) ने भी व्यक्त किया है ।

2.1.5 शैक्षिक अनुसंधान - जटिल एवं प्रामाणिक मानक से युक्त - सामान्यत: शिक्षा के क्षेत्र में अनुसंधानकर्ता से यह आशा की जाती है वह परिश्रम व अध्यवसाय के साथ वैज्ञानिक क्रियाविधि का अनुसरण करेगा तथा कल्पनाशीलता एवं विद्वता का परिचय देगा । उसकी कार्य विधि में पूर्वाग्रहों, जल्दबाजी एवं सुने-सुनायें तथ्यों का कोई स्थान नहीं दिया जायेगा । सत्य की खोज में इस दीर्घकाल तक अथक परिश्रम करने के लिये स्वयं को तैयार करना होगा । सतही काम में संतुष्ट न हो कर वह गहराई से अध्ययन करता है ।

2.1.6 शैक्षिक अनुसंधान निगमनात्मक - तर्क-विधि आधारित - चूंकि, शिक्षा मानव व्यवहार संबंधित विज्ञान है जिसकी कार्य विधि एवं प्रदत्तों का वर्णन व्याख्या एवं विवेचना मनोविज्ञान एवं समाजशास्त्र की भांति सामान्य बोध पर आधारित होती है । यह वर्णनात्मक एवं विवेचनात्मक शोध विधि अधिकतर व्यक्तिनिष्ठता, (subjectivity), संभाव्यता (probability) एवं अनुमानात्मक होती है। शिक्षा के क्षेत्र में बहुत से अनुसंधान जो ऐतिहासिक एवं दार्शनिक तथ्यों पर आधारित है, में व्यक्तिनिष्ठ व्याख्या की जाती है तथा ऐसा अनुसंधान निगमनात्मक तर्क से युक्त होता है । उदाहरणार्थ यहां ऐसा भी हो सकता है कि..... सम्भवत: इस प्रकार के व्यवहार का यह कारण हो सकता है कि. .... ।

2.1.7 शैक्षिक अनुसंधान - अन्त: अनुसंधान उपागम पर आधारित - शैक्षिक अनुसंधान-अन्त: अनुसंधान उपागम पर आधारित होता है । शिक्षा के क्षेत्र की कोई भी समस्या का हम क्यों न चुनाव करें, व्यावहारिक रूप से समस्या मनोविज्ञान, समाजशास्त्र, धर्मशास्त्र, नीति एवं राजनीतिशास्त्र अथवा विज्ञान आदि से संबंधित हो सकती है तथा अनेक अनुशासनों की विशिष्ट शोध -विधि संकल्पनात्मकता विचारधारा पर भी आधारित होती है ।

2.1.8 शैक्षिक अनुसंधान परिणाम - प्राकृतिक विज्ञानों के अनुसंधान के समान शत/प्रतिशत यथार्थ या सटीक नहीं - शैक्षिक अनुसंधान के अन्त: अनुशासन उपागम होने के साथ-साथ उपलब्धियों एवं परिणाम निरूपण के दौरान निश्चित विशिष्टता (Specification) उन अंशों तक प्राप्त नहीं हो पाती है, जितनी प्राकृतिक विज्ञानों के शोध कार्यो में देखी जाती है । 'साक्षात्कार ' की पद्धति का सामान्यत: वहां उपयोग होता है, जहां विज्ञान एवं कला दोनों का

संगम दिखलाई पडता है । किसी "प्रयोगात्मक शोध विधि' पर आधारित परीक्षण परियोजना में परिणाम-निरूपण में शुद्ध परिणाम ज्ञात करने के लिए जिन संबंधित चरों को नियंत्रित करना एवं संचालित करना होता है वह इतनी शुद्धता से नहीं हो पाता है जितना प्राकृतिक विज्ञानों में किया जाना संभव होता है क्योंकि मानव व्यवहार एवं उसका अध्ययन निरन्तर गतिशील बना रहता है । मनोविज्ञान की प्रयोगशालाओं में भी मानवीय व्यवहार आधारित अध्ययन की उपलब्धियाँ उतनी वैज्ञानिक नहीं बन पाती है ।

2.1.9 शैक्षिक अनुसंधान - केवल विशेषज्ञों का ही क्षेत्र नहीं - कोई भी शिक्षक प्रशासक एवं प्राचार्य जिसमें सामान्य समझदारी है, बुद्धि है, अनुभव है, जानकारी है तथा पर्याप्त सूझ-शक्ति है वह शिक्षा संबंधी समस्या पर शोध कार्य किसी न किसी स्तर सम्पादन कर सकता है । उदाहरणार्थ छात्र वर्ग के विकास के लिए विषय संबंधी पाठ एवं अनुदेशन के उद्देश्यों को निर्धारण करना, उन्हें अभिप्रेरणा प्रदान करना, उपयुक्त एवं उत्तम प्रकार की शिक्षण विधियों का प्रयोग करना, अन्ततोगत्वा, शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को अधिक प्रभावपूर्ण बनाकर छात्र वर्ग की शैक्षिक उपलब्धियों का उच्च बनाना आदि सभी शैक्षिक क्रियाकलाप के अंग है तथा शिक्षा शोध के विषय बिन्दु भी है । शिक्षा में लगे सभी व्यक्तियों का इन से संबंध है । शिक्षा के व्यावहारिक क्षेत्र में किये जाने वाले अनुसंधान में यह भावना स्वत: ही समाहित रहती है कि अनुसंधानकर्ता (शिक्षक प्राचार्य प्रशासक एवं अन्य लोग) अपने कार्यो को पहले की अपेक्षा अधिक श्रेष्ठ विधि से करने के लिए सतत् प्रयासरत रह कर नवीनतम की खोज करेगा । सैद्धान्तिक शोध अवश्य ही विशेषज्ञ ही कर पाते हैं) व्यावसायिकता का होना सदैव आवश्यक है ।

शोध कार्य करने के दौरान अधिक मूल्यवान उपकरणों की आवश्यकता नहीं होती है । अधिकतर शैक्षिक अनुसंधान के सम्पादित करने में विभिन्न उपकरणों पर बहुत अधिक धन व्यय नहीं करना होता है । केवल (अ) कागज तथा पेन्सिल (ब) मानवीय सामग्री अर्थात् छात्र, शिक्षक, प्राचार्य, प्रशासकगण (स) पुस्तकालय सुविधाएं तथा (द) प्रारम्भिक सांख्यिकी का ज्ञान आदि ही शिक्षा में शोध कार्य करने के लिए प्रारंभिक रूप से आवश्यक होता है । सुखिया-मेहरोत्रा (1973, पृष्ठ 11) आदि का मत है कि शोध पत्रों के प्रकाशन के लिए उपयुक्त वर्णित वस्तुओं को ही आवश्यकता होती है ।

2.1.10 शैक्षिक अनुसंधान - केवल यांत्रिक-क्रिया मात्र नहीं - शैक्षिक अनुसंधान में यांत्रिक-क्रिया जैसा प्रयोग ही नहीं किया जाना चाहिए । यह इससे अधिक आगे का कार्य है, जहां नवीन अनुभव एवं ज्ञान से शोधकर्ता का साक्षात्कार होगा । चूंकि, अनुसंधान को उद्देश्य शिक्षा के क्षेत्र में कुछ अपना योगदान प्रतिस्थापित करना है, जिससे किसी वरीयतम जिज्ञासाओं के संभावित, लेकिन सटीक उत्तर खोजे जा सकें । अत: प्रदत्तों का संग्रह, विश्लेषण एवं आलेखन इस प्रकार से किया जाता है । जिससे कि घटनाचक्र या परिस्थिति के आधार पर बनी परिकल्पनाओं का परीक्षण किया जा सकें तथा घटनाचक्र या परिस्थिति/विषयवस्तु की उपलब्ध नवीन साक्ष्यों एवं नवीन ज्ञान के आधार पर व्याख्या की जा सकें । लेकिन यह सभी कार्य मौलिकता से तर्क विचारों से युक्त नवीन प्रक्रिया पर आधारित होता है । वैसे ही सूचनाओं का

एकत्रीकरण, सारणीयन एवं परिणाम निरूपण नहीं होता है अर्थात् "अचानक की गई दिमागी कसरत" शोध कार्य नहीं है ।

अत: शैक्षिक अनुसंधान की विशेषताओं के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि इसके भी अपने मानदंड है, अपनी एक विशिष्ट प्रक्रिया है जिसमें वैज्ञानिकता एवं क्रमबद्धता समाहित है । शोध समस्याएं नीतिशास्त्र - समाजशास्त्र, मनोविज्ञान एवं दर्शन से संबंधित होने के साथ-साथ लक्ष्य सूचक भी है । शोध कार्य के लिए कल्पनाशील, समर्पित, योग्य-नीरक्षीर शिक्षा संबंधित विवेकी बुद्धि से युक्त अनुसंधानकर्ताओं की आवश्यकता है जो कि शिक्षा के क्षेत्र में नवीनता लाना चाहते हैं, समस्याओं के हल के लिए वैज्ञानिक, सूझपरक दृष्टिकोण से युक्त होकर संभावित कारणों की खोज करना चाहते है तथा संभावित वैज्ञानिक हल प्रस्तुत करने के इच्छुक हैं ।

चूंकि, शिक्षा शोध कार्य प्रक्रिया इतनी वैज्ञानिक, जटिल एवं अथक परिश्रम साध्य है । अत: इस प्रक्रिया को सम्पादित करने के दौरान अनुसंधान की सीमाओं एवं बाधाओं का भी अध्ययन किया जाना आवश्यक प्रतीत होता है । अत: शैक्षिक अनुसंधान संबंधित बाधाओं (constraints) एवं सीमाओं (Limitations) का अध्ययन निम्न रूप में किया जा रहा है ।

2.2 शैक्षिक अनुसंधान - बाधाएं (Educational Research-Constraints)

बाधाएं अथवा व्यवधान से तात्पर्य शैक्षिक अनुसंधान के संदर्भ में आने वाली उन बाधाओं एवं कठिनाइयों से है जिनमें शोध कार्य सम्पादन प्रक्रिया में व्यवधान उत्पन्न होता है तथा निश्चित सीमा की अवधि में कार्य भली प्रकार सम्पन्न नहीं हो पाता है । संक्षेप में जिन कठिनाइयों को शोधकर्ता अपने शोध कार्य सम्पादन प्रक्रिया में झेलता है, उनसे जूझता है जो उसे कभी कभी अपने मार्ग से विचलित सा कर देती है । वह अपना धैर्य खोने लगता है तथा कभी-कभी बहुत तनावग्रस्त हो आया करता है, ऐसे सभी अनुभव अन्य कठिनाइयां, तनाव-बाधाएं कही जाती है । इनका विवेचन निम्न रूप से किया जा सकता है -

चूंकि शैक्षिक अनुसंधान का प्रमुख लक्ष्य मानवीय व्यवहार का अध्ययन है, जो एक अत्यन्त जटिलतम प्रक्रिया (Complex Process) है । अत: उसके स्वरूप का वर्णन विवेचन एवं व्याख्या करना भी अत्यन्त कठिन प्रतीत होता है । मानवीय संघटन (Organism) के किसी भी अंग की शुद्ध वैज्ञानिक व्याख्या एवं विवेचना करना अत्यन्त कठिन कार्य होता है । मानवीय व्यवहार के संचालन में इतने अधिक चर (variables) क्रिया करते है, कि उन सभी चरों को वैज्ञानिक विधि से नियंत्रित करना कठिन होता है, तथा न ही उनकी वैज्ञानिक व्याख्या ही की जाती है । जिन नियमों एवं सिद्धान्तों का प्रतिपादन भी किया जाता है ये भी सीमित परिस्थितियो में ही शुद्ध एवं सही साबित होते हैं ।

शिक्षा-जैसे "व्यवहारपरक विज्ञान" (Behavioural Sciences) में अन्य ऐसे विज्ञानों, मनोविज्ञान, समाजशास्त्र एवं दर्शन की भांति ही नियमों एवं सिद्धान्तों की शत-प्रतिशत शुद्धता के साथ वैज्ञानिक-विवेचना नहीं की जा सकती है । यह शिक्षा शोध की एक प्रमुख बाधा है जबकि

विज्ञान के क्षेत्र में प्रयोग एवं परीक्षण पर आधारित निकाले एवं खोजे गये नियम एवं सिद्धान्त लगभग शत-प्रतिशत शुद्धता का प्रतिपादन करते हैं, तथा किसी भी परिस्थिति, स्थान, जलवायु के बीच वैज्ञानिक नियमों एवं सिद्धान्तों की सत्यता पर प्रश्न चिन्ह नहीं लगाया जा सकता है, जबकि मानवीय अध्ययन पर आधारित व्यवहारपरक विज्ञान की सभी शाखाओं एवं उपशाखाओं में विकसित किये गये सिद्धान्तों में शत-प्रतिशत शुद्धता यदि 60 प्रतिशत शुद्धता भी आ जाय तो, मान लिया जाता है ।

सिद्धान्तों नियमों के समान ही समावेदना प्रत्यय एवं विचार तथा परिभाषाएं जिनसे कि मानवीय व्यवहार की विशिष्ट पक्षीय विवेचना की जाती है, वे भी पूर्णरूप से निरपेक्ष नहीं रहती है वरन् सापेक्ष आशय (Relatives Meaning) को समाहित किये रहती है ।

अनुसंधान कार्य सम्पन्न करने के लिए आवश्यक सूचनाएं एवं प्रदत्त व एकत्र करने के लिए जितने भी मनोवैज्ञानिक तथा शैक्षिक परिक्षण एवं प्रविधियों का निर्माण किया जाता है, शुद्धता का अंकन किया जाता है, विश्वसनीयता एवं वैधता नापी जाती है तथा मानक आदि भी निकालें जाते हैं, फिर भी सभी शैक्षिक एवं मनोवैज्ञानिक उपकरण शत-प्रतिशत शुद्ध (Hundred percent Accurate) नहीं होते हैं, न उन पर इतनी यथार्थता ही निहित होती है जैसे बुद्धि-परीक्षण संस्कृति संदर्भित अथवा शैक्षिक-उपलब्धि परीक्षण जैसे प्रतीत होते हैं, मानों वे सामान्य ज्ञान का परीक्षण ही ले रहे हो । अत: ऐसे परीक्षणों से शोध कार्य के लिए जो भी प्रदत्त एकत्र किये जाते हैं वे भी उतने वैध नहीं होते हैं । जितने होने चाहिये ।

शोध के लिए उपलब्ध माप उपकरण प्रश्नावलियां (Questionnaires), मतावलियां (Opinionnaires), सूचियां (Inventories) एवं निर्धारण मापनी Rating Scales) में वस्तु स्थिति चित्रण के साथ पूर्वानुमान (Prediction) करने अथवा पूर्व कथन करने की क्षमता अधिक विकसित नहीं हो पाई हैं । यहां तक विशिष्टता का शुद्ध मापन भी नहीं कर सकते हैं, जिन के मापन के लिए वे निर्मित किये गये है । यही कारण है कि उन में पूर्व कथन करने की क्षमता बहुत कम है जो अनुसंधानकर्ताओं के लिए एक समस्या है ।

बुद्धि, अभिवृत्ति रूचि आदि चर भी ऐसे हैं, जिनकी सटीक, यथार्थ परिभाषा नहीं हो पाती है, उनकी संकल्पना व उनसे आशय भी सर्वसम्मत एक ही नहीं होता है, अत: उनका मापन भी यथार्थ नहीं हो पाता ।

2.3 शैक्षिक अनुसंधान - सीमाएं (Educational Research-Limitations)

सीमाओं से तात्पर्य अनुसंधान कार्य के दौरान आने वाली उन कठिनाइयों से हैं, जिनका अनुसंधानकर्ता को निरन्तर अनुभव होता रहता है, जिनके संपर्क में रह कर उसे सतत् कार्य करना होता है तथा जिनका मुकाबला करने के लिए उसे मानसिक रूप से तैयार रहना पडता है । शोध कार्य-सम्पादन में आने वाली कठिनाइयां या सीमाएं कुछ उसकी अपनी होती है यथा व्यक्तिगत (Individual), कुछ परिस्थिति जन्य (Situational), कुछ भौतिक (Physical) एवं कुछ प्रशासकीय (Departmental) होती है । बहुधा अनुसंधानकर्ता किसी विभाग,

विश्वविद्यालय एवं किसी अनुसंधान केन्द्र (Research Centre) से सम्बद्ध होता है जहां उसे अन्य विभागीय कार्यो के सम्पादन के साथ निहित अनुसंधान कार्य भी करना आवश्यक होता है । अत: यहां कुछ एक सीमाओं की विवेचना उपर्युक्त वर्णित विषय बिन्दुओं के अन्तर्गत की जा रही है ।

2.3.1 अनुसंधानकर्ता की स्वयं की सीमाएं :- अनुसंधानकर्ता को जब व्यक्तिगत शोध कार्य करना होता है तो वह फिर किसी डिग्री 7 डिप्लोमा के लिए किया जाता है । शिक्षा में स्नातकोत्तर उपाधि (M.A. (Education) (M. Ed.) या एम.फिल. (M. Phil) के लिए कुछ छोटी-छोटी शोध समस्याओं को लेकर वर्ष या कुछ माह के बीच कार्य संपन्न कर अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करनी होती है । यहां शोधकर्ता को केवल अपने विषय की समस्याओं एवं वैज्ञानिक-अनुसंधान की प्रविधि एवं प्रक्रिया से परिचित कराना तथा उनका प्रारम्भिक अनुभव देना ही प्रमुख उद्देश्य होता है । अत: जब अनुसंधानकर्ता को केवल अनुसंधान करना सीखना मात्र ही उद्देश्य है तो वह फिर उसके कार्य में श्रेष्ठता व गहनता नहीं हो पाती हैं । अनेक कमियां स्पष्ट दिखाई देने लग जाती है । कहीं - कहीं तो छात्रगण पुराने शोध ग्रन्थों में से विषय वस्तु को थोड़े परिवर्तन के साथ-साथ नकल करते तक देखे जाते हैं, जिसमें उनका स्वयं का कुछ नहीं होता है । ऐसे शोध कार्य का सम्पादन कराना एवं कभी - कभी शोध निर्देशक को उसकी कृति को प्रमाणित करने के लिए हस्ताक्षर करना एक समस्या बन जाती है । लेकिन, चूंकि समय की सीमा में कार्य की सम्पन्नता एक शोध कार्य की सीमा बन जाया करती है अत: इस परिस्थति में शोध कार्य करना तथा उसकी मौलिकता को प्रमाणित करना भी कठिन हो जाता है ।

2.3.2 डिग्री-आधारित अल्प स्तरीय अनुसंधान कार्य एक विचारणीय सीमा - अधिकतर एम.एड./ एम.फिल. स्तरीय शोधकर्तागण शोध कार्य करने में गहन प्रशिक्षण, योग्यता एवं क्षमता भी विकसित नहीं कर पाते हैं और उन को शोध के सोपान, कार्य-प्रक्रिया के बारे में अधिक जानकारी ही होती है । उनका संबंधित विषयगत ज्ञान भी अल्प होता है । कभी-कभी तो जब बिना संबंधित साहित्य का अध्ययन किये शोध-कार्य रूपरेखा अकस्मात् मिल जाया करती है, तो फिर उस ग्राह्य विषय में उसकी बिलकुल भी गति नहीं हो पाती है । परिणामत: संबंधित साहित्य के अध्ययन के बिना शोध कार्य के गहन-अध्ययन एवं अभ्यास के अभाव में बनाई जाने वाली शोध कार्य रूपरेखा तथा उसका क्रियान्वयन शोधकर्ता की सबसे बडी सीमा बन जाती है तथा उसका यह संकट भी होता है ।

2.3.3 अनुसंधान कार्य प्रक्रिया जनित सीमाएं - अनुसंधान कार्य प्रक्रिया के सम्पादन के बीच भी अनुसंधानकर्ता को कुछ कठिनाइयों का सामना करना पडता है जो कि वास्तव में अनुसंधान कार्य प्रक्रिया की सीमाएं है जिन्हें सामान्यत: विषयगत सर्वेक्षण के दौरान प्रत्येक शोधकर्ता द्वारा अनुभव किया जाता है ।

(i) **प्रदत्त' सूचनाएं एकत्रीकरण से संबंधित -** जहां किसी सामाजिक एवं शैक्षिक सर्वेक्षण में किसी प्रश्नावली या सूची की सहायता से विभिन्न सूचनाएं एकत्रित की जाती है, वहां अनुकर्ताओं (Respondents) से प्रश्नावली या सूची को भली प्रकार भरवाया जाना बडी ही

टेढी-खीर होती है। अनुकर्ताओं को बार-बार याद दिलाना कि वे कृपया समय निकाल कर प्रश्नावली भरे, या चैक लिस्ट पर यथा स्थान रेखांकित करें, बडा कठिन कार्य होता है । विशेष रूप से प्रश्नावली के प्रारूप उन परिस्थितियों में अधिकतर लौट कर नहीं आते हैं - (अ) अनुकर्ताओं को प्रश्नों के लम्बे-लम्बे उत्तर स्वयं लिखने होते हैं अर्थात् प्रश्नपद में उत्तर विकल्पों में लिखे नहीं होते हैं। (ब) अनुकर्तागण शिक्षण तथा अपने शैक्षिक कार्यो में बहुत व्यस्त रहते हैं, विशेष रूप से परीक्षा काल के दौरान। (स) अनुकर्तागण शिक्षा अधिकारी के रूप से स्वतंत्र रूप से कार्यरत होते है तथा उन्हें प्रश्नावलियों, मतावलियों सूचियों को भरने का समय ही नहीं होता है। (द) अनुकर्तागण सम्पादित किये जा रहे शोध कार्य के उद्देश्य आशय को नहीं समझ पाते है तथा प्रश्नावली सूची को भरना अपने समय की बरबादी समझने लगते हैं । इन सभी परिस्थितियों को अनुकर्ताओं को बार-बार भरे जाने के लिए स्मरण कराना तथा उनसे निर्धारित समय में ही प्राप्त करना एक बहुत बडी कठिनाई तथा अनुसंधान कार्य प्रक्रिया की सीमा होती है । अनुकर्ताओं को कैसे प्रेरित किया जायें, यह कौशल शोधकर्ता को सीखना होता है। इस कौशल में पारंगत न होना ही सूचना प्रदत्त एकत्रीकरण करने में बाधक होता है।

(ii) **प्रदत्त-बिश्लेषण एवं विबेचन से संबंधित सीमाएं -** सूचनाएं एवं प्रदत्त एकत्रीकरण के पश्चात् प्रदत्तों के वैज्ञानिक विश्लेषण हेतु भी अनेक समस्याओं का सामना शोधकर्ता को करना होता है। प्रदत्तों के सांख्यिकीय विश्लेषण हेतु उसे अपनी सीमाओं के अन्दर निम्न निर्णय स्वयं लेने होते हैं:-

(अ) संकलित प्रदत्तों को सांख्यिकी प्रविधि की पूर्ण जानकारी के आधार पर स्वयं अथवा संगणक (Calculator) की सहायता से वह प्रदत्तों का विश्लेषण करें । ऐसा करना स्वयं में एक समय-साध्य, श्रम-साध्य एवं लगन-युक्त कार्य है, जिसमें त्रुटियों की संभावना भी हो सकती है। कभी-कभी यदि प्रदत विश्लेषण प्रक्रिया अति जटिल हैं, सूक्ष्म एवं गहन सांख्यिकी प्रविधि का प्रयोग किया जाना है तथा यदि शोध कार्य के लिए निर्धारित अवधि भी कम है तो संगणक की सहायता से भी प्रदत्तों का विश्लेषण करना बहुत कठिन होता है ।

(ब) यदि अनुसंधानकर्ता को सांख्यिकी प्रविधि की पूर्ण जानकारी नहीं है, संगणक का भली प्रकार प्रयोग करना भी अनुसंधानकर्ता नहीं जानता है तो ऐसी स्थिति में उसे 'कम्प्यूटर' का प्रयोग करना आवश्यक होता है लेकिन कभी-कभी 'प्रोग्राम संचालनकर्ता' (Programmer) उपलब्ध नहीं होते हैं । यदि किसी प्रकार प्रदत्त-विश्लेषण हो भी गया तो फिर उस के विवेचनकर्ता (Interpretors) विशिष्ट विद्वान उपलब्ध नहीं हो पाते जो विश्लेषित उपलब्धियों को वैज्ञानिक ढंग से शोध की भाषा में वर्णित एवं विवेचित कर सकें ।

2.3.4 अनुसंधान-ज्ञान की परिधि को द्रुतगति से विकसित करने में अक्षम-विशिष्ट सीमा - ज्ञान के क्षेत्र में शोध कार्य निरन्तर चल रहा है तथा नवीन ज्ञान शिक्षा, मनोविज्ञान, समाजशास्त्र, दर्शन आदि क्षेत्र में निरन्तर बढता जा रहा है । नवीन शोधकार्यों की उपलब्धियों खोजों के माध्यम से पुरानी मान्यताओं में परिर्वन आता जा रहा है । यह सहज में देखा जा

सकता है कि शिक्षा के क्षेत्र में सम्पादित किये गये अनुसंधान ज्ञान की परिधि को दुतगति से विकसित नहीं कर पा रहे है। शिक्षक प्रशिक्षण, दर्शन, शिक्षण-प्रौद्योगिकी तथा शिक्षा-प्रसार, सम्प्रेषण, सुदूर शिक्षा में प्रभावी प्रविधियों की खोज हेतु किया जाने वाला शोध कार्य मानक ग्रहण नहीं कर पाया है और वह प्रयोगशालाओं से वास्तविक क्षेत्र तक नहीं पहुँच पाया है । शिक्षा-प्रशिक्षण प्रसार एवं प्रौद्योगिकी क्षेत्र में आयोजित किये गये अनुसंधान की ये प्रमुख सीमाएं है :-

आज हम सुदूर शिक्षा, पत्राचार शिक्षा, खुले-विश्वविद्यालयों तथा अभिनव विश्वविद्यालयों को बातचीत तो बहुत करते है । विदेशों में सम्पादित किये गये शोध अध्ययन की उपलब्धियों के आधार पर अपने मत को पुष्ट कर अपना पक्ष अपने शोध पत्रों में प्रस्तुत करते हैं । विभिन्न सम्प्रेषण विधियों की व्याख्या एवं विवेचना भी करते है, उनकी उपयुक्तता तथा सीमाओं की समालोचना भी करते हैं । लेकिन क्या कभी हमने यह सोचा तथा गहन रूप से आवश्यकता अनुभव की थी कि भारतीय परिवेश में उपर्युक्त वर्णित आवश्यकता जनित शीर्ष बिन्दुओं पर क्या कोई नवीन कार्य हमने किया है? यदि कहीं हमने शोध कार्य कुछ किया भी है तो क्या वह वास्तविक उपभोक्ता तक पहुंच पाया तथा उस समूह ने शोध उपलब्धियों पर आधारित अपनी कार्य प्रक्रिया में क्या कुछ परिवर्तन किया । शिक्षा के विभिन्न क्षेत्रों में सम्पादित किये गये शोध कार्यो की यह एक बहुत बडी सीमा है कि शोध उपलब्धियों शिक्षा-संस्थान, प्रयोगशालाओं से प्रशिक्षण केन्द्रों तथा सामान्य कार्य-कर्ता तक नहीं पहुंच पाई है और यदि पहुंची भी है तो उनका स्वागत नहीं किया गया है । इसका ज्वलन्त उदाहरण है परीक्षा के क्षेत्र में किया जाने वाला शोध आधारित अभिनव प्रयोग "संपुस्तक परीक्षा" जिसे उ.प्र. में माध्यमिक स्तर पर प्रयोग के रूप में लागू किये जाने के बाद भी न तो वह अध्यापकवर्ग को पसंद आया, न प्रधानचार्य वर्ग को और न शिक्षा अधिकारी वर्ग को परिणामत: उस अभिनव प्रयोग को बंद कर देना पडा तथा फिर चलने लगी वही परम्परागत परीक्षा-प्रक्रिया ।

2.3.5 अनुसंधान कार्य केवल विभागीय अनुसंधान हेतु एक विशिष्ट सीमा - कहीं-कहीं शोध कार्य जब समूह में अनुसंधान संस्थाओं द्वारा नियंत्रित किये जाते हैं तो उन्हें 'विभागीय अनुसंधान' ही कह कर पुकारा जाता है । उनमें बहुधा शोध कार्य शोध के लिए किया जाता है, किसी विभागीय शीर्ष अधिकारी की मर्जी को पूरा करने के लिए या उसके विचारों को सिद्ध करने के लिये किया जाता है । कभी-कभी ऐसा शोधकार्य आवश्यकतापरक उददेश्योन्मुखी एवं उपयोगितापरक नहीं बन पाता है । ऐसे शोध कार्य का सम्पादन उसी समय तक किया जाता है जब कि वह शीर्ष अधिकारी पदेन है या उस विभाग से संबंधित है, क्योंकि वहीं अधिकारी या वर्ग शोध कार्य सम्पादन के लिए निश्चित बजट-धन की व्यवस्था करता है, मानव संसाधन विकसित करता है तथा जब यह विभाग से जाने को होता है तो जैसे-जैसे सूचनाओं तथा प्रदत्तों को एकत्रित कर शोध उपलब्धियों को प्रदत्त विश्लेषण के आधार पर प्रस्तुत कर शोध परियोजना को अन्तिम विराम दे दिया जाता है । ऐसा शोध साहित्य विभागीय अलमारी में सजा दिया जाता है तथा फिर कभी ऐसा अधिकारी आता है तो पुन: वह कार्य प्रारम्भ कर दिया जाता है । सामान्यत: सभी प्रदेशों को शिक्षा-विभाग में संचालित शिक्षक प्रशिक्षण एवं शोध संस्थान, शीर्ष

व्यक्ति आधारित प्रयोग एवं परीक्षण पर चला करते हैं । बीच-बीच में शोध कार्य प्रगति मंद गति से ही चलती रहती है । यह विभागीय शोध संस्थान एवं उनके क्रियाकलापों पर आधारित शोध सीमाएं हैं ।

2.3.6 शोध कार्य संचालन, सम्पादन एवं प्रकाशन में वित्तीय असुविधा, अनुपलब्धि एवं अपर्याप्तता एक विचारणीय सीमा - चाहे शोध कार्य का नियोजन एवं क्रियान्वयन व्यक्तिगत हो या फिर विभागीय धन एवं सुविधाओं का उपयुक्तता के आधार पर यह समय से उपलब्ध न हो पाना भी गंभीर समस्या, शोध कार्य सीमा एवं शोधार्थी का व्यक्तिगत संकट बन जाता है । व्यक्तिगत प्रयास को जाने भी दे विभागीय शोध कार्य सम्पन्न हुए वर्ष बीत गया, पिछली व्यय की गई धनराशि का भुगतान नहीं हो पा रहा है, शोध आख्या लिखी पडी है, लेकिन प्रकाशित करने के लिए धन की व्यवस्था नहीं हो पा रही है, तो फिर ऐसे सम्पादित शोध कार्य, परिश्रम से बनी उपलब्धियों एवं संबंधित सुझावों का महत्व ही क्या है? यदि कहीं विभागीय स्तर पर शोधकर्ता-विशेष की पदोन्नति हो गई तथा स्थानान्तरण हो गया तो फिर वह रिपोर्ट, उसका प्रकाशन सभी कुछ लम्बी अवधि के लिए अवरूद्ध हो जायेगा । यह भी शोध कार्य की महत्वपूर्ण सीमा है । व्यक्तिगत स्तर पर डिग्री के लिए आयोजित शोध कार्य, चाहे जितने परिश्रम, निष्ठा, लगन से आयोजित किये गये हों सामान्यत: अप्रकाशित ही रहा करते हैं तथा शनै: शनै: उनका महत्व सदा-सदा के लिए कम होता चला जाता है ।

2.3.7 विशिष्ट शैक्षिक कार्यक्रमों से संलग्न व्यक्तियों के लिए नबीनतम शोध कार्य जनित परिणामों की अनुपलब्धता एक सीमा - शिक्षा-प्रसार, कृषि-शिक्षा, गृहविज्ञान-शिक्षा ग्रामीण स्तरोन्नयन कार्यक्रम के संदर्भ में आयोजित किये जाने वाले शोध कार्य जनित परिणाम सामान्य जन क्षेत्र में लगे कर्मचारीगण, अधिकारीगण तक उपलब्ध नहीं है । यदि उनकी उपलब्धियों के आधार पर विभिन्न कार्यक्रमों में किये जाने वाले परिवर्तनों की जानकारी नहीं है, कार्यक्रम आयोजन में शोध निर्धारित व्यूह रचनाओं की जानकारी क्षेत्र में कार्यरत व्यक्ति को यदि नहीं है तो फिर व्यक्ति अथवा समूह की परम्परागत कार्य शैलियों में कैसे परिवर्तन आ पायेगा, यह एक समस्या हैं? ऐसे व्यावहारिक एवं उपयोगी शोध कार्य योजना की अपनी सीमाएं है जो किन्हीं कारणों से या सशक्त प्रचार-माध्यम के अभाव में शोध उपलब्धियों शोधशालाओं, या संस्थाओं से सीधे कार्य क्षेत्र तक (from lab to land) नहीं पहुंच पाती है । अगर नवीन खोजे गये शिक्षण प्रतिमान (Teaching Models) सामान्य विद्यालयी शिक्षक तथा प्रसार कार्यकर्ता तक नहीं पहुंच पाते हैं, तो यह शैक्षिक अनुसंधान की विचारणीय सीमा ही कही जायेगी । यह सीमा ही नहीं वरन् शोध कार्य का व्यावहारिक संकट भी है ।

निष्कर्षत: यदि हम इन शोध सीमाओं को संकट के रूप में आवश्यक समझकर उचित समय पर उचित निर्णय लें तथा धन, भौतिक सुविधा आदि की उचित समयानुसार व्यवस्था बनायें तथा शोध परिणाम कार्यान्वित करें तो बहुत सा उपयोगी शोध-साहित्य प्रकाश में आयेगा । शोध के नवीन आयाम खुलेंगे तथा नये-नये शोध कार्यकर्ता संस्थाओं एवं विभागों में उपलब्ध होंगे । करना यही है कि शोध कार्य की विशेषत: शिक्षा क्षेत्र में व्यक्ति, विभाग, समाज एवं राष्ट्र की आवश्यकता समझी जाये ।

2.3.8 समुचित निर्देशन एवं प्रेरणा का अभाव एक विशिष्ट विचारणीय सीमा - अनुसंधानकर्ता को शोध कार्य प्रक्रिया के दौरान निरन्तर अपने शुभ चिन्तकों से सम्पर्क रखना पडता है जो उसके द्वारा सम्पादित किये जाने वाले शोध कार्य के दौरान उसे निरन्तर प्रेरणा प्रदान करने के साथ-साथ उसका पग पग पर निम्न वर्णित शोध सोपानों के संदर्भ में सतन् निर्देशन करते रहेंगे (अ) अनुसंधान कार्य योजना हेतु रूप रेखा निर्माण (Preparing Synopsis) के दौरान उसे पर्याप्त सहायता एवं निर्देशन प्रदानकर (ब) अनुसंधान कार्य के अभिकल्प निर्माण करने (Preparing Research Design) के दौरान (स) उपलब्ध रूपरेखा के आधार पर संबंधित साहित्य के अध्ययन के दौरान (Studying Related Literature) (द) संकलित सूचनाओं/ प्रदत्तों के संकलन के दौरान (During collection of the data and research material) (य) उपलब्ध सूचनाओं/प्रदत्तों के प्रस्तुतीकरण, विश्लेषण, वर्णन एवं विवेचन के दौरान (During the presentation analysis and interpretation of the data and facts) (प) परिणाम- निरूपण, सीमांकन एवं सुझाव प्रतिवेदन (Reporting the conclusion, limitation and suggestions) दौरान ।

सामान्य रूप से देखा जाता है कि अनुसंधान का प्रारूप बनवाये जाने, संबंधित साहित्य के अध्ययन के दौरान तो शोध निर्देशकों एवं विभागों द्वारा निर्देशन कर दिया जाता है, लेकिन उपकरण निर्माण अथवा शोध अध्ययन कार्य-प्रक्रिया के सुनिश्चितीकरण के समय यह निर्देशन कम सीमा में मिल जाता है । अधिकतर शोधकर्ताओं को सूचनाओं-प्रदत्तों के प्रस्तुतीकरण विश्लेषण एवं विवेचन के दौरान उपयुक्त गहन एवं अनुभवी निर्देशन जब शोध-निर्देशकों द्वारा नहीं मिल पाता है तो शोधकर्ताओं में तो जब शोधकर्तागण किन्हीं कारणों से अधिक शीघ्रता में होते हैं, शोध-निर्देशकगण अपने पुनीत कर्तव्य के प्रति चिन्तित प्रतीत नहीं होते हैं अथवा शोध कार्य के साथ-साथ वे यश एवं धनार्जन की ओर भी उन्मुख हो जाते हैं तथा जब शोध कार्य करना तथा कराना दोनों का ही एक व्यावसायिक कार्य हो जाता है तो ऐसी परिस्थिति में समुचित निर्देशन एवं प्रेरणा के अभाव की अनुभूति होने लगती है ।

समुचित निर्देशन प्रदान करने तथा प्राप्त करने के लिए शोधार्थी तथा शोध निर्देशक के बीच 'प्रभावी अन्त: क्रिया-प्रक्रिया'' (Effective Interaction Process) एवं 'सुमधुर-संबंधों' का होना बहुत आवश्यक हैं, जिसमें परस्पर प्रेम-श्रद्धा तथा सहायता समाहित हो, दोनों एक दूसरे के व्यक्तित्व का आदर करें, परस्पर दोनों ही अपनी-अपनी सीमाओं एवं कठिनाइयों को समझें तथा सूझ-बूझ के आधार पर शोध सम्पन्न करें तथा करायें-अन्यथा दोनों के बीच पडने वाली दरार शोध कार्य सम्पादन के बीच बहुत बडी सीमा या बाधा बन कर उपस्थित हो जाया करती है ।

23.9. शोध संस्कृति का अभाव एक विशिष्ट विचारणीय सीमा-समाज में प्रश्न करने, समालोचना करने वालों को बिना हिचक के मान लेने, शिक्षक अध्यापक के अधिकार में दबे रहने आदि की संस्कृति में छात्र बिना सोचे विचारें तर्क-विश्लेषण किये मान लेने को बाध्य होता है । जब बडों की गुरूजनों की बात को बिना प्रश्न किये चुपचाप सहीं मान लें, शोधकर्ता प्रत्येक समय निर्देशन पर निर्भर रहे, तो कार्य कैसे अच्छा होगा । ऐसा व्यवहार प्रशंस्य होता है, तब छात्र किसी भी ज्ञान के लिए जिज्ञासु नहीं होता । ऐसे वातावरण में शोध कार्य श्रेष्ठ स्तर का नहीं हो सकता

। शोध का स्तर तो तभी ऊंचा होगा जब शिक्षा अधिगम में खुलापन हो, वाद-विवाद हो, सबको अपने विचार प्रकट करने की स्वतंत्रता ही नहीं, प्रोत्साहन हो । ऐसे परिवेश का अभाव शोध कार्य की प्रमुख बाधा है ।

2.4 शैक्षिक अनुसंधान - नीतिगत विवेचन (Educational Research Ethical Considerations)

अनुसंधान कार्य में सम्पादन भी एक प्रकार से स्वयं में ही एक नीतिपरक परम पुनीत कार्य है अथवा कोई बडा अनुष्ठान आयोजन है, जिस में अनुसंधानकर्ता की निष्ठा, तपस्या एवं समर्पण भावना ओतप्रोत होती है । वह दत्तचित्त होकर तब तक लगनशीलता से कार्य करता जाता है जब तक यह अनुष्ठान सम्पन्न नहीं हो जाता है । सही मायने में यह असीम सत्ता के प्रति विनीत भाव से समर्पित किया गया कार्य है, जहां विषयगत ज्ञान के अगाध समुद्र में शोधकर्ता का भी अपना योगदान समाहित होता है । विषयगत नवीन शोध उद्भावनाओं, संभावनाओं से जुड कर नये नये मार्ग प्रशस्त किये जाते हैं तथा नवीन आयामों को खोजा जाता है । शिक्षा के क्षेत्र में तो यह वैसे ही निष्ठापूर्ण कार्य है, जहां शिक्षक शिक्षार्थी, पाठ्यक्रम मूल्यांकन, शिक्षण विधियों को केन्द्र बिन्दु मान कर नवीन संभावनाओं की खोज की जाती है । अधिगम शिक्षण विधियों को सरलतम बनाया जाता है । अमूर्त तथ्यों एवं संप्रत्ययों की सम्यक् रूप से विवेचना को जाती है । वहीं तो, यह और भी तपस्या से युक्त कार्य या अनुष्ठान बन जाया करता है तथा शोधकर्ता को इस अनुष्ठान के आयोजन एवं नियोजन में अनेक नीतिगत संकरे मार्ग एवं पगडंडियों के बीच होकर गुजरना पडता है । यदि उसने एक बार अपना मन शोध कार्य करने हेतु बनाया लिया तो उसे निश्चित रूप से निम्न नीतियुक्त मार्ग का अनुसरण करना ही होगा ।

2.4.1 अनुसंधान-प्रमाद रहित एक पवित्र कार्य - चूंकि नीति शब्द में "नौ" उपसर्ग है जिसका अर्थ है 'ले जाना' तथा "इति" प्रत्यय है जिसका तात्पर्य है 'समाप्ति की ओर' । अत: नीति शब्द का अर्थ हुआ समाप्ति की ओर प्रयाण करना । यह कार्य तात्कालिक लाभों के लिए न होकर निःस्वार्थ समर्पण की भावना से युक्त होता है । इसके लिए कुछ नैतिक संयमों एवं नियमों का होना आवश्यक है ।

2.4.2 अनुसंधान कार्य में अनुसंधानकर्ता की ज्ञानार्जनीय उत्कंठा एवं जिज्ञासा - वास्तव में अनुसंधानकर्ता को सत्य की खोज में लिप्त होना महत्वपूर्ण है । उसे नवीन ज्ञान के प्रति अपनी जिज्ञासा को निरन्तर विकसित करना होगा । जिसमें नवीन तथ्यों को जानने की तीव्र उत्कंठा नहीं होती है, वह शुद्ध अनुसंधानकर्ता नहीं हो सकता है । उसे ज्ञान का जिज्ञासा बन कर विपरीत परिस्थितियों' में भी मनोयोग से कार्य करते जाना होगा तथा अपने लक्ष्य तक पहुंचे बिना विश्राम न करना होगा । उसे तब तक नवीन ज्ञान की खोज करनी होगी, जब तक शोधगत सम्प्रत्ययों (Conceptions) शब्दों तथा तथ्यों की संदर्भगत व्याख्या एवं विवेचना (Interpretations) नहीं हो गयी है तथा विषयगत नवीन आयाम निकल कर बाहर नहीं जातें । अनुसंधानकर्ता में जिज्ञासा के साथ-साथ "कार्य संलग्नता" को भी विकसित करने का स्वाभाविक दायित्व विकसित करना होगा ।

2.4.3 अनुसंधान कार्य समपादन के बीच ईमानदारी, समझदारी तर्क सम्मतता का अनुसरण- अनुसंधानकर्ता से यह आशा की जाती है कि वह अपने कार्य सम्पादन के बीच निरन्तर ही ईमानदारी, समझदारी, तर्कसम्मतता तथा वस्तुनिष्ठता का मार्ग अपनायेगा । सूचनाओं-प्रदत्तों के प्रस्तुतीकरण, विश्लेषण एवं विवेचन में किसी प्रकार का पक्षपात नहीं अपनाया जायेगा । उसकी विवेचना किसी भी पूर्वाग्रह से ग्रसित नहीं होगी तथा तथ्यों के विवेचन, उपलब्धियों एवं शोध परिणाम के प्रस्तुतीकरण में किसी प्रकार के पक्षपात का मार्ग नहीं अपनाया जायेगा तथा जो जैसा है, वैसा ही वर्णन एवं विवेचन किया जायेगा । प्रस्तुत की गई सूचनाएं सभी प्रकार से विश्वसनीय एवं वैध होंगे

2.4.4 अनुसंधानकर्ता की अगाध लगन, परिश्रम, सूझ-बूझ एवं गहन स्वाध्याय से युक्त कार्य - अनुसंधानकर्ता को अपने मन में यह दृढ़ विश्वास जगाना होगा कि विषयगत अनुसंधान उसका अपना मौलिक अनुसंधान है, जिसे उसने स्वयं किया है । उसकी वर्तमान एवं भविष्यगत कृति में उसका अगाध परिश्रम, सूझ, विषयगत गहनता, स्वाध्याय निहित है । उसके विषय प्रतिपादन में तटस्थता से ही "सत्य" का अनुसंधान संभव हो सकेगा । उसे यह विश्वास भी रखना होगा कि समय की सीमा में ही अपना शोधकार्य सम्पन्न कर लेगा । अनुसंधान कार्य को सम्पन्न करने की प्रक्रिया में उसे कुछ नैतिक मान्यताओं तथा आदेशों का निरन्तर अनुसरण करना आवश्यक होगा तथा उसे अपने आचरण में भी परिवर्तन करने होंगे । आचरणगत परिर्वन कर बौद्धिक ईमानदारी, निष्ठा, लगन एवं सूझबूझ की सहायता से गहनतम रूचि अभिव्यक्त करने का दृढ-निश्चय अनुसंधानकर्ता को करना होगा ।

2.4.5 सत्य, धैर्य एवं कार्य संलग्नता से युक्त मार्ग अनुसरण - अनुसंधान कार्य प्रक्रिया के प्रत्येक स्तर पर यह अनुसंधानकर्ता सत्यता, धैर्य एवं कार्य संलग्नता से युक्त मार्ग का अनुसरण करेगा । वह संबंधित सूचनाओं एवं प्रदत्तों का एकत्रीकरण जहां तक संभव होगा प्राथमिक स्त्रोतों से ही करेगा । सूचनाओं/प्रदत्तों के एकत्रीकरण में सही तरीके ही (Accurate Methods) अपनाये जायेंगे तथा उनमें सत्यता भी समाहित होगी । डी. शर्मा (1990) के अनुसार "यदि वह पूर्ववर्ती विचारकों के विचारों का चवर्ण मात्र करना ही जानता है तो उसे शोध का अधिकारी नहीं माना जा सकता है" । (पृष्ठ 15-16 अधिकारी कौन ?")

संक्षेप में अनुसंधानकर्ता को अनुसंधान कार्य नीतिगत प्रक्रिया प्रारम्भ करने से पूर्व तथा सम्पन्न करने तक निम्न आधारों से स्वयं को युक्त बनाना होगा -

(अ) असुविधाजनक अरूचिकर शोध-निष्कर्षो को मानने का साहस ।

(ब) अनुकर्ताओं में प्राप्त जानकारी की गोपनीयता बनाये रखने का विश्वास दिलाना ।

(स) छोटी से छोटी जानकारी के लिए सतर्क रहना तथा गहराई से उसकी वांछनीय करना।

2.5 शैक्षिक अनुसंधान के विभिन्न स्तर (Levels of Educational Research)

शैक्षिक अनुसंधान की विशेषताओं, बाधाओं एवं सीमाओं के संदर्भ में नीतिगत विवेचन के प्रस्तुतीकरण के पश्चात् आवश्यकता अनुभव होती है कि शैक्षिक अनुसंधान के विभिन्न स्तरीय आधारों की विवेचना की जाये-

ज़) आधारभूत/मौलिक अनुसंधान (Basic Fundamental/Basic Research)

(ब) अनुप्रयुक्त अनुसंधान (Applied Research)

(स) क्रियात्मक अनुसंधान (Action Research)

उपर्युक्त वर्णित शैक्षिक अनुसंधान के विभिन्न स्वरूपों को अनुसंधान की मौलिकता एवं शुद्धता के आधार पर स्तरीय रूप प्रस्तुत किये गये है । शिक्षा एवं मनोविज्ञान की अनेक शोध पुस्तकों में इन्हें स्तर के स्थान पर वर्गीकरण के रूप में प्रस्तुत किया गया है लेकिन अनुसंधान की मौलिकता, शुद्धता तथा व्यावहारिकता के आधार पर इनका स्तरवार विवेचन किया जाना उपयुक्ता है । अनुसंधान के स्वरूप की विभिन्न स्तरवार विवेचना यहां की जा रही है ।

2.5.1 मौलिक अनुसंधान (Fundamental Research)- इस प्रकार के अनुसंधानों में शिक्षा संबंधित आधारभूत सिद्धान्तों-नियमों तथा तथ्यों की खोज की जाती है । विद्वानों (शर्मा (1990-पृष्ठ 11) बैस्ट 1963, शर्मा 1986-5), कपिल (1989-28) के अनुसार यह शुद्ध वैज्ञानिक पद्धति है जिसमें परिणाम निरूपण विस्तृत सामान्यीकरण के आधार पर किया जाता है । इन सिद्धान्तों एवं नियमों का किसी विशिष्ट व्यावहारिक क्षेत्र से संबंध नहीं होता है । वर्तमान की समस्याओं से इस प्रकार के अध्ययन का संबंध नहीं होता है । ट्रेवर्स के मतानुसार मौलिक अनुसंधान व्यवस्थित वैज्ञानिक ज्ञान में वृद्धि के लिए किया जाता है एवं अनुसंधान तात्कालिक व्यावहारिक मूल्यों वाले परिणामों को आवश्यक रूप से पैदा करने वाले नहीं होते हैं । उदाहरणार्थ - शैक्षिक एवं वास्तविक विकास की विभिन्न अवस्थाएं, अभिप्रेरणा (Motivation) सम्प्रत्यय निर्माण एवं अधिगम (Concept formation and Learning), पुनर्बलन (Reinforcement) आदि ।

मौलिक अनुसंधान की निम्न विशेषताएं होती है -

2.5.1 मौलिक अनुसंधान की विशेषताएं -

1.1 मौलिक अनुसंधान, व्यवस्थित अनुसंधान एवं विशेषज्ञों का क्षेत्र

1.2 विशेष कौशल अनुभव एवं अध्ययन क्रमबद्ध

1.3 जटिल तरीका व्यापक सामग्री नवीन उद्भावनाएं

1.4 अनवरत अध्ययन प्रेक्षण तथा वैध साक्ष्यों के आधार पर सिद्धान्तों का प्रतिपादन एवं व्याख्या।

1.5 प्राचीन 'अधिगम-शिक्षण' सिद्धान्तों की नवीनतम विवेचना

1.6 ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर तत्वों के सिद्धान्तों की नवीन विवेचन ।

1.7 खोजे गये तथ्यों, विवेचनों एवं साक्ष्यों का किसी परिकलपना के संदर्भ में निरीक्षण एवं परीक्षण

1.8 मानक चिन्तन के आधार पर युगानुरूप तथ्यों की व्याख्या ।

2.5.2 व्यवहृत/अनुप्रयुक्त अनुसंधान (Applied Research)- शिक्षा के क्षेत्र इस प्रकार अनुसंधान का संबंध प्राय: व्यावहारिक समस्याओं के वर्तमानकालिक समाधान से रहता है । ऐसे शोध अध्ययन विशिष्ट क्षेत्र आधारित एवं व्यावहारिक धरातल पर सम्पादित किये जाते है । मौलिक अनुसंधान के माध्यम से खोजे गये सिद्धान्तों एवं नियमों की विवेचना वर्तमान के संदर्भ में किसी क्षेत्र व समस्या को केन्द्र बिन्दु मान कर की जाती है तथा वास्तविक परिस्थितियों में इन नियमों एवं सिद्धान्तों की उपयुक्ता एवं सार्थकता का अध्ययन किया जाता है । इन नियमों एवं सिद्धान्तों की अनेक क्षेत्र बार एवं परिस्थिति बार अध्ययन कर के सिद्धान्तों के पुन: प्रतिपादन के सबल आधार के रूप में अनेक साक्ष्य प्रस्तुत किये जाते हैं - उदाहरणार्थ - "विभिन्न अधिगम विधियों का किसी वर्ग या स्थान के छात्रों की अधिगम शैली पर प्रभाव। परीक्षा प्रणाली में आयोजित सुधारों की उपयुक्तता-छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि के सुधार के संदर्भ में"। "छात्रों की अध्ययन आदतों के सुधार में पुस्तकालय-अध्ययन की उपयोगिता" । अनुप्रयुक्त या व्यवहृत अनुसंधान की निम्न विशेषताएं प्रस्तुत की जा सकती है-

2.5.2.1 अनप्रयुक्त अनुसंधान की विशेषताएं -

2.1. सामान्य नियमों एवं सिद्धान्तों की दैनिक कार्य क्षेत्र की समस्याओं के समाधान में संभावना ।

2.2. अतीत के अध्ययन से वर्तमान को समझने का प्रयास-वर्तमान समस्याओं के संदर्भ में ।

2.3. मौलिक अध्ययन से शिक्षण प्रक्रिया एवं परिस्थिति में सुधार के प्रयास ।

2.4. वर्तमान हेतु "नीति निर्धारण प्रक्रिया" में अनुप्रयुक्त अनुसंधान की सार्थकता

2.5. शिक्षा की विभिन्न क्षेत्रीय आधारभूत समस्याओं का समाधान ।

2.6. अनुसंधान का ध्येय स्पष्टत: उपयोगितावादी एवं सुधारवादी ।

2.7. अनुप्रयुक्त अनुसंधान - मौलिक अनुसंधान पर आश्रित एवं पूरक दोनों ही है ।

2.8. अनुप्रयुक्त अनुसंधान का क्षेत्र - अभिप्रेरणात्मक अनुसंधान, औद्योगिक अनुसंधान, मनोचिकित्सा अनुसंधान एवं सामाजिक अनुसंधान आदि ।

2.9. कर्लिघर (1964) के मतानुसार अनुप्रयुक्त अनुसंधान का संबंध "क्षेत्रीय प्रयोग" (Field Experiments) से है, जहां अध्ययन वास्तविक स्थिति में किया जाता है ।

अनुप्रयुक्त अनुसंधान से संबंधित शोध समस्याएं (Action Research) व्यावहारिक जीवन के सामाजिक शैक्षिक, मनोवैज्ञानिक प्रश्नों पर आधारित एवं अधिक सार्थक होती है ।

2.5.3 क्रियात्मक अनुसंधान (Action Research) - 'क्रियात्मक-अनुसंधान'-विद्वानों के अनुसार (कोरे-1962, शर्मा-1986 पृष्ठ-27, पाण्डेय-1969, सिन्हा-1979, पृष्ठ 99-1०3) यह खोज की विधि है जिसके द्वारा कार्य प्रणाली की समस्याओं का वस्तुनिष्ठ (Objectives) रूप से अध्ययन किया जाता है तथा जिसका उद्देश्य क्रिया-कलापों में रचनात्मक सुधार लाना तथा उन्हें अधिक उपयोगी बनाये जाने का प्रयास करना होता है । सुखिया-मेहरोत्रा आदि

(1973 पृष्ठ 4-5) ने एस.एम. कोरे (1962) के इससे संबंधित विचारों को स्पष्ट करते हुए कहा है यह वह अनुसंधान है जिसे कोई व्यक्ति या संस्था अपने ही उद्देश्यों एवं क्रिया-कलापों को अधिक प्रभावी ढंग से प्राप्त करने के लिए स्वयं ही परिचालित करता है । किसी शिक्षण संस्था स्थित 'कक्षा-शिक्षण विधि' एवं प्रशासनिक अथवा शैक्षिक समस्या के संदर्भ में उसके कारणों एवं हल खोजने जाने का यह विधिवत एवं वैज्ञानिक प्रयास है जिससे कि मौलिक एवं अनुप्रयोगिक अनुसंधान के आधार पर खोजे गये नवीन शिक्षा एवं शिक्षण सिद्धान्तों, नियमों, शिक्षण-विधियों आदि की उपयुक्तता एवं व्यावहारिकता का अध्ययन किसी शिक्षण संस्था विशेष अर्थात् विशुद्ध स्थानीय परिस्थितियों के संदर्भ में किया जा सकें, जिससे कि प्राचार्य, अध्यापक, प्रशासक-निरीक्षक तथा संस्था के सभी कार्यकर्ता अपनी कार्य प्रणाली में वांछित सुधार कर सकें तथा मौलिक, अनुप्रायोगिक अनुसंधान विशेषज्ञों तथा शिक्षा के क्षेत्र में कार्य करने वालों बीच चली आ रही खाई को पाटा जा सकें ।

क्रियात्मक अनुसंधान के प्रतिपादक प्रो. एम.एम. कोरे (1953) का यह स्पष्ट मत था कि शैक्षिक क्षेत्र के वास्तविक कार्यकर्ता अपनी अपनी क्षेत्र की समस्याओं के कारण तथा हल खोजने में अपनी-अपनी स्थानीय परिस्थिति के संदर्भ में स्वयं क्रियात्मक अनुसंधान करें । उन्हीं के शब्दों में "जहां अभ्यासकर्ता अपनी समस्याओं का वैज्ञानिक ढंग से अध्ययन करता है, जिससे कि सही कार्य को सही दिशा मिल सकें और निर्णयों का मूल्यांकन कर सकें" ।

"The process by which practioners attempt to study their problems scientifically in order to guide, correct and evaluate their decisions."

उदाहरणार्थ - शिक्षक वर्ग या प्राचार्य वर्ग द्वारा किये जाने वाले अनुसंधान कार्य का उद्देश्य यह होगा कि विद्यालय तथा कक्षा कार्यो में वांछित सुधार लाया जा सकें ।

2.5.3.1 व्यक्तित्व एवं सहयोगी क्रियात्मक-अनुसंधान - जब यह शोध प्रयास किसी एक व्यक्ति द्वारा किया जायेगा तो वह "व्यक्तिगत क्रियात्मक अनुसंधान" होगा लेकिन जब किसी प्रयोग द्वारा अनेक व्यक्तियों के प्रभावित होने की संभावना होती है तो उस दिशा में किया गया अनुसंधान सभी व्यक्तियों को अपने में प्रत्यक्ष समाहित कर लेता है तथा इसे "सहयोगी क्रियामक अनुसंधान" कहा जाता है । संक्षेप में, चाहे इस प्रकार का शोध कार्य व्यक्तिगत स्तर पर या सामूहिक स्तर पर आयोजित हो, यह प्रचलित क्रियाकलापों में सुधार लाने वाला अवश्य होता है । इससे वास्तविक अभ्यासकर्ताओं के अध्ययन, प्रशासन एवं मानवीय संबंधों में सुधार लाया जाता है तथा उनके सैद्धान्तिक एवं व्यवहारपरक ज्ञान में भी वृद्धि होती है । "क्रियात्मक अनुसंधान" उन्हीं के द्वारा सम्पादित किया जाता है, जिन्हें अपने परम्परावादी क्रियाकलापों को निरन्तर करते रहने से अरूचि हो जाती है तथा वे उनमें परिवर्तन करने की इच्छा रखते हैं ।

2.5.3.2 क्रियात्मक अनुसंधान की विशेषताएं -

(1) व्यावहारिक दृष्टि से क्रियात्मक अनुसंधान वास्तविक अभ्यासकर्ताओं (प्रधान अध्यापक-प्रशासक - निरीक्षक) के लिए सर्वोपरि रोचक महत्वपूर्ण एवं उपयोगी सिद्ध होता है, क्योंकि शोध समस्या शोधकर्ता अर्थात् उसकी अपनी है, प्रयास उसके अपने है तथा जो भविष्य में लाभ या हानि मिलेगी वह भी उसकी अपनी ही होगी । इस प्रकार का अनुसंधान उसके

व्यावसायिक जीवन का केन्द्र बिन्दु बनेगा । शिक्षक के लिए कक्षा उसकी कार्यशाला, विषयवस्तु तथा शिक्षण विधि उसके उपकरण तथा छात्र ही उसके न्यादर्श होंगे ।

(2) "अनुसंधान समस्या" की पहचान में कोई कठिनाई नहीं होगी क्योंकि वह तो उसकी अपनी होगी, जिसके कारण एवं हल ढूंढने हेतु वह स्वयं ही प्रयासरत रहेगा ।

(3) समस्या के संभावित हल खोजने हेतु परिकल्पना के निर्माण में उसे अधिक संबंधित साहित्य खोजने हेतु परिश्रम नहीं करना होगा । उसे इस संबंध में उसके साथियों, प्राचार्य एवं अधिकारियों से चर्चा करने पर संभावित हल प्राप्त हो जायेंगे।

(4) चूंकि, प्रतिदर्श (Sample) एवं संपूर्ण जनसंख्या (Population) में कोई अन्तर नहीं होगा अत: प्रतिदर्श वैज्ञानिक रूप से चयन करने में कोई कठिनाई की अनुभूति नहीं होगी । अनुसंधान कार्य के आधार पर खोजे गये निष्कर्ष एवं परिणाम संपूर्ण जनसंख्या पर लागू करने हेतु सार्थकता की जांच भी नहीं करनी होगी ।

(5) बाध्य चरों के नियंत्रण (Control of Extrancous Variables) की आवश्यकता भी शोध अभिकल्प (Research Design) के निर्माण में नहीं होगी क्योंकि यह प्रयोग विशेष चर के लिए नहीं वरन् संपूर्ण विशिष्ट परिस्थितियों के लिए आयोजित किया जा रहा है ।

(6) पूर्वकल्पित उपायों (Pre-determined Actions) को लागू करने के पश्चात् परिणामों की विवेचना एवं मूल्यांकन के लिए विशिष्ट सांख्यिकीय प्रविधियों (Statistical Techniques) के ज्ञान की आवश्यकता भी नहीं होगी । वहीं साधारण प्रविधियां एवं पैमाने (Scales) होंगे, जिन पर शोध कार्य किया जा सकता है ।

(7) चूंकि क्रियात्मक अनुसंधान का उद्देश्य प्रयोगाधीन प्रतिदर्श तक ही सीमित रहता है, अत: परिणामों के लम्बी अवधि तक विशिष्ट परिस्थितियों में सामान्यीकरण की आवश्यकता भी नहीं होगी तथा थोडे ही समय में वांछनीय परिवर्तन सुधार दिखलाई देने लगते है । आवश्यकता अनुभव होने पर कार्य प्रक्रिया में संशोधन कर लेना अनुसंधान कार्य प्रक्रिया के लचीलेपन एवं निकटवर्ती होने का प्रमाण है ।

2.5.3.3 शैक्षिक क्रियात्मक अनुसंधान के क्षेत्र एवं उद्देश्य

(Objectives and Areas of Action Research in Education)

4.1 विद्यालय की कार्य प्रणाली में सुधार लाना - कक्षा-शिक्षण, विषयवस्तु प्रभावी अनुक्रम, शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया-अनुशासनात्मक क्रियाएं आदि ।

4.2 कक्षा-शिक्षण के दौरान प्रयोग की जाने वाली सहायक सामग्री - छात्रोपयुक्त बनाना जिसके संबंध में कक्षा विशेष के संदर्भ में निर्णय लिया जाना आवश्यक है ।

4.3 विद्यालयों की परम्परागत रूढिवादिता तथा इसके अरूचिकर-अप्रेरक-यांत्रिक बातावरण में वांछित परिवर्तन करना -

- छात्रों की रूचि, ध्यान, तत्परता, जिज्ञासा में वृद्धि किये जाने से संबंधित प्रयास अधिगम प्रक्रिया को सरल, स्वाभाविक एवं रोचक बनाने के प्रयास ।
- छात्रों की चहुंमुखी प्रगति सतत एवं समग्र मूल्यांकन कार्यक्रम नकल करने की प्रवृत्ति पर सकारात्मक रोक सतत अध्ययन की प्रेरणा से संबंधित कार्य योजनाएं ।

4.4 विद्यालय के वातावरण को शैक्षिक-प्रेरक एवं उपयोगी बनाने का प्रयास करना-

- विद्यालय कक्षा संबंधित अनुशासन संबंधी समस्याओं पर कार्य योजना निर्माण छात्रों की कक्षा अनुपस्थिति एवं विद्यालय में विलम्ब से आने की समस्या का समाधान ।
- कक्षा वातावरण शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में अवरोध उत्पन्न करने, विषय शिक्षक एवं छात्रों को परेशान करने, डराने, धमकाने की समस्याओं का निदान करना ।
- विद्यालय-वातावरण सुधार संबंधी योजनाएं ।

2.5.3.5 शिक्षा-शिक्षण एवं प्रशासन से संबंधित कार्यकर्ताओं में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास करना ।

- शिक्षक एवं अन्य कर्मचारियों के कार्य विश्लेषण के आधार पर कार्य कुशुल्ता में वृद्धि से संबंधित प्रयास ।
- पदोन्नतियों एवं व्यावसायिक लाभ से संबंधित कार्य योजनाएं उनका नियोजन-क्रियान्वयन एवं उपयुक्तता मूल्यांकन।
- पाठ्यक्रमीय क्रियाकलाप से संबंधित विषयगत परियोजनाएं-नियोजन क्रियान्वयन एवं मूल्यांकन।

2.5.3.6 शिक्षण-संस्था की कार्य प्रणाली को प्रभावशाली बनाना तथा छात्रों के निष्पत्ति स्तर में सुधार करना -

- कक्षा-शिक्षण विधियों में सुधार विषयगत शैक्षिक निष्पत्ति के संदर्भ में ।
- विषयगत कक्षा अध्यापन को अधिक स्तरीय बनाने तथा क्षोभ-निराशा को दूर करने हेतु कार्य।

2.5.3.7 अनुभूबित योजनाएं -

- आन्तरिक मूल्यांकन, लघुस्तरीय प्रश्न पत्र
- अंक के स्थान पर प्रतीक परीक्षा
- गृह कार्य मूल्यांकन-परीक्षा में देय अधिभार

इस प्रकार शैक्षिक अनुसंधान में कार्य विवेचित सभी स्तरों के क्रम में "क्रियात्मक अनुसंधान" का एक विशेष महत्व है । यह अनुसंधान प्रक्रिया प्राचार्य एवं शिक्षा अधिकारी वर्ग को वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाते हुए अपने शैक्षिक समस्याओं के कारणों एवं संभावित हल खोजने की प्रेरणा प्रदान करती है । किसी भी स्तर की शिक्षण संस्था के शैक्षिक वातावरण में सुधार लाने के लिए "क्रियात्मक अनुसंधान" एक प्रभावी विकल्प है जिस को सम्पादित करने से शिक्षक शिक्षा जगत को बहुमूल्य योगदान प्रदान करने के साथ-साथ अपने "व्यावसायिक-विकास" में भी अपनी भागीदारी सुनिश्चित कर सकते हैं ।

2.6 स्वमूल्यांकन (Self Assessment)

निर्देश :- रिक्त स्थानों की पूर्ति दिये गये विकल्पों में से करें।

1. विद्यालयी क्रियाकलापों में सुधार लाने के लिए एक शिक्षक को..... अनुसंधान का प्रयोग करना उचित होता है ।
   मूलभूत / अनुप्रयुक्त / क्रियात्मक
2. शुद्ध अनुसंधानों से जो अनुसंधान प्रक्रिया सबसे अधिक संबंधित है उसे..... अनुसंधान कहा जाता है ।
   मूलभूत क्रियात्मक / अनुप्रयोगिक
3. ..... अनुसंधान में अधिकतर जनसंख्या एवं प्रतिदर्श एक से ही होते हैं ।
   क्रियात्मक मूलभूत /अनुप्रयोगिक
4. सामान्यत: सिद्धान्तों की विवेचना एवं उनकी पुष्टि..... अनुसंधान में की जाती है । क्रियात्मक / मूलभूत / ऐतिहासिक
   (उत्तर- 1. क्रियात्मक 2. अनुप्रयोगिक 3. क्रियात्मक 4. मूलभूत)

लघुत्तरीय प्रश्न

1. अनुप्रयुक्त अनुसंधान एवं क्रियात्मक अनुसंधान में अन्तर स्पष्ट करें ।
2. विद्यालयी-क्रियात्मक से संबंधित 5 उदाहरण दें जहां क्रियात्मक अनुसंधान किया जा सकता है।
3. मूलभूत शैक्षिक अनुसंधान की प्रमुख विशेषताओं को स्पष्ट करें ।

निबंधात्मक प्रश्न

1. शिक्षा के क्षेत्र में मौलिक अनुसंधान एवं अनुप्रयुक्त अनुसंधान की पारस्परिक निर्भरता पर अपने विचार प्रकट करें तथा उदाहरण भी दें ।
2. क्रियात्मक अनुसंधान की परिभाषा प्रस्तुत करते हुए स्पष्ट करें कि इसके क्या-क्या प्रमुख क्षेत्र हैं जहां इसे सफलतापूर्वक आयोजित किया जा सकता है ।

2.7 संदर्भ ग्रंथ (References)

बेस्ट, जे. डब्ल्यू : रिसर्च इन एजुकेशन, ऐंगिलवुड क्लिफस, नयूजर्सी, प्रैटिंस हाल

कपिल एच. के. : अनुसंधान विधियां , आगरा, हरी प्रसाद भार्गव, 1988-89 पृष्ठ 223-232

कलिंघर एफ. एन : फाउन्डेशन्स आफ बिहेवियरल रिसर्च, न्यूयार्क, हाल्ट, रिन चार्ट एण्ड विंस्टन, 1964

कोरे, एस.एस : एक्शन रिसर्च टू इम्प्रूव स्कूल प्रैक्टिस, न्यूयार्क, टीचर्स कालेज, कोलम्बिया, यूनिवर्सिटी, 1953

कोरे एस.एस. : रिसर्च इन एजूकेशन, देहली एनसीईआरटी., 1962

कौशिक, एस.एल : विद्यालयों में प्रयोग एवं परियोजनाएं आगरा, विष्णु प्रकाशन 1972

सिन्हा जे.सी. एवं : न्यूज पेपर्स एण्ड मैगजीन्स इन रेजिंग दी एकेडैमिक स्टैण्डर्ड ऑफ

माहेश्वरी के.बी : स्टूडेन्टस इनइकोनोमिक्स 1975 शोध परियोजना

पाण्डेय, के.पी	:	शिक्षा में क्रियात्मक अनुसंधान, आगरा, विनोद पुस्तक मन्दिर, 1969
पाल, एस.के. सक्सैना, बी.टी	:	क्वालिटी कष्ट्रोल इन एजूकेशनल रिसर्च, नयी दिल्ली, मैट्रोपोलिटन,.1985, पार्ट प्रथम, पृष्ठ 1 से 69
सिन्हा, एच.सी	:	शैक्षिक अनुसंधान, नई दिल्ली विकास पब्लिशिंग हाऊस, 1979, पृष्ठ 99-1०3 अध्याय प्रथम
सिद्धू .के. एस.	:	मैथोडोलोजी आफ रिसर्च, नई दिल्ली, स्र्ट्रलिंग पब्लिशर्स, 1985, पृष्ठ 9-18 अध्याय प्रथम
शर्मा, आर.ए.	:	शिक्षा अनुसंधान, मेरठ लायल बुक डिपो, 1985-86 पृष्ठ 19-43, पृष्ठ 19-43, अध्याय द्वितीय एवं नवम
सुखिया, एसपी. एवं मेहरोत्रा, आर.एन. आदि	:	शैक्षिक अनुसंधान के मूल तत्व, आगरा विनोद पुस्तक मंदिर1973 अध्याय 1-16
सिन्हा, जे.सी	:	एक्शन रिसर्च एंड द स्कूल टीचर, शिक्षा बुलेटिन , के आर ट्रेनिंग कालेज 1971 पृष्ठ 25-36
सिन्हा, जे.सी.	:	एन. एक्सपैरीमेट इन टीचिंग सिविक्स थ्री डिफरेंट मेथेर्डस रिसर्च जर्नल आफ एजूकेशन एण्ड साईकोलोजी आगरा, 1975-76 बोज्यूम 6, पृष्ठ 33-36
सिन्हा जे.सी. एवं शर्मा सुधा	:	एन. एक्सपैरीमेट इन टीचिंग सिविक्सथो डिफरेंट मेथेर्डस रिसर्च जर्नल आफ एजूकेशन एण्ड साईकोलोजी आगरा, 1975-76 वॉल्यूम 6, पृष्ठ 33-36
ट्रेवर्स, रावर्ट एम डब्लू	:	एन इण्ट्रोडक्शन टू एजुकेशनल रिसर्च, न्यूयार्क, मैकमिलन कम्पनी, 1958, पृष्ठ 446
वर्मा एम , एम:	:	इन्ट्रोडक्शन टू एजूकेशनल एण्ड सोइकोलोजीकल रिसर्च, बम्बई, एशिया पब्लिशिंग हाउस, 1965

इकाई-3

शैक्षिक शोध के क्षेत्र (I)

(Areas of educational research (I)

शैक्षिक शोध की विषय वस्तु निर्देश, सीखना, मूल्यांकन, सामाजिक सांस्कृतिक आवश्यकतायें, आर्थिक एवं राजनैतिक एवं राजनैतिक व ऐतिहासिक संदर्भ में शिक्षा अनुसंधान के क्षेत्र

Areas of educational research with respect to content of education, instruction learning evaluation, Socio-cultural needs, Economics and Political situation and historical context.

3.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and objectives)

3.1 पाठ्यक्रम एवं शिक्षा अनुसंधान क्षेत्र
(Educational research areas and curriculum)

3.2 अध्यापक शिक्षा एवं शिक्षा अनुसंधान क्षेत्र
(Educational research areas and teacher education)

3.3 शैक्षिक मूल्यांकन एवं शिक्षा अनुसंधान के क्षेत्र
(Educational research areas and education evaluation)

3.4 शिक्षण एवं शिक्षा अनुसंधान के क्षेत्र
(Teaching educational research areas)

3.5 शैक्षिक समाजशास्त्र एवं शिक्षा अनुसंधान के क्षेत्र
(Educational Sociology and education research areas)

3.6 शिक्षा दर्शन एवं अनुसंधान (Educational philosophy and education research)

3.7 शिक्षा अर्थशास्त्र एवं शिक्षा अनुसंधान के क्षेत्र
(Educational Economics and education research areas)

3.8 शिक्षा राजनीति एवं शिक्षा अनुसंधान के क्षेत्र
(Education research areas and educational politics)

3.9 शिक्षा इतिहास एवं शिक्षा अनुसंधान के क्षेत्र
(Educational research areas and educational history)

3.10 शिक्षा मनोविज्ञान एवं शिक्षा अनुसंधान के क्षेत्र
(Educational research areas and educational psychology)

3.11 स्वमूल्यांकन (Self Assesment)

3.11 संदर्भ ग्रन्थ (References)

3.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and objectives)

इस पाठ को पढने के बाद विद्यार्थी इस योग्य होंगे कि वे -

- शैक्षिक अनुसंधान की आवश्यकता तथा इसके अर्थ को जान जायेंगे ।
- शिक्षा पाठ्यक्रम के विभिन्न अंगों में शैक्षिक अनुसंधान के क्षेत्र को जान जायेंगे ।

3.1 अनुसंधान की आवश्यकता (Need of Research)

अनुसंधान या खोज आज के वैज्ञानिक अध्ययन की एक उभरती हुई आवश्यकता है जहां एक ओर शिक्षाविद् इस कथन को देने में तनिक भी हिचकिचाहट का अनुभव नही करते है कि शिक्षा का स्तर दिन प्रतिदिन गिरता ही चला जा रहा है वहां उन्हें दूसरी ओर इस कथन को देने में भी संकोच नहीं होना चाहिये कि स्वतंत्रता के पश्चात् भारतवर्ष में शिक्षा जगत के विभिन्न पहलुओं की भांति शिक्षा शोधों में भी अभिवृद्धि हुई है । वास्तव में यदि देखा जाय तो भारतवर्ष में शैक्षिक शोध या शैक्षिक अनुसंधान की अवधारणा नवीन नहीं है । इसका प्रयोग शिक्षा के विभिन्न आयामों में तो नहीं होता था परन्तु विभिन्न विषयों में इसका प्रयोग अवश्य होता था । परन्तु जैसा हम सबको विदित है कि पहले शोधकार्य विज्ञान, चिकित्सा व इन्जीनियरिंग तक सीमित थे और जैसे-जैसे सामाजिक विषयों ने विज्ञान की श्रेणी में अपने आपको सम्मिलित करने की बात सोची वैसे ही वैसे इन विषयों ने अपने अध्ययन को व्यवस्थित व नियंत्रित किया इसी कारण शिक्षाविदों की यह मान्यता है कि अनुसंधान एक ऐसा व्यवस्थित व नियंत्रित अध्ययन है जिसके अंतर्गत संबंधित चरों व घटनाओं के पारस्परिक सम्बन्धों का अन्वेषण तथा विश्लेषण उपयुक्ता सांख्यिकीय विधि तथा वैज्ञानिक विधि के द्वारा किया जाता है तथा प्राप्त परिणामों से वैज्ञानिक निष्कर्षो, नियमों तथा सिद्धान्तों की रचना, खोज तथा पुष्टि की जाती है । वास्तव में यदि देखा जायें तो अनुसंधान का उद्देश्य वैज्ञानिक ज्ञान की परिधि को अधिक से अधिक विस्तृत तथा विशुद्ध करना होता है साथ ही साथ उपलब्ध नवीनतम वैज्ञानिक उपकरणों तथा कठोरतम वैज्ञानिक पद्धतियों द्वारा पूर्व स्थापित तथ्यों, नियमों तथा सिद्धान्तों की विश्वसनीयता परिशुद्धता तथा वैधता का पुर्नपरीक्षण व पुष्टीकरण करना होता है, तथा उसमें यथा संभव नये संबंधों की स्थापना करना होता है । इस प्रकार अनुसंधान द्वारा प्राप्त ज्ञान विशुद्ध, संगठित तथा क्रमबद्ध होता है इसकी विभिन्न इकाइयाँ एक दूसरे से सहसंबधित होती है व तर्क के आधार पर उस में पर२यर निर्भरता पाई जाती है ।

3.2 अनुसंधान की परिभाषा (Definition of Research)

सामाजिक विज्ञानों के कोष के अनुसार -अनुसंधान वस्तुओं , प्रत्ययों तथा संकेतो आदि को कुशलतापूर्वक व्यवस्थित करता है जिसका उद्देश्य सामान्यीकरण द्वारा विज्ञान का विकास, परिमार्जन तथा सत्यापन होता है चाहे वह ज्ञान व्यवहार में सहायक हो अथवा कला में"

(**According to Encyclopedia of social sciences**- “Research is the manipulation of things, concepts, or symbols for the purpose of generalizing to extend, correct or verify knowledge, whether that knowledge aids in the practice or not”)

एम.एम. ट्रैवर्स के अनुसार - "शैक्षिक अनुसंधान वह प्रक्रिया है जो शैक्षिक परिस्थितियों में एक व्यवहार संबंधी विज्ञान के विकास की ओर अग्रसर होती है ।"

(**According to M.M. Travers**- "Educational research is that activity which is directed towards development of a science of behavior in educational situations).

वास्तव में यदि देखा जाये तो अनुसंधान ने आधुनिक युग में बहुत ही प्रगति की है आज का विकासवादी अनुसंधान मानव चिन्तन और अन्वेषण पद्धति को एक नई दिशा प्रदान कर रहा है और साथ ही इसमें परिकल्पना पर आधारित निगमनात्मक विधि का विकास हुआ है । इसी कारण आज समाज विज्ञनों में प्रत्यक्षवाद पर बल है तो मनोविज्ञान में व्यवहारवादी विचाराधारा की प्रबलता है वहीं दूसरी ओर मनोविश्लेषणवादी सिद्धान्त ने मानव व्यवहार के विश्लेषण में नियतत्ववाद (Law of determinations) के नियमों को प्रतिपादित किया है । अनुसंधान के क्षेत्र में अन्वेषण के प्रक्रम में वैज्ञानिक उपागम (scientific approach) तथा वैज्ञानिक पद्धति (Scientific method) को बल दिया जाने लगा और गणित के क्षेत्र में मात्रात्मक विधि (Quantitative method) को आधार बनाया जाने लगा । यह विधियों जो प्रारम्भ में विभिन्न विषयों से संबंधित थी धीरे'-धीरे अपने विषय से ही संबंधित नहीं रही वरन् एक दूसरे में भी इनका प्रयोग किया जाने लगा उदाहरणार्थ सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक घटनाओं का अध्ययन मात्रात्मक विधि के आधार पर होने लगा । थर्स्टन (Thurstone) अभिवृत्ति मापनी (Attitude Scale) बोगार्ड्स (बिगरर्ड) का सामाजिक दूरी मापन स्केल (Social distance scale) लेविन (Lewin) के मानव व्यवहार में गणितीय नियमों का प्रतिपादन (Implication of mathematical law in human behavior) ब्राउन (Brown) के क्षेत्र सिद्धान्त केनियम (Field theoretical law) शैरिफ (sherrif) के घटनात्मक उपागम (Phenomenological approach) इसी विचार धारा की देन है ।

3.3 अनुसंधान के क्षेत्र (Research areas):

अनुसंधान के क्षेत्र उस विषय विशेष की प्रकृति पर निर्भर करता है जिसमें उसे हमें क्रियान्वित करना है इसी कारण हमारे लिये यह जानना भी आवश्यक है कि विभिन्न विषयों में अनुसंध्रान के प्रमुख क्षेत्र कौन-कौन से है । यदि हम सामान्य रूप से शिक्षा जगत के अन्तर्गत होने वाले अनुसंधान क्षेत्र की चर्चा करें तो निःसन्देह यह कह सकते है कि शिक्षा विषय का क्षेत्र वैयक्तिक व सामाजिक दृष्टि से बहुत व्यापक है चूंकि यह व्यक्ति व समाज दोनों ही के सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक व राजनैतिक पक्षों का अध्ययन करता है और साथ ही इन क्षेत्रों से संबंधित समस्याओं का विश्लेषण करके उनके उचित समाधान हेतु विचार विमर्श किया जाता है । शिक्षा क्षेत्र से संबंधित प्रमुख समस्यायें कौन सी है इससे पूर्व हमारे लिये यह आवश्यक है कि हम उनका वर्गीकरण कर लें जैसा कि आर.एसी. ऑलीवर ने अपनी पुस्तक रिसर्च इन एजूकेशन में कहा है "शिक्षा की बिना सुलझाई हुई समस्यायें इतनी अधिक तथा इतने विविध प्रकार की है कि उन समस्याओं ने अध्ययन तथा सर्वेक्षण को सरल बनाने के लिये आवश्यक है कि पहले हम उनका वर्गीकरण कर लें चूंकि हम जब शिक्षा जगत से संबंधित समस्याओं को किसी भी आधार

पर वर्गीकृत कर लेंगे तो हमारे लिये शिक्षा अनुसंधान के क्षेत्रों का निर्धारण करना सरल हो जायेगा ।" अब हम इस बात की चर्चा करेंगे कि शिक्षा क्षेत्र के अन्तर्गत किस पर शोध कार्य किया जा रहा है और किन क्षेत्रों पर अध्ययन की आवश्यकता है :-

3.4 शैक्षिक पाठ्यक्रम व शिक्षा अनुसंधान (Education Research and educational curriculum)

शिक्षा जगत से संबंधित समस्याओं के अन्तर्गत सर्वप्रथम हम विषयवस्तु से संबंधित समस्याओं को निहित करेंगे । पाठ्यक्रम का छात्रों की आवश्यकताओं के अनुरूप तय कर पाना हमारे लिये एक चुकता है । आज के मनोवैज्ञानिक युग में हम यह कल्पना करते हैं । कि शिक्षा बालक की रूचियों, योग्यताओं व क्षमताओं के अनुकूल होनी चाहिये, अत: शिक्षा को पाठ्यक्रम ऐसा होना चाहिये जो बालकों की इच्छाओं व आवश्यकताओं को संतृप्त कर सकें । हमारे लिये यह भी आवश्यक है कि हम छात्रों की बौद्धिक, सामाजिक, आर्थिक व व्यक्तिगत विशेषताओं को ध्यान में रखकर पाठ्यक्रम का निर्माण करें । साथ ही दूसरी आवश्यकता पाठ्यक्रम के संबंध में यह है कि लिंग के आधार पर पाठ्यक्रम में अन्तर अवश्य होना चाहिये चूंकि बालकों की रूचियों, आवश्यकताओं व विशेषताओं को ध्यान में रखकर जो पाठ्यक्रम बनाया जायेगा वह बालिकाओं को पाठ्यक्रम से निश्चित रूप में अन्तर लिये होगा । इसी प्रकार ग्रामीण व शहरी छात्रों के जीवन की परिस्थितियों व आवश्यकताओं की यदि हम तुलनात्मक विवेचना करें तो हम यह कह सकते हैं कि इनके लिये भी अलग-अलग पाठ्यक्रम होना चहिये ।

पाठ्यक्रम से जुडी है पाठ्य पुस्तकें । पाठ्य पुस्तकें पाठ्यक्रम की पूर्ति का माध्यम है ओर शिक्षा के उद्देश्यों को प्राप्त करने का एक साधन है । पाठ्य पुस्तकें विषयवस्तु की दृष्टि से ठीक हैं अथवा नहीं, यह छात्रों के लिये उपयुक्त है अथवा नहीं, यह अपने उद्देश्यों को प्राप्त कर पा रही है अथवा नहीं? यह कुछ ऐसी समस्यायें है जिनको हम शोध द्वारा जान सकते हैं । पाठ्यक्रम के संबंध में भी अनेको प्रश्न हमारे समक्ष उत्पन्न होते है उदाहरणार्थ - बच्चों को क्या पढाना है? कितना पढाना है किस रूप में पढाना है । आयु स्तर व बौद्धिक स्तर से पाठ्यक्रम को कैसे संबंधित किया जाये । यह प्रश्न है जिसका संतोषप्रद उत्तर हमें प्राप्त होना चाहिये और यही वह प्रश्न है जो पाठ्यक्रम के संबंध में अनेकानेक समस्याओं को जन्म देते हैं । इस प्रकार हम यह कह सकते है कि शिक्षा जगत में होने वाले अनुसंधानों का महत्वपूर्ण क्षेत्र पाठ्यक्रम है । पाठ्यक्रम के अन्तर्गत होने वाले शोध कार्यो से हम इस बात का भी मान कर सकते है कि वर्तमान में शिक्षा के किसी भी स्तर पर या किसी भी विषय में जो पाठ्यक्रम विद्यमान है वह क्या उचित है अथवा उसमें परिवर्तन की आवश्यकता है ।

3.1.0 पाठ्यक्रम संबंधी शोध क्षेत्रों का वर्गीकरण - क्वालिटी कंट्रोल इन एजूकेशनल रिसर्च डी. एस.के. पाल व डी. पीसी. सक्सैना द्वारा लिखित पुस्तक में डी. जी.एल. अरोरा ने अपने लेख पाठ्यक्रम शोध (Curriculum Research) में शोध क्षेत्रों को निम्न भागों में वर्गीकृत किया है।

3.1.1 परिस्थिति विश्लेषणात्मक शोध (Analytical Research) - इसके अन्तर्गत हम विद्यमान पाठ्यक्रम का मूल्यांकन समाज की वर्तमान सामाजिक आर्थिक परिस्थितियों के संदर्भ में करते हैं ।

3.1.2 पाठ्यक्रम संबंधी आधारभूत शोध (Foundational Research in curriculum)- इसके अंतर्गत पाठ्यक्रम निर्माण के सिद्धान्त, उद्देश्य, स्त्रोत, प्रारूप व विकास का अध्ययन किया जाता है ।

3.1.3 पाठ्यक्रम सामग्री संबंधी शोध (Research related to Curriculum Material) - इसके अन्तर्गत की जाने वाली शोध पाठ्यक्रम के अनुरूप पाठ्य पुस्तकों का निर्माण उचित सहायक सामग्री का विकास आदि से संबंध रखती है ।

3.1.4 कार्यात्मक शोध : (Operational Research) - विद्यालय व्यवस्था में पाठ्यक्रम का क्रियान्वयन, अध्यापन कौशल शिक्षण तकनीकियों से संबंधित शोध कार्य इसमें सम्मिलित किये जाते हैं ।

3.1.5 पाठ्यक्रम संबंधी मूल्यांकनात्मक शोध : (Evaluative Research in Curriculum) पाठ्यक्रम संबंधी सामग्री का मूल्यांकन करना व समूह विशेष के लिये पाठ्यक्रम का औचित्य निर्धारित करना आदि से संबंधित शोध कार्य इस श्रेणी में आते हैं ।

3.1.6 पाठ्यक्रम संबंधी शोध समस्यायें

1 शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर क्रियान्वित किये गये पाठ्यक्रम का मूल्यांकन करना और इस बात की परख करना कि यह पाठ्यक्रम शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति में अपना क्या योगदान दे रहा है ।

2 वैयक्तिक भिन्नताओं की दृष्टि से पाठ्यक्रम का मूल्यांकन करना ओर यह देखना कि यह पाठ्यक्रम विभिन्न बौद्धिक स्तर के छात्रों के लिये कहां तक उपयोगी है ।

3 विभिन्न विषयों के पाठ्यक्रम की समीक्षा करना व यह देखना कि पाठ्यक्रम नवीन ज्ञान को किस सीमा तक समन्वित किये हुये है ।

4 पाठ्यक्रम के परिवर्तन में अवरोध क्यों उत्पन्न होते हैं इनके कारणों का समीक्षात्मक अध्ययन करना ।

5 इस बात का प्रयास करना कि सभी स्तरों पर राष्ट्रीय के प्रारूप को तैयार किया जा सके व उसका क्रियान्वयन संभव किया जा सकें ।

6 पाठ्यक्रम निर्माण का आधार दार्शनिक है, मनोवैज्ञानिक है या समाजशास्त्रीय इसका अध्ययन करना ।

7 पाठ्यक्रम के लिये अनुदेशनात्मक सामग्री को तैयार करना ।

8 पाठ्यक्रम संबंधी शोध की वर्तमान स्थिति का विश्लेषण करना ।

9 विद्यालय में पाठ्यक्रम का क्रियान्वयन समय, अध्यापक संख्या व शिक्षण पद्धतियों की दृष्टि से संभव है या नहीं इसका अध्ययन करना ।

10 विद्यालय पाठ्यक्रम का समाज की आकांक्षाओं, समाज की वर्तमान व भविष्य की आवश्यकताओं व उद्देश्यपूर्ति की दृष्टि से मूल्यांकन करना ।

3.2 अध्यापक शिक्षा व शैक्षिक अनुसंधान (Educational research and teacher education)

शिक्षा जगत में किये गये शोध कार्यो का संबंध या तो अध्यापकों से होता है या फिर छात्रों से । आज इस संबंध में अनेकों प्रश्न हमारे मस्तिष्क में उठते हैं जिनमें से प्रमुख है क्या शिक्षा के गिरते हुये स्तर के लिये अध्यापक जिम्मेदार है? अध्यापक अपने व्यवसाय से संतुष्ट है अथवा नहीं अध्यापक कार्य में संलग्न व्यक्तियों में अध्यापक दक्षता या अध्यापक कौशल किस सीमा तक विद्यमान है । क्या अध्यापक प्रशिक्षण द्वारा हमें अच्छे शिक्षक बनाने की भविष्यवाणी कर सकते हैं ।

3.2.1 अध्यापक प्रशिक्षण संबंधी शोध क्षेत्रों का वर्गीकरण Classification of Research areas related to teacher training)- डॉ. वाई.पी. अग्रवाल द्वारा रचित इमर्जिंग फील्डस इन एजूकेशनल रिसर्च में डी. एल. सी. सिंह द्वारा लिखित लेख अध्यापक प्रशिक्षण में शोधकार्य में निम्नलिखित शोध क्षेत्रों की चर्चा की गई है :-

विषयबस्तु या संदर्भ (Context) - इसके अन्तर्गत प्रशिक्षण महाविद्यालयों की कक्षाओं का वातावरण, कक्षा का आकार, पाठ्य की संरचना, अभ्यास कार्य हेतु लिये गये विद्यालयों का स्तर आदि पर शोध कार्य किया जा सकता है ।

आगाम (Presage) - जो विद्यार्थी अध्यापक प्रशिक्षण हेतु आये हैं उनकी विशेषताओं का अध्ययन करना इसमें उनकी शिक्षा, अनुभव प्रशिक्षण अनुभव प्रेरणा, वैयक्तिक विशेषतायें. बुद्धि व शिक्षण कौशल की जांच की जा सकती है ।

प्रक्रिया (Process)- इसमें जिन क्षेत्रों पर शोध कार्य किया जा सकता है उसमें अध्यापक व छात्रों के मध्य की जाने वाली अन्त: क्रिया, विद्यालय में छात्रों की उपस्थिति, व्यावहारिक कार्य का विवरण, अध्यापक छात्र संबंध, प्रशिक्षणार्थी का पढाते समय व्यवहार ।

परिणाम (Product)

इन्हें हम दो भागों में वर्गीकृत कर सकते हैं ।

तत्कालीन परिणाम के अन्तर्गत छात्रों की उपलब्धि अध्यापन अभिवृत्ति व अध्यापन कौशल को सम्मिलित करते हैं जबकि दीर्घकालीन परिणाम में व्यावसायिक दक्षता व अध्यापन सफलता पर शोध किया जा सकता है ।

3.2.2 अध्यापक प्रशिक्षण संबंधी शोध समस्यायें

1 कुशल शिक्षक-प्रशिक्षकों संबंधी समस्यायें ।

2 अध्यापकों को प्रेरणा देने संबंधी कारकों का अध्ययन ।

3 अध्यापक प्रशिक्षण संस्थाओं के स्त्रोत व सुविधाओं संबंधी समस्याओं का अध्ययन ।

4 अध्यापक प्रशिक्षण पर किये जाने वाले व्यय का विश्लेषण ।

5 अब तक अध्यापक प्रशिक्षण या कौशल पर जो कार्य किये गये हैं उनकी सार्थकता जांच करना।

6 शिक्षक प्रशिक्षण के कार्यक्रम को व्यवहारिक व प्रभावशाली कैसे बनाया जा सकता है ।

7 शिक्षक प्रशिक्षण के क्षेत्र में नवीन अनुसंधान करना जिससे उसे प्रभावशाली बनाया जा सकें ।

8 अध्यापक शिक्षण कार्यालय का प्रमुख लक्ष्य क्या है व इन लक्ष्यों को प्राप्त करने हेतु किस प्रकार के पाठ्यक्रम की आवश्यकता है ।

9 प्रशिक्षित व अप्रशिक्षित अध्यापकों की शिक्षण कौशलों की दृष्टि से तुलना करना व यह देखना कि अध्यापक प्रशिक्षण सफल अध्यापक बनाने की दिशा में कहां तक सहयोगी हैं ।

10 सफल व असफल अध्यापकों के व्यक्तित्व का तुलनात्मक अध्ययन करना ।

11 कार्यरत अध्यापकों की अध्यापन प्रवीणता का अध्ययन करना ।

12 जो व्यक्ति अध्यापन व्यवसाय में संलग्न है वह अपने व्यवसाय से कहां तक संतुष्ट है इसका समालोचनात्मक अध्ययन करना ।

13 एक सफल अध्यापक के लिये छात्रों से शाब्दिक व अशाब्दिक अन्त: क्रिया करना क्यों आवश्यक है इसका अध्ययन करना ।

14 विद्यालय वातावरण का अध्यापकों के व्यवहार व शिक्षण दक्षता पर क्या प्रभाव पड़ता है इसका अध्ययन करना ।

3.3 शैक्षिक मूल्यांकन व शिक्षा अनुसंधान (Educational Research and Educational Evaluation)

शिक्षा मूल्यांकन संबंधी समस्याओं पर शोधकर्ता का ध्यान इस कारण जाना चाहिये क्योंकि अनेकों प्रश्न ऐसे है जिनका उत्तर शोध कार्यो द्वारा ही मिल सकता है । उदाहरणार्थ आप की मूल्यांकन पद्धति कितनी विश्वसनीय व वैध है? मूल्यांकन पद्धति में गुणात्मक सुधार कैसे लाया जा सकता है? क्या पूर्व निर्मित परीक्षण उचित है ।

3.3.1 मूल्यांकन संबंधी शोध क्षेत्रों का वर्गीकरण (Classification of Research area related to evaluation) - शैक्षिक मापन व मूल्यांकन क्षेत्र में किये गये शोध कार्यो को हम निम्नलिखित श्रेणियों में विभक्त कर सकते हैं ।

1. बुद्धि संबंधी परीक्षण

शाब्दिक, अशाब्दिक

सामाजिक बुद्धि

सृजनात्मकता

2. अभिवृत्ति संबंधी परीक्षण

शैक्षिक उपलब्धि

व्यवसायिक उपलब्धि

3. व्यक्तित्व संबंधी परीक्षण समायोजन

मूल्य

अभिरूचि

3.3.2 शैक्षिक मूल्यांकन संबंधी शोध समस्यायें (Research problem related to Educational Evaluation)

1 व्यक्तित्व के विभिन्न क्षेत्रों के मापन हेतु उपकरणों का निर्माण करना और इस बात पर विशेष ध्यान देना कि यह उपकरण भारतीय सांस्कृतिक, सामाजिक व आर्थिक विशेषताओं के अनुरूप हो ।

2 व्यक्तित्व मापन की विधियों को अधिक से अधिक विश्वसनीय व वस्तुनिष्ठ बनाने का प्रयास करना ।

3 छात्रों के व्यवहार परिवर्तन का मूल्यांकन करने के लिये मानदंड परीक्षाओं का निर्माण करना ।

4 निबंधात्मक परीक्षा पद्धतियों की क्या कमियां हैं व उन्हें कैसे दूर किया जा सकता है इस पर शोध करना ।

5 निबंधात्मक परीक्षण पत्रों के निर्माण की सही प्रक्रिया का ज्ञान होना ।

6 निबंधात्मक परीक्षण के विकल्प के रूप में हम किस परीक्षण प्रणाली को अपना सकते हैं इस पर व्यावहारिक सुझाव देना ।

7 वर्तमान परीक्षा प्रणाली के दोषों को कैसे दूर किया जा सकता है इस पर व्यवहारिक सुझाव देना ।

8 विभिन्न वैयक्तिक विशेषताओं को मापने हेतु विभिन्न परीक्षणों का विकास करना ।

3.4 शिक्षण एवं शैक्षिक अनुसंधान (Educational Research and Teaching)

शिक्षण के क्षेत्र में भी शोध की बहुत आवश्यकता है आज इससे संबंधित अनेकों प्रश्न हमारे समक्ष उत्पन्न होते है । अध्यापक कैसे कुशलता प्राप्त कर सकता है । विभिन्न क्षेत्रों में पढाने वाले अध्यापकों के स्तर की तुलना करना? विभिन्न विषयों को पढाने वाले अध्यापकों में क्या अन्तर होता है ।

3.4.1 शिक्षण संबंधी शोध क्षेत्रों का वर्गीकरण (Classification of Research area related to teaching)- डी. पासी एवं सनसनवाल ने शिक्षण संबंधी शोध कार्यो को सात श्रेणियों में विभक्त किया है जो इस प्रकार हैं ।

1 आधुनिक कारक जो अध्यापक व्यवहार व अध्यापन कुशलता को प्रभावित करते हैं । (T.Fact-TB/TS)

2 अध्यापक प्रशिक्षण जिसका प्रभाव अध्यापक के व्यवहार पर पडता है । (Training - TB)

3 अध्यापक व्यवहार व अध्यापन कौशल जो सीखने को प्रभावित करते हैं । (TB/TS-C out)

4 अध्यापक कारक जिसका प्रभाव सीखने पर पडता हैं (T.Fact-Lout)

5 अध्यापक कारक जो अध्यापक व्यवहार व शिक्षण कौशल को प्रभावित करता है व उसका सम्मिलित प्रभाव सीखने पर पडता है । (T.Fact- TB/TS-L.out)

6 वर्णनात्मक अध्ययन ।

7 यंत्रों का विकास संबंधी अध्ययन ।

(T-Fac-(Teacher factor), TB-Teacher behaviour), T.Sc. Teaching Strategies), L-out (Learning outcome)

3.4.2 शिक्षण संबंधी शोध समस्यायें (Research problem related to Teaching)-

1 अध्यापक के व्यवहार का आयु लिंग, प्रशिक्षण, अनुभव आधुनिकता व सामाजिक आर्थिक दृष्टि से अध्ययन करना ।

2 अध्यापक व्यवहार व वैयक्तिक विशेषताओं के संदर्भ में अध्ययन करना ।

3 अध्यापक कुशलता का बुद्धि, समायोजन, मूल्य, शिक्षक, अभिवृत्ति आदि के संदर्भ में अध्ययन करना ।

4 शोध द्वारा विभिन्न विषयों को पढाने वाले अध्यापकों की कुशलता को मापना ।

5 ग्रामीण, शहरी, जनजाति क्षेत्रों में विद्यमान विद्यालयों की शिक्षक अभिवृत्ति व शिक्षण कुशलता का अध्ययन करना ।

6 कक्षा के उदार व उग्र वातावरण का छात्रों की बुद्धि, सृजनात्मकता, समस्या समाधान क्षमता आदि पर क्या प्रभाव पडता है इसका अध्ययन करना ।

7 क्या कक्षा का वातावरण छात्रों के अन्दर गत्यात्मक शिक्षण को विकसित करने में समर्थ है ।

8 सूक्ष्म शिक्षण द्वारा छात्राध्यापकों में किस सीमा तक शिक्षण कौशलों का विकास किया जा सकता है ।

9 शिक्षण के जो विभिन्न मॉडल है वह किन-किन गुणों को विकसित करने में अपना सहयोग दे पायें हैं क्या यह मॉडल अपने वास्तविक उद्देश्य की पूर्ति कर पा रहे हैं ।

10 अध्यापक व छात्रों के मध्य होने वाली अन्तःक्रिया का सीखने पर क्या प्रभाव पडता है इसका अध्ययन करना ।

3.5 शैक्षिक समाजशास्त्र व शैक्षिक अनुसंधान (Educational Research and Educational Sociology)-

शिक्षा एक सामाजिक प्रक्रिया है जो समाज में विद्यमान सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक व सांस्कृतिक शक्तियों से सदैव ही प्रभावित होती रहती है । भारतीय समाज की यदि इन परिस्थितियों का हम अवलोकन करें तो हमें यह बहुत ही अन्दर देखने को मिलेगा । इस अन्तर के फलस्वरूप हमारे मस्तिष्क में प्रश्न उठता है कि कौन सी शिक्षा व्यवस्था किस समाज के लिये उपयुक्त रहेगी । समाज में जहां एक ओर हमने सामने सामाजिक दृष्टि से प्रगतिशील वर्ग है वहीं दूसरी ओर वह वर्ग भी है जो रूढियों, अन्धविश्वासों व परम्पराओं से ग्रसित लोगों की विचारधारा को वस्तुनिष्ठ बना सकें । शिक्षा द्वारा हम जनसाधारण के सामाजिक स्तर को कैसे ऊपर उठा सकते हैं । यह भी एक महत्वपूर्ण समस्या है, जिसका प्रत्युत्तर अनुसंधान द्वारा दिया जा सकता है । भारतवर्ष के भौगोलिक धरातल को यदि देखा जायें तो हमें ऐसा प्रतीत होगा कि भौगोलिक पर्यावरण के कारण रहन सहन के तरीकों में जो भिन्नता है वह मानव मस्तिष्क में पृथक्करण का भाव जागत कर रही है । पृथक्कीकरण की इस भावना को दूर करने हेतु भी शोध की आवश्यकता है । समाज में कुछ वर्ग ऐसे भी हैं जो पर्याप्त सुविधाओं के ना मिलने के कारण शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ गये हैं । इन वर्गो को शिक्षा की ओर कैसे प्रेरित कर सकते हैं यह भी आज एक ज्वलन्त समस्या है । शिक्षा द्वारा हम कैसे नवीन सामाजिक व्यवस्था को खड़ा कर सकते हैं यह भी आज के भारतीय समाज की ज्वलन्त समस्या है। चूंकि आज हम कृषि प्रधान देश से विज्ञान व तकनीकी प्रधान देश की ओर उन्मुख हो रहे है। हमने प्रजातांत्रिक शासन व्यवस्था को अपनाया तो हमें शिक्षित नागरिकों की भी आवश्यकता है। हम सार्वभौमिक शिक्षा के लक्ष्य को कैसे प्राप्त कर सकते हैं विभिन्न वर्गो को शिक्षा की समान सुविधायें प्रदान की जायें यह सब प्रश्न हमें इस बात के लिये प्रेरित करते हैं कि शैक्षिक समाजशास्त्र वह क्षेत्र है जिस पर विशेष रूप से ध्यान दिये जाने की आवश्यकता है ।

3.5.1 शैक्षिक समाजशास्त्र संबंधी शोध क्षेत्रों का वर्गीकरण (Classification of Research areas related to educational sociology)- बी.बी. शाह ने शैक्षिक अनुसंधान सर्वेक्षण के द्वितीय व तृतीय संस्करण में शैक्षिक समाजशास्त्र संबंधी शोध कार्यो को निम्नलिखित पांच श्रेणियों में विभक्त किया है ।

1 **शिक्षा व समाज (Education and Society) -** इसके अन्तर्गत समाज शिक्षा व समाजीकरण तथा शिक्षण आधुनिकीकरण को सम्मिलित किया जाता है ।

2 सामाजिक उप व्यवस्था यथा आर्थिक, राजनैतिक स्तरीकरण, धर्म व अल्पसंख्य समूह के संदर्भ में शैक्षिक उपव्यवस्था का अध्ययन (Education subsystem in relation to Social subsystem)

3 बालकों की शिक्षा व व्यक्तित्व के विकास के लिये कौन से कारक उत्तरदायी हैं । (Social factors behind educability and personality development)

4 शिक्षा संस्थाओं का समाजशास्त्र (Sociology of Educational Institutions)

5 बाल अपराध व छात्र असंतोष संबंधी समस्यायें तथा विकलांग बच्चों की शिक्षा

(Problems such as juvenile delequency, student unrest and education of the handicapped)

चिटनिस : (Chitnis) ने शैक्षिक समाज शास्त्र सर्वेक्षण के द्वितीय संस्करण में इसके क्षेत्रों को दो उपभागों में विभक्त किया है जो इस प्रकार है ।

प्रथम उपभाग :

1 स्वतंत्र भारत में शिक्षा के उद्देश्य व कार्य
2 शिक्षा, अर्थ व्यवस्था व राजनीति ।
3 शिक्षा - आधुनिकीकरण, परिवर्तन और विकास
4 शिक्षा - सामाजिक समानता व गतिशीलता ।

द्वितीय उपभाग :

1 सामाजिक व्यवस्था का विश्लेषण व उसके विशिष्ट पहलू ।
2 सामाजिक ढांचे में परिवर्तन व नवाचार ।
3 शिक्षा की समस्यायें ।
4 विद्यार्थी वर्ग की विशेषतायें व समस्यायें ।
5 विद्यालय व महाविद्यालय के अध्यापकों की स्थिति व प्रकार्य ।
6 अनौपचारिक शिक्षा के साधन ।

3.5.2 शैक्षिक समाजशास्त्र संबंधी शोध समस्यायें (Research Problem related to educational Sociology)-

1 किस प्रकार के छात्र अधिकांशतया विद्यालय नियमित रूप से जा रहे हैं अर्थात् उनकी जाति, सामाजिक पृष्ठभूमि, पिता का व्यवसाय व आय का अध्ययन ।
2 वह कौन से बालक हैं जो विद्यालय नहीं जा रहे हैं ।
3 विद्यालय में छात्र कैसे रहते हैं व कार्य करते हैं ।
4 अनुसूचित जाति व जनजाति पर आरक्षण के सिद्धान्त का क्या प्रभाव पड़ रहा है इसकी जानकारी करना ।
5 शिक्षा सामाजिक आर्थिक सांस्कृतिक एवं मनोवैज्ञानिक चरों की दृष्टि से एक सामाजिक व्यवस्था के रूप में ।
6 विद्यालय एक सामाजिक व्यवस्था के रूप में ।
7 शिक्षा व समाज - समाजीकरण, समानता, सामाजिक गतिशीलता व्यवसायिक गतिशीलता, सामाजिक स्तरीकरण, समाजीकरण परिवर्तन व विकास आधुनिकीकरण पर शोध करना ।
8 शिक्षा व राजनीति में संबंध देखना ।
9 कमजोर वर्ग व ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों में शैक्षिक अवरोध के कारणों को जानना ।
10 सांस्कृतिक दृष्टि से विषम समाज में शिक्षा का क्या कार्य है ।
11 प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिक व विश्वविद्यालय शिक्षा के प्रजातांत्रीकरण पर विभिन्न तत्वों का क्या प्रभाव पड़ रहा है । इसका अध्ययन करना ।

12 बालकों को प्रारम्भिक स्तर से ही मातृभाषा में शिक्षण कराने का क्या लाभ है ।

13 बालक विभिन्न प्रकार के पाठ्यक्रम व सीखने की परिस्थितियों में कैसे सीखते हैं ।

14 गुप्त पाठ्यक्रम क्या है व इसका सामाजिक दृष्टि से पिछडे हुये बालकों पर क्या प्रभाव पडता है ।

15 समाज के विभिन्न वर्गो की शिक्षा विशेषताओं व शिक्षा समस्याओं का अध्ययन करना । साथ ही उनकी शैक्षिक आवश्यकतायें जानना ।

16 सामाजिक आर्थिक स्तर का शिक्षा पर क्या प्रभाव पडता है इसकी जानकारी करना।

17 विभिन्न जातियों की वर्तमान- शिक्षा के क्षेत्र में की गई उपलब्धियों का अध्ययन करना।

18 विभिन्न जातियों व वर्गो के मध्य विद्यमान शैक्षिक अन्तर को कैसे समाप्त किया जा सकता है इसके लिए कार्यात्मक सुझाव देना ।

3.6 शिक्षा दर्शन व शैक्षिक अनुसंधान (Educational research and educational philosophy)

शिक्षा क्षेत्र में शोधकर्ताओं का ध्यान शिक्षा दर्शन की ओर बहुत ही तीव्र गति से आकर्षित हो रहा है परन्तु फिर भी इसके संबंध में कुछ प्रश्न उत्पन्न होते हैं : यह अनुसंधान सामाजिक दृष्टि से कहा तक लाभप्रद है । यह अनुसंधान शिक्षा दर्शन के वास्तविक संबोध से कहां तक संबंध रखते है । अब तक किये गये अनुसंधनों का विश्लेषण किया जायें तो हम यह कह सकते है कि यह शोध ऐतिहासिक या वर्णनात्मक अधिक है जिसमें किसी भी विचारक के विचारों का विश्लेषण किया गया है अथवा एक विचारक के विचारों की तुलना दूसरे विचारक के विचारों की तुलना दूसरे विचारक से कर ली गई है । जबकि आज आवश्यकता इस बात की है कि हम शिक्षा दर्शन की उपयोगिता की शिक्षानीतियो को निर्धारण कर प्रयोग करें व साथ ही शिक्षा जगत में उठने वाले विरोधों का उत्तर दार्शनिक पृष्ठभूमि में दें । आज भारतवर्ष में शिक्षा जगत में एक समस्या बहुत ही विकराल रूप लिये हुये है । वह है पाठ्यक्रम व विषयवस्तु को कैसे भारतीय बनाया जा सकता है और इसके लिये यह आवश्यक है कि हम सामाजिक-सांस्कृतिक परिपेक्ष में भारतीय आवश्यकताओं को समझें व उसके अनुकूल पाठ्यक्रम का निर्माण करें ।

3.6.1 शिक्षा संबंधी शोध क्षेत्रों का वर्गीकरण (Research Problems related to educational philosophy)-- डी. सी. शैषाद्रि ने अपने लेख शिक्षादर्शन में अनुसंधान में शिक्षा दर्शन संबंधी शोध क्षेत्रों को निम्न भागों में विभाजित किया है ।

1 शिक्षादर्शन, किसी भी दार्शनिक के शैक्षिक विचारों, शिक्षा जगत को उनकी देन उस दार्शनिक का अन्य दार्शनिक से संबंध देखना आदि संबंधी शोध कार्य ।

2 किसी विशेष काल में शिक्षा दर्शन का ऐतिहासिक दृष्टि से विकास उस समय की ऐतिहासिक, धार्मिक व दार्शनिक परिस्थितियों के संदर्भ में ।

3 किसी भी दर्शन का प्रत्यय संबंधी अध्ययन ।

3.6.2 शिक्षा दर्शन संबंधी शोध समस्यायें (Research Problems related to educational philosophy)

1 विभिन्न शिक्षाविदों के दार्शनिक विचारों का अध्ययन करना तथा वर्तमान संदर्भ में उनकी सापेक्षता देखना ।

2 धर्म निरपेक्ष शिक्षा, राष्ट्रीय एकता की शिक्षा, शान्ति शिक्षा, उदार शिक्षा, सार्वभौमिक शिक्षा, शिक्षा में गुणात्मक सुधार व समान स्कूल व्यवस्था का अध्ययन ।

3 मूल्य शिक्षा का संबंध व उसकी व्यवहारिकता का अध्ययन करते हुये इस बात का अध्ययन करना कि क्या मूल्यों की शिक्षा विद्यालय द्वारा देना संभव हैं क्या कोई मूल्य सिर्फ भारतीयता से संबंध रखते हैं ।

4 पश्चिमी तथा भारतीय दार्शनिकों के विचारों का तुलनात्मक अध्ययन करना ।

5 वर्तमान बदली हुई सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक व धार्मिक परिस्थितियों में शिक्षा के मूल्यों व लक्ष्यों का निर्धारण करना ।

6 महान भारतीय ग्रन्थों में प्रतिपादित मूल्यों का वर्तमान में क्या औचित्य है, इसकी जानकारी करना ।

7 आधुनिक पाठ्यक्रम की प्रवृत्ति के दार्शनिक आधारों की विवेचना करना ।

8 दर्शन के आधार पर शैक्षिक उद्देश्यों का निर्धारण करना ।

3.7 शैक्षिक अर्थशास्त्र व शिक्षा अनुसंधान (Educational Research and Educational Economics)

अनुसंधान हेतु एक क्षेत्र है समाज मे विद्यमान आर्थिक परिस्थितियां। किसी भी प्रकार के अथवा किसी भी स्तर के शैक्षिक कार्यक्रम हेतु हमें धन की आवश्यकता होती है, धनाभाव की परिस्थितियां शैक्षिक आवश्यकताओं की पूर्ति में बाधक होती है । भारतवर्ष के संपूर्ण बजट का यदि मूल्यांकन किया जायें तो हमारे सामने एक बात तो स्पष्ट हो जाती है कि शैक्षिक आवश्यकताओं की दृष्टि से यहां पर शिक्षा के ऊपर व्यय किया जाने वाला धन शून्य समकक्ष है। इस धनराशि का बढा पाना तो हमारे बस की बात नहीं है परन्तु हम यह विचार अवश्य कर सकते हैं कि इस धन का कैसे व्यय किया जाये कि कम से कम खर्च में हम अधिक से अधिक लाभ अर्जित कर सकें । हमें आज ऐसी शैक्षिक योजना को तैयार करना होगा जिसके अन्तर्गत हम शैक्षिक आवश्यकताओं की आर्थिक आधार पर प्राथमिकता निर्धारित कर लें । वर्तमान संदर्भ में शिक्षा को हमें एक नियोजन प्रक्रिया के रूप में देखना होगा और यह मान कर चलना होगा कि शिक्षा रूपी कारखाने में मानव रूपी सामग्री का निर्माण होता है और शिक्षा के द्वारा इस प्रकार की मानवशक्ति का निर्माण होना चाहिये जिसका उपयोग हम समकालीन आवश्यकताओं में कर सकें । आज हमारे लिये यह जानना भी आवश्यक है कि शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर किस अनुपात में व्यय किया जाना चाहिये । जिससे शिक्षा में संख्यात्मक व गुणात्मक दोनों ही दृष्टि से विकास किया जा सकें । शिक्षा अर्थशास्त्र के अन्तर्गत किये जाने वाले शोध कार्य हमें विभिन्न तथ्यों का ज्ञान भी कराते है उदाहरणार्थ शिक्षा सामाजिक आर्थिक स्तर कैसे ऊंचा उठाया जा सकता है । किस प्रकार की शिक्षा समाज में विद्यमान बेरोजगारी की समस्या का निदान करने में सहयोग देगी । शिक्षा पर किये गये व्यय का परिणाम मानव के कौशलों के विकास पर किस सीमा तक पड़ता है ।

3.7.1 शैक्षिक अर्थशास्त्र संबंधी शोध क्षेत्रों का वर्गीकरण (Classification of Research areas related to educational economics) - पी. आर. पंचमुखी ने अपने लेख रिसर्च इन इकोनोमिक्स ऑफ एजूकेशन में शिक्षा अर्थशास्त्र संबंधी शोध क्षेत्रों को निम्नलिखित चार भागों में वर्गीकृत

1. **शिक्षा व अर्थशास्त्र में परस्पर निर्भरता**
   (Education and Economics interdependence)

2. **शिक्षा व सामाजिक आर्थिक समानता**
   (Education and Socio-economic equality)
3. **शैक्षिक व्यय से ब शैक्षिक अर्थ से संबंधित समस्यायें**
   (Problems of educational investment and educational finance)
4. **शिक्षा की योजना व व्यबस्था**
   ((Planning and Management in education)

3.7.2 शैक्षिक अर्थशास्त्र संबंधी शोध समस्यायें (Research problem related educational economics):

1 जनसाधारण पर शिक्षा की दृष्टि से किये गये व्यय का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में अध्ययन करते हुये यह देखना कि इसमें कितनी अभिवृद्धि किस क्षेत्र के अन्तर्गत की गई है ।

2 विभिन्न वर्षो में राष्ट्रीय बजट के अंतर्गत शिक्षा पर किये जाने वाले व्यय का अवलोकन करना।

3 शिक्षा पर व्यय करने के लिये धन प्राप्त होने के विभिन्न स्त्रोत कौन से है - केन्द्रीय व राज्य स्तर पर शिक्षा को जो धन प्राप्त होता है उसके अतिरिक्त व्यक्तिगत स्तर पर इन स्त्रोतों को कैसे बढाया जा सकता है इसका अध्ययन करना ।

4 शिक्षा में सुधार हेतु पाठ्यक्रम, कार्य करने के घंटे, विद्यालय भवन व अन्य सुविधाओं का क्या योगदान है इसका अध्ययन करना ।

5 शिक्षा पर सामाजिक दृष्टि से, संस्थागत दृष्टि से, तथा निजी दृष्टि से कितना व्यय किया जाता है ।

6 शिक्षा पर किये जाने वाले व्यय का आर्थिक प्रगति से क्या संबंध है इसका अध्ययन करना ।

7 शिक्षा का व्यक्ति व समाज की आर्थिक प्रगति में क्या योगदान है ।

8 विभिन्न सामाजिक आर्थिक व सांस्कृतिक समूहों की आर्थिक समस्यायें व उनका बालक की शिक्षा पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना ।

9 शिक्षण सुविधाओं का अध्ययन करना । कुछ स्थान तो ऐसे हैं जहां पर बहुत अधिक सुविधायें प्राप्त हैं परन्तु उनका उपयोग करने वाले नहीं है और जहां इनका उपयोग करने वाले लोग हैं वहां पर्याप्त सुविधायें उपलब्ध नहीं हैं ।

10 राज्य या केन्द्रीय सरकार द्वारा प्राप्त अनुदान की प्रणाली का मूल्यांकन करना व इस बात का अध्ययन करना कि कैसे इस व्यवस्था को बदलकर एक सरल रूप दिया जा सकता है ।

11 शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर 'किये गये खर्चो के औचित्य का परीक्षण करना ।

12 तकनीकी शिक्षा में प्रति व्यक्ति किये गये खर्चे को ज्ञात करते हुये उसके संबंध में व्यवहारिक सुझाव देना ।

13 प्राथमिक शिक्षा के स्तर पर होने वाले अपव्यय एवं अवरोधन की समस्या पर विचार विमर्श करना ।

14 प्राथमिक, माध्यमिक व विश्वविद्यालय स्तर पर इकाई व्यय का अध्ययन करना ।

3.8 शिक्षा राजनीति व शिक्षा अनुसंधान (Education and Politics-Interdependence)

भारतवर्ष का शैक्षिक ढांचा इस प्रकार का है कि यहां शिक्षा से संबंधित विभिन्न नीतियों का निर्धारण बुद्धिजीवियों द्वारा नहीं किया वरन् यह राजनीतियों द्वारा निर्धारित की जाती है । समय-समय पर शिक्षा के क्षेत्र में राजनैतिक व्यवस्था के हस्तक्षेप को लेकर शिक्षाविदों ने विचार किया है और अपनी सहमति अभिव्यक्त की है कि शिक्षा का राजनीतिकरण होने का अभिप्राय है, उसकी प्रगति के मार्ग को अवरूद्ध कर देना । इसके संबंध में हमारे मस्तिष्क में अनेक शंकायें उठती हैं हम विचार करते हैं कि शिक्षा का राष्ट्रीयकरण होना चाहिये या नहीं? क्या विद्यार्थियों को सक्रिय राजनीति में भाग लेना चाहिये? क्या भारतवर्ष में किसी भी स्तर की शिक्षा का विकास निजी संस्थाओं द्वारा ही संभव है? प्रजातांत्रिक ढांचे में शिक्षा का क्या स्वरूप होना चाहिये यह सब समस्यायें हमें यह सोचने पर बाध्य करती हैं कि शिक्षा को राजनैतिक प्रपंचों से दूर रहना चाहिये । विभिन्न राजनैतिक दल शिक्षा के विभिन्न आयामों के बारे में विचार अवश्य प्रस्तुत करते हैं परन्तु आवश्यकता इस बात की है कि हम इन विचारों का विश्लेषण करें व राजनैतिक परिपेक्ष में शिक्षा के स्वरूप का निर्धारण करें ।

3.8.1 शिक्षा राजनीति संबंधी शोध क्षेत्रों का वर्गीकरण :

शिक्षा राजनीति संबंधी शोध कार्यो को निम्न श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है-

1 शिक्षा का राजनीति पर प्रभाव ।

2 राजनीति का शिक्षा पर प्रभाव ।

3 प्रजातंत्र में शिक्षा की आवश्यकता ।

4 संविधान के परिप्रेक्ष्य में शिक्षा ।

3.8.2 शिक्षा राजनीति संबंधी शोध समस्यायें:

1 विभिन्न राजनैतिक दलों द्वारा अपने अपने घोषणा पत्रों में शिक्षा के संबंध में व्यक्त किये गये विचारों का विश्लेषण ।

2 प्रजातंत्र में शिक्षा के उद्देश्यों के संबंध में खोज करना ।

3 संविधान में निहित सार्वभौमिक शिक्षा के लक्ष्य को कैसे प्राप्त किया जा सकता है ।

4 शिक्षा का राजनीतिकरण करने के क्या लाभ व हानि हैं ।

5 शिक्षा की राजनीति का शिक्षा के गिरते हुये स्तर से संबंध देखना ।

6 छात्रों की राजनीति का छात्र असंतोष व छात्र अनुशासनहीनता पर, प्रभाव जानना ।

3.9 शिक्षा का इतिहास व शैक्षिक अनुसंधान (Educational Research and History of Education)

शिक्षा का इतिहास अथवा हम यह भी कह सकते है कि शिक्षा के अंतर्गत किया गया विकास भी शिक्षा क्षेत्र में अनुसंधान हेतु एक नवीन आयाम को जन्म देता है उदाहरणार्थ यदि हम प्राथमिक शिक्षा को लें और यह देखें कि स्वतंत्रता के पश्चात् भारतवर्ष में प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में क्या प्रगति हुई है? यह प्रगति किस क्षेत्र विशेष में अधिक हुई? इसका लाभ सभी जातियों व वर्गो ने समान रूप से उठाया है अथवा नहीं । यह प्रगति संतोषजनक है अथवा नहीं । यदि प्रगति असंतोषजनक है तो ऐसे कौन से उपाय है जिनके द्वारा हम शिक्षा के इस क्षेत्र का पूर्ण रूप से विकास कर सकते हैं । शिक्षा का इतिहास अनुसंधान हेतु अनेकों क्षेत्रों को उद्घोषित करता है साथ ही इतिहास हमारे समक्ष वह आधार भी प्रस्तुत करता है जो हमें हमारे वर्तमान को सुधारने की दिशा प्रदान करते हैं । आज की दुर्भाग्यपूर्ण परिस्थिति यह है कि शैक्षिक विकास की प्रक्रिया पर शोध कार्य की ओर शोधकर्ताओं का ध्यान नहीं जा रहा है । आवश्यकता इस बात की भी है कि हम यह अध्ययन करें कि आज के स्कूल व कॉलेज का छात्रों के मूल्यों व अभिवृत्तियों पर क्या प्रभाव पड़ रहा है । आज शिक्षा को प्राप्त करने वाली भारतीय नारी क्यों सती हो रही है । भारतीय शिक्षा व्यवस्था का जाति गतिशीलता पर क्या प्रभाव पड़ रहा है ।

3.9.1 शिक्षा इतिहास संबंधी शोध क्षेत्रों का वर्गीकरण - डी. आर. पी. सिंह ने अपने लेख भारतवर्ष में शिक्षा के अन्तर्गत शिक्षा के इतिहास संबंधी शोध क्षेत्र निम्न बतायें है ।

1 प्राचीन भारत वर्ष में शिक्षा (Education in ancient India)

2 मध्यकालीन भारतवर्ष में शिक्षा (Education in Medieval India)

3 ब्रिटिश कालीन भारत वर्ष में शिक्षा (Education in British India)

4 स्वतंत्रता के पश्चात् भारतवर्ष में शिक्षा (Education in the Post-independence period)

5 भारतीय समाज की समस्यायें ।

(अ) औद्योगिकरण व शिक्षा ।

(ब) नगरीय विकास, दलित समाज व शिक्षा

(स) सामाजिक, राजनैतिक व आर्थिक आंदोलन व उनका शिक्षा पर प्रभाव

(द) विशिष्ट समय व क्षेत्र में नारी शिक्षा की स्थिति व विकास ।

(य) विशिष्ट समय व क्षेत्र में हरिजन शिक्षा की स्थिति का विकास ।

3.9.2 शिक्षा का इतिहास संबंधी शोध समस्यायें-

1 भारतवर्ष में तकनीकी व व्यावसायिक शिक्षा का विकास (स्वतंत्रता से पूर्व व स्वतंत्रता के पश्चात्)

2 पूर्वी उतर प्रदेश में शिव्ली संस्थाओं का अध्ययन व मुस्लिम शिक्षा क्षेत्र में उनकी देन।

3 वैदिक काल में शिक्षा के विभिन्न आयामों का क्या स्वरूप था, इसका अध्ययन करना।

4 मुस्तिम परम्पराओं का भारतीय शिक्षा व्यवस्था पर क्या प्रभाव पडा, इसकी जानकारी करना।

5 ब्रिटिश काल में भारतीय शिक्षा में क्या प्रगति हुई इसे जानना ।

6 स्वतंत्रता के पश्चात् प्राथमिक शिक्षा, माध्यमिक शिक्षा, विश्वविद्यालय शिक्षा, शिक्षक शिक्षा, समाज शिक्षा, स्त्री शिक्षा की क्या स्थिति है व सरकार द्वारा इनके सुधार हेतु क्या उपाय अपनाये गये है ।

7 वर्तमान शिक्षा व्यवस्था पर प्राचीन मूल्यों पर क्या प्रभाव पड़ रहा है ।

8 वर्तमान शिक्षा व्यवस्था देश की भाषा प्रगति में क्या योगदान दे सकती हैं ।

3.10 शिक्षा मनोविज्ञान व शैक्षिक अनुसंधान (Educational Research and Educational Psychology)

शिक्षा मनोविज्ञान अनुसंधान का वह क्षेत्र है जहां पर प्राचीन काल से काम होता चला आ रहा है । अरस्तु ने बहुत पहले बालकों के संज्ञानात्मक विकास की बात कही थी । एल. पद. हृयूकिन ने 1986 में शिक्षा मनोविज्ञान नाम की पुस्तक लिखी और इन्होंने मनोविज्ञान के सिद्धान्तों को शिक्षा क्षेत्र में क्रियान्वित किया । फ्रोवेलए हरबर्ट, मॉन्टेसरी नामक विद्वानों ने शिक्षा को बाल केन्द्रित बनाने की बात कहीं और 1988 की नई शिक्षा नीति ने भी शिक्षा को मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों के अनुरूप ढालने पर बल दिया परन्तु मनोवैज्ञानिक धरातल पर जब हम शिक्षा के प्रारूप को तय करने की बात सोचते हैं तो हमारे समक्ष अनेक प्रश्न खड़े होते हैं । बालकों के अनुरूप शिक्षा की व्यवस्था को कैसे ढाला जा सकता है । किस प्रकार की मानसिक विशेषता वाले बालक के लिये किस प्रकार का पाठ्यक्रम का औचित्य निर्धारित करना । शिक्षा के द्वारा बालकों की बुद्धि व सृजनात्मकता में विकास कर पाना किस सीमा तक संभव है । बालक की वैयक्तिक, मनोवैज्ञानिक विशेषताओं के निर्धारण में वंशानुक्रम व वातावरण का क्या स्थान है । बालक की अभिवृत्ति, अभिरूचि व मूल्यों को एक निश्चित शैक्षिक कार्यक्रम के द्वारा किस प्रकार परिवर्तित किया जा सकता है । क्या विभिन्न दृष्टि से विकलांग व्यक्तियों के लिये भिन्न-भिन्न प्रकार के पाठ्यक्रम के क्रियान्वयन की आवश्यकता है । वर्तमान में

वैयक्तिक विशेषताओं के मापन हेतु जो परीक्षण उपलब्ध हैं उनकी विश्वसनीयता व वैधता संतोषजनक है अथवा नहीं । वह कौन से क्षेत्र हैं जिन पर अभी तक परीक्षण उपलब्ध नहीं हैं ।

3.10.1 शिक्षा मनोविज्ञान संबंधी शोध क्षेत्रों का वर्गीकरण - सर्वे ऑफ रिसर्च इन एजूकेशन (चतुर्थ भाग) में डी. केसी. पांडा ने 1987 में शिक्षा मनोविज्ञान संबंधी शोधों को निम्न भागों में वर्गीकृत किया है-

1. **सीखने वालों की विशेषतायें :** सीखने वाले की व्यवहारिक विशेषतायें क्या हैं इसका अध्ययन इसके अंतर्गत किया जाता है ।
2. **व्यक्तित्व ब आत्मबोध:** व्यक्तित्व के विभिन्न कारकों का आत्मबोध पर क्या प्रभाव पडता है । विभिन्न संकाय के व्यक्तियों का आत्मबोध कैसा है । अनुसूचित जाति व जनजाति के व्यक्तियों की रूचियों, सृजनात्मक समायोजन, उपलबद्धोन्मुख प्रेरणा, बौद्धिक स्तर आदि का वैयक्तिक विशेषताओं के संदर्भ में अध्ययन करना, विशिष्ट बालकों की वैयक्तिक विशेषताओं का अध्ययन करना ।
3. **प्रेरणा:** लबद्धोन्मुख प्रेरणा के स्तर का अध्ययन, लबद्धोन्मुख प्रेरणा के संबंधित कारक व लबद्धोन्मुख प्रेरणा का उपलब्धि स्तर पर प्रभाव आदि का अध्ययन इसके अंतर्गत सम्मिलित किया जाता है ।
4. **बुद्धि:** बुद्धि का व्यक्तित्व के अन्य कारकों से संबंध ज्ञात करना । बुद्धि का संज्ञानात्मक प्रक्रिया के विकास के रूप में अध्ययन करना ।
5. **अभिवृत्तियां, रूचियां व आकांक्षायें**: अध्यापक व छात्रों की अभिवृत्तियों रूचियों व आकांक्षाओं को अन्य कारकों के संदर्भ में विश्लेषित करना । छात्रों को शैक्षिक व व्यवसायिक आकांक्षाओं का अध्ययन करना।
6. **मूल्यों एवं नैतिकता का विकास:** विभिन्न वर्गो एवं लिंग के आधार पर मूल्यों का अध्ययन करना, शिक्षा द्वारा मूल्यों का विकास करके किया जा सकता है । ग्रामीण व शहरी छात्रों में क्या अन्तर है । सामाजिक दृष्टि से विचलित बालकों के मूल्यों का अध्ययन करना ।
7. **संज्ञानात्मक विकास :** इसके अन्तर्गत संज्ञानात्मक प्रक्रिया, भाषा विकास आदि का अध्ययन किया जाता है साथ ही यह देखा जाता है कि विद्यालय वातावरण व परिवार के वातावरण का बालकों के संज्ञानात्मक विकास पर क्या प्रभाव पडता है ।
8. **सीखने की प्रक्रिया :** भाषा को सीखने की क्षमता, तर्क व चिन्तन का विकास, समस्या समाधान क्षमता का विकास व तार्किक चिन्तन आदि का अध्ययन इसके अन्तर्गत किया जाता है ।
9. **कक्षा व्यवस्था :** कक्षा में अध्यापक का व्यवहार, कक्षा का वातावरण, छात्रों में नेतृत्व गुणों का विकास आदि का अध्ययन हम इसके अंतर्गत करते हैं ।
10. **मानसिक स्वास्थ व समायोजन :** अध्यापक व छात्र का कक्षा में वांछनीय व्यवहार हो इसके लिये यह आवश्यक है कि उनके मानसिक स्वास्थ्य का भी अध्ययन किया जाये

एकाकी परिवार, संयुक्त परिवार में रहने वाले छात्रों के मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन करना व मानसिक स्वास्थ्य के सहायक कारकों का अध्ययन करना ।

11. **व्यवहारात्मक विकास :** विभिन्न वर्गो, क्षेत्रों व लिंग के छात्रों का व्यक्तित्व के विभिन्न क्षेत्रों के विकास का अध्ययन करना ।
12. **परीक्षण व मापन :** व्यक्तित्व के विभिन्न पक्षों पर विश्वसनीय व वैध परीक्षणों का निर्माण करना ।

3.10.2 शिक्षा मनोविज्ञान संबंधी शोध समस्यायें :

1 विशिष्ट वैयक्तिक विशेषताओं, प्रेरणा व अभिवृत्तियों को पहचानने व उनका मूल्यांकन करना

2 कक्षा के वातावरण, नेतृत्व क्षमता आदि का अध्ययन करना ।

3 उपलब्धि संबंधी कारकों का अध्ययन करना जिनके आधार पर उपलब्धि के संबंध में भविष्यवाणी की जा सकें ।

4 बालक के व्यक्तित्व के विभिन्न पक्षों के विकास का अध्ययन करना ।

5 बालक के व्यक्तित्व के विकास पर वंशानुक्रम और वातावरण का क्या प्रभाव पडता है ।

6 सीखने की योग्यता व अभिक्षमता को शिक्षा के द्वारा कैसे विकसित किया जा सकता है ।

7 7 बालक के सीखने की क्षमता पर विद्यालय के वातावरण का क्या प्रभाव पडता है । इसका अध्ययन करना ।

8 प्रेरणा, सृजनात्मकता, समायोजन, आकांक्षास्तर स्तर व कुंठाओं का लिंग, जाति व धर्म के संदर्भ में अध्ययन करना ।

9 शारीरिक दृष्टि से असामान्य बालकों का अध्ययन करना ।

10 मानसिक दृष्टि से असामान्य बालकों का अध्ययन करना ।

11 उच्च बुद्धि वालों तथा प्रतिभाशाली बालकों का अध्ययन करना ।

12 विभिन्न क्षेत्रों के संबंध में अन्र्तसांस्कृतिक स्तर पर शोध कार्य करना ।

13 बालकों के व्यक्तित्व के निर्माण में अध्यापक के महत्व का मूल्यांकन करना ।

14 अध्यापक छात्र संबंधों का बालक के व्यक्तित्व पर क्या प्रभाव पडता हैं इसका अध्ययन करना।

15 विभिन्न वर्गो के छात्रों के लिये व्यवहारिक दृष्टि से उपयोगी पाठ्यक्रम का निर्माण करना ।

16 निर्देशन व परामर्श के कार्यक्रमों की उपयोगिता का मूल्यांकन करना व उनमें वांछनीय सुधार लाना ।

17 कुशल कार्यकर्ताओं की विशेषताओं को निर्धारित करना चूंकि इन्हीं पर कार्यक्रम की सफलता निर्भर करती है ।

18 शिक्षण रीतियों व पद्धतियों में सुधार लाने की दिशा में कार्य करना ।

अभी हमने शिक्षा की विषय वस्तु शिक्षण, सीखना, मूल्यांकन, सामाजिक, सांस्कृतिक आर्थिक राजनैतिक व एतिहासिक संदर्भ में शिक्षा अनुसंधान के क्षेत्रों की चर्चा की परन्तु उपरोक्त शोध क्षेत्रों के अतिरिक्त शिक्षा के अन्य महत्वपूर्ण क्षेत्र अधोलिखित है ।

1. जनसंख्या शिक्षा
2. भाषा शिक्षा
3. शैक्षिक निर्देशन
4. तुलनात्मक शिक्षा
5. शैक्षिक प्रशासन व संगठन
6. शिक्षण विधि
7. विकलांग बच्चों की शिक्षा
8. प्रौढ़ शिक्षा
9. वातावरण की शिक्षा
10. प्रदूषण की शिक्षा
11. सामाजिक दृष्टि से सुविधाहीन वर्ग

इसके साथ ही आज आवश्यकता इस बात की भी है कि हम शिक्षा दर्शन, शिक्षा इतिहास, शिक्षा समाजशास्त्र व शिक्षा मनोविज्ञान के क्षेत्र में किये गये अनुसंधानों का विश्लेषण करें तथा एक समन्वयवादी विचार धारा का विकास करें । भारतवर्ष के संबंध में यह सर्वविदित है कि यहां अनेकों दृष्टि से भिन्नता पाई जाती हैं । हम यदि जनसंख्या को विभिन्न वर्गो में विभाजित करें तो यह भिन्नता और अधिक स्पष्ट रूप में गोचर होती है । यह वर्ग निम्नलिखित है :-

1 ग्रामीण - शहरी
2 उच्च सामाजिक आर्थिक स्तर - निम्न सामाजिक आर्थिक स्तर
3 सम्पन्न वर्ग - विपन्न वर्ग
4 शिक्षित वर्ग - अशिक्षित वर्ग
5 सवर्ण जाति - अछूत जाति
6 राजनैतिक सुविधा प्राप्त वर्ग - राजनैतिक दृष्टि से तिरस्कृत वर्ग
7 बालक - बालिकायें ।

इन सभी वर्गो का यदि हम अलग-अलग तुलनात्मक अध्ययन करें तो यह पायेंगे कि इनकी वैयक्तिक विशेषतायें, आवश्यकतायें, सामाजिक आर्थिक स्तर, मानसिक विशेषतायें, शैक्षिक उपलब्धियों व व्यवहारगत विशेषताओं में बहुत ही अन्तर है । यह अन्तर क्यों है तथा इस अन्तर को शिक्षा की सहायता से कैसे दूर किया जा सकता है । यह एक विचारणीय प्रश्न है और इस प्रश्न के समाधान हेतु हमें गहन अध्ययन व विस्तृत शोध की आवश्यकता है । इस शोध द्वारा हमारा मुख्य रूप से प्रयास यही होना चाहिये कि हम इन वर्गो अन्तर को कम कर सकें व इन्हें एक दूसरे के समकक्ष ला सकें । यदि हम उनके सामाजिक आर्थिक स्तर को ऊंचा उठाना चाहते है तो हमें शैक्षिक कार्यक्रम इस प्रकार का बनाना होगा जो कि उनकी सामाजिक

आर्थिक आवश्यकताओं व विशेषताओं के अनुरूप हों, उदाहरणार्थ ग्रामीण अंचल की शिक्षा की प्रारूप शहरी अंचल की शिक्षा के प्रारूप से पूर्णतया भिन्न होना चाहिये चूंकि दोनों स्थलों की सामाजिक व सांस्कृतिक आवश्यकतायें व विशेषतायें भिन्न-भिन्न है ।

शिक्षा जगत में समय-समय पर इस उद्देश्य से सेमिनार आयोजित की गई है "प्रशिक्षण महाविद्यालयों के अन्तर्गत अनुसंधान की उन्नति" विषय पर आयोजित किये गये परिसंवाद में अनुसंधान पर निमित्त निम्नलिखित क्षेत्र निर्देशित किये गये थे :-

1. पाठ्यक्रम निर्माण में परीक्षात्मक कार्य
2. विद्यालय संगठन एवं प्रशासन
3. अध्यापन कार्यकर्ता वर्ग
4. शिक्षण तकनीकियों एवं पद्धतियों में सुधार
5. भारतीय बालक का मनोविज्ञान(पिछड़ा बालक, अपराधी बालक, विचलित बालक व प्रतिभाशाली बालक)
6. परीक्षण एवं संदर्शन
7. शैक्षिक समाजशास्त्र

बंगलौर में अखिल भारतीय प्रशिक्षण महाविद्यालय के सम्मेलन में प्रो. वर्मा ने कहा कि "अनुसंधान द्वारा ऐसी समस्याओं का समाधान करने का प्रयास किया जाना चाहिये जिनका व्यवहारिक महत्व हों" सम्मेलन में जिन समस्याओं का अध्ययन करने की बात भारतवर्ष के संदर्भ में कही गई थी वह निम्न है-

1. शैक्षिक तथा विकासात्मक मनोविज्ञान
2. भारतीय दर्शन
3. शैक्षिक प्रशासन
4. शैक्षिक मूल्यांकन तथा मापन
5. शैक्षिक तथा व्यावसायिक संदर्शन
6. विद्यालय के विभिन्न विषयों की अध्यापन प्रणालियां ।
7. पाठ्यवस्तु विवरणिका, पाठ्य पुस्तकें ।
8. अध्यापक प्रशिक्षण

श्री वी.वी. कामत ने अपने लेख "कैन ए टीचन डू रिसर्च" में भारत वर्ष में शिक्षा अनुसंधान संबंधी शैक्षिक समस्याओं की एक सूची प्रस्तुत की है जो इस प्रकार है :-

1. भारतवर्ष में पब्लिक स्कूल
2. भाषा अधिगम में भूलें या त्रुटियां
3. विद्यालय मे स्वशासन व्यवस्था
4. बालक व बालिकाओं की अध्ययन अभिरूचियां
5. श्रेष्ठ बालकों की शिक्षा
6. पिछडे बालकों की शिक्षा

7. प्रशासनात्मक प्रथाएं
8. प्राथमिक विद्यालयों में अध्ययन की समूह पद्धतियां
9. भारतीय शिक्षाशास्त्रीओं की शैक्षिक देन
10. प्राथमिक शिक्षा क्षेत्र में ऐच्छिक विद्यालय
11. नगर तथा ग्रामीण क्षेत्रों की उपलब्धियों में अन्तर
12. भूगोल एवं इतिहास विषय की अध्यापन पद्धतियां

उपरोक्त आधार पर हम यह कह सकते है कि शोध अध्ययन हेतु अनेकों क्षेत्र हैं । आवश्यकता इस बात की है कि शोद्यार्थी इन क्षेत्रों पर गहनता के साथ अध्ययन करें और इनके द्वारा संबंधित समस्याओं का निदान करने हेतु कोई ठोस कार्यक्रम प्रस्तुत करें । साथ ही शोद्यार्थियों के मस्तिष्क में से यह बात भी हटनी चाहिये कि शोधकार्य सिर्फ डिग्री प्राप्त करने के लिये नहीं किया जा रहा है । वरन् उसके माध्यम से शिक्षा जगत से संबंधित किसी भी समस्या का अन्वेषण किया जाना है और उस समस्या के समाधान हेतु ठोस सुझाव भी प्रस्तुत करने हैं ।

3.11 स्वमूल्यांकन (Self Assessment)

1. शिक्षा अनुसंधान के विभिन्न क्षेत्रों पर संक्षिप्त निबंध लिखिये ।
2. वर्तमान समय में बालक की सामाजिक आर्थिक परिस्थितियों को ध्यान में रखकर शोध करने की आवश्यकता क्यों है इसकी विस्तृत विवेचना कीजिये ।
3. शिक्षा इतिहास संबंधी शोध क्षेत्रों का वर्गीकरण कीजिये व इस क्षेत्र पर अनुसंधान की आवश्यकता बताइये ।
4. शिक्षा अर्थशास्त्र पर शोध करना क्यों आवश्यक है । इस क्षेत्र की शोध समस्याओं का उल्लेख कीजिये ।
5. शिक्षा मनोविज्ञान संबंधी शोध शिक्षण प्रक्रिया में सुधार कार्य लाने में सक्रिय योगदान देती है आप इस मत से कहां तक सहमत है ।

लघुउत्तरीय प्रश्न:

1. डी. जी. एस. अरोरा द्वारा बतायें गये पाठ्यक्रम शोध के क्षेत्र बताइये ।
2. अध्यापक प्रशिक्षण संबंधी शोध क्षेत्रों का वर्गीकरण लिखिये ।
3. बी.बी. शाह ने शैक्षिक अनुसंधान सर्वेक्षण में समाज शास्त्र संबंधी कौन में शोध क्षेत्र बतायें है ।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

निम्न कथन के आगे सत्य/असत्य लिखें

1. विकासवादी अनुसंधान मानव चिन्तन और अन्वेषण पद्धति को एक नई दिशा प्रदान कर रहा है।
2. पाठ्यक्रम का पाठ्यपुस्तक से कोई संबंध नहीं है ।
3. शैक्षिक मूल्यांकन हेतु हमें उपकरणों की आवश्यकता पडती है ।
4. भारतवर्ष में शिक्षा पर किया जाने वाला व्यय संतोषजनक नहीं है ।

3.12 संदर्भ ग्रन्थ (References):

BUCH M.B.(ed.)Fourth Survey of Research in Education, Vol. I & II, New Delhi, NCERT 1991.

इकाई-4

शैक्षिक शोध के क्षेत्र (2)

Area of Educational Research (II)

पूर्व प्राथमिक. प्राथमिक, माध्यमिक, उच्च, तकनीकी व्यावसायिक अव्यावसायिक तथा प्रौढ शिक्षा के संदर्भ में शैक्षिक अनुसंधान के क्षेत्र

(Areas of educational research with special reference to Pre-primary, primary, secondary, higher, technical, professional, non-professional and adult education).

4.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

4.1 पूर्ब प्राथमिक स्तर (Pre-primary Level)

4.2 प्राथमिक स्तर (Primary Level)

4.3 माध्यमिक स्तर (Secondary Level)

4.4 उच्चस्तर (Higher Education Level)

4.5 तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षा (Technical and vocational education)

4.6 अव्यावसायिक शिक्षा (Non vocational education)

4.7 प्रौढ़ शिक्षा (Adult evaluation)

4.8 स्वमूल्यांकन (Self Assessment)

4.9 संदर्भ ग्रन्थ (References)

4.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के बाद विद्यार्थी यह जान जाएंगे की शिक्षा के विभिन्न स्तरों मे शैक्षिक अनुसंधान का क्षेत्र क्या है ।

शिक्षा के अर्थ की जब हम चर्चा करते है तो हम इस बात का भी उल्लेख करते हैं कि शिक्षा एक सामाजिक विज्ञान है जिसमें ज्ञान को विभिन्न आयामों में विभाजित किया गया है । आदिकाल से ही मानव अपने अनुभवों को संचित करता आया है और इस संचय के माध्यम से वह अपने ज्ञान रूपी भंडार से अभिवृद्धि करता है । ज्ञान के स्त्रोत मुख्य रूप से दो भागों में विभक्त किये जा सकते हैं ।

(1) ज्ञान के परम्परागत स्त्रोत (2) ज्ञान के नवीन स्त्रोत

ज्ञान के परम्परागत स्त्रोत वह है जो प्रत्येक काल में एक पीढी से दूसरी पीढी को हस्तांतरित किये जाते रहे है जबकि ज्ञान के नवीन स्त्रोत वह है जो शोध या अनुसंधान द्वारा उद्घोषित किये जाते हैं । अत: यदि हम ज्ञान के क्षेत्र में प्रगति चाहते हैं तो हमें सदैव ही ज्ञान के नवीन स्त्रोतों की खोज की ओर उन्मुख होना चाहिये । वास्तव में अनुसंधान के द्वारा हम उन मौलिक प्रश्नों का उत्तर खोजने का प्रयास करते हैं जिनका उत्तर अभी तक प्राप्त नहीं हो सकता है और यह उत्तर मानवीय प्रयासों पर आधारित होते हैं । वास्तव में अनुसंधान एक प्रक्रिया है जिसमें प्रदत्तों के विश्लेषण के आधार पर किसी समस्या का विश्वसनीय समाधान

ज्ञात किया जाता है । अनुसंधान एक व्यवस्थित एवं सुनियोजित प्रक्रिया है जिसके द्वारा मानवीय ज्ञान में वृद्धि की जाती है तथा मानव जीवन को सुगम और प्रभावी बनाया जाता है जिसके द्वारा नवीन तथ्यों की खोज की जाती है तथा नवीन सत्यों का प्रतिपादन किया जाता है ।

शिक्षा क्षेत्र के विभिन्न स्तरों पर अनेक समस्यायें हैं जो समुन्नत रूप से प्रशिक्षित अनुसंधान छात्रों व सामान्य कार्य करने वाले - इन दोनों को ही आधार भूत एवं व्यावहारिक अन्वेषणों में जुटा लेने में पर्याप्त है । यदि हम शैक्षिक अनुसंधान के क्षेत्रों की चर्चा शिक्षा के स्तर की दृष्टि से करें तो मुख्य रूप से हमें इन्हें निम्न भागों में विभक्त कर सकते हैं :-

यदि हम इन सभी स्तरों के शिक्षा के उद्देश्य, पाठ्यक्रम, आवश्यकता, वर्तमान स्थिति, छात्र संख्या, अध्यापक संख्या आदि पर ध्यान दें तो हमें ऐसा अनुभव होगा कि हर स्तर की अपनी आवश्यकता व अपनी समस्याएं है, और यदि हम शिक्षा के इन स्तरों में गुणात्मक सुधार लाना चाहते है तो हमें प्रत्येक स्तर की समस्या पर गहनता से विचार करना होगा कि यह समस्यायें क्यों है इनके कारण जानने होंगे साथ ही इनकी समस्याओं का समाधान कैसे किया जा सकता है इस संबंध में कार्यात्मक या व्यावहारिक सुझाव देने होंगे । शिक्षा जगत से संबंधित समस्याएं सिर्फ शिक्षा के स्तर से ही संबंध नहीं रखती वरन् कुछ समस्यायें ऐसी भी है जिनका संबंध समाज के अन्य पक्षों से भी है । इस अध्याय में जिन समस्याओं या पक्षों पर हम विचार करेंगे वह क्षेत्र निम्न है :-

1. व्यवसायिक जगत से संबंधित समस्यायें
2. अव्यवसायिक जगत से संबंधित समस्यायें
3. तकनीकी शिक्षा से संबंधित समस्यायें
4. प्रौढ़ शिक्षा से संबंधित समस्यायें

इन क्षेत्रों की क्या समस्यायें है व उनका निदान कैसे संभव है, एक शिक्षा अनुसंधानकर्ता के लिये यह आवश्यक है कि वह इस संबंध में अपनी वस्तुनिष्ठ व तर्कसंगत राय दे सकें ।

4.1 पूर्व प्राथमिक स्तर (Pre-Primary Level)

भारत वर्ष में आज तक उन बच्चों की शिक्षा हेतु जो प्राथमिक शिक्षा ग्रहण करने की आयु से बहुत नीचे है बहुत अधिक ध्यान नहीं दिया गया । इस स्तर पर शिक्षा की आवश्यकतायें 18 वीं शताब्दी में महसूस किया गया है और शैशवस्था के लिये विद्यालय खोलने का प्रयास किया गया। अंग्रेजों के शासनकाल में पश्चिमी व दक्षिणी भारत में इस प्रकार के

विद्यालय खोलने का प्रयास किया गया । भारत वर्ष के लोगों की सामान्य मान्यता यह थी कि शिक्षा का प्रारम्भ उपनयन संस्कार के साथ होता है और उपनयन संस्कार के साथ होता है और उपनयन संस्कार हेतु विभिन्न वर्णो के लिये विभिन्न आयु का निर्धारण किया गया था । 19 वीं शताब्दी में महात्मा गांधी ने पूर्व बेसिक शिक्षा योजना (Pre-Basic Education Scheme) का प्रारम्भ किया और कम आयु के बालकों के लिये शिक्षालय खोजने में बात कहीं और इस पर जुर्गताम भाई दबे, नानाभाई, भट्ट तथा ताराबाई मेडक ने भी कुछ कार्य किये । मेडम मॉन्टेसरी के 1939 में अथक प्रयासों के फलस्वरूप इस क्षेत्र में कुछ कार्य भी हुआ । उन्होंने कम आयु के बच्चों के लिये मद्रास के पास अध्यार (Adhyar) में एक संस्था खेली और उसमें उन लोगों को प्रशिक्षित किया जो पूर्व प्रारम्भिक स्तर के छात्रों को शिक्षा दे सकें और धीरे-धीरे इन संस्थाओं का जाल भारतवर्ष में फैल गया और इन्हें मेडम मोन्टेसरी विद्यालयों के नाम से जाना जाता है । 1994 में सार्जेन्ट समिति की रिपोर्ट आई और इसमें भी इस बात की आवश्यकता का अनुभव किया गया कि पूर्व प्राथमिक शिक्षा प्राथमिक शिक्षा की एक आधारभूत कडी के रूप में देखी जानी चाहिये ।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारतवर्ष के शिक्षा मनीषियों ने भी पूर्व प्राथमिक शिक्षा के महत्व को स्वीकार किया और प्रथम पंचवर्षीय योजना में इसका उल्लेख भी किया गया परन्तु इसके क्रिया-वयन व सुधार हेतु कोई ठोस सुझाव प्रस्तुत नहीं किया गया । पंचम पंचवर्षीय योजना में बच्चों एवं गर्भधारी महिलाओं के लिये समन्वित बालविकास योजना (Integrated Child Development Scheme) को क्रियाचित किया गया और 1975 में इस दिशा में एक कार्यक्रम प्रस्तुत किया गया और भारतवर्ष में जगह-जगह आगंनबाडी संस्थाओं की स्थापना की गई । 1988 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति में भी बाल विकास, रक्षा व शिक्षा पर ध्यान दिया व इस कार्यक्रम को (Early Childhood care and Education (ECCE) के नाम से जाना गया। राष्ट्रीय शिक्षा नीति में यह कहा गया है कि यदि हम मानव शक्ति का उचित रूप से विकास चाहते हैं तो वह महिलायें जो कार्यरत है व उनके बच्चों के लिये हमें बहुत ही सार्थक शिक्षा का कार्यक्रम बनाना होगा । परन्तु इस कार्यक्रम को क्रियान्वित करने में सबसे बडी बाधा यह है कि आज लोगों को यह पता नहीं है कि वह कौन से क्षेत्र है जिन पर ध्यान दिया जाना अधिक आवश्यक है और इसका कारण यह है कि हमारे पास पर्याप्त शोध परिणाम उपलब्ध नहीं थे । भारतवर्ष में छोटे बालकों का मनोविज्ञान, शैक्षिक विशेषतायें, भाषा आदि की दृष्टि से अध्ययन करने पर किसी ने ध्यान नहीं दिया इसी कारण इसमें शोध की आवश्यकता बहुत अधिक है ।

पूर्व प्राथमिक शिक्षा का अर्थ- इसका तात्पर्य है प्राथमिक कक्षा में प्रवेश लेने से पूर्व ग्रहण की गई शिक्षा । कुछ विचारकों का यह भी मानना है कि इससे अन्तर्गत हम उन बच्चों की शिक्षा को सम्मिलित करते हैं जो 2 वर्ष से लेकर 8 वर्ष तक की आयु के होते हैं ।

पूर्व प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र - पूर्व प्राथमिक शिक्षा के जिन क्षेत्रों पर अब तक अध्ययन किया जा चुका है इसको जानना हमारे लिये आवश्यक है, साथ ही जिन क्षेत्रों पर अब कोई अध्ययन नहीं किया गया है वहां पर भी क्या-क्या समस्यायें हैं इन्हें भी जानना हमारे लिये जरूरी है ।

4.1.1 पूर्व प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र जिन पर शोध कार्य किया जा चुका है ।

शिक्षा क्षेत्र में किये गये अनुसंधान के संबंध में प्रकाशित फोर्थ सर्व ऑफ रिसर्च इन एजूकेशन में यह कहा गया है कि 1958 से लेकर 1987 तक भारतवर्ष में पूर्व प्राथमिक स्तर क्षेत्र में कुल 98 शोध कार्य हुये हैं इसी कारण राष्ट्रीय शिक्षा नीति में यह कहा गया है कि "राष्ट्र के बच्चे अधिक महत्वपूर्ण होते हैं और उनकी आवश्यकताओं व संभावनाओं का अधिक से अधिक अध्ययन करने के लिये शोध कार्य जरूरी है । हमारी किसी भी राष्ट्रीय योजना में बालकों से संबंधित कार्यक्रमों का महत्वपूर्ण स्थान मिलना चाहिये जिससे शिक्षा के माध्यम से हम जो छात्र तैयार करें वह शारीरिक दृष्टि से सक्षम, मानसिक दृष्टि से जागरूक, नैतिक दृष्टि से स्वस्थ, कौशलों की दृष्टि से परिपूर्ण तथा इतने समर्थ हों कि समाज को उचित व आवश्यक प्रेरणा प्रदान कर सकें" ।

पूर्व प्राथमिक स्तर के जिन क्षेत्रों पर शोध कार्य किया जा चुका है वह इस प्रकार है -

(1)	**क्षेत्र**	**संख्या 1987**	**1992**
(2)	पूर्व प्राथमिक शोध शिक्षा का इतिहास आवश्यकता एवं स्थिति (History, need and status of research on Pre-primary education)	31	98
(3)	युवा बच्चों के व्यक्तित्व व उनकी विकासात्मक विशेषतायें (Personality & developmental traits of young children)	24	51
(4)	पूर्वविद्यालय स्तर के बालक का मूल्यांकन (Assessment of Pre-School Children)	6	69
(5)	पूर्व प्राथमिक स्तर की शिक्षा हेतु कार्यकर्ताओं का प्रशिक्षण (Training of personnel for pre-primary education)	7	51
(6)	माता पिता व समुदाय का इस ओर रूझान (Parent & community involvement)	6	-
(7)	अब तक हुये शोध कार्यो का प्रभाव (Impact of research conducted)	19	-
(8)	पूर्व प्राथमिक स्तर पर आने वाले विकलांग बालकों का अध्ययन (Studies on handicapped pre-school children)	5	131
(9)		**98**	**400**

4.1.2 पूर्व प्राथमिक स्तर के क्षेत्र जिन पर शोध कार्य किया जा चुका है- शिक्षाविदों का यह मानना है कि पूर्व प्रारम्भिक स्तर पर अब तक जो शोध कार्य हुये हैं, वह पर्याप्त नहीं हैं और इस क्षेत्र में और अधिक अध्ययन की आवश्यकता है । यह क्षेत्र जिन पर शोध कार्य किया जाना चाहिये निम्न है -

1 बालक को शारीरिक, मानसिक व मनोविज्ञान की दृष्टि से उचित रूप में विकसित करने हेतु प्रारम्भिक उद्वीपक प्रदान करना ।

2 बालक के लालन पालन हेतु अपनाई गई रीतियां व उसका बालक के विकास पर प्रभाव।

3 बच्चों के मां बाप को उचित शिक्षा देने का कार्यक्रम बनाना जिससे उनमें लगनशीलता का विकास किया जा सकें व घर के वातावरण को अधिक प्रेरणास्पद बनाया जा सकें ।

4 घर के वातावरण के आधार पर बालक के मस्तिष्क विकास की भविष्यवाणी करना ।

5 पूर्व प्राथमिक स्तर के अनौपचारिक शिक्षा के माध्यम से प्रदान किये गये वह कार्यक्रम जो बालक के स्वास्थ्य व पोषण पर प्रभाव डालते है ।

6 ऐसे कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित करना जो बालकों को प्रशिक्षण दे सकें ।

7 ऐसे कार्यक्रम तैयार करना जो पूर्व प्रारम्भिक या प्रारम्भिक शिक्षा को जोड सकें ।

8 ऐसे बालकों को पहचानना जो प्रारम्भ से ही जोखिम भरे कार्य करने हेतु तत्पर रहते हैं।

9 छात्रों का भाषा विकास उचित रूप में कैसे किया जा सकता है ।

10 बालक के स्तर व उनकी सांस्कृतिक पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुये पाठ्यक्रम तैयार करना व उनकी उपयोगिता का परीक्षण करना ।

11 बालकों में खेल व सृजनात्मकता की क्षमता का विकास करना ।

12 पूर्व प्राथमिक स्तर पर आने वाले विकलांग बालकों का अध्ययन करना ।

13 माता-पिता व बच्चों के मध्य होने वाली अन्त:क्रिया का बालक के विकास पर क्या प्रभाव पडता है । इसका अध्ययन करना ।

14 गर्भावस्था में बालक के विकास पर किन बातों का प्रभाव पडता है इसे जानना ।

15 बालक की सामाजिक व मनोवैज्ञानिक प्रगति जानने हेतु साधारण व उपयोगी उपकरणों का निर्माण करना ।

16 कुपोषण का बालक के शारीरिक विकास व संतुलन पर क्या प्रभाव पडता है इसे जानना।

17 पूर्व प्रारम्भिक स्तर की वर्तमान संगठन की कमियों का अध्ययन करना व इसे कैसे सुधारा जा सकता है इसका ज्ञान करना ।

18 अध्यापक छात्र अनुपात की अधिकता का बालकों के विकास पर क्या प्रभाव पडता है इसकी जानकारी करना ।

19 विद्यालय के खराब वातावरण का बालक के ऊपर क्या प्रभाव पड़ रहा है ।

20 विद्यालय के आकडों को कैसे व्यवस्थित रखा जा सकता है ।

21 उन बातों की जानकारी होना जिससे कि समुदाय के लोगों को पूर्व प्रारम्भिक स्तर की शिक्षा की आवश्यकता व महत्व के प्रति जागरूक किया जा सकें ।

22 आयु लिंग, सामाजिक आर्थिक स्तर का बालकों के व्यक्तित्व के विकास से क्या संबंध है इसका अध्ययन करना ।

23 सामाजिक दृष्टि से पिछडे बालकों का बौद्धिक व व्यक्तित्व का विकास किस प्रकार का है । 24. कार्यरत महिलाओं के बच्चों के व्यक्तित्व के विकास का अध्ययन करना ।

24 खेलकूद संबंधी क्रियाओं का बालक के व्यक्तित्व के विकास पर क्या प्रभाव पडता है इसकी जानकारी करना ।

25 बालक की अध्ययन आदतों पर माता-पिता की शिक्षा के प्रभाव का अध्ययन करना ।

4.2 प्राथमिक स्तर (Primary Level)

भारतवर्ष में प्राथमिक स्तर तक की शिक्षा को निःशुल्क एवं सार्वभौमिक बनाने की बात स्वतंत्रता के पश्चात् संविधान की धारा 45 से तय की गई थी परन्तु आज हमें स्वतंत्रता प्राप्त किये हुये 60 वर्ष हो गये है परन्तु हम अपने इस लक्ष्य को पूर्ण रूपेण प्राप्त नहीं कर पाये हैं । 1990 में आयोजित summit for children में यह बात उद्घोषित की गई है कि शिक्षा को इस शताब्दी के अंत तक सभी के पास पहुंचाना है और इन्होंने एक नारा दिया है "Education for All" (EFA) अष्टम पंचवर्षीय योजना में भी इस बात का स्पष्ट उल्लेख किया गया है कि हम शिक्षा के सार्वभौमिकरण के लक्ष्य को अभी तक प्राप्त नहीं कर पाये है और प्रौढ़ शिक्षा के कार्यक्रमों तथा साक्षरता के कार्यक्रमों के द्वारा हमें निरक्षरता का दमन करना होगा जिससे 20वी शताब्दी के अन्त तक तथा 21 वीं शताब्दी के प्रारम्भ में हम सभी के लिये शिक्षा (EFA) के लक्ष्य को प्राप्त कर सकें । संविधान की धारा 45 में यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि 14 वर्ष तक की आयु के बालक व बालिकाओं को अनिवार्य एवं निःशुल्क रूप से प्राथमिक शिक्षा की सुविधायें प्रदान की जायेंगी । परन्तु वस्तुस्थिति यह है कि हम इस लक्ष्य को तो प्राप्त कर ही नहीं पाये साथ ही हमारे समक्ष प्राथमिक स्तर पर शिक्षा में अपव्यय एवं अवरोधन की समस्या अपना विकराल रूप लिये हुये और उठ खडी हुई । हम सार्वभौमिकरण शिक्षा के लक्ष्य को क्यों प्राप्त नहीं कर पा रहे हैं । प्राथमिक शिक्षा में अपव्यय व अवरोधन की समस्या के कारण क्या है? स्त्री शिक्षा का अभी तक पर्याप्त विकास क्यों नहीं हो पा रहा है, आदि वह प्रश्न है जिनका उत्तर हमें शोध के द्वारा प्राप्त करना है ।

प्राथमिक स्तर पर कुछ शोध कार्य अवश्य हुआ है परन्तु साथ ही कुछ क्षेत्र ऐसे भी हैं जिन पर शोधकर्ताओं का ध्यान अभी तक नहीं गया है अब हम प्राथमिक स्तर से संबंधित शोध कार्यो के इन दोनों पक्षों पर ही विस्तार से विचार करेंगे ।

4.2.1 प्राथमिक शिक्षा के वह क्षेत्र जिन पर शोध कार्य किया जा चुका है - एन. सी.ई.आर टी. द्वारा प्रकाशित पुस्तिका "फोरथ सर्वे ऑफ रिसर्च इन एजूकेशन" में इस बात का उल्लेख किया गया है कि इस स्तर पर 1987 तक 208 शोध कार्य किये जा चुके हैं जो निम्न क्षेत्रों से संबंध रखते है

	क्षेत्र	**संख्या 1987**	**1992**
(1)	प्राथमिक शिक्षा का इतिहास (History of Primary Education)	11	17
(2)	प्राथमिक शिक्षा का विकास (Development of Primary Education)	28	26
(3)	प्राथमिक शिक्षा का सार्वभौमिकरण (Universalization of Primary Education)	63	-

(4)	छात्रों की उपलब्धि का स्तर व उसमें विकास (Level and development in the achievement of students)	34	81
(5)	प्राथमिक स्तर की शिक्षा का पाठ्यक्रम (Curriculum of Primary Education)	43	50
(6)	प्राथमिक शिक्षा स्तर में मूल्यांकन (History Evaluation at Primary Education)	3	93
(7)	विद्यालय व्यवस्था (School Management or system)	12	35
(8)	अध्यापक व अध्यापक प्रशिक्षण (Teacher and Teacher training))	2	178
(9)	धनव्यय (Investment or Economics)	2	25
(10)	प्राथमिक शिक्षा में शोध की आवश्यकता (Research needs in Primary Education)	1	-
	कुल संख्या 208	**208**	**505**

4.2.2 प्राथमिक शिक्षा स्तर के वह क्षेत्र जिन पर शोध कार्य करनेकी आवश्यकता है - अपने लेख रिसर्च इन एलिमेन्टरी एजूकेशन में डी. ग्रेवाल व डी. गुप्ता ने इस बात की आवश्यकता का अनुभव किया है कि प्राथमिक शिक्षा के वह क्षेत्र जिन पर शोध कार्य हुआ है पर्याप्त नहीं है । इस कारण इस क्षेत्र में शोध कार्य की बहुत आवश्यकता है । इनमें से कुछ क्षेत्र निम्नलिखित है -

1 प्राथमिक शिक्षा में गुणात्मक सुधार कैसे लाया जा सकता है ।
2 स्वतंत्रता के पश्चात् भारतवर्ष में प्राथमिक शिक्षा का विकास ।
3 विभिन्न राज्यों में प्राथमिक शिक्षा की स्थिति ।
4 प्राथमिक शिक्षा व माध्यमिक शिक्षा में संबंध कैसे स्थापित किया जा सकता है ।
5 प्राथमिक स्तर पर विद्यमान पाठ्यक्रम को छात्रों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर परिवर्तित करना ।
6 प्राथमिक स्तर के शिक्षण हेतु अधिक प्रशिक्षित अध्यापकों की नियुक्ति करना ।
7 शिक्षण विधियों में विभिन्नता की प्रभावोत्पादकता का परीक्षण करना ।
8 मूल्यांकन के अधिक वैध व विश्वसनीय तरीके खोजना ।
9 विद्यालय के वातावरण का छात्रों की उपलब्धियों सृजनात्मकता व व्यक्तित्व पर क्या प्रभाव पडता है इसका अध्ययन करना ।
10 घर के वातावरण का छात्रों के व्यक्तित्व पर क्या प्रभाव पडता है इसका अध्ययन करना ।
11 छात्रों की उपलबद्धोन्मुख प्रेरणा का विकास कैसे किया जा सकता है ।
12 सामाजिक आर्थिक स्तर का प्राथमिक शिक्षा के विकास पर क्या प्रभाव पड रहा है इसको जानना ।

13 प्राथमिक शिक्षा स्तर पर अपव्यय एवं अवरोधन की समस्या क्यों है, इसको जानना ।

14 बालिकाओं की शिक्षा का प्राथमिक स्तर पर उचित विकास क्यों नहीं हो पा रहा है ।

15 प्राथमिक शिक्षा स्तर पर कितना व्यय किस क्षेत्र में किया जा रहा है ।

16 प्राथमिक शिक्षा स्तर पर शोध कार्य की स्थिति व शोध कार्य की आवश्यकता का मूल्यांकन।

4.3 माध्यमिक स्तर (Secondary Level)

विद्वानजन माध्यमिक शिक्षा को प्राथमिक शिक्षा व उच्च शिक्षा के बीच की इकाई मानते है इस कारण उनकी मान्यता है कि शिक्षा के इस स्तर को हमें उपेक्षात्मक भाव से नहीं देखना चाहिये । माध्यमिक शिक्षा का स्तर वास्तव में वह स्तर है जहां पर आकर बालक अपने भविष्य के संबंध में सोचने लगता है, इसी कारण इस स्तर की शिक्षा को व्यवसाय केंद्रित बनाने की बात मुदालियर शिक्षा आयोग से लेकर नई शिक्षा नीति तक की गई है, साथ ही यह शिक्षा का वह स्तर है यहां बालक को देश के इतिहास व राष्ट्रीय गौरव का ज्ञान कराया जाता है, जिससे वह अपने दायित्वों को समझ सकें और साथ ही भारत भूमि पर रहने वाले विभिन्न धर्मो एवं संस्कृतियों के मध्य वह समन्वय स्थापित कर सकें, भारतवर्ष में माध्यमिक स्तर की शिक्षा से जुडी हुई अनेकों समस्यायें है । जैसा क्या शिक्षा का व्यवसायीकरण माध्यमिक शिक्षा स्तर की शिक्षा से जुडी हुई अनेकों समस्यायें है । व्यवसायीकरण को यदि हम शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य मानें तो क्या हमें विद्यालयों की स्थापना का आधार भी व्यवसाय को बनाना होगा । माध्यमिक स्तर पर पाठ्यक्रम का स्वरूप भिन्नता लिये हुये क्यों होना चाहिये? माध्यमिक स्तर पर आने वाले विद्यार्थी प्राय: किशोर होते हैं । किशोरावस्था से जुडी हुई अनेकों समस्यायें है जिन पर शोध कार्य की आवश्यकता है । एन.सी.ई.आर.टी. ने शिक्षा में माध्यमिक स्तर पर किये गये शोध कार्यो का उल्लेख नहीं किया है परन्तु फिर भी हम उन क्षेत्रों का उल्लेख कर सकते है जिन पर अब तक शोध कार्य किया जा चुका है ।

4.3.1 माध्यमिक शिक्षा के बह क्षेत्र जिन पर अब तक शोध कार्य किया जा चुका है :

1 माध्यमिक स्तर पर विद्यमान विभिन्न विषयों के पाठ्यक्रम का मूल्यांकन ।

2 माध्यमिक शिक्षा का व्यवसायीकरण क्यों जरूरी है ।

3 विभिन्न विषयों में प्रचलित पाठ्य पुस्तकों का मूल्यांकन ।

4 इस स्तर पर पढने वाले छात्रों की वैयक्तिक विशेषताओं का उनकी सामाजिक आर्थिक पृष्ठभूमि के संदर्भ में अध्ययन ।

5 माध्यमिक स्तर के छात्रों की उपलब्धि पर पारिवारिक व विद्यालय के वातावरण का प्रभाव ।

6 माध्यमिक स्तर पर अपनाई जाने वाली मूल्यांकन की प्रणाली ।

4.3.2 माध्यमिक शिक्षा के वह क्षेत्र जिन पर शोध कार्य की आवश्यकता है -

माध्यमिक स्तर पर शोधकार्य का क्षेत्र अभी बहुत परिपक्व अवस्था में नहीं है । शोधकर्ताओं का ध्यान या तो प्राथमिक शिक्षा पर केन्द्रित है या फिर उच्च शिक्षा पर । इस कारण आज आवश्यकता इस बात की है कि माध्यमिक शिक्षा में उन समस्याओं पर विशेष रूप से शोध कार्य किया जायें जो विकराल रूप धारण करती जा रही है

1 माध्यमिक स्तर तक की शिक्षा में विद्यमान दोषों को दूर करने हेतु व्यवहारिक सुझाव देना ।
2 स्वतंत्रता के पश्चात् भारतवर्ष के विभिन्न प्रान्तों में माध्यमिक शिक्षा का विकास ।
3 माध्यमिक स्तर की शिक्षा के पाठ्यक्रमों को लिंग पर आधारित बनाने की आवश्यकता पर अध्ययन ।
4 पाठ्यक्रम को व्यवसाय केन्द्रित कैसे बनाया जा सकता है इस पर अध्ययन करना ।
5 इस स्तर पर आने वाले छात्रों की वैयक्तिक विशेषताओं का अध्ययन करना ।
6 मूल्यांकन की अधिक विश्वसनीय, वैध व सार्थक विधियों को खोजना ।
7 विद्यालय के वातावरण का छात्रों की उपलब्धि, समायोजन, रूचियों, सृजनात्मकता आदि पर क्या प्रभाव पडता है इसका अध्ययन करना ।
8 सामाजिक आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न व विपन्न छात्रों की तुलना उपलब्धि व व्यक्तित्व की विशेषताओं की दृष्टि से करना ।
9 इस स्तर हेतु विद्यमान शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम का मूल्यांकन करना ।
10 सरकार द्वारा इस स्तर पर कितना धन प्रति छात्र व्यय किया जा रहा है इसका अध्ययन करना ।

4.4 उच्च शिक्षा स्तर (Higher Education Level)

उच्च शिक्षा की प्रगति व विकास पर शिक्षा शास्त्रियों ने सदैव ही एक प्रश्न सूचक चिन्ह अंकित किया है । कुछ लोगों का विचार है कि भारतवर्ष में विद्यमान उच्च शिक्षा की व्यवस्था व्यर्थ है और साथ ही उददेश्यविहिन है जिससे वह अपनी आवश्यकता व लक्ष्यों को प्राप्त करने में असमर्थ है ।आज आवश्यकता इस बात की है कि उच्च शिक्षा में सुधार कैसे लाया जायें । स्वतंत्रता से पूर्व कलकत्ता शिक्षा आयोग व स्वतंत्रता के पश्चात् विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग प्रमुख रूप से इस उद्देश्य को लेकर ही गठित किये गये कि विश्वविद्यालय स्तर की शिक्षा से संबंधी समस्यायें कौन सी है व उन्हें कैसे सुधार जा सकता है । 1974 में यू.जी.सी. ने विश्वविद्यालय स्तर पर शिक्षण, शोध व विस्तार संबंधी जानकारी देने हेतु कुछ समितियां गठित की ओर उनके द्वारा प्राप्त सूचनाओं के आधार पर विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने विभिन्न कॉलेजों व विश्वविद्यालयों को वित्तीय अनुदान प्रदान किया और अध्यापकों के प्रशिक्षण हेतु सेवाकालीन प्रशिक्षण दिया । 1963 में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने कुछ विश्वविद्यालयों को उच्च शोध एवं प्रशिक्षण केन्द्रों (Advance Research & Training

Center) के रूप में परिवर्तित किया । शोध क्षेत्र में वांछनीय विकास हो पाया परन्तु उच्च शिक्षा के स्तर में कोई सुधार नहीं हो पाया ।

4.4.1 उच्च शिक्षा के वह क्षेत्र जिन पर शोध कार्य किया जा चुका है - शैक्षिक अनुसंधान सर्वेक्षण के चतुर्थ संस्करण में डॉ. सी.एल. आनन्द व डॉ. बुच ने भारतवर्ष में 1987 तक उच्च शिक्षा के क्षेत्र में किये गये अध्ययनों का विश्लेषण किया और उन्हें निम्नलिखित छः भागों में वर्गीकृत किया ।

	क्षेत्र	**1987**	**1992**
		संख्या	
(1)	उच्च शिक्षा की ऐतिहासिक पृष्ठ भूमि	22	26
(2)	उच्च शिक्षा का समाजशास्त्रीय परिपेक्ष (Sociological Aspects)	34	39
(3)	उच्च शिक्षा का आर्थिक पक्ष (Economics Aspects)	34	25
(4)	उच्च शिक्षा के विभिन्न कार्यकारी पक्ष (Personnel Aspects)	68	126
(5)	पाठ्यक्रम (Curriculum)	48	25
(6)	उच्च शिक्षा की व्यवस्था (Management of higher education)	26	35
	कुल संख्या	**232**	**276**

4.4.2 उच्च शिक्षा के वह क्षेत्र जिन पर शोध कार्य करने की आवश्यकता है - उच्च शिक्षा के क्षेत्र में यदि हम शोध कार्यो का मूल्यांकन करें तो यह पायेंगे कि संख्यात्मक दृष्टि से इस क्षेत्र में संतोषजनक प्रगति हुई है परन्तु गुणात्मक व गहन दृष्टि से शोध कार्यो को संतोषजनक नहीं कहा जा सकता है । क्योंकि अधिकांशतया शोधकार्यों की पुनरावृत्ति की गई है । जिन क्षेत्रों पर शोध कार्य की आवश्यकता है वह निम्न है:

1 उच्च शिक्षा में गुणात्मक सुधार कैसे लाया जा सकता है ।
2 विभिन्न क्षेत्रों में उच्च शिक्षा का विस्तार कैसे संभव है ।
3 उच्च शिक्षा स्तर पर व्यापक शोध कार्य करने की आवश्यकता क्यों है ।
4 उच्च शिक्षा को व्यवसाय से कैसे जोडा जा सकता है ।
5 उच्च शिक्षा हेतु सार्थक पाठ्यक्रम का निर्माण करना ।
6 मूल्यांकन के विश्वसनीय व वैध तरीके खोजना ।
7 विश्वविद्यालयों में विद्यमान वातावरण का छात्रों के व्यक्तित्व पर क्या प्रभाव पडता है। इसका अध्ययन करना ।
8 पाठ्यक्रम को जीवनोपयोगी बनाने के उपाय खोजना ।

9 उच्च शिक्षा के क्षेत्र में लंबीय शोध द्वारा विभिन्न समयों में उच्च शिक्षा क्षेत्र में हुई प्रगति का ज्ञान करना ।

10 उच्च शिक्षा की प्रशासनिक व्यवस्था का मूल्यांकन करना ।

11 विद्यालय के संगठनात्मक वातावरण का अध्ययन करना ।

12 उच्च शिक्षा क्षेत्र में संलग्न अध्यापकों व छात्रों पर राजनीति का प्रभाव ।

13 अध्यापकों के मध्य असंतोष के कारण ।

14 विद्यार्थियों के उग्र व्यवहार के कारण ज्ञात करना ।

15 अध्यापकों की गुणवत्ता को कैसे बढाया जा सकता है ।

16 महाविद्यालयों से सीखने संबंधी वातावरण का लुप्त होना ।

17 अध्यापकों के मध्य विद्यमान तनाव भाव को कैसे समाप्त किया जा सकता है ।

18 अध्यापकों के अन्दर स्व: आकलन (Self appraisal) का भाव उत्पन्न करना ।

4.5 तकनीकी व व्यवसायिक शिक्षा (Vocational and Technical Education)

भारतीय समाज व अर्थव्यवस्था का विकास व आधुनिकीकरण कैसे किया जाय यह शिक्षाविदों के समक्ष एक चुनौती है । चूंकि इसमे संबंधित अनेकों समस्यायें हैं, जिनमें से प्रमुख है निम्न वर्गो के मध्य अशिक्षा, अकुशल श्रमिकों की भीड का बढना, कुशल श्रमिकों की कमी नगरों का असंतुलित विकास, कुशल श्रमिकों के लिये रोजगार की कमी । इसी कारण आज हमें शिक्षा व्यवस्था को पुनर्दिशा देने की आवश्यकता है जिससे हम देश का कनीकी व व्यावसायिक दृष्टि से विकास करके उरने आधुनिकता की ओर अग्रसित कर सकें । तकनीकी शिक्षा का विकास करने के साथ ही साथ हम देश के नागरिकों की क्षमताओं व कुशलताओं का भी विकास शिक्षा के माध्यम से करना है, चूंकि आज हम शिक्षा को मानव शक्ति या स्त्रोतों का विकास करने की भी एक प्रक्रिया मानते हैं, मानव शक्ति का पर्याप्त रूप से विकास तभी संभव है जबकि हम व्यवसायिक व तकनीकी शिक्षा का प्रभावशाली कार्यक्रम बनायें । 1854 में सबसे पहले वुड के घोषणा पत्र में बहु मुखी पाठ्यक्रम की बात कहीं गई और तत्पश्चात् प्रत्येक आयोग व समिति द्वारा इसका समर्थन किया गया । 1964 में डी. डी. एस. कोठारी ने भारतवर्ष में प्रगतिशील व्यवसायिक शिक्षा के क्रियान्वयन हेतु नीति तैयार की । इन्टीट्यूट ऑफ एपलाइड मैनपावर रिसर्च, नई दिल्ली ने देश में तकनीकी शिक्षा के क्रियान्वयन हेतु कार्यक्रम तैयार किया । परन्तु इस क्षेत्र में संबंधित अनेक समस्यायें थी । जिन पर शोध कार्य करने की आवश्यकता थी ।

4.5.1 तकनीकी व व्यावसायिक शिक्षा के वह क्षेत्र जिन पर अब तक शोध कार्य किया जा चुका है- फोर्थ सर्वे ऑफ रिसर्च इन एजूकेशन में डी. सीताराम व डी. सुधा राव ने भारतवर्ष में व्यावसायिक व तकनीकी क्षेत्र में अनुसंधान नामक लेख में यह बताया है कि तकनीकी शिक्षा ने अब तक कल 95 अध्ययन हुये है जो निम्नलिखित क्षेत्रों में संबंध रखते हैं।

क्षेत्र	1987	1992

		संख्या	
1.	तकनीकी शिक्षा का दर्शन Philosophy of Technical & Vocational Education)	00	64
2.	तकनीकी शिक्षा का इतिहास (History of Technical & Vocational Education)	02	78
3.	तुलनात्मक शिक्षा (Comparative Education)	01	38
4.	शिक्षा मनोविज्ञान (Comparative Psychology)	29	269
5.	शिक्षा का अर्थशास्त्र और शैक्षिक प्रबंधन (Economics of Education & Educational management)	6	57
6.	शैक्षिक समाजशास्त्र (Educational Sociology)	2	49
7.	पाठ्यक्रम संबंधी अध्ययन (Curriculum Studies)	8	24
8.	विद्यालय संगठन एवं प्रशासन (School Organization & Administration)	7	66
9.	निरऔपचारिक शिक्षा (Non-formal Education)	2	108
10.	मूल्यांकन (Evaluation)	37	126
	कुल संख्या	95	879

तकनीकी शिक्षा पर 1977 तक कोई विशेष कार्य नहीं किया गया । शोधकर्ताओं का ध्यान इस ओर 1977 के पश्चात् ही गया यदि हम राष्ट्र का उचित रूप में विकास चाहते हैं तो हमें तकनीकी शिक्षा में किन-किन दृष्टिकोण से शोध कार्य की आवश्यकता है, अब हम इसकी चर्चा करेंगे :-

4.5.2 तकनीकी शिक्षा के वह क्षेत्र जिन पर शोध कार्य की आवश्यकता है -

1 अकुशल श्रमिकों की कमियों का अध्ययन करना ।
2 मध्यम स्तरीय दक्ष श्रमिकों को तैयार किया जा सकता है इसका अध्ययन करना ।
3 मानव स्त्रोतों के विकास हेतु सैद्धान्तिक कार्यक्रम तैयार करना ।
4 तकनीकी व व्यावसायिक शिक्षा के असंतुलित दृष्टि से विकसित क्षेत्रों का अध्ययन करना ।
5 नगरीय क्षेत्रों के असंतुलित विकास के कारणों का अध्ययन करना ।

6 प्रशिक्षित श्रमिकों के लिये रोजगार के अवसर ढूढना अथवा इस बात की जानकारी करना कि उनके लिये रोजगार की कमी को कैसे दूर किया जा सकता है ।

7 तकनीकी शिक्षा के प्रारूप को समाज की आवश्यकताओं के अनुरूप निश्चित करना ।

8 तकनीकी शिक्षा के क्षेत्र में होने वाले अपव्यय को रोकना ।

9 तकनीकी शिक्षा के क्षेत्र में होने वाले व्यय का अध्ययन उनकी प्रभावशिलता के दृष्टिकोण से करना ।

10 विभिन्न क्षेत्रों में दी जाने वाली तकनीकी शिक्षा के प्रारूप को निश्चित करना ।

11 देश की परिस्थियों व आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुये तकनीकी शिक्षा के उद्देश्य निर्धारित करना ।

12 तकनीकी शिक्षा के पाठ्यक्रम मे विभिन्नता लाना ।

13 तकनीकी शिक्षा शोध द्वारा निर्णयात्मक शोध करना अर्थात् इस बात को निश्चित कर लेना कि इस शोध क लाभ अधिकांशतया किनको मिलेगा ।

14 बुद्धि, माता पिता का सामाजिक आर्थिक स्तर, प्रेरणा, अभिवृत्ति आदि का व्यावसायिक शिक्षा की सफलता पर क्या प्रभाव पडता है ।

15 व्यावसायिक आकांक्षाओं का व्यावसायिक क्षेत्रों की सफलता पर क्या प्रभाव पडता है इसका अध्ययन करना ।

16 क्या प्रारम्भिक आयु में निर्मित व्यावसायिक आकांक्षाओं व व्यावसायिक परिपक्वता का व्यावसाय संतोष पर कोई प्रभाव पडता है ।

17 वर्तमान में छात्रों का माता पिता, शिक्षा विदों कार्यकर्ताओं व समुदाय के नेताओं का व्यावसायिक शिक्षा के प्रति क्या दृष्टिकोण है ।

18 विद्यार्थियों, माता पिता, शिक्षाविदों आदि की अभिवृत्ति का व्यावसायिक शिक्षा की सफलता पर क्या प्रभाव पडता है ।

19 पाठ्यक्रम संबंधी व पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं का व्यावसायिक शिक्षा से क्या संबंध है ।

20 विभिन्न आयु वर्ग के छात्रों की व्यावसायिक रूचियों व व्यावसायिक आवश्यकतायें क्या है । व्यावसायिक रूचियों के परिवर्तन में आयु का क्या प्रभाव है ।

21 क्या व्यावसायिक शिक्षा में प्रवेश का आधार वैज्ञानिक व वस्तुनिष्ठ होना चाहिये ।

22 कमजोर वर्गो में व्यावसायिक व आय संबंधी गतिशीलता कैसे विकसित की जा सकती है । इसके लिये किस प्रकार के व्यावसायिक कार्यक्रम की आवश्यकता है ।

23 किसी भी क्षेत्र में व्यावसायिक शिक्षा पर प्रति व्यक्ति सरकार कितना खर्च करती है व निजी तौर पर छात्र कितना खर्च करता है तथा खर्च का इस शिक्षा की प्रभावोत्पादकता से क्या संबंध है

24 विभिन्न क्षेत्रों में कुशल श्रमिकों की मांग व पूर्ति के मध्य संबंध स्थापित करना ।

25 विभिन्न क्षेत्रों से प्रशिक्षित व्यक्तियों की निजी व्यवसाय को करने की संभावना क्या है।

26 औद्योगिक व अनौद्योगिक व्यावसायिक आवश्यकताओं के अनुरूप व्यावसायिक व तकनीकी शिक्षा के प्रारूप को समन्वित करना जिससे सेवाकालीन प्रशिक्षण को समाप्त किया जा सकें ।

4.6 अव्यावसायिक शिक्षा (Non-Vocational Education)

औपचारिकता की दृष्टि से हम शिक्षा को विभिन्न भागो तथा स्तरों मे विभक्त कर देते है जबकि हम सभी जानते है कि शिक्षा जीवन पर्यन्त चलने वाली एक सामाजिक प्रक्रिया है और यदि हम व्यक्ति की शिक्षा के द्वारा अधिक से अधिक लाभ देना चाहते हैं । साथ ही मानव शक्ति का पूर्णरूप से उपयोग करना चाहते हैं तो हमें शिक्षा के हर पक्ष को समझना होगा बस उसे व्यवस्थित करना होगा । आज सीखने की प्रक्रिया को हम अचानक होने वाली प्रक्रिया नहीं मानते है वरन् उसे व्यवस्थित व चेतन प्रक्रिया के रूप में देखते हैं जिससे मनुष्य विभिन्न क्षेत्रों में दक्षता या कुशलता प्राप्त कर सकें ।

प्रारम्भ में मनुष्य या तो शिकार खेलना सीखता है या फिर भोजन जुटाना और इन दोनों ही कार्यो की शिक्षा वह निरीक्षण तथा सहभागिता के आधार पर प्राप्त करता था परन्तु जैसे ही अक्षर ज्ञान में वृद्धि हुई मनुष्य ने सीखने के अनेकों तरीकों को ज्ञान प्राप्त किया साथ ही विज्ञान व तकनीकी के विकास के साथ ही उसने वातावरण पर नियंत्रण करना भी सीख लिया । आज के मानव का जीवन इतना जटिल हो गया कि उसे सामाजिक व आर्थिक क्षेत्रों में अधिक कौशलों की आवश्यकता हो गई । इस कारण आज सीखने की प्रक्रिया स्वसंचालित न होकर एक ऐच्छिक व व्यवस्थित प्रक्रिया हो गई है । भारतवर्ष में अव्यावसायिक शिक्षा के क्षेत्र में किये गये अध्ययनों की तीन श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है । जो निम्न है :-

1 प्रौढ शिक्षा से संबंधित किये गये शोध कार्य ।
2 वह अध्ययन जिनका संबंध कृषि प्रसार क्रियाओं, परिवार कल्याण संबंधी कार्यक्रम तथा सामान्य जागरूकता का विकास करने से होता है ।
3 प्राथमिक शिक्षा से संबंधित कार्यक्रम ।

4.6.1 अव्यावसायिक शिक्षा के क्षेत्र जिन पर शोध कार्य की आवश्यकता है -

1 अव्यावसायिक शिक्षा के कार्यक्रम को लचीला बाल केन्द्रित व स्थानीय आवश्यकताओं के अनुकूल बनाने का औचित्य ।
2 इन कार्यक्रमों का औपचारिक शिक्षा के कार्यक्रमों से एकदम पृथक रखा जायें तो इनकी क्या उपयोगिता होगी ।
3 इस प्रकार के कार्यक्रमों के क्रियान्वयन के बाद इनका मूल्यांकन करना ।
4 अव्यावसायिक शिक्षा के कार्यक्रमों की वर्तमान आवश्यकताओं के संदर्भ में आलोचनात्मक विवेचना करना ।
5 इस क्षेत्र में शोध कार्य करने हेतु पूर्ण दृष्टिकोण रखने की आवश्यकता है, चूंकि इसके लिये जो प्रशासनिक व्यवस्था, योजना व कार्यक्रम बनाये जाते हैं वह औपचारिक शिक्षा से भिन्नता होते हैं

6 इस क्षेत्र में शोध अध्ययन का जो प्रारूप तैयार किया जाये वह निश्चित कार्यक्रम के ढांचे में हो।

7 शोध के आधार पर ऐसे ठोस सुझाव व परिणाम प्रस्तुत किये जायें जिन्हें शिक्षा के क्षेत्र में क्रियान्वित किया जा सकें ।

4.7 प्रौढ शिक्षा (Adult Education)

भारतवर्ष में प्रौढ व्यक्तियों की 9 प्रमुख आवश्यकतायें बताई गई है उसमें से प्रौढ शिक्षा एक है । राष्ट्रीय साक्षरता अभियान ने यह संकल्प लिया किया । 1995 तक वह 50 करोड भारतीयों को शिक्षित कर देगा । ऐच्छिक व अनैच्छिक तथा सरकार और गैर सरकारी संस्थायें इस दिशा में कार्यरत है परन्तु कुछ कारण ऐसे है जो इस क्षेत्र में वांछनीय प्रगति के मार्ग में बाधक हैं । यह कारण है स्वास्थ्य संबंधी समस्यायें परिवार में बच्चों का तीव्र गति से जन्म लेना, पीने के स्वच्छ पानी की समस्या, वातावरण की सफाई संबंधी समस्या तथा बेरोजगारी । परन्तु फिर भी प्रौढ शिक्षा के क्षेत्र में कुछ कार्य हुआ है और कुछ क्षेत्र ऐसे हैं जिन पर शोध कार्य की आवश्यकता हैं ।

4.7.1 प्रौढ शिक्षा के वह क्षेत्र जिन पर शोध कार्य किया जा चुका है - डी. एस. सी. भाटिया ने अपने लेख "प्रौढ शिक्षा में शोध जो फोर्थ सर्वे ऑफ रिसर्च इन एजूकेशन में प्रकाशित हुआ है । प्रौढ़ शिक्षा में अब तक किये गये शोध कार्यो को निम्नलिखित सात श्रेणियों में विभक्त किया है जो इस प्रकार है :-

1 प्रौढ शिक्षा का इतिहास व विकास (History and Development)

2 पूर्व स्थिति विकास एवं संधि (Development Orientation and Linkages)

3 सामुदायिक सहभागिता (Community Participation)

4 शिक्षा संबंधी (Instructional and Strategies)

5 साक्षरता सामग्री का उत्तर साक्षरता सामग्री (Literacy material and post literacy material)

6 सीखने वालों की प्रेरणा व अभिवृत्ति (Leaner's motivation and attitude)

7 कार्यक्रम की व्यवस्था व कार्यक्रम का मूल्यांकन

8 (Programme management and programme evaluation)

4.7.2 प्रौढ शिक्षा के वह क्षेत्र जिन पर शोध कार्य की आवश्यकता है -

1 प्रौढ शिक्षा के क्रियान्वयन से पूर्व जनसंख्या की शैक्षिक आवश्यकताओं का ज्ञान करना।

2 नवसाक्षरों के लिये उचित वातावरण का सृजन करना ।

3 कार्यक्रम के क्रियान्वयन क स्तर पर प्रवेश हेतु वांछनीय बिन्दु तय करना ।

4 प्रौढ शिक्षा में प्रयुक्त होने वाले प्रत्ययों की व्यापक जानकारी हेतु उनका स्पष्टीकरण होना ।

5 प्रशिक्षण हेतु उपयुक्त विधियों को तय करना ।

6 विभिन्न प्रकार के सीखने वालों को ध्यान में रखते हुये उनके लिये सीखने की सामग्री को तैयार करना ।

7 प्रौढ शिक्षा के विकास व संचालन में संचार के विभिन्न साधनों की उपयोगिता तय करना ।

8 प्रौढ शिक्षा की व्यवस्था को सुसंचालित करने के दृष्टिकोण से उसे जन आंदोलन की तरह से व्यवस्थित करने के तरीकों को खोजना ।

उपर्युक्त विवरण के आधार पर हम यह कह सकते है कि भारतवर्ष में शिक्षा स्तरों के विभिन्न क्षेत्रों पर शोध कार्य अवश्य हुआ है । परन्तु सबसे दुर्भाग्य पूर्ण स्थिति यह है कि यह शोधकार्य किसी भी क्षेत्र में नवीन ज्ञान देने में असमर्थ रहे है । चूंकि अधिकांश शोधकर्ता पूर्व में किये गये शोधकार्यों की पुनरावृत्ति के रूप में प्रस्तुत किये गये हैं । इस कारण आज आवश्यकता इस बात की है कि अब भी शोध कार्य किये गये विभिन्न स्तरों में जिन पक्षों पर शोध कार्य नहीं हुआ है उन्हें पहचानें व उसी के अनुरूप अपने शोध कार्य को संचालित करें ।

4.8 स्वमूल्यांकन (Self Assessment)

1 पूर्व प्रारम्भिक शिक्षा स्तर पर किये गये शोध अनुसंधान की चर्चा कीजिये व इस क्षेत्र में अनुसंधान की आवश्यकता बताइये ।

2 माध्यमिक स्तर पर शिक्षा का व्यवसायीकरण क्यों आवश्यक है ।

3 उच्च शिक्षा स्तर में सुधार हेतु शोध कार्यो में गुणात्मक सुधार क्यों वांछनीय है । इस क्षेत्र में शोध अनुसंधान के प्रमुख क्षेत्र बताइये

4 वर्तमान वैज्ञानिक व तकनीकी युग में तकनीकी शिक्षा के शोध क्षेत्र पर एक निबंध लिखिये ।

5 प्रौढ शिक्षा पर सरकार बहुत ध्यान दे रही है परन्तु फिर भी कुछ क्षेत्र ऐसे है जिन पर अधिक ध्यान देना चाहिये - इस संदर्भ में प्रौढ शिक्षा के क्षेत्र बताइये ।

लघुत्तरीय प्रश्न

1 ज्ञान के दो प्रमुख स्त्रोत कौन से हैं?

2 भारत वर्ष में अब तक प्राथमिक स्तर पर किन क्षेत्रों पर कितने शोध कार्य हो चुके हैं ।

3 World summit for children कब स्थापित हुई व उसके द्वारा दिया गया नारा क्या था?

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

निम्न के समक्ष हां/नहीं का निशान लगाइये ।

1 जुर्गतास भाई दवे ने प्राथमिक शिक्षा पर कार्य किया हां/नहीं

2 प्राथमिक स्तर पर अपव्यय व अवरोधन की समस्या गम्भीर रूप लिये हुये हैं हां/नहीं

3 1963 में यू.जी.सी. ने कुछ विश्वविद्यालयों को उच्च स्तरीय शोध व प्रशिक्षण केन्द्रों के रूप में परिवर्तित किया । हां/नहीं

4.9 संदर्भ ग्रन्थ (References)

BUCH M.B. (Ed), Fourth Survey of Research in Education, Vol. I &II, New Delhi, NCERT, 1991

इकाई-5

शिक्षा अनुसंधान के राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में वरीयता के क्षेत्र (Priority Area of Educational Research in National and International perspective)

पूर्व प्राथमिक. प्राथमिक, माध्यमिक, उच्च, तकनीकी व्यावसायिक. व्यावसायिक तथा प्रौढ शिक्षा के संदर्भ में शैक्षिक अनुसंधान के क्षेत्र

Area of educational research with Special reference to levels of education: Pre-primary, primary, secondary, higher, technical, professional, non-professional and adult education.

5.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

5.1 भारतवर्ष में शोध अनुसंधान की आवश्यकता (Need of research in India)

5.2 1961 तक भारतवर्ष में शोध अनुसंधान के क्षेत्र (Research work done in India- till 1961)

5.3 1887 तक भारतवर्ष में वह शोध क्षेत्र जिन पर शोध कार्य किया जा चुका है (Research work done in India- Upto 1967)

5.4 भारतवर्ष में शिक्षा की स्थिति (Educational stage in India)

5.5 राष्ट्रीय व अंतराष्ट्रीय परिपेक्ष्य में शोध अनुसंधान के क्षेत्रों का वरीयता के अनुसार निर्धारण (Priority in areas of research in national and Internal perspectives)

5.6 स्वमूल्यांकन (Self-Assessment)

5.7 संदर्भ ग्रंथ (References)

5.0 लक्ष्य एव उद्देश्य (Aims and Objectives):

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप स्पष्ट कर सकेंगे कि राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर शैक्षिक अनुसंधान के वरियता के क्षेत्र कौन-कौन से हैं ।

शिक्षा व शैक्षिक अनुसंधान की दृष्टि से भारतवर्ष बहुत अधिक विकसित नहीं कहा जा सकता है इसी कारण जे.पी. नायक ने अपनी पुस्तक "एजूकेशनल प्लानिंग इन इंडिया में कहा है"

In its absence, policies continue to be framed on the basis of opinion of individuals and very often the same few individuals and this generally leads to sectoral prejudices and the ridding of happy horses rather than to comprehensive studies and radical reorganization.

भारतवर्ष में शोध की आवश्यकता कें संबंध में श्रीमन्न नारायण ने कहा है "हम अपने प्राचीन ज्ञान पर सदैव खड़े नहीं रह सकते हमारी मूल्यवान विरासत को आधुनिक विचारों के संदर्भ में व्यवस्थित करने की आवश्यकता है। आज हमारे विश्वविद्यालय सिर्फ परीक्षा लेने का एक माध्यम हो गये हैं हां कहीं-कहीं शिक्षण कार्य अवश्य होता है परन्तु बहुत ही कम विश्वविद्यालय ऐसे है जहां पर शोध कार्य हो रहा है और यही कारण है कि हमारा बौद्धिक व सांस्कृतिक विकास ठहरा हुआ है व पिछडा हुआ प्रतीत होता है। We can not continue to draw on our ancient knowledge for ever, our precious heritage must be envolved and systematized in the light of modern throught. In present day most of our universities are mere examination bodies some of these are teaching institution as well. But very few universities have any notable research work to their credit. This has led to stagnation and retardation in our intellectual and cultural development).

5.1 भारतवर्ष में अनुसंधान की आवश्यकता (Need of research in India)

1 शोध द्वारा परिश्रम मे अधिक प्रभावशाली परिणाम प्राप्त होते है ।
2 यह अध्यापक के कार्यो को सम्पन्नता प्रदान करता है ।
3 शोध द्वारा अध्यापक में आत्म विश्वास जागत होता है ।
4 इसके द्वारा अध्यापक शिक्षण की नवीन पद्धतियों को प्रयुक्त कर सकता है ।
5 शोध कार्य अध्यापक के अन्दर जागरूकता की भावना को उत्पन्न करता है ।
6 यह शैक्षिक कार्यकर्ताओं को शिक्षण व सीखने की प्रक्रिया को समझने में मदद देता है।
7 शोध द्वारा सामाजिक व्यवहार को नियंत्रित किया जा सकता है ।
8 यह शिक्षण व्यवस्था में सुधार हेतु प्रयास करती हैं ।
9 इसके द्वारा हमारे कार्यो में वैधता आती है ।
10 शोध कार्य सांस्कृतिक, सामाजिक व आर्थिक प्रगति की ओर उन्मुख करते हैं ।
11 शिक्षा जगत में उठने वाली समस्याओं का निदान शोधकार्य द्वारा संभव है ।

5.2 1981 तक भारतवर्ष में शैक्षिक अनुसंधान के क्षेत्र (Educational area in India till 1961)

इंडियन ईयर बुक तृतीय संस्करण जो एन सी ई आर टी द्वारा 1968 मे प्रकाशित की गई है उसमे भारतवर्ष में पीएचडी. व एम.एड में किये गये शोध कार्यो का 20 अध्यायों में विभक्त किया गया 'और इसके अन्तर्गत कुल 2742 अध्ययन एम.एड॰ के निहित किये गये व जिनमें 85 अध्ययन पी.एच.डी. स्तर के थे जो निम्न क्षेत्रों से संबंध रखते हैं

	क्षेत्र.	**संख्या**
1.	शिक्षा दर्शन	32

2.	शिक्षा व सामाजिक परिवर्तन	18
3.	अधिगम का मनोविज्ञान	9
4.	बालक व किशोर का विकास	47
5.	पाठ्यक्रम	31
6.	विभिन्न विषयों की शिक्षण पद्धतियां	65
7.	शैक्षिक मूल्यांकन	407
8.	परीक्षण एवं मापन	39
9.	अध्यापक शिक्षा	64
10.	निर्देशन	294
11.	शैक्षिक प्रशासन	140
12.	शैक्षिक व्यय	27
13.	कानूनी शिक्षा	22
14.	नैतिक शिक्षा	5
15.	तकनीकी शिक्षा का प्रकार	80
16.	चिकित्सा शिक्षा	12
17.	तकनीकी प्रशिक्षण	00
18.	तकनीकी व व्यवसायिक शिक्षा व व्यवसाय	00
19.	बुनियादी व समाज शिक्षा	31
20.	अन्य क्षेत्र	59
	कुल संख्या	**1322**

5.3 1987 तक भारतवर्ष में शैक्षिक अनुसंधान के क्षेत्र (Educational area in India till 1987)

एन.सी.आर.टी. द्वारा प्रकाशित फोर्थ सर्वे ऑफ रिसर्च इन एजूकेशन में भारतवर्ष में 1987 तक किये गये अध्ययनों को इस. प्रकार विभाजित किया गया है-

क्र. सं.	क्षेत्र	पी.एच.डी.	अध्ययन अन्य विषय	योजना कार्य	कुल संख्या	1992	2002
1.	शिक्षा दर्शन	106	23	1	130	70	6
2.	शिक्षा का इतिहास	88	48	10	146	43	1
3.	शिक्षा समाजशास्त्र	140	168	78	386	78	1
4.	तुलनात्मक शिक्षा	72	17	594		38	5
5.	शैक्षिक अर्थशास्त्र	27	31	43	101	107	1
6.	शिक्षा मनोविज्ञान	196	240	50	486	269	29
7.	सृजनात्मकता	82	43	12	137	166	4
8.	निर्देशन व परामर्श	52	31	32	115	75	205

9.	पाठ्यक्रम	68	20	51	139	74	11
10.	परीक्षण एवं मापन	92	85	63	240	26	1
11.	भाषा शिक्षा	130	32	88	250	-	176
12.	सामाजिक विज्ञान शिक्षा	20	0	16	36	47	-
13.	गणित शिक्षा	52	0	16	68	89	8
14.	विज्ञान शिक्षा	74	2	25	101	120	116
15.	शैक्षिक तकनीकी	76	31	46	125	142	73
16.	उपलब्धि संबंधी कारक	140	57	30	227	197	-
17.	अध्यापक शिक्षा	221	21	128	370	178	67
18.	परीक्षा व मूल्यांकन	81	14	112	207	48	-
19.	शिक्षण	83	7	18	108	73	17
20.	शिक्षा का प्रबंध	196	25	128	349	136	2
21.	अनौपचारिक शिक्षा	24	5	20	49	52	98
22.	प्रौढ़ शिक्षा	30	5	73	108	56	-
23.	प्रारम्भिक शिक्षा	32	6	90	128	113	25
24.	पूर्व प्रारम्भिक शिक्षा	14	12	37	63	98	4
25.	व्यावसायिक व तकनीकी	10	8	27	45	134	43
26.	शिक्षा	16	15	21	52	188	3
27.	विशिष्ट शिक्षा	73	57	94	224	100	22
28.	उच्च शिक्षा	27	12	17	561	284	67
29.	स्त्री शिक्षा	50	30	83	163	131	111
	वंचित बालकों की शिक्षा	2272	1017	1414	4703	3132	1150

शिक्षा का इतिहास शिक्षा समाजशास्त्र तुलनात्मक शिक्षा शैक्षिक अर्थशास्त्र शिक्षा मनोविज्ञान सृजनात्मकता निर्देशन व परामर्श

शोध के अन्य क्षेत्र (1988-1952)

1. Educational Research on media:` = 6
2. Mental Health = 195
3. Social Process = 85
4. Motivator = 14
5. Secondary Education = 51
6. Physical and Health education = 94
7. Moral, Art and Asethetic Education = 34
8. Open and Distance Education = 42
9. Education of the Scheduled Castes & Tribes = 188
10. Demographic Studied on Educational and Population Education = 54

11. Ecological and Environmental Studied on Education = 21
12. Educational Planning and Policy Research =19

5.4 भारतवर्ष में शिक्षा अनुसंधान की स्थिति (Stage of Educational Research in India)

भारतवर्ष में समय-समय पर आयोजित किये गये शिक्षा के विभिन्न आयामों के शोध कार्यो पर हम दृष्टि डालें तो निसन्देह यह कह सकते हैं कि यहां काफी शोध कार्य हुआ है चूंकि 1948 में शिक्षा क्षेत्र में होने वाली शोध कार्यो की निराशाजनक स्थिति के संबध में विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग ने कहा था कि -

"आज भारतवर्ष में शिक्षा में बहुत अधिक शोधकार्य नहीं हो रहा है हां एम.एड. स्तर के छात्र लघु शोध प्रबंध के रूप मे कुछ अवश्य कर रहे हैं और प्रत्येक विश्वविद्यालय का प्रशिक्षण विभाग यह कार्य अच्छा कर रहा है कि वह शिक्षा के क्षेत्र में आने वाले प्रारम्भिक छात्रों को शैक्षिक अनुसंधान की रीतियों का ज्ञान करा रही है चाहें उसके द्वारा प्राप्त परिणाम लघु व अव्यवस्थित क्यों न हो"।

(There is not much systematic research in education going on in India today-Little can be said about the work of M.Ed. candidates except that it is a good timing for every university training departments to have this task of guiding beginners in the technique of educational research even if the result are necessarily small and scrappy).

इसके बाद 1964-66 में कोठारी शिक्षा आयोग ने कहा है कि भारतवर्ष में शिक्षा अनुसंधान अभी भी अपनी शैशाववस्था में है और उसकी संख्यात्मक स्थिति बहुत ही छोटी हैं ।

(The educational research is still is its infancy, its quantity is small).

डी एस. के पाल एव पीसी. सक्सैना ने अपनी पुस्तक क्वालिटी कंट्रोल इन एजूकेशनल रिसर्च में कहा है कि आज शैक्षिक अनुसंधान अपनी विशेषता व महत्व को खो चुका है चूंकि ना तो यह अनुसंधान उचित परिपेक्ष्य में हो रहे हैं और न् ही उद्देश्यों की स्पष्टता है और न ही उचित आधार । इसी कारण यह ज्ञान के क्षेत्र में कुछ भी दे सकने में असमर्थ है । इसी कारण शिक्षाअनुसंधान में गुणात्मक दृष्टि से नियंत्रण करना सिर्फ आवश्यक ही नहीं, वरन् इसकी बहुत अधिक आवश्यकता है" ।

(Educational research has lost its credibility and relevance because devoid of proper perspective, clear objectives or adequate rationale, it fails to make any worth while contribution to the knowledge of theory of the discipline. Quality control in educational research is, thus, not only important but very urgent).

शिक्षा अनुसंधान की गिरी हुई स्थिति क्यों है इसके संबंध में कोठारी शिक्षा आयोग ने निम्न विचार दिये है :-

1 विशिष्ट शैक्षिक अनुसंधान संस्थाओं की कमी ।

भारतवर्ष में सी.आई.ई, एन.सी.ई आर.टी, यू.जी.सी., एन.आर.ई.पी., व सी.ए.एन.आर. ई.पी.ए.व सी.ए.एस.ई (CIE, NCERT, UGC, NEPA, CANREPA & CASE) नामक संस्थायें हैं जो शिक्षा क्षेत्र में किये जाने वाले अनुसंधानों से संबंध रखती है परन्तु इनकी संख्या बहुत कम ही कही जायेगी । अधिकाशतायों शैक्षिक जगत में किये गये अनुसंधान प्रशिक्षण महाविद्यालयों में किये जाते हैं जहां अनुसंधान हेतु उपयुक्त सुविधायें उपलब्ध नहीं होती हैं और अधिकांशतया शोध एम.एड. या पीएचडी. के विद्यार्थियों द्वारा की जाती है । जो उपाधि प्राप्त करने से संबंध रखती है । वह व्यक्ति जो शोधकार्य में ही रूचि रखते हैं उन्हें कोई विशिष्ट प्रावधान प्रदान नहीं किये जाते हैं ।

2 छात्रवृत्ति की कमी ।

3 कुछ निश्चित क्षेत्रों तक ही शोध कार्य का सीमित रहना ।

4 भौतिक सामग्री का उपलब्ध न होना यथा - उपयुक्त पुस्तकों का अभाव, उपयुक्त परीक्षणों का अभाव कम्प्यूटर सुविधाओं का उपलब्ध न होना ।

5 शोध पत्रिकाओं का उपलब्ध न होना ।

6 शोध क्षेत्रों की पुनरावृत्ति होना ।

7 शोध निष्कर्षो का व्यवहारिक महत्व या तो कम होना या बिल्कुल ही न होना ।

8 शोधकार्यों पर व्यय किये जाने वाले धन का अपर्याप्त होना ।

5.4.1 भारतवर्ष में शिक्षा जगत में किये जाने वाले शोधकार्यों में सुधार हेतु सुझाव (Suggestions for Improvement in Researches of education field in India) - कोठारी शिक्षा भारतवर्ष में शोध कार्य के क्षेत्र में विद्यमान दोषों को दूर करने हेतु निम्न सुझाव प्रस्तुत किये है:

1 अध्ययन हेतु उपयुक्त सामग्री उपलब्ध कराने हेतु केन्द्रों की स्थापना करना ।

2 शोध कार्यकर्ताओं का सामाजिक सम्मेलन आयोजित करना ।

3 शिक्षा व शैक्षिक अनुसंधान विद्यालयों की स्थापना करना ।

4 शोध के लिये अन्त: अनुशासित विधि को अपनाते हुये सामूहिक कार्य योजना को क्रियान्वित करना ।

5 पडौस के विद्यालयों की समस्याओं पर शोध कार्य करना ।

6 विशिष्ट संगठनों जैसे एन..सी.ईआर.टी. आई.डी, व यू.जी.सी. द्वारा शोध कार्यो पर ।

7 राष्ट्रीय स्तर पर शिक्षा विदों की एक समिति बनाई जायें जिसके लिये वित्तीय अनुदान केन्द्र सरकार द्वारा प्रदान किया जायें ।

8 मानव स्त्रोतों के विकास हेतु शैक्षिक अनुसंधान परिषद की स्थापना की जायें । सभी शोध संस्थाओं व संगठनों को वित्तीय अनुदान का वितरण इसी के माध्यम से किया जाये इसका अपना सचिवालय हो जो शिक्षा मंत्रालय में अपना निजी प्रभुत्व रखें ।

9 शिक्षा अनुसंधान के क्षेत्रों में वरीयता क्रम को निर्धारित करना ।

10 शोध कार्य हेतु निर्धारित वित्तीय अनुदान को बढाना ।

एम.बी. बूच ने अपने लेख न्यू डॉयरेक्शन्स आफ एजूकेशनल रिसर्च इन इंडिया जो फोर्थ सर्वे आफ रिसर्च इन एजूकेशन में प्रकाशित हुआ है । भारतवर्ष में किये जाने वाले शोध कार्यो में सुधार की आवश्यकता बताई है और इन्होंने सुधार के लिये निम्न सुझाव प्रस्तुत किये हैं:-

1 शोध के माध्यम से उचित शैक्षिक परिप्रेक्ष्य के विकास की आवश्यकता है इस कारण इस पर गंभीर रूप से ध्यान दिया जाना चाहिये ।

2 शिक्षा जगत में शोध कार्य करने हेतु यह भी आवश्यक है कि हम उचित सैद्धान्तिक प्रारूप का उपयोग भी करें ।

3 व्यावहारिकता की दृष्टि से शैक्षिक कार्यक्रम की कुशलता को बढाने हेतु शोध विषयों का चयन करना ।

4 शोधकर्ताओं द्वारा शोध पद्धतियों के क्षेत्र को विकसित करने हेतु प्रयास किया जाने चाहिये जिससे वह विभिन्न समस्याओं के अनुरूप पद्धति का प्रयोग कर सकें ।

5 शैक्षिक कार्यक्रम हेतु विश्लेषणात्मक पद्धति का प्रयोग शोधकर्ताओं को प्रशिक्षण के माध्यम से निरन्तर दिया जाना चाहिये ।

6 शैक्षिक शोध देश की वर्तमान आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर की जानी चाहिये ।

7 शोध हेतु उपयुक्त वातावरण सृजित किया जायें ।

8 विभिन्न विश्वविद्यालयों के शिक्षा विमानों में परस्पर अन्तःक्रिया होनी चाहिये ।

9 इस बात, का प्रयास भी किया जाना चाहिये कि प्रादेशिक व राष्ट्रीय स्तर पर किये जाने वाले शोध कार्यो को सामूहिक रूप दिया जाये व इन स्तरों से कार्यकर्ताओं को भी इसमें सम्मिलित किया जाये ।

10 ऐसी संस्थाओं की स्थापना भी देश के विभिन्न भागों में की जायें जो शोध कार्य के क्षेत्र में नेतृत्व प्रदान कर सकें व उस क्षेत्र विशेष की समस्याओं को यह पहचानें ।

11 जो व्यक्ति शोध कार्य में संलग्न है उन्हें उचित प्रशिक्षण दिया जायें ।

12 शोध क्रियाओं को निर्देशित करने हेतु यह भी आवश्यकता है कि हम गंभीरतापूर्वक अपनी वरीयता को निर्धारित कर लें ।

5.4.2 शोध अनुसंधान के क्षेत्र (Research areas)- कोठारी शिक्षा आयोग तथा डी. एम. बी. बूच दोनों ने ही शोध कार्य में सुधार की आवश्यकता के संदर्भ में यह कहा है कि हमारे लिये यह आवश्यक है कि हम अपनी वर्तमान आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुये शोध क्षेत्रों के महत्व को निर्धारित कर लें । राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर किन क्षेत्रों पर शोध कार्य की आवश्यकता है । इसके संबंध में विभिन्न लोगों ने अपने विचार प्रस्तुत किये हैं ।

अ. डा. एन.एल. गेग द्वारा प्रकाशित पुस्तक शिक्षण शोध पुस्तिका(N.L. GAGE'S Hand Book of Research in Teaching) में अमेरिकन एजूकेशनल रिसर्च एसोसिएशन ने जो शोध क्षेत्र बतायें हैं वह इस प्रकार हैं :

1 निम्न बातों का सर्वेक्षण करना :-

(ए) अध्यापक व प्रशासकों के कार्य की स्थिति ।

(बी) विद्यालय की वित्तीय व्यवस्था ।

(सी) शिक्षा पर व्यय किया जाने वाला धन ।

(डी) विद्यालय के कार्यो की वर्तमान स्थिति व उनमें सुधार ।

2 विद्यालयों का निरीक्षण करना व इस संदर्भ में सुझाव देना कि उसे कैसे अधिक प्रभावशाली बनाया जा सकता है ।

3 विभिन्न राज्यों में शिक्षा की प्रशासनिक व्यवस्था को समझना व उसका मूल्यांकन करना ।

4 प्रशासन के विभिन्न स्तरों पर मानवीय संबंधों व समूह गतिशीलता को जानना ।

5 विद्यालय व समुदाय के संबंध को समझाना ।

6 विद्यालय में अपव्यय व अवरोधन की समस्या के कारणों का पता लगाना ।

7 विद्यालय में उपरिथति की समस्या क्यों है इसे जानना ।

8 अनिवार्य उपरिथति की स्थिति का मूल्यांकन करना ।

9 बुनियादी शिक्षा में आने वाली प्रशासनिक समस्याओं को समझना व उन्हें सुलझाने के सुझाव प्रस्तुत करना ।

10 राज्य व केन्द्रीय सरकार द्वारा निर्धारित शैक्षिक नियमावली का अध्ययन करना ।

11 भारतवर्ष में विभिन्न शिक्षा बोर्डों का संगठन, नियमावली व कार्यो का अध्ययन करना।

12 अध्यापक प्रशिक्षण - पूर्व प्रशिक्षण व सेवाकालीन प्रशिक्षण दोनों की प्रभावशीलता का अध्ययन करना ।

13 शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर शैक्षिक प्रशासन संबंधी समस्याओं का अध्ययन करना ।

14 शिक्षा क्षेत्र के प्रशासन को विकेन्द्रीकृत करने से उत्पन्न होने वाली समस्याओं का पूर्वानुमान करना ।

15 विद्यालय प्रशासकों के लिये प्रशिक्षण कार्यक्रम ।

16 विद्यार्थी कल्याणकारी योजनाओं को निश्चित करना ।

17 पाठ्यक्रम संबंधी शोध ।

18 सामाजिक व राजनैतिक दर्शनों के संबंधों में सैद्धान्तिक समस्याओं को लेकर शोध करना।

5.5 राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में शैक्षिक अनुसंधान के वरीयता क्षेत्र (Prior Areas in Educational Research in National and International Perspective)

5.5.1 शैक्षिक अपव्यय व अवरोधन का क्षेत्र (Areas of educational wastage and stagnation)

(अ) अपव्यय को कम करने के उपाय सुझाना ।

(ब) शैक्षिक प्रोन्नति न होने का प्रमाण शिक्षा जगत में अवरोधन की समस्या पर क्या पडता है ।

(स) शैक्षिक अपव्यय को अध्यापक प्रशिक्षण, अध्यापक वेतन, अध्यापक-छात्र अनुपात, विद्यालय सुविधाओं व विद्यार्थी कल्याणकारी सेवाओं के संदर्भ में विश्लेषित करना।

(द) बीच में ही अध्ययन छोडने वाले छात्रों का अध्ययन करना व उनकी तुलना उन छात्रों से करना जो अध्ययन जारी रखें है ।

5.5.2 शैक्षिक व्यय से संबंधी शोध क्षेत्र (Research areas related to educational expenditure)

(अ) सरकार द्वारा शिक्षा पर व्यय किया जाने वाला धन - राज्य व केन्द्र स्तर पर विश्लेषण करना।

(ब) देश के बजट में शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर आवंटित धनराशि का अध्ययन ।

(स) शिक्षा के विभिन्न आर्थिक स्त्रोत - केन्द्रीय स्तर पर राजकीय स्तर पर निजी स्तर पर ।

(द) शिक्षा पर सामाजिक व संस्थागत स्तर पर व्यय का निर्धारण ।

(य) शिक्षा पर किये गये व्यय तथा आर्थिक प्रगति के मध्य संबंध देखना ।

(र) विभिन्न शिक्षण संस्थाओं में आने वाले विद्यार्थियों की सामाजिक आर्थिक पृष्ठभूमि का अध्ययन ।

(ल) सरकार द्वारा प्राप्त वित्तीय अनुदान को व्यवस्थित करना ।

(व) शिक्षा पर व्यय किये जाने वाले धन को किन स्त्रोतों के माध्यम से बढाया जा सकता है ।

5.5.3 शिक्षा प्रबंध व प्रशासन से संबंधित क्षेत्र (Areas related to educational management and administration)

(अ) शिक्षा संस्थाओं के प्रकार्यो के मध्य संघर्ष के कारणों का अध्ययन करना ।

(ब) शिक्षा नियमों का विश्लेषण करना ।

(स) शिक्षा के सार्वभौमिकरण को प्रभावित करने वाले कारकों का आलोचनात्मक विवेचन करना ।

(द) नेतृत्व प्रशिक्षण संबंधी कार्यो का विकास व उनका अभ्यास कैसे किया जा सकता है।
(य) आकार व पाठ्यक्रम की दृष्टि से विद्यालयों की विभिन्नता का अध्ययन करना ।
(र) विभिन्न शिक्षा संस्थाओं द्वारा अपनाई गई प्रबंध नीतियों का मूल्यांकन करना ।
(ल) विद्यालयों के प्रबंधतंत्र को अधिक प्रभावशाली बनाने हेतु सुझाव देना ।

5.5.4 सृजनात्मकता के क्षेत्र में शोध (Research in creativity area)-

(अ) सृजनात्मकता के व्यावहारिक व तकनीकी क्षेत्रों में समन्वय स्थापित करना ।
(ब) मानव के संपूर्ण जीवन काल में सृजनात्मकता का विकास कैसे किया जा सकता है ।
(स) सृजनात्मकता विकास की प्रक्रिया को समझना ।
(द) सृजनात्मकता क्षमता को मापन हेतु उचित परीक्षणों का विकास करना ।
(य) सृजनात्मकता के बहु आयामी कारकों का विश्लेषण करना ।
(र) विद्यालय के छात्रों में सृजनात्मकता से संबंधित सामाजिक मनोवैज्ञानिक कारकों का अध्ययन।
(ल) सृजनात्मकता चिन्तन को विकास हेतु उचित शिक्षण प्रारूप का विकास करना ।
(व) सृजनात्मकता चिन्तन क्षमता के विकास हेतु पाठ्यक्रम में नवाचार का प्रारम्भ ।
(श) विभिन्न समुदायों व सामाजिक आर्थिक स्तर के छात्रों की सृजनात्मकता क्षमता के विकास हेतु अध्यापक का व्यवहार कैसा हो ।

5.5.5 संगठनात्मक वातावरण संबंधी शोध क्षेत्र (Research areas related to organized environment)-

(अ) विद्यालय के संगठनात्मक वातावरण को मापने हेतु विभिन्न परीक्षणों का विकास करना ।
(ब) संगठनात्मक वातावरण का विद्यालय वातावरण पर क्या प्रभाव पडता है इसे जानना।
(स) ऐसी नीतियों या प्रारूपों का विकास करना जिससे विद्यालयों का संगठनात्मक वातावरण बदला जा सके ।
(द) विद्यालय के संगठनात्मक वातावरण का व विद्यालय उपलब्धि का संबंध ज्ञात करना ।
(य) विद्यालय वातावरण को कक्षा में क्रियान्वित करना ।
(र) संगठनात्मक मांगों, व्यक्ति की आवश्यकताओं व वैयक्तिक संतुष्टि के मध्य संबंध जानना ।
(ल) विद्यालय के संगठनात्मक वातावरण का अध्यापक व प्राचार्य की वैयक्तिक विशेषताओं से संबंध देखना ।
(ब) विद्यालय के संगठनात्मक वातावरण का विद्यालय के विभिन्न समूहों के संबंधों पर क्या प्रभाव पडता है इसका अध्ययन करना ।

5.5.6 सामाजिक दृष्टि से सम्पन्न व विपन्न बालकों पर शोध के अध्ययन क्षेत्र (Research areas of poor and rich children in social point of view)-

(अ) सम्पन्न व विपन्न घर के बच्चों की वैयक्तिक विशेषताओं, आत्मबोध, आकांक्षास्तर, कुंठाओं, मूल्य, रूचियों व आवश्यकताओं का तुलनात्मक अध्ययन करना ।

(ब) सम्पन्न व विपन्न घर के बच्चों के मां बाप का उनके प्रति क्या दृष्टिकोण है यह ज्ञात करना।

(स) सम्पन्न व विपन्न घर के बालकों के प्रति अध्यापकों के दृष्टिकोण का अध्ययन करना ।

(द) कम उपलब्धि व असफलता के सामाजिक मनोवैज्ञानिक कारणों का अध्ययन ।

(य) विचलित व्यवहार का सामाजिक सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में अध्ययन ।

(र) सम्पन्न व विपन्न घर के माता पिता को शैक्षिक स्तर का ज्ञान करना ।

(ल) शिक्षा व जनजाति संतोष में संबंध देखना ।

(व) जनजातियों में शैक्षिक कुशलताओं व व्यवसाय के मध्य संबंध जानना ।

(श) आश्रम विद्यालय की गतिविधियों को जानना व उनकी तुलना अन्य विद्यालयों से करना ।

(ष) जनजाति शिक्षा का ऐतिहासिक विवेचन ।

(ह) जनजाति के व्यक्तियों के सामूहिक मनोविज्ञान को ज्ञात करना ।

(क्ष) अनुसूचित जातियों व जनजातियों में शिक्षा द्वारा किस प्रकार सामाजिक परिवर्तन आ रहा है इसको ज्ञात करना ।

(त्र) अनुसूचित जाति व जनजाति की शिक्षा में ऐच्छिक संस्थाओं व सरकारी नीतियां का स्थान ।

(ज्ञ) नवोदय विद्यालयों के द्वारा जनजाति शिक्षा का विस्तार कैसे संभव है ।

5.5.7 परीक्षा मूल्यांकन पर शोध के अध्ययन क्षेत्र (research areas of Examination and Evaluation)-

(अ) परीक्षा द्वारा हम क्या मापना चाहते हैं?

(ब) परीक्षा की अंकन व्यवस्थ को सुधारने हेतु कार्य शोध करना ।

(स) प्रत्यक्ष ग्रेड देने व नम्बरों का ग्रेड में परिवर्तित करने का तुलनात्मक अध्ययन करना ।

(द) किसी प्रश्न पत्र को बनाने में अध्यापक कितना समय लेता है ।

(य) उत्तर पुस्तिकाओं को जांचने में कितना समय लेता है व विभिन्न गतिविधियों में कितना समय देता है यथा - काँपी पढना, जांच करना, नम्बर देना, नम्बर जोडना, जोड़े गये नम्बरों की जांच करना, अंक तालिका भरना व अन्य कार्य ।

(र) एक ही विषय में विभिन्न विद्यालयों में अंकन की क्या व्यवस्था विद्यमान है इसका अध्ययन करना ।

(ल) मूल्यांकन की वस्तुनिष्ठ व परम्परागत व्यवस्था की तुलनात्मक विवेचना करना ।

(व) परीक्षा परिणामों पर सामाजिक आर्थिक स्तर के परिणामों की विवेचना करना ।

(श) विभिन्न विशेषताओं को मापने हेतु विश्वसनीय व वैध परीक्षणों का निर्माण करना ।

(ष) भारत की सांस्कृतिक विशेषताओं को ध्यान में रखते हुये व्यक्तित्व के विभिन्न क्षेत्रों के मापन हेतु परीक्षणों का निर्माण करना ।

5.5.8 विशिष्ट बालकों पर शोध के अध्ययन क्षेत्र (Research area on specific child)

(अ) शारीरिक दृष्टि से विकलांग बच्चों का अध्ययन करना ।

(ब) मानसिक दृष्टि से विकलांग बच्चों का अध्ययन करना ।

(स) सामाजिक दृष्टि से विकलांग बच्चों का अध्ययन करना ।

(द) प्रतिभाशाली बच्चों का अध्ययन करना ।

(य) संवेगात्मक दृष्टि से विचलित बालकों का अध्ययन ।

5.5.9 अनौपचारिक शिक्षा पर शोध के अध्ययन क्षेत्र (Research areas on Informal Education)-

(अ) अनौपचारिक शिक्षा का दर्शन व लक्ष्य

(ब) इन केन्द्रों पर पढने वाले व्यक्तियों के जीवनयापन की शैली व जीवन के अनुभवों का अध्ययन ।

(स) अनौपचारिक शिक्षा को शिक्षा के विभिन्न औपचारिक एवं अनौपचारिक आदि कारणों से जोडना ।

(द) अनौपचारिक शिक्षा के क्षेत्रों को शिक्षा के विभिन्न विषयों के सहयोग से विकसित करना ।

(य) नव साक्षरों में पढना, लिखना, बोलना व चित्रात्मक समझ को उत्पन्न करना ।

(र) नव साक्षरों को इस योग्य बनाना कि वह आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक व परम्परागत संस्थाओं में अपना वांछनीय योगदान दे सकें ।

(ल) नव साक्षर में अवरोधन की समस्या का कितना प्रतिशत कम या अधिक हो रहा है इसका विकासात्मक अध्ययन करना ।

(व) नव साक्षर की आवश्यकताओं व रूचियों को कैसे समझा जा सकता है ।

(श) प्रौढ शिक्षा में उपलबद्धोन्मुख प्रेरणा को कैसे समन्वित किया जायें जिससे यह कार्यक्रम सफल हो ।

(ष) प्रौढ शिक्षा देने हेतु कार्यकर्ताओं को कैसे प्रशिक्षित किया जायें ।

(स) वर्तमान में उपलब्ध सीखने का सामग्री उपकरण व परीक्षण का मूल्यांकन उपलब्धि के परिपेक्ष्य में करना ।

(ह) दूरस्थ शिक्षा की प्रभावशीलता का मापन करना ।

(क्ष) पत्राचार शिक्षा के महत्व व प्रभाव का अध्ययन करना ।

5.5.10 बुनियादी शिक्षा पर शोध के अध्ययन क्षेत्र (Research areas on Basic Education)-

(अ) विभिन्न क्षेत्रों की दृष्टि से बुनियादी शिक्षा की आवश्यकतायें क्या हैं इनको ज्ञात करना ।

(ब) इन आवश्यकताओं की पूर्ति की दृष्टि से इन क्षेत्रों में क्या-क्या सुविधायें उपलब्ध है इसे जानना ।

(स) बुनियादी शिक्षा के क्रियान्वयन हेतु इन क्षेत्रों में कैसा वातावरण उपलब्ध है ।

(द) विभिन्न क्षेत्रों की सुविधाओं व वातावरण के अनुकूल बुनियादी शिक्षा का पाठ्यक्रम बनाना व उसे क्रियान्वित करना ।

5.5.11 एकांकी अध्यापक विद्यालय पर शोध के अध्ययन क्षेत्र (Research areas on single teacher school)

(अ) एकांकी अध्ययन के विद्यालयों की समस्याओं का अध्ययन करना ।

(ब) इस प्रकार के विद्यालयों का बालक की सीखने की क्षमता पर क्या प्रभाव पडता है इसे बात करना ।

(स) इन विद्यालयों की प्रभावोत्पादकता को कैसे बढाया जा सकता है इसे ज्ञात करना ।

5.5.12 ग्रामीण विद्यालयों पर शोध के अध्ययन क्षेत्र (Research areas on rural schools)-

(अ) ग्रामीण अंचल में स्थित विद्यालयों का भौतिक सुविधाओं की दृष्टि से अध्ययन करना ।

(ब) क्या ग्रामीण क्षेत्रों में विद्यमान विद्यालय वहां की जनता की आवश्यकताओं के अनुरूप है । (स) ग्रामीण क्षेत्रों के विद्यालयों का पाठ्यक्रम उनकी आवश्यकताओं के अनुरूप बनाना ।

(द) इन क्षेत्रों में रहने वाले व्यक्तियों के जीवन के विभिन्न पहलुओं का अध्ययन करना व उसके अनुरूप शिक्षा कार्यक्रम बनाना ।

5.5.13 पाठ्यक्रम पर शोध के अध्ययन क्षेत्र (Research areas of curriculum)

(अ) व्यक्तिगत भिन्नताओं को ध्यान में रखते हुये एक ही कक्षा व आयु वर्ग के छात्रों के लिये विभिन्न प्रकार का पाठ्यक्रम तैयार करना ।

(ब) असफलता व पिछडेपन के कारण ज्ञात करते हुये उनको सुधारने हेतु सुझाव देना ।

(स) विभिन्न स्तरों पर छात्रों की उपलब्धि के मध्य आने वाले अन्तराल का अध्ययन व उनको दूर करने के लिये निदानात्मक तरीकों का विकास करना ।

(द) बालकों की शब्दावली का अध्ययन करना जिससे उसमें उचित विकास किया जा सकें।

(य) पाठ्यक्रम के कठिनाई स्तर को ध्यान में रखकर कैसे नियोजित किया जायें ।

(र) कौन से ऐसे विषय है जो एक निश्चित आयु पूर्ति के पश्चात् ही क्रियान्वित किये जायें ।

(ल) बालकों की रूचियों को जानना व उसके अनुरूप पाठ्यक्रम बनाना ।

(व) विद्यालय में पढाये जाने वाले विभिन्न विषयों में समन्वय स्थापित करना ।

(श) बुद्धि, अभिवृत्ति व्यक्तित्व व उपलब्धि के मापन हेतु परीक्षणों का विकास करना ।

(ष) शिक्षा, अध्ययन पद्धतियों के उचित व सामाजिक प्रयोग को शोध द्वारा निश्चित करना ।

(स) 6 से 11 वर्ष तक की आयु के बालकों का स्थान व समय के विचार की दृष्टि से अध्ययन करना व इसके लिये उन्हें भूगोल व इतिहास को पढाया जायें ।

(ह) विभिन्न प्रकार के पाठ्यक्रम हेतु कौन सी विधियां, रीतियां व सामग्रियां उचित है इन्हें निश्चित करना ।

5.5.14 अध्यापक प्रशिक्षण पर शोध के अध्ययन क्षेत्र (Research areas on teacher training)

(अ) अध्यापक प्रशिक्षण का शिक्षण की प्रभावशीलता पर क्या प्रभाव पडता है इसे ज्ञात करना ।

(ब) अध्यापक प्रशिक्षण के कार्यक्रम को व्यवहारिक व प्रभावशाली कैसे बनाया जा सकता है ।

(स) कार्यरत शिक्षकों को सेवाकालीन प्रशिक्षण देने का क्या लाभ है ।

(द) अध्यापकों की प्रभावशीलता को बढाने हेतु नवीन शिक्षण विधियों की खोज करना । अध्यापक प्रशिक्षण का कार्यक्रम क्यों आयोजित किया जाता है अर्थात् इसके प्रमुख लक्ष्य क्या है व इन

(य) लक्ष्यों पर पहुंचने हैतु किस प्रकार के पाठ्यक्रम की आवश्यकता होती है ।

(र) प्रशिक्षित व अप्रशिक्षित अध्यापकों के शिक्षण कौशलों का अध्ययन करते हुये यह देखना कि (ल) क्या अध्यापक प्रशिक्षण सफल अध्यापक बनाने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है । सफल व असफल अध्यापकों के व्यक्तित्व की विशेषताओं का परस्पर तुलनात्मक अध्ययन करना ।

(व) कार्यरत अध्यापकों की अध्यापन प्रवणता का अध्ययन करना ।

(श) जो व्यक्ति अध्यापक व्यवसाय में संलग्न है वह अपने व्यवसाय से कहां तक संतुष्ट है इसका अध्ययन करना ।

(ष) एक सफल अध्यापक हेतु छात्रों से शाब्दिक व अशाब्दिक अन्त: क्रिया करना क्यों आवश्यक है इसका अध्ययन करना ।

5.5.15 वातावरण शिक्षा पर शोध के अध्ययन क्षेत्र (Research areas on Environmental education)-

(अ) मानव व वातावरण में सामाजिक, दार्शनिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनैतिक व सांस्कृतिक संदर्भ में संबंध ।

(ब) प्राकृतिक व मानवीय वातावरण का उचित सृजन ।

(स) वातावरण संबंधी समस्याओं का अध्ययन ।

(द) अध्यापकों को इस दृष्टि से प्रशिक्षित किया जाये कि वह विद्यालय व अन्य शैक्षिक संस्थाओं के वातावरण को सुधार सकें ।

(य) वातावरण प्रदूषण को कैसे कम किया जा सकता है ।

(र) उचित वातावरण सृजन हेतु जागरूक करना ।

(ल) नगरीयकरण व वातावरण संरक्षण के मध्य संघर्ष कैसे दूर किया जा सकता है ।

5.5.16 जनसंख्या शिक्षा पर शोध के अध्ययन क्षेत्र (Research areas of Population Education)-

(अ) विद्यालय पाठ्यक्रम में जनसंख्या शिक्षा को क्रियान्वित करने के महत्व को जानना।

(ब) विभिन्न स्तरों पर जनसंख्या शिक्षा को क्रियान्वित करने की पद्धतियां

(स) जनसंख्या शिक्षा पाठ्यक्रम में किन उप विषयों को समन्वित किया जायें ।

(द) जनसंख्या शिक्षा कार्यक्रम की प्रभावोत्पादकता का मूल्यांकन करना ।

(य) जनसंख्या शिक्षा हेतु उचित साहित्य का विकास करना ।

(र) जनसंख्या शिक्षा के महत्वपूर्ण पक्षों को समझना ।

(ल) विभिन्न लोगों में लिंग, सामाजिक आर्थिक स्तर व शिक्षा स्तर के संबंध में जनसंख्या जागरूकता की भावना उत्पन्न करना ।

(व) जनसंख्या विस्फोट के कारणों व स्त्रोतों का अध्ययन ।

(श) लम्बे अध्ययनों के आधार पर उस आयु का पता लगाना जब बालक /बालिकाओं के अन्दर जनसंख्या का संबोध उत्पन्न होता है ।

(ष) जनसंख्या शिक्षा पर जनसंख्या नियंत्रण पर क्या प्रभाव पड़ रहा है इसका अध्ययन करना ।

5.5.17 नेतृत्व संबंधी शिक्षा पर शोध अध्ययन के क्षेत्र (Research areas on leadership education)-

(अ) नेतृत्व व उसके विभिन्न पक्षों का अध्ययन ।

(ब) नेतृत्व व संगठनात्मक स्वास्थ्य ।

(स) नेतृत्व के विभिन्न पक्षों का अध्ययन ।

(द) विभिन्न स्तरों पर नेतृत्व प्रशिक्षण का प्रारूप ।

(य) नेतृत्व के विभिन्न पहलू आयु लिंग, अनुभव ।

(र) नेतृत्व व नैतिकता से संबंध ।

(ल) अध्यापक, छात्रों व शिक्षणोत्तर कर्मचारियों में नेतृत्व ।

(व) नेतृत्व का संस्थागत योजनाओं पर प्रभाव ।

(श) नेतृत्व के प्रमुख कार्य ।

5.5.18 भाषा शिक्षण पर शोध अध्ययन के क्षेत्र (Research areas on language teaching)-

(अ) भाषा का सामाजिक अन्तक्रिया व विचारों के आदान प्रदान ।

(ब) भाषा का कक्षा सीखने पर क्या प्रभाव पडता है । इसका अध्ययन करना साथ ही यह देखना कि भाषा का छात्रों की उपलब्धि पर क्या प्रभाव पडता है ।

(स) आद्योगिक संगठन के रखरखाव उसकी प्रगति व परिवर्तन में भाषा का स्थान ।

(द) चीजों के क्रय विक्रय में भाषा का महत्व ।

(य) स्वास्थ्य संरक्षण में भाषा का कार्य ।

(र) न्याय व न्यायालय में भाषा का महत्व ।

(ल) कानूनी स्तर या संसद में भाषा का स्थान ।

(व) अंग्रेजी भाषा शिक्षा के माध्यम के रूप में यदि अपनाई जाये तो भारत उसे कितने प्रतिशत लोगों की स्वीकृति मिलेगी ।

(श) अंग्रेजी को माध्यम व विषय के रूप में सीखाने के लिये उपयुक्त पाठ्यक्रम, पाठ्यपुस्तकें, शिक्षण पद्धतियों, जिज्ञासु छात्र व कुशल अध्यापकों का कैसे तैयार किया जायें ।

(ष) किसी भी भाषा को सीखाने में प्रमुख बाधायें क्या हैं व उन्हें कैसे दूर किया जा सकता है । (स) किसी विशेष क्षेत्र में हिन्दी को राष्ट्रीय भाषा के रूप में स्वीकार करने में क्या बाधायें आ रही है।

(द) क्या अंग्रेजी भाषा को जानने वालों का उपलब्धि स्तर अधिक होता है या हिन्दी भाषा को जानने वालों का? या इनकी उपलब्धि में कोई विशेष अन्तर नहीं होता ।

(य) अशिक्षित लोगों का भाषा स्तर अव्यवस्थित क्यों हैं ।

5.5.19 स्त्री शिक्षा पर शोध अध्ययन के क्षेत्र (Research areas on Women Education)-

(अ) क्या शिक्षा द्वारा स्त्रियों के महत्व व उनकी स्थिति को सुधारा जा सकता हैं?

(ब) स्त्री शिक्षा व पुरूष शिक्षा के प्रति समाज के विभिन्न वर्गो की राय का अध्ययन ।

(स) क्या माता पिता स्त्री या लकडी की शिक्षा के प्रति जागरूक हैं?

(द) क्या परिवारों में लडकों को शिक्षा हेतु अधिक अच्छी सुविधायें प्रदान की जाती हैं । सामाजिक आर्थिक स्तर का स्त्री शिक्षा पर क्या प्रभाव पडता हैं ।

(र) स्त्री शिक्षा के महत्व के लिये समाज के लोगों की अभिवृत्ति, मूल्यों व विचारों में परिवर्तन लाना ।

(ल) विभिन्न कालों व क्षेत्रों में स्त्री शिक्षा का विकास ।

(व) स्त्री शिक्षा का परिवार व बालक के विकास में क्या योगदान है ।

(श) स्त्री शिक्षा व पुरूष शिक्षा के दायित्व अलग अलग हैं ।

(ष) स्त्री शिक्षा के क्षेत्र में जिन स्त्रियों का महत्वपूर्ण योगदान है उनके बारे में जानकारी रखना ।

(स) स्त्रियों द्वारा महसूस की जाने वाली सामाजिक व मनौवैज्ञानिक समस्याऐं ।

(ह) अनुसूचित जाति व जनजाति की छात्राओं की समस्यायें ।

(क्ष) स्त्री रोजगार की स्थिति व समस्यायें ।

(त्र) अनौपचारिक शिक्षा संस्थाओं में स्त्री शिक्षा में उत्पन्न होने वाली समस्यायें ।

(ज्ञ) स्त्री शिक्षा क्षेत्र में अवव्यय व अवरोधन की समस्यायें ।

5.5.20 शिक्षा निर्देशन व परामर्श पर अध्ययन के क्षेत्र (Research areas on Educational guidance and councelling))-

(अ) निर्देशन हेतु उचित परीक्षणों का निर्माण करना ।

(ब) छात्रों की व्यावसायिक रूचियों व आकांक्षाओं को ज्ञात करना ।

(स) छात्रों में व्यावसायिक परिपक्वता का विकास करना ।

(द) छात्रों की आवश्यकताओं व समस्याओं के कारणों का अध्ययन व उनके निराकरण हेतु सुझाव ।

(य) बालकों की अध्ययन आदतों व पढ़ने की रूचियों का अध्ययन ।

(र) बालकों के मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन ।

(ल) देश में विद्यमान निर्देशन सेवाओं का मूल्यांकन करना ।

भारतवर्ष में शिक्षा क्षेत्र में उपरोक्त क्षेत्र ऐसे है जिन पर शोध कार्य की आवश्यकता है व कुछ क्षेत्र ऐसे है जिन पर शोध कार्य किया जा रहा है । यथाशिक्षा का इतिहास, शिक्षा दर्शन, शिक्षा समाजशास्त्र तुलनात्मक शिक्षा प्राथमिक शिक्षा, माध्यमिक शिक्षा व उच्च शिक्षा । परन्तु इन सभी क्षेत्रों में किये गये शोध कार्यो में भी सुधार की आवश्यकता है जिससे यह शोधकार्य सिर्फ उपाधि प्राप्त करने तक ही सीमित न रहे वरन् शिक्षा क्षेत्र में गुणात्मक सुधार हेतु यह ठोस सुझाव प्रदान कर सकें ।

5.6 स्वमूल्यांकन (Self Assessment)

1 भारतवर्ष में शोध अनुसंधान की स्थिति बताते हुये अनुसंधान की आवश्यकता बताइये?

2 राष्ट्रीय अन्तर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में शिक्षा अनुसंधान के क्षेत्रों को बताइये?

3 भारतवर्ष में शिक्षा शोध की स्थिति अत्यन्त सोचनीय है इस कथन का मूल्यांकन कीजिये?

लघुउत्तरीय प्रश्न (Short answer type questions)

1 एन.सी.ई.आर.टी. द्वारा प्रकाशित इण्डियन ईयर बुक में शोध क्षेत्रों का जा वर्गीकरण दिया है उसे लिखिये ।

2 शोध कार्य की निराशात्मक स्थिति के संबंध में विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग के विचार बताइये।

3 भारतवर्ष में वह कौन सी संस्थायें है जो शिक्षा शोध क्षेत्रों से संबंध रखती हैं '

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective type question)

सही/गलत का निशान लगाइये ।

1 यू.जी.सी. का प्रमुख कार्य अध्यापकों की नियुक्ति करना है ।

2 एन.एल.गँग द्वारा रचित पुस्तक का नाम है शिक्षण शोध पुस्तिका ।

3 (Hand book of Research in teaching)

4 शोधद्वारा सामाजिक व्यवहार को नियंत्रित कर सकते हैं ।

5.7 संदर्भ ग्रन्थ (References)

BUCH M.B. (Ed.), Fourth Survey of Research in Education, Vol. I & II, New Delhi, NCERT, 1991

इकाई-6

शोध समस्या - चयन और निर्माण

(Research problem-Selection and Formulation)

इकाई की संरचना (Structure of unit)

6.0 इकाई के उद्देश्य (Objective of Unit)

6.1 समस्या क्या है? (What is Problem?)

6.2 अनुसंधान समस्या के स्त्रोत (Sources of research problem)

6.3 अनुसंधान समस्या के चयन की कसौटियाँ (Criteria for the selection of research problem)

6.4 समस्या सम्बन्धी कारक (Factors regarding problem)

6.5 अनुसंधान कथन, प्रश्न तथा प्राक्कल्पनायें (Research statement, questions and hypothesis)

6.6 विशिष्ट अनुसंधान प्रश्न (Specific research questions)

6.7 संक्रियात्मक परिभाषाऐं (Operational Definitions)

8.8 अनुसंधान योजना का विकास (Development of Research Plan)

8.9 स्वमूल्यांकन (Self Assessment)

8.10 संदर्भ ग्रन्थ (Reference)

6.0 लक्ष्य एव उद्देश्य (Aims and Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के बाद आय-

1 'समस्या' को परिभाषित कर सकेंगे ।

2 अनुसंधान-समस्या के विभिन्न स्त्रोतों को स्पष्ट करेंगे ।

3 एक अच्छी अनुसंधान समस्या का चयन कर सकेंगे ।

4 अनुसंधान के उद्देश्य लिख सकेंगे ।

5 पदों को संक्रियात्मक स्वरूप प्रदान कर सकेंगे ।

6 समस्या का परिसीमन कर सकेंगे ।

7 अध्ययन के लिए अनुसंधान प्रस्ताव तैयार कर सकेंगे ।

सभी प्रकार के अनुसंधानों में अन्तर्भवित प्रक्रिया का प्रथम आवश्यक सोपान अनुसंधान समस्या का चयन, उसको परिभाषित करना और उसका निरूपण करना है, यद्यपि अनुसंधान समस्या के लिए पद - "परिभाषा" और "निरूपण" विषय-क्षेत्र की दृष्टि से भिन्न है, तथापि सामान्यत: वे परस्पर परिवर्तनीय रूप में प्रयोग किये जाते है । अत: यहाँ प्रस्तुत प्रकरण के निरूपण में इन दोनों को अलग करने का कोई प्रयास नहीं किया जावेगा ।

6.1 "समस्या" क्या है? (What is a Problem?):

लोक-प्रचलन में पद "समस्या" का अर्थ "कठिनाई" है समाधान ज्ञात करने की दृष्टि से इसको एक चुनौती के रूप में स्वीकार किया भी जा सकता है और ऐसा नहीं भी किया जा सकता है, अनुसंधान में समस्या को सामान्य बोलचाल में अनाबद्ध प्रचलन की अपेक्षा अधिक नियत रीति से परिभाषित करते है । अनुसंधानकर्ता के सामने सैद्धांतिक अथवा व्यावहारिक कोई कठिनाई अथवा विषम स्थिति उपस्थित होती है । इसके लिए उसको समाधान अवश्य खोजना है । उसको समस्या समाधान के लिए वैकल्पिक साधन अथवा मार्ग उपलब्ध होते हैं । अपने अनुसंधान के द्वारा वह इन में से उत्कृष्ट को सर्वप्रथम पूर्व-परीक्षण की कसौटी पर रखता है ।

समस्या का कोई एक मात्र समाधान होने की स्थिति में अनुसन्धान की कोई आवश्यकता नही होती तथा बिना किसी अनुसन्धन प्रक्रिया के ही उपलब्ध समाधान की प्रयुक्त किया जाता ह । ऐक्राफ (Ackoft) अनुसन्धान-समस्या के निम्नलिखित घटकों को प्रस्तुत करते है -

(i) समस्या किसी व्यक्ति अथवा समूह की होती है ।

(ii) इसमें उद्देश्य-प्राप्ति निहित है ।

(iii) प्रस्तावित उद्देश्यों की प्राप्ति के वैकल्पिक साधन उपलब्ध होते है । अर्थात् समस्या के कम से कम दो वैकल्पिक समाधान होते है । अन्यथा चयन के अवसर के प्रभाव में समस्या अस्तित्वहीन हो जाती हैं ।

(iv) अनुसन्धानकर्ता के मन में इन विकल्पों के चयन के संदर्भ में शंका अवश्य होनी चाहिए । अर्थात् सम्भावित विकल्पों की सापेक्ष दक्षता के आधार पर प्रश्न का उत्तर दिया जाना चाहिए ।

(v) कठिनाई (Difficulty) से सम्बन्धित कोई पर्यावरण Environment) अवश्य होना चाहिए।

6.2 अनुसन्धान समस्या के स्त्रोत (Source of Research Problem)

शिक्षा सम्बन्धी सार्थक समस्याओं के लिए अनुसन्धानकर्ता की निम्नलिखित स्त्रोतों की ओर ध्यान देना चाहिए -

6.2.1 कक्षा-शिक्षण : यह अनुसन्धान समस्या के लिए एक सम्पन्न स्त्रोत है । इसमें शिक्षण, अधिगम, प्रबधन, सामग्री विधियों और प्रत्यय (Ideas) सम्मिलित है । एक कल्पनात्मक और इक्विजिटिव (Inquisitive) बुद्धि का शिक्षक इस महत्वपूर्ण और सहज में उपलब्ध स्त्रोत पर आश्रित रह सकता है । वह अपने अनुभवों के आधार पर इससे एक अच्छी समस्या प्राप्त कर सकता है ।

6.2.2 अनुसन्धान पर्यवेक्षक (Research Supervisor) से सलाह. संकाय के सदस्य एवं अनुसन्धान कार्यो में अनुभवी पर्यवेक्षक किसी अनुसन्धानकर्ता को एक अच्छी समस्या के चयन में सहायक हो सकते है । जॉन डीवी (John Dewey) के लेखों का किल्पैट्रिक

(Kilpartrick) पर प्रभाव एवं बिने (Binet) साइमन (Simen) के सम्बन्ध इस बात के प्रमाण है कि वरिष्ठ स्कालर युवा साथियोंको किस प्रकार प्रभावित करते है ।

6.2.3 अन्य अनुसन्धानकर्ताओं के साथ सलाह-मशविरा (Consultation): शिक्षा संकाय अथवा अन्य संकायों में कार्यरत अनुसन्धानकर्ताओं के साथ पारस्परिक विचार-विमर्श से समस्या के क्षेत्र में अन्तर्दृष्टि प्राप्त हो सकती है ।

6.2.4 स्नातकोत्तर स्तर के व्याख्यान (Lectures), विमर्श (Discussion) एवं संगोष्ठियों के प्रतिवेदन Report of Seminars)- इनसे भी अन्वेषक को क्षेत्र विशेष में अध्ययन के लिए अभिप्रेरणा मिलती हैं

6.2.5 अनुसन्धान साहित्य (Research Literature):- शिक्षा सम्बन्धी अनुसन्धान साहित्य अन्वेषण के लिए समस्या हेतु महत्वपूर्ण भण्डार है । इसमें शोध-प्रबन्ध (Thesis), निबन्ध (dissertation), प्रतिवदेन (Report), नियम कार्य (Assignment), पत्रिकायें (Journals), सन्दर्भ पुस्तकें, शिक्षा, मनोविज्ञान, समाजशास्त्र, दर्शन, नृविज्ञान के विश्वकोश (Encyclopaedia of Education, Psychology, Sociology, Philosophy and Anthropology) शिक्षा के शोध-विश्वकोश, सम्बन्धित वार्षिकायाँ (year Books) सार पत्रिकायें समीक्षाये (Abstracting Journals) आदि सम्मिलित है। ऐसे जर्नलों को समीक्षायें (Reviews of such Journals)इनमें महत्वपूर्ण हैं। जिस क्षेत्र में शोधकर्ता अध्ययन करना चाहता है उसको इस क्षेत्र में विषय से सम्बन्धित-साक्ष्यों (Evidences) अभ्यासों, (practices), प्रवृत्तियों (Trends) आवश्यकताओं (Needs)का विश्लेषण करना चाहिए ।

6.2.6 प्रावैधिक विकास एवं नवाचार (Technological Developments and Innovations)- शिक्षा के क्षेत्र में प्रावैधिक विकास और नवाचार समुचित समस्याओं के लिए सम्पन्न स्त्रोत उपलब्ध करते है । शिक्षा में उद्भवित (Emerging) क्षेत्र यथा-विशिष्ट शिक्षा (Special Education) दूरस्थ शिक्षा, निरौपचारिक शिक्षा, जनसंख्या शिक्षा, शैक्षिक प्रविधि, ऊर्जा शिक्षा (Energy Education) शिक्षण के प्रतिमान (Modes) कक्षागत अन्तर्क्रिया (Classroom Interactions) नेतृत्व-व्यवहार (Leadership Behaviour) अनुसन्धान हेतु सशक्त विषयों के रूप में उभर रहे है ।

6.2.7 सरकारों की शिक्षा-नीतियाँ (Education Policies of Government)- अन्वेषक के लिए सरकारी शिक्षा-नीतियाँ दुहरे आशोवदि लिए होती है । एक ओर जहां इनसे समस्या का चयन आसान हो जाता है, दूसरी ओर अनुसन्धान के लिए निधि (funds) उपलब्ध होते है। 1968 व 1986 में भारत सरकार द्वारा घोषित शिक्षा नीतियों में व्यक्त (explicit) और अव्यक्त (Implicit) कई सुझाव व्याप्त है तथा निधि भी उपलब्ध है ।

6.2.8 प्राथमिकता (Priority) और फोकस क्षेत्रों का अभिज्ञान - राज्य सरकारों केन्द्रीय अभिकरणों (Agencies) शोध संस्थानों (Research Institutes) उच्च केन्द्रों (Advanced Centres) में सलाह-मशविरा कर शिक्षा के ऐसे क्षेत्रों का पता लगाया जा सकता है ।

6.2.9 शिक्षा आयोगों, समितियों के अभिवन प्रतिवेदन Recent Report):- इन प्रतिवेदनों के अलावा सम्मेलनों (Conferences) गोष्ठियाँ (Seminars) परिषदों (Boards) अनुसन्धान कार्य के लिए उपयोगी संकेत (Clues) उपलब्ध कर सकते है ।

6.2.10 व्यापक अध्ययन (Extensive Reading):- विस्तुत और समालोचनात्मक पाठन विद्यार्थी के बौद्धिक विकास और पाण्डित्य (Scholoarship) के लिए आवश्यक पृष्ठभूमि निर्मित करता है । यह उसकी समस्या को पहचानने में ही नही अपितु उसको सूत्रबद्ध और क्रियान्वित करने में भी सहायक होता है । वाइटहेट (White-head) को शास्त्रों (Classics) गणित विज्ञान, धर्मशास्त्र (Theology) के दीर्घ कालीन और विस्तृत अध्ययन का लाभ प्राप्त हुआ । टॉमस हक्सले (Thomas Huxley) और जॉन डीवी (John Dewey) साहित्य और ग्रन्थों के पाठक रहे थे ।

6.2.11 समस्या की पुनरावृत्ति (Repetition) और विस्तार (Extention)- विद्यार्थी के लिए यह जानना चाहिए कि पूर्व में दूसरों के द्वारा किये गये अनुसन्धान की पुनरावृत्ति आवश्यक है । यह पुनरावृत्ति एवं पुनर्सत्यापन समय गुजरने के साथ और भी अधिक आवश्यक है । वर्णनात्मक सर्वे (Descriptive Surveys) किसी काल के लिए ही परिशुद्ध (Accurate) होते है । इतिहास कभी भी पूर्ण नहीं होता है । प्रयोगात्मक अनुसन्धान की पुनरावृत्ति समान अथवा नवीन स्थितियों (Conditions) में वैधता(Validation) के लिए आवश्यक है । इसलिए प्रारम्भ में किसी अन्वेषक को ऐसा प्रकरण छोड़ने का विचार नहीं रखना चाहिए, जिस पर कि कुछ वर्षो पहले किसी ने अनुसन्धान कार्य किया है ।

दीर्घ शिक्षण और अन्य व्यावसायिक अनुभवों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि डायरी (Diary) रखना बहुत उपयोगी है, किसी क्षण उपयोगी विचार (Ideas) और संकेत (Clues) मिलने पर यदि उनका अभिलेख (Record) न किया जाय तो वे विस्तृत हो जाते है । अनुसन्धान परामर्शदाता (Advisors) कोर्स कन्सल्टैण्टस (Course Consultants) और प्रमुख व्यवसाय इस युक्ति को बहुत उपयोगी पायेंगे ।

6.3 अनुसन्धान समस्या के चयन की कसौटियाँ (Criteria for the selection of a Research Problem)

किसी समस्यात्मक संस्थित (Situation) की पहचान के तुरन्त बाद अन्वेषण आरम्भ करने से पूर्व अनुसन्धानकर्ता को उसका समुचित मूल्यांकन करना चाहिए । एक "अच्छी समस्या' का चयन, उसका विश्लेषण और उसका सूत्रबद्ध करना ही अनुसन्धान कार्य के आधे भाग को पूर्ण करने के बराबर है । प्राय: विद्यार्थी संदिग्ध और अनुसन्धान के लिए अयोग्य विचारों को अपना लक्ष्य बनाते है । इसके लिए वे अपने सुपरवाइजर से ऐसी प्रतिक्रियायें प्राप्त करते है जिनमें कुछ इस प्रकार हैं- "बहुत व्यापक", 'वृहद संकीर्ण," पहले ही की गई," "प्रशिक्षण और विशेषज्ञता के बाहर", "अप्रबन्धनीय", "दल प्राप्य नही" आदि । स्तान्तकोत्तर स्तर पर विद्यार्थी न तो विषय और न ही पद्धति से पूर्ण परिचित होते है । इस स्तर पर सुपरवाइजर की भूमिका एक शान्त मार्गदर्शक के रूप में अधिक महत्वपूर्ण है । डॉक्टॉरल स्तर (Doctoral

level) पर विद्यार्थी पद्धति में समुचित प्रशिक्षण प्राप्त कर चुका होता हैं उसको विषय तथा उसके क्षेत्र का ज्ञान रहता है । तथा उसके पास समस्या के चयन के लिए पर्याप्त समय भी होता है । इसलिए विषय की अन्वेषण के लिए चयनित करने से पूर्व अनुसन्धानकर्ता को निम्नलिखित पक्षों पर ध्यान देना चाहिए । जिससे कि उसकी कठिनाईयों के कारण महीनों बाद पर्याप्त धन राशि लगाने के उपरानत भी विषय पर कार्य करना बन्द न करना पड़े, इससे समय, श्रम और धन का अपव्यय नहीं होता ।

अनुसन्धानकर्ता से सम्बन्धित कारक (Factors concerning the Researcher)

- समस्या अनुसन्धानकर्ता की ध्येय-प्रत्याशा (Goal Expectation) के अनुरूप होनी चाहिए ।
- यह अन्वेषक की विशेज्ञता के क्षेत्र से होनी चाहिए ।
- अनुसन्धानकर्ता में आवश्यक कौशल, योग्यता और अभिज्ञान की पृष्ठभूमि होनी चाहिए।
- अनुसन्धान प्रायोजना को पूर्ण करने के लिए इसके कर्ता के पास पर्याप्त समय और कोष होना चाहिए ।
- अच्छी शोध समस्या के लक्षण (Characteristics of good researcher problem)

6.4 समस्या सम्बन्धी कारक (Factors Regarding Problem)

(i) समस्या का नया होना आवश्यक है । अन्य अन्वेषक द्वारा पूर्व में इस पर कार्य नहीं किया गया हो । यदि इस पर कार्य को दोहराने की आवश्यकता हो तो इसके लिए पर्याप्त औचित्य दिया जाना चाहिए ।

(ii) समस्या को या तो सम्बन्धित क्षेत्र में अभिज्ञान को उन्नत बनाने में समर्थ होना चाहिए अथवा यह व्यावहारिक समस्या का समाधान दे सके ।

(iii) समस्या न तो इतनी सीमित हो कि इसकी उपयोगिता ही न हो और इतनी विस्तृत हो कि इसका प्रबन्ध न हो सके ।

(iv) अनुसन्धान को व्यक्तियों (Individuals) समयावधि (Time-Period) और विषय क्षेत्र के संदर्भ में प्राप्त परिणामों के उपयोजन-विस्तार (Breadth of Applicability) का ध्यान रखना चाहिए । (४) समस्या सम्बन्धित विषय और समाज के लिए महत्व की दृष्टि से सार्थक हो, समस्या सामाजिक समस्याओं की दृष्टि से सार्थक हो, यह महत्वहीन अस्थिरता लिए न हो ।

(v) समस्या ऐसी हो कि वह अनुसन्धानकर्ताओं में अपने लिए अभिरूचि विकसित कर सके । जिससे कि आगे खोज-कार्य के द्वारा उपयुक्त अभिज्ञान प्रजनित हो सके । तथा मानवीय अवबोधन उन्नत हो सके ।

विविध विचारणीयन (Miscellaneous)

(i) दत्त एकत्रीकरण (Data Collection) के लिए उपकरण और तकनीकें या तो उपलब्ध हों या उन्हें निर्मित किया जा सके ।

(ii) दत्त-स्त्रोत एवं विषयी ((Subject) अभिगम्य (Accessible) हो । तथा अनुसन्धान कार्य में उनकी इच्छा हो ।

(iii) किसी अभिकरण (Agency) से निधि (fund) की प्राप्ति हो सके ।

(iv) सहायक कर्मचारी (Support-Staff)- साक्षात्कर्ता (Interviewer),प्रेक्षक observer) परीक्षण-प्रशासक (Test-administrators) आदि आवश्यकता होने पर आसानी से उपलब्ध होने चाहिए ।

उपरोक्त को दृष्टिगत करते हुए अनुसन्धानकर्ता साधनों की सीमाओं में महत्वपूर्ण और शोध योग्य समस्या का चयन कर सकेगा । अनुसन्धान कठिन, यथागत और धैर्यशील प्रक्रिया है । आसानी से डिग्री हासिल करने की दृष्टि से हल्केपन की समस्या पर कार्य करना न हो चुनौतीपूर्ण है और न ही रूचिकर, यह मानवीय श्रम और दुर्लभ वित्तीय साधनों की बर्बादी है । समस्याओं के चयन के लिए अनुसन्धानकर्ता के लिए निर्धारित समुचित मानकों (Norms) और प्रतिमानों (Standards) का होना आवश्यक है ।

8.5 अनुसन्धान कथन. प्रश्न और प्राक्कल्पनायें (Research Statements, Questions and Hypothesis)

प्रत्येक शोध-प्रतिवेदन में प्रथम अनुभाग में समस्या का कथन, अध्ययन का महत्व, विशिष्ट अनुसन्धान प्रश्न और प्राक्कल्पनायें होती है । अध्ययन की प्रवृत्ति के आधार पर शोधकर्ता अपनी अनुसन्धान समस्या को सुविधानुसार प्रयोजन के कथन, प्रश्नों अथवा प्राक्कल्पनाओं के रूप में प्रस्तुत कर सकता है । कोई भी प्रारूप हो, इसमें यह निहित है कि समस्या पर अन्वेषण इन्द्रियानुभविक (Emiprical) के द्वारा सम्भव है, अत: यह अन्वेषण योग्य है ।

अनुसन्धान प्रयोजनों या उद्देश्यों का कथन (Statement of Research Purposes or Objectives) - ऐतिहासिक, दार्शनिक या सत्मान्य सर्वेक्षण सम्बन्धी- विवरणात्मक और गुणात्मक (Descriptive and Qualitative) समस्याओं के कथन प्रयोजन या उद्देश्योंके रूप में इस प्रकार प्रस्तुत किये जा सकते है-

(i) स्वतन्त्रता के उपरान्त भारत में स्त्री-शिक्षा की अभिवृद्धि और विकास की ऐतिहासिक जाँच' इस अध्ययन का प्रयोजन है ।

(ii) अध्ययन का लक्ष्य 'गांधी और टैगोर के शैक्षिक विचारों की तुलना' है ।

(iii) अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य "भारत, यूके. और यू.एस.ए. में शैक्षिक अवसरों की समकारी Equalization) की अवधारणा (Concept) की तुलना करना" है ।

6.6 विशिष्ट अनुसन्धान प्रश्न (Specific Research Questions)

यह अच्छा है कि कुछ अनुसन्धानकर्ता अपनी समस्या को विशिष्ट अनुसन्धान-प्रश्नों के रूप में प्रस्तुत करने को प्राथमिकता देते है । ऐसे प्रश्न इस प्रकार होते है ।

6.6.1 विवरणात्मक अनुसन्धान-प्रश्न (Descriptive Research Questions)- ऐसे प्रश्न प्राय: "क्या था', "क्या है" जैसे शब्दों से शुरू होते हैं । उदाहरणार्थ

1 औसत आठवीं श्रेणी वाले (Eighth grader) के गणित में उपलब्धि स्तर क्या है?

2 अकबर के काल में शिक्षा के विकास का क्या स्तर था?

3 हरियाणा की वर्तमान प्राथमिक शालाओं में विज्ञान शिक्षण की क्या सुविधायें उपलब्ध है?

6.6.2 सम्बन्धात्मक प्रश्न (Descriptive Research Questions)- ऐसे प्रश्न दो या अधिक चरों के पारस्परिक सम्बन्धों पर आधारित होते हैं, यथा-

1 माता-पिता की शिक्षा और उनके बच्चों की शैक्षिक आकांक्षाओं (Aspirations) में क्या सम्बन्ध है?

2 उपलब्धि स्तर के शिक्षण पर मल्टीमीडिया का क्या प्रभाव है?

3 शैक्षिक अभिक्षमता (Schoeasthic, शिक्षा-स्तर Education level) और शिक्षण अभिवृति (Attitude towards teaching) किस सीमा तक शिक्षक की प्रभाविता (Effictiveness) के प्राक्सूचक (Predictors) हैं?

6.6.3 विभेद प्रश्न (Difference Questions)- जब कभी भी तुलना अन्तर्भवित (involved) हो और संख्या-दत्त (Quantifiable data) उपलब्ध हो तो दो या अधिकचरो के मध्य अन्तर को अभिव्यक्त करने वाले प्रश्न प्रस्तुत किये जा सकते हैं । उदाहरणार्थ :-

1 क्या बालक बालिकाओं के गणित में उपलब्धि -स्तरों में कोई अन्तर हैं?

2 क्या आवासीय और दिवा-विद्यार्थियों (Day scholars) के खेल कूद की अभिवृत्तियों में अन्तर है?

3 क्या कक्षा मे अगली बैचों में बैठने वालों (front-benchers) और पीछे की बैचों में बैठने वालों (back-benchers) के कैटल के 16 पी.एफ. के आधार पर व्यक्तित्व विशेषकों (Personality traits) में अन्तर हैं?

प्रश्न अन्तर की दिशा की ओर भी इंगित कर सकते हैं । जैसे-

1 क्या महिला विद्यार्थी पुरूष विद्यार्थियों की उपेक्षा अधिक अनुशासित हैं?

2 क्या मॉड्यूल उपागम (Modular approach) के विद्यार्थी परम्परागत उपागम (Traditional approach) का प्रयोग करने वाले विद्यार्थियों की अपेक्षा उच्चत्तर अंक प्राप्त करते हैं? ऐसे अनुसन्धान प्रश्न की अपेक्षा उच्चत्तर अंक प्राप्त करते हैं? ऐसे अनुसन्धान प्रश्न अनुसन्धानकर्ता की अपेक्षायें होती हैं । इन्हें सॉख्यिकीय प्रश्नों में

परिवर्तित किया जा सकता है । यथा- क्या गणित में बालक-बालिकाओं के उपलब्धि स्तरों में सार्थक अन्तर है (Significant Difference) है?

6.7 संक्रियात्मक परिभाषायें (Operational Definitions)

अनुभविक अन्वेषण (Empirational investigation) की संभावना के क्रम मे अनुसंधान प्रश्नो और प्राक्कल्पनाओं के विनिर्दिष्टता (Specificity) के विभिन्न स्तरों में प्रस्तुत किया जा सकता है । प्राक्कल्पनाओं के प्रत्येक चर को परिभाषित किया जाना चाहिए । ऐसा दो तरह से किया जा सकता है :-

शब्दकोष (Dictionary) अथवा साहित्यिक परिभाषायें धारणा की सामान्य जानकारी के लिए उपयोग में आती हैं । किन्तु ये वैज्ञानिक बोध (Scientific understanding) और धारणा के अर्थ बोध के लिए ऐसे उपयोग में नहीं आती । उदाहरणार्थ "बुद्धि" (Intelligence) का अर्थ मानसिक तीक्ष्णता (mental acuity) तथा दुश्चिन्ता (Anxiety) की परिभाषा "अस्पष्ट भय का बोध Apprehension of vague fear" है । ये परिभाषायें अपर्याप्त हैं ।

संक्रियात्मक परिभाषायें धारणा के मापन (Measurement), संवर्गीकरण (Categorization) या जोड़-तोड़ करने (Manipulate) की क्रियाओं को विशिष्ट करती हैं । "शैक्षिक उपलब्धि (Academic achievements) किसी कोर्स (Course) में विद्यार्थी प्राप्तांक श्रेणियाँ (Marks or grades) और बुद्धि को "किसी विशेष परीक्षा में प्राप्तांक" तथा "बौद्विक दृष्टि से श्रेष्ठ (Intellectually superior) " और बौद्विक दृष्टि से हीन Intellectually inferior) को किसी बुद्धि परीक्षण से प्राप्त बुद्धि गुणांक (I.Q.) के रूप में परिभाषित किया जा सकता है ।

संक्रियात्मक परिभाषायें प्राप्त परिणामों के बोध और तुलना तथा अनुसन्धान डिजाइन के उपयुक्त सम्प्रेषण (Communication) के उपयोग में आती है । अध्ययन क्षेत्र का सीमांकन:-

अनुसन्धानकर्ता उपलब्ध समय और संसाधनों के आधार पर अपने अध्ययन क्षेत्र का परिसीमन (Delimits) करता है । ऐसे कथन अनुसन्धान प्रस्ताव (Research Proposal) या शोध-सार (Synopsis) दिये जाते हैं और अन्तिम शोध-प्रतिवेदन (Research Report) में ये व्यक्त (Explicit) अथवा अव्यक्त (Implicit) रूप में सम्मिलित होते है। परिसीमन सामान्यत: निम्नलिखित तीन पक्षों (Aspects) के आधार पर किया जाता है ।

1 **धारणात्मक परिसीमन (Conceptual Delimitation)-** इसका सम्बन्ध उन धारणाओं, चरों से होता है जिनमें अनुसन्धानकर्ता की रूचि होती है

2 **प्रणालीतन्त्रीय परिसीमन (Methodological Delimitation)-** अनुसन्धानकर्ता को चाहिए कि अध्ययन के उपयोग में आने वाली व्यापक विधियों का उल्लेख करे तथा ऐसी विशिष्ट तकनीकों कों भी दें ।

3 **भौगोलिक परिसीमन (Geographical Delimitation)-** इसका सम्बन्ध अध्ययन में सम्मिलित जनसंख्या (Population) और प्रतिदर्श (Sample) से है । अनुसन्धानकर्ता को उन परिसीमाओं का विशिष्ट उल्लेख करना चाहिए जिनमें अध्ययन के परिणाम प्रयुक्त होंगे ।

6.8 अनुसन्धान योजना का विकास (Developing a Research Plan)

शोध स्थापना Thesis) अथवा शोध-प्रबन्धन(Dissertation) पर आधारित अनुसन्धान पाठ्यक्रम (Research Course) में पंजीकरण की अभिलाषा वाले विद्यार्थी को अनुसन्धान योजना तैयार करनी पड़ती है ।

इसकों "अनुसन्धान प्रस्ताव (Research Proposal)" अथवा "अनुसन्धान-सार" कहते हैं । इस प्रस्ताव पर विशेषज्ञ-समिति (Committee of Experts) या संकाय के स्वरूप Members of Faculty) इसके महत्व के आकलन हेतु विचार करते हैं । संकाय के सदस्य सामान्यत: अपने अनुसन्धान पुस्तक को प्रायोजना (Sponsorship) और निधि की स्वीकृति के लिए विभिन्न अभिकरणों (Agencies) के पास प्रस्तुत करते हैं । इन सभी को सावधानी के साथ प्रस्तावित शोध-सार तैयार करना होता है । इस प्रयोजन के लिए अलग अलग अभिकरण अलग अलग प्रारूप (Format) अथवा प्रपत्र (प्रोफॉर्मा-Proforma) निर्धारित करते हैं ।

ऐसा प्रोफॉर्मा उपलब्ध न होने की स्थिति में भावी अनुसन्धानकर्ता (Prospective Researcher) निम्नलिखित सुझावों से लाभान्वित होंगे ।

- अनुसन्धान प्रकरण का शीर्षक (Title of the Research Topic)
- अनुसन्धान का नाम और कार्यालयी पता ।
- प्रस्तावना (Introduction) जो कि लगभग 3-5 पृष्ठों का हो ।
- इसमें अनुसन्धान -क्षेत्र के सम्बन्ध में विचार और समस्या को चिन्हित करने हेतु संक्षिप्त साहित्य हो ।
- समस्या का कथन (Justification) में समस्या का सामान्य कथन, उद्देश्य, प्राक्कल्पनायें (Hypothesis), अभिगृहीत (Assumptions) सम्मिलित हैं । धारणाओं (Concepts) और पदों (terms) की परिभाषायें भी यहाँ दी जानी चाहिए ।
- समस्या का औचित्य ((justifications) सैद्धान्तिक और व्यावहारिक उपयोगों के आधार पर दिये जाने चाहिए ।
- प्रस्तावित अनुसन्धान अभिकल्प (Research Design) में निम्नलिखित सम्मिलित है
  (1) प्रयुक्त होने वाली व्यापक विधियाँ और तकनीके ।
  (2) जनसंख्या, प्रतिदर्श और प्रतिदर्श की तकनीकें ।
  (3) दत्त - विश्लेषण की योजना ।
- अध्ययन के सम्भावित योगदान ।

– अनुसन्धान प्रतिवेदन का पूर्व-दर्शन (Preview) देते हुए अध्यायीकरण की योजना (scheme of Chapterization)

– सन्दर्भ (Reference)

यदि प्रस्ताव कोष -प्राप्त करने के लिए भेजा जा रहा हो तो, अध्ययन चरण (phasing) और आय-व्यय विवरण (Budgeting) भी दिये जाने चाहिए । जो कि इस प्रकार है:-

चरन क्रम	अवधि	निष्पादित कार्य-विवरण
I		
II		
III		

बजटिंग में निम्नलिखित के लिए आवश्यक धनराशि शामिल हैं-

क्र. संख्या S. No.	व्यय के मद Items of Expenditure	अवशक राशि Amount Required (Rs.)

– अन्वेषकों के लिए मानदेय (honorarium) यदि हो

– अनुसन्धान स्टॉफ की संख्या और वेतन जैसे जे.आर.एफ और रिसर्च ऐसोसयेट्स

– प्रिटिंग उपकरणों की खरीद

– दत्त-प्रक्रमण (Data Processing)

– फुटकर खर्च (Contingencies)

– लिपिकीय सहायता (Clarical Assistance)

– -प्रतिवेदन तैयार करना ।

– पुस्तकों और पत्रिकाओं (Journals) की खरीद

– अन्य

एक अनुसन्धान प्रस्ताव सावधानी से तैयार किया जाना चाहिए । कोष से सम्बन्धित संस्था अथवा डीन संकाय या अन्य को भेजी जाने वाली सामग्री साफ टाइप हो या इसकी साफ फोटो प्रतिलिपि हो । इसकी बाहा सत्रा (Getup) आकर्षित होनी चाहिए । प्रस्तुतीकरण भी सुन्दर हो ।

एक अनुसन्धान प्रस्ताव, इसके प्रतिवेदन से कई प्रकार से भिन्न है । प्रथम तो आरम्भ है। किन्तु दूसरा अनुसन्धान प्रक्रिया का चरम है । प्रस्ताव में अनुसन्धान योजना दी जाती है। जबकि प्रतिवेदन में इसकी क्रियान्वित दी जाती है प्रतिवेदन अधिक बोधगम्य और विस्तृत होता है। इसमें अनुसन्धान अध्ययन के परिणाम और निष्कर्ष सम्मिलित होते हैं । इसमें विभिन्न अनुक्रमणिकायें (Appendices) होती हैं, जो कि प्रस्ताव में नहीं हो । प्रतिवेदन स्पष्टत: अधिक वृहद्तर होता है । यदि किसी पत्रिका के लिए प्रतिवेदन लेख-रूप (Article) में हो तो दोनों में आकार-भेद नहीं होता।

वाचस्पतीय बारिधीय अनुसन्धान (Doctoral Research) - प्रारम्भ में अनुसन्धान का विद्यार्थी भौचक्का रहता हैं कि एक अच्छी अनुसन्धान समस्या के सन्धान के लिए किस

स्रोत को टटोला जाय । इस दृष्टि से विद्यार्थियों की सहायता के लिए भारतीय विश्वविद्यालयों में विभिन्न अभ्यासों (Practices) का अनुगमन किया जा रहा है । यथा-

1 अनुसन्धान पर्यक्षक (Research Supervisor) अपनी ओर से सीधे ही समस्या तय करते हुए विद्यार्थी को अनुसन्धान परिषद् (Research Board) के पास स्वीकृति हेतु प्रस्तुत करने के लिए सारांश (Synopsis) तैयार करने के लिए निर्देश देता है ।

2 सुपरवाइजर अपने स्वयं के अनुसन्धान प्रायोजना के विषय-क्षेत्र से सम्बन्धित विषय पर कार्य करने के लिए कहते है ।

3 कुछ विश्वविद्यालय विद्यार्थियों से यह आवश्यकीय मानते हैं कि वे छः माह की पर्यवेक्षित पुस्तकालय अध्ययन (Supervisual Library Study) के अन्तर्गत समस्या को समझें और उसकों सूत्रबद्ध करें ।

कुछ विश्वविद्यालय यह चाहते हैं कि अनुसन्धान प्रकरण स्वीकार करने पूर्व विद्यार्थी अपने प्रकरण पर आयोजित गोष्ठी (Seminar) में उसे प्रस्तुत करें ।

यह एक सामान्य मत है कि शिक्षा के क्षेत्र में अनुसन्धान का स्तर गिरता जा रहा है । सम्पूर्ण संचालित अनुसन्धानों में डॉक्टॉरल शोधों का एक बहुत बड़ा भाग है । भारतीय विश्वविद्यालयों में ये शोध गुणवता नियन्त्रण (Quality Control) पर किसी गम्भीर प्रयास को परावर्तित नहीं करतें। इन्हें निम्नस्तरीय समस्याओं और प्रारूपों के साथ मात्र पुनरावृत्तियाँ पाया गया है । परिणाम सिद्धांत रूप में डब (Doubious) की हुये और अभ्यास के लिए खतरनाक हैं । ये प्रयास व्यावहारिक अनुसन्धान विधि के अल्पविकसित तत्वों को सीखने के लिए प्रारम्भिक प्रयत्न के स्तर के ऊपर नहीं उठते हैं । अनुसन्धान के इस स्त्रोत को बिगड़ने से बचाने के लिए विश्वविद्यालय किसी उपयुक्त जाँच (Check) और संतुलन (Balance) को व्यवस्था में निर्मित में असफल हुए हैं। अतः स्तरों में भावी गिरावट को रोकने के लिए विश्वविद्यालयों को निम्नांकित अभीष्ट स्थापित करने के लिए सुझाव दिया जा रहा है:-

- डॉक्टॉरल अनुसंन्धान के लिए प्रकरण के पंजीयन से पूर्व 6 महीने का अनिवार्य पुस्तकालय अध्ययन ।
- अन्तिम स्वीकृति से पूर्व विद्यार्थी द्वारा संकाय के सम्मुख अन्तरिम प्रतिवेदन प्रस्तुत करना । - अन्तः संकाय आधार पर विद्यार्थी द्वारा शोध-प्रस्तुतीकरण ।
- डॉक्टॉरल शोध उपयुक्त रीति से श्रेणी बद्ध करना न कि सामान्य उत्तीर्ण का निर्णय ।
- राष्ट्रीय निकाय (National Body) द्वारा अनुसंधान, विशेषज्ञता, पाण्डित्य (Scholarship) के आधार पर अनुसन्धान मार्गदर्शकों (Research Guides) का प्रन्यायन (Acceditation) करना ।
- राष्ट्रीय निकाय द्वारा शोध-परीक्षकों के पैनल (Panel)बनाना ।

6.9 स्वमूल्यांकन (Self Assessment)

लधुत्तरात्मक

1 समस्या को परिभाषित कीजिए ।

2 समस्या को परिभाषित करने में अनुसन्धान साहित्य का महत्व दीजिए ।

3 "समस्या अनुसन्धान समस्या का चयन" के लिए दो अनुसन्धानकर्त्ता आधारित कारक लिखिए।

4 सम्बन्धात्मक प्रश्न की परिभाषा दीजिए ।

5 विधि सम्बन्धी परिसीमायें क्या हैं?

6 निम्नलिखित में रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए

(1) अनुसन्धान समस्या एक ..... प्रश्न है ।

(2) अनुसन्धान कई में से ..... विकल्प का चयन करता है ।

(3) समस्या के चयन में अनुसन्धानकर्त्ता की स्वंय की क्षमता में निर्मित करती है .....

(4) समस्या को ..... नवीन होना चाहिए ।
(सदा/कभी-कभी/प्राय:)

(5) संक्रियात्मक परिभाषायें ..... होती हैं ।
(निरपेक्ष रूप से आवश्यक/यदाकदा आवश्यक/आवश्यक नहीं)

6.10 सन्दर्भ ग्रन्थ (References)

1. R.L. Ackoft, **The Design of Social Research Chieago**: Chicago University Prese, 1961
2. M.B. Buch(Ed.) **Survey of Educational Research in India** (First, Second and Thire Surveys)
3. Y.P. Agrawal (Ed.) **Research in Emerging Fields of Education New Delhi**: Sterling, 1989.
4. N.C.E.R.T. New Delhi issues Priority areas of research in Balletins of ERIC.
5. Caster V.**Good Introduction to Educational Research** New York: Appleton-Century Crafts, 1963, P138
6. Fred. N. Korlinagar, **Foundations of Behavioural Research**, New York: Hold, Rinehert, 1979, PP, 34-35

इकाई-7

प्राक्कल्पना

(HYPOTHESIS)

परीक्षण, विश्वसनीयता स्तर, एक पार्श्व, द्वि-पार्श्व परीक्षण - I प्रकार, II प्रकार त्रुटियां

TESTING LEVELS OF CONFIDENCE, ONE-TAILED, TWO-TAILED TESTS-TYPE I ,TYPE II ERRORS

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

7.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

7. प्राक्कल्पना (Hypothesis)

7.2 प्राक्कल्पनाओं के प्रकार (Types of Hypothesis)

7.3 अनुसंधान प्राक्कल्पनाओं के स्रोत ((Sources of Research Hypothesis)

7.4 प्राक्कल्पना के प्रकार्य (functions of Hypothesis)

7.5 अच्छी एवं उपयोगी प्राक्कल्पनाएँ (Good and Useful Hypothesis)

7.6 प्राक्कल्पना की कथनीयता (Hypothetical statement)

7.7 शून्य प्राक्कल्पना Null Hypothesis)

7.8 विश्वसनीयता के स्तर (Levels of Reliability)

7.9 एकल पार्श्व एवं हि पार्श्व परीक्षणों की सार्थकता (Significance of One-Tailed and two tailed tests)

7.10 स्वमूल्यांकन (Self Assessment)

7.11 संदर्भ ग्रन्थ (Reference)

7.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

इस इकाई के बाद आप समर्थ होंगे कि -

- प्राक्कल्पना का अर्थ स्पष्ट कर सकेंगें ।
- प्राक्कल्पना के प्रकार तथा उनके उदाहरण दे सकेंगे ।
- अच्छी प्राक्कल्पना कहीं ढूँढी जाय?
- शून्य प्राक्कल्पना (Null Hypothesis) और अनुसंधान प्राक्कल्पना क्या हैं?
- विश्वसनीयता के स्तरों (Level of Confidence) के अर्थ और उपयोग स्पष्ट कर सकें ।
- एक-पार्श्व (One-Tailed) और द्वि-पार्श्व (Two tailed) परीक्षणों के अर्थ और उनके उपयोग स्पष्ट कर सकें ।
- 1 प्रकार (Type I) और II प्रकार (Type -II त्रुटियों के अर्थ स्पष्ट कर सकें ।

7.1 प्राक्कल्पना (Hypothesis)

चार्ल्स डर्विन (Charles Darwin) द्वारा एल्फ्रेड आर० वैलैस (Alfred R. Wallace को एक पत्र में लिखा गया था, "अटकल ((Superculation) के बिना अच्छा और मौलिक प्रेक्षण (Good and Original Observation) नहीं होता ।" पूर्व खोजों से निर्देशित अटकल या ध्यान के द्वारा पहल (Initiative Contemplation) से डार्विन नें अपनी रचना "ऑरिजिन ऑफ स्पिशीज (Origin of Species) में अपने प्रेक्षण प्रस्तुत किये । प्राक्कल्पना सूचनाधारित (informed) या चातुर्यपूर्ण अटकल (Shreud guess) है, जिसका सही होने का उचित योग (Reasonable Chance) होता है, इसको प्रेक्षित तथ्यों (observed facts) या दशाओं (Conditions) की व्याख्या करने के लिए सूत्रबद्ध और स्वीकार किया जाता है (Formulated and tentatively adopted) तथा यह आगे अन्वेषणों का मार्ग दर्शन करता है । दूसरे शब्दों में प्रश्नों के उत्तर ज्ञात करने के लिए यह अन्वेषक की "आँखों" की भूमिका निभाता है ।

अनुसंधान प्रश्नों की भाँति प्राक्कल्पना दो या अधिक चरों के मध्य सम्भावित सम्बन्ध के लिए एक परीक्षणात्मक कथन है । यद्यपि समस्या कथन (Problem Statement) सार रूप में प्राक्कल्पना के समान होता है, तथापि यह अपेक्षाकृत न्यून निश्चयात्मक (Definitive) और ज्ञापक (Declarative) होता है । प्राक्कल्पनाएँ अधिक विशिष्ट और स्पष्ट परीक्षणीय कथनों को प्रस्तुत करते हैं । जो कि अपेक्षित परिणामों (Exoected Results) के लिए संकेतात्मक (Indicative) होते है । उदाहरणार्थ, एक समस्या कथन, "क्या बालक-बालिकाओं के परिवार नियोजन की अभिवृत्ति में अन्तर है?", को प्राक्कल्पना में इस प्रकार परिवर्तित किया जा सकता है, "परिवार नियोजन के प्रति अभिवृत्तियों (Attitude) में बालक और बालिकाओं में अन्तर होता है ।" दत्त द्वारा प्राक्कल्पना का परीक्षण उस सीमा तक होता है जहाँ तक कि चरों का जोड़तोड़ (Manipulation), संवर्गीकरण (Categorization), मापन (Measurement) होता है । इसके परीक्षा के लिए परिमाणीकरण Quantification) दूसरी आवश्यक शर्त है ।

कार्लिगर (Karliger) के अनुसार प्राक्कल्पना में "यदि - तो (If-then)" निहित है । तर्कशास्त्र (Logic) और अधिकांश प्राक्कल्पनाओं में दो चरों के मध्य सम्बन्ध का संकेत "यदि-तो के स्वरूप में कथनीय है । निम्नलिखित प्राक्कल्पनायें विचारार्थ प्रस्तुत है-

(i) यदि विद्यार्थियों के एक समूह को इतिहास "बहु-साधन उपागम (Multimedia approach)" से पढ़ाया जाय तो इतिहास में उनकी उपलब्धि बढ़ेगी ।

(ii) यदि प्रधानाचार्य प्रजातांत्रिक नेतृत्व उपागम (Democratic leadership approach) को अपनायें तो संकाय का मनोबल (Faculty morale) बढ़ेगा । यह आवश्यक नहीं है कि प्राक्कल्पना में शब्द "सम्बन्ध (Relationship)" या "से सम्बन्धित है (is related with)" अवश्य हों । शब्द समूह यथा- "प्राप्त करेंगे (Will achieve)", "उत्पादित करेंगे (Will Produce)", "का एक कथन है आदि दो चरणों के पारस्परिक

बन्ध (Connection) और सम्बन्ध (Relationship) को भी चिन्हित करते हैं । ये कारणीय (Causal) या अकारणीय (Non-Casual) हो सकते हैं ।

7.2 प्राक्कल्पनाओं के प्रकार (Type of Hypothesis)

व्यापक रूप में प्राक्कल्पनाओं को "अनुसंधान प्राक्कल्पनाओं' और "सांख्यिकीय प्राक्कल्पनाओं' में वर्गीकृत किया जा सकता है । अनुसंधान प्राक्कल्पना दो या अधिक चरों के सम्बन्ध का कथन है । यह अनुसंधानकर्ता की अध्ययन के अपेक्षित परिणाम है । तदन्तर अनुसंधान प्राक्कल्पना को "शून्य-स्वरूप (Null form)" में परिवर्तित किया जाता है । इसके बाद इसका उचित सांख्यिकीय तकनीक के द्वारा परीक्षण किया जाता है । इसमें अनुसंधानकर्ता की अपेक्षा कि यह दत्त अनुमोदित नहीं होगी, निहित रहती है । दूसरा वर्गीकरण सम्बन्ध के क्षेत्र (Scope) पर आधारित है । सार्वभौमिक प्राक्कल्पना (Universal Hypothesis) सार्वभौमिक सम्बन्धों को प्रस्तुत करते हैं । इसलिए वे अध्ययन की सम्पूर्ण जनसंख्या (Population) पर प्रत्येक स्थान और हर काल में लाग होते है । इस प्रकार वे कालातीत और स्थानातीत (Transcend-time and space) अस्तित्वपरक (Existantial) प्राक्कल्पना की मान्यता है कि कम से कम एक ऐसी स्थिति अस्तित्व में है जिसमें दिया गया सम्बन्ध प्रायोज्य (Applicable) है । यह अधिक अच्छा है कि पहले अस्तित्व परक प्राक्कल्पना स्थापित की जाय । तदुपरांत प्रायोगिक (Pilot) या अन्वेषी (Exploratory) अध्ययन के द्वारा इसकी पुष्टि की जाय । इसके बाद ही अधिक व्यापक समावेशी (Broader Coverage) सार्वभौमिक प्राक्कल्पना को स्थापित किया जाय और पूर्ण अध्ययन के द्वारा इसका परीक्षण किया जाए । चर संख्या के आधार पर भी प्राक्कल्पनाओं का संवर्गीकरण (Categorisation) किया जाता है । सरल प्राक्कल्पना (Simple hypothesis) मात्र दो चरों के सम्बन्ध विषयक कथन है । जटिल प्राक्कल्पना (Complex) दो से अधिक अथवा कई चरों के सम्बन्ध विषयक कथन है । इन चर सम्बन्धों का बहुचर सांख्यिकीय तकनीकों (Multivariate Statistical techniques) के द्वारा परीक्षण किया जाता है ।

सांख्यिकीय प्राक्कल्पनाओं को इस प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है -

(i) शून्य प्राक्कल्पना (Null Hypothesis दो चरों के मूल्यों में "शून्य अन्तर" अथवा "कोई अन्तर नहीं" अथवा "शून्य सम्बन्ध' का कथन है ।

(ii) वैकल्पिक प्राक्कल्पना (Alternate) एक धनात्मक (स्वीकारात्मक - Positive) प्राक्कल्पना है । इसको इस आशा से स्थापित किया जाता है कि शून्य प्राक्कल्पना की अस्वीकृति (Rejection) की स्थिति में यह स्वीकार्य की जावेगी ।

(iii) सदिश प्राक्कल्पना (Directional Hypothesie) एक या दूसरे समूह के पक्ष मे अन्तर की दिशा चिहित करती है । उदाहरणार्थ अनुसंधानकर्ता मान सकता है कि, "बालक बालिकाओं की अपेक्षा अधिक आक्रामक होते हैं ।"

(iv) इन प्राक्कल्पनाओं के सांख्यिकीय परीक्षण के लिए इकाई 10 में प्रतिमान (Model) प्रस्तुत है ।

7.3 अनुसंधान प्राक्कल्पनाओं के स्रोत (Source of Research Hypothesis)

मानव मन असंख्य स्रोतों की धाराओं से पोषित है । यह बिंदुगत रूप से कहना बहुत मुश्किल है कि वैज्ञानिक के मन में कोई अच्छा विचार कैसे आया । फिर भी, अनुसंधान प्राक्कल्पनाओं के लोकप्रिय कुछ स्रोत निम्नलिखित हैं

(i) सामान्य बुद्धिपरक तर्कवाक्यों (Commonsense Propositions) में वर्तमान आनुभविक एकरूपता (Existing Impirical Uniformeties) वैज्ञानिक जांच का आधार बन सकती है ।

(ii) सामान्य संस्कृति (General Culture), जिसमें विज्ञापन विकसित होता है और वैज्ञानिक रहते हैं, अच्छी प्राक्कल्पनाओं का स्रोत है ।

(iii) कई प्राक्कल्पनाओं का प्रादुर्भाव वर्तमान वैज्ञानिक अभिज्ञान में होता है ।

(iv) ज्ञान की किसी शाखा में कई प्राक्कल्पनाओं को सादृश्यता (Analogy) के आधार पर दूसरे विज्ञान से स्थापित किया जा सकता है । किसी शास्त्र में विकसित प्रतिमान और सिद्धांत बहिर्वेशन (Extra Polation)के द्वारा दूसरे मे प्राक्कल्पनाओं को सूत्रबद्ध करने में सहायक हो सकते हैं ।

(v) किसी वैज्ञानिक अथवा अभ्यासकर्ता (Practitioner) के व्यक्तिगत और स्वभाविक विलक्षणतापरक (Idiosyncratic) अनुभव प्राक्कल्पना को सूत्रबद्ध करने में सहायक हो सकते हैं।

(vi) अन्य अनुसंधानकर्ताओं द्वारा अपने प्रतिवेदन दिये गये सुझाव भावी अध्ययनों के लिए प्राक्कल्पनायें स्थापित करने में सहायक हो सकते हैं ।

(vii) प्राक्कल्पनाओं को सूत्रबद्ध करने में वैज्ञानिक का सर्जनात्मक चिंतन (Creative Thinking) सहायक होता है ।

(viii) अनुसंधान क्षेत्र के विशेषज्ञों के साथ विमर्श (Discussion with experts) अनुसंधानकर्ता को समस्या में अन्तर्दृष्टि (Insight) और प्राक्कल्पनाओं को सूत्रबद्ध करने में सहायता दे सकता हैं ।

7.4 प्राक्कल्पनाओं के प्रकार्य (Functions of Hypothesis)

अनुसंधान में प्राक्कल्पनाओं मे निम्नलिखित प्रकार्य हैं -

(i) अनुसंधान अध्ययन में प्राक्कल्पनायें अन्वेषक के लिए "आँखों" का प्रयोजन सिद्ध करती हैं । इनके द्वारा वह समस्या के विभिन्न पक्षों का अवलोकन करता है ।

(ii) विशिष्ट प्रायोजन अथवा समस्या के अन्तर्गत प्राक्कल्पनायें समस्त अनुसंधान क्रियाओं को निश्चित दिशा प्रदान करती हैं ।

(iii) समस्या के लिए उपयुक्त परीक्षणों एवं तकनीकों के चयन में प्राक्कल्पनायें मार्गदर्शन प्रदान करती

(iv) प्राक्कल्पनायें समस्या के लिए तथ्यों या दत्त की संगति को निश्चित करते हुए अनुसंधानकर्ता के अमूल्य समय और धन के अपव्यय को रोकती है ।

(v) प्राक्कल्पनायें अनुसंधान प्रयासों को लीक पर रखते हुए महत्वपूर्ण धारणाओं, चरों, जनसंख्याओं आदि से ध्यान हटाने से रोकती हैं ।

(vi) प्राक्कल्पनायें परिणामों के निर्वचन के लिए सुविधाजनक होती है। इनकी सहायता से निष्कर्षो को सार्थक कथन दिए जाते हैं ।

(vii) अन्य वैज्ञानिकों द्वारा पुष्टि के बाद प्राक्कल्पनायें उनसे अनुमोदित होकर भौतिक और सामाजिक घटनाओं की व्याख्याओं के लिए सिद्धांत या वैज्ञानिक नियम बनते हैं । वैज्ञानिक नियम वह प्राक्कल्पना है, जिसकी वैज्ञानिक वैधता पर सापेक्ष रूप से प्रश्न नहीं उठाया जा सकता ।

7.5 अच्छी और उपयोगी प्राक्कल्पनाओं के अभिलाक्षणिक गुण (Characteristics of good and useful Hypothesis)

दार्शनिक सुजन्न लेंजर(Suzanne Langer) ने तर्क दिया है कि मानव-मन शरीर की भाँति तात्कालिक ध्येय के अभाव में प्राय: क्रियाशील रहता हैं । दृढ़ मानकों के लागू करने से ही अच्छे विचारों को बुरे विचारों से अलग करना सम्भव हैं । वैज्ञानिक मन के अंतरंग में कई विचार और सम्बन्ध आते हैं । उनमें से अधिकतर समाप्त हो जाते हैं । शेष थोड़े से प्राक्कल्पनाओं के रूप में अस्तित्व बनाये रखते हैं । जिनका प्रेक्षणों से परीक्षण किया जाता हैं । सार्थक प्राक्कल्पना का चिंतन बहुत मुश्किल है । वाचस्पति (Master's Degree) स्तर को और यहाँ तक कि डॉक्टॉरल स्तर की प्राक्कल्पनायें मुश्किल से अच्छी प्राक्कल्पना के गुणों से युक्त होती हैं।

प्राक्कल्पना - स्थापना और उनके मूल्यांकन के समय निम्नलिखित को ध्यान में रखना चाहिए।

1. प्राक्कल्पना धारणात्मक रूप से सुस्पष्ट हो। धारणाओं और चरों को संक्रियात्मक रूप से स्पष्टता से परिभाषित किया जाना चाहिए । परिभाषाओं में ऐसे पद हों जो कि सामान्यत: स्वीकार्य हों तथा सम्प्रेषण-बाधित न हों। दृढ़ कारण न होते हुए नवीन शब्दावली (Terminology) से बचना चाहिए ।
2. प्राक्कल्पना के आनुभाविक प्रसंगार्थ (Empirical refereces) होने चाहिएँ । जिसका तात्पर्य है कि यह सांख्यिकीय दत्त द्वारा परीक्षणीय हो । जिन प्राक्कल्पनाओं में रहस्यमय (Mystical) और अलौकिक (Supernaural) वस्तुएँ होती हैं, उनका परीक्षण असम्भव है। इसलिए एक अच्छी प्राक्कल्पना को परीक्षण योग्य होना चाहिए ।
3. प्राक्कल्पना का क्षेत्र सीमित और स्वरूप विशिष्ट (Specific) होने चाहिए । इससे उसकी परीक्षणीयता बढ़ जावेगी। फिर भी, बड़ी संख्या में धारणाओं को लिए हुए तथा कालातीत और स्थानातीत प्राक्कल्पनायें वैज्ञानिक के हृदय को छूती है ।

4. प्राक्कल्पना को महत्वपूर्ण सम्बन्ध की ओर इंगित करना चाहिए । अस्थिर और सामाजिक दृष्टि से महत्वहीन सम्बन्धों को प्राक्कल्पना में परीक्षण हेतु सम्मिलित न किया जाए ।
5. प्राक्कल्पना को उचित समयान्तराल में परीक्षणीय होना चाहिए ।
6. प्राक्कल्पना उपलब्ध तकनीकों से सम्बन्धित हो । इसकी स्थापना करते हुए अनुसंधानकर्ता को यह पुष्ट करना चाहिए कि इसके लिए आवश्यक दत्त एकत्रीकरण हेतु आवश्यक उपकरण और तकनीक उपलब्ध हैं ।
7. प्राक्कल्पना का उद्रव तथ्यों से होना चाहिए और यह तथ्यों के ही अनुरूप भी हो । इसका आधार पूर्व साहित्य और वर्तमान सिद्धान्त होने चाहिएँ । एकाकी अध्ययन (Isolated studies) समग्र वैज्ञानिक ज्ञान को निर्मित नहीं कर सकती । फिर भी कुछ लोग गैलीलियों (Galileo) की भाँति ऐसी निर्भय प्राक्कल्पनायें प्रस्तुत करते हैं जो कि ज्ञात तथ्यों और विश्वासों का विरोध करती हैं । संक्षेप में एक अच्छी प्राक्कल्पना को निश्चित (Definite) महत्वपूर्ण (Significant), परीक्षणीय और निश्चित सैद्धातिक ढाँचे (Framework) पर आधारित होना चाहिए ।

7.8 क्या प्राक्कल्पना कथनीय है? (Is Hypothesis be stated)

इस प्रश्न पर वैज्ञानिकों में भिन्नताये हैं । कुछ का मानना है कि प्रत्येक अध्ययन में प्राक्कल्पना का कथन अनिवार्य शर्त है । जबकि दूसरों का मानना है कि ऐसे कथन हमेशा जरूरी नहीं है । ऐतिहासिक और दार्शनिक अध्ययनों में प्राक्कल्पना का परीक्षण और उसकों सार रूप में स्वीकार अथवा अस्वीकार करना मुश्किल होता है । ऐसी स्थितियों में अनुसंधानकर्ता के ध्यान में अनुसंधान प्रश्न और सम्बन्ध अवश्य होते हैं । किन्तु इनका गुण स्पष्ट रूप से प्रस्तुत प्राक्कल्पना है । पाठक प्राय: सामान्यीकरणों से परीक्षित प्राक्कल्पनाओं के सम्बन्ध में अनुमान लगाते हैं । पायलेट अध्ययनों और समन्वेषी (Exploatory) अनुसंधान में सदा संक्षिप्त प्राक्कल्पनाओं को सूत्रबद्ध करना सम्भव नहीं होता ।

सर्वेक्षण अनुसंधान में, जहाँ प्रयोजन विवरण होता है, प्राक्कल्पना को छोड़ा जा सकता है। हाँ, ऐसी स्थितियों में प्राक्कल्पनायें प्रयोजनीय होती हैं जहाँ - चर-सम्बन्ध और सांख्यिकीय दत्त उपलब्ध हो प्रतिवर्ष से जनसंख्या के लिए सामान्यीकरण अन्तर्भवित हो, प्रायोगिक अध्ययनों में, जहाँ कार्य-कारण सम्बन्ध स्थापित करते हैं, प्राक्कल्पनाओं को स्थापित करना नितान्त आवश्यक है ।

7.7 शून्य प्राक्कल्पना (Null Hypothesis) -

शून्य अन्तर का तर्कवाक्य (Proposition) शून्य प्राक्कल्पना कहलाती है । फिशर (Fisher) इस बात पर बल देते हैं कि प्रयोग का अस्तित्व इसी पर निर्भर है कि उसमें तथ्यों के आधार पर शून्य प्राक्कल्पना को सिद्ध न करने (Disprove) को अवसर होता है ।

अत: परिभाषित किसी प्रायिता (Probability) मूल्य (Value) पर अस्वीकार किये जाने की सम्भावना के साथ स्थापित प्राक्कल्पना को शून्य प्राक्कल्पना कहते हैं । "शून्य Null)" पद

हमारी सम्भावित अस्वीकृति की अभिरूचि की ओर इंगित करता है । सांख्यिकीय व रूप में शून्य प्राक्कल्पना का कथन इस प्रकार है -

जहाँ $\mu,(Mue-one)$ और $\mu,(Mue-two)$ जनसंख्या (Population Means हैं -

यह बतलाती है कि दो जनसंख्याओं के माध्यों में कोई सार्थक अन्तर नहीं हैं। यदि तथ्यों के अनुसार H_0 को अस्वीकृत अथवा इसका निर प्रतिधारण (No Relation) किया जाता है तो वैकल्पिक प्राक्कल्पना (Alternative Hypothesis), H_1 (एच-वन), स्वीकृत है जो कि इस प्रकार है -

$H_1 = \# \mu, \mu_1 \# \mu_2$

यहाँ # का अर्थ है "बराबर नहीं " तथा μ_1, और μ_2 जनसंख्या के माध्य हैं ।

इसका अर्थ यह हुआ कि दो जनसंख्यायें सार्थक रूप में भिन्न हैं ।

प्रक्रिया (Process)

दो माध्यों के मध्य सार्थक अन्तर के परीक्षण में निम्नलिखित पद सम्मिलित हैं

(i) समस्या के अनुसार H_0 औरH_1, स्थापित करें ।

(ii) परीक्षण के लिए विश्वसनीयता स्तर निश्चित करें । परम्परागत रूप से .05 और .0। स्तरों का चयन होता है ।

(iii) इस बात का निर्णय लें कि एक-पार्श्व (One-tailed) अथवा द्वि-पार्श्व (Two-tailed) परीक्षण, विश्वसनीयता (Significance) हेतु चाहिए ।

(iv) यह निश्चित करें कि दत्त को स्वतंत्र (Independent) अथवा सहसम्बन्धित (Correlated) माध्यों के लिए विश्वसनीयता का परीक्षण चाहिए ।

(v) यह देंखे कि लघु (Small) अथवा दीर्घ (Large) प्रतिदर्श (Sample) अन्तर्भवित है ।

(vi) और (v) के लिए उपयुक्त, मध्यान्तर (Mean Difference)- S_{ED}के SE की गणना हेतु निम्नांकित में से एक सूत्र का उपयोग करें ।

(vii) क्रान्तिक अनुपात (Critical Ratio) दो t की गणना $M_1 - M_2 / SE_D$ सूत्र से कीजिए । जहाँ M_1,और M_2 तुलनीय माध्य तथा SE_D VI के अन्तर्गत ज्ञात किए गए SE का मान है ।

(viii) स्वातंत्र कोटि (Degree of Freedom)- df की गणना इस प्रकार करें -

(अ) अनसहसम्बन्धित (uncorrelated) अथवा स्वतंत्र प्रतिदर्शो के लिए

$df = N_1 + N_2 - 2$

(ब) सहसम्बन्धित प्रतिदर्शो के लिए

$df = N - 1$

(ix) आवश्यक df (जैसा VIII में निश्चित किया) और विश्वसनीयता स्तर (II के अनुसार) के लिए सारणी में t का मान देखें ।

(x) निर्णय-नियम (Decision Rule) गणना से प्राप्त "t" के मान की तुलना कीजिए

(अ) यदि गणना से प्राप्त 't' का मान सारणी के प्राप्त 't' के मान से बड़ा है तो को H_0अस्वीकार तथा H_0 को अस्वीकार तथा H_1 को स्वीकार करें ।

(ब) यदि गणना से प्राप्त 't' का मान सारणी से प्राप्त 't' के मान से छोटा है तो H_0 को स्वीकार करें ।

(xi) निम्नांकित विधि द्वारा परिणामों का निर्वचन (Interpretation) करें :

(अ) H_0अस्वीकृत - दो माध्यों में विश्वसनीय अन्तर है ।

(ब) H_0स्वीकृत - माध्यों में विश्वसनीय अन्तर नहीं है । यह अन्तर प्रतिदर्शन घट-बढ (Sampling functination) अथवा संयोग कारकों (Chance Factors) के कारण है।

7.8 विश्वसनीयता के स्तर (Levels of Reliability)

प्रयोगकर्ता अथवा अनुसंधानकर्ता किसी याद्रच्छिक मानक (Arbitrary Standard) को चुनता है । इन्हें विश्वसनीयता स्तर (Levels of significance) कहते हैं । ये प्रसंभाव्यता अनुमाप (Probability Scale) विभेदक बिन्दु (Cut of points) अथवा क्रान्तिक बिन्दु (Critical Points) कहलाते हैं । जो कि सांख्यिकीय मानों -माध्यों या SD'S के मध्य अन्तर को विश्वसनीय अन्तर (Significant Difference) अथवा निरविश्वसनीय (Non Significant) अन्तर में अलग-अलग करता है । सामाजिक विज्ञानों से सम्बन्धित अनुसंधानों में .05 और .01 विश्वसनीयता स्तर सर्वाधिक लोकप्रिय हैं । इन्हीं के आधार पर अनुसंधानकर्ता H_0 को अस्वीकार अथवा स्वीकार करता है । इसलिए इन्हें विश्वसनीयता स्तर (Levels of Confidence) भी कहा जाता है । इनको निम्न प्रकार से स्पष्ट किया जा सकता है :

विश्वसनीयता स्तरों का अर्थ -

स्तर Level	विश्वसनीयता मात्रक Amount	निर्वचन
.05	95%	यदि प्रयोग की आवृत्ति 100 बार हो तो केवल 5 बार प्राप्त माध्य μ # 1.96 SE के बराबर होगा ।
.01	99%	यदि प्रयोग की आवृत्ति 100 बार हो तो केवल एक बार प्राप्त माध्य μ # 2.58 SE के बाहर होगा ।

बड़े प्रतिदर्शो के आधार पर निर्मित 't' सारणियों से 1.96 और 2.58 के मानों को लिया जाता है । 0.। स्तर 0.5 स्तर की अपेक्षा अधिक दृढ़ (Regorous) और उच्चतर है । इसमें H_0 को अस्वीकृत करने के लिए क्रान्तिक अनुपात का उच्चतर मान आवश्यक है । अत: यदि .01 स्तर पर 't' का प्राप्त मान विश्वसनीय है तो निस्संदेह स्वयंसिद्ध रूप से यह .05 स्तर के लिए भी विश्वसनीय होगा । किन्तु अन्यथा सही नहीं होगा ।

7.9 एकल पार्श्व और द्वि-पार्श्व परीक्षणों की सार्थकता (Significance of One-Tailed and Two-Tailed Tests)

शून्य प्राक्कल्पना यह प्रदर्शित करती है कि प्राप्त माध्यों में अन्तर धनात्मक अथवा ऋणात्मक होता है । यह प्राय: वास्तविक अन्तर शून्य के किसी एक ओर होता है । प्रसम्भाव्यताओं (Probabilities) को ज्ञात करने के लिए प्रतिदर्शन आवंटन के दोनों पार्श्वों का उपयोग होता है । जब अन्तर के अस्तित्व की अपेक्षा उसकी दिशा अधिक महत्वपूर्ण होती है तो एकल पार्श्व प्रतिदर्शन आवटन का उपयोग किया जाता है । एकल पार्श्व के अन्तर्गत किसी विशिष्ट सार्थकता के लिए क्रान्तिक अनुपात के मान ज्ञात करने के लिए निम्नांकित प्रक्रम को अपनाया जाता है । इन्हें इस प्रकार पदर्शित किया जा सकता है :

निर्णय (Decision)

	H_0 निरस्त REJECTED	H_0 स्वीकृत ACCEPTED
H_0 सही TRUE	1 प्रकार त्रुटि	कोई त्रुटि नहीं
H_0 गलत FALSE	कोई त्रुटि नहीं	II प्रकार की त्रुटि

7.10 स्वमूल्यांकन (Self Assessment)

(अ) लघूत्तरात्मक

1. प्राक्कल्पना को परिभाषित कीजिए ।
2. H_0 और H_0 में विभेद कीजिए ।
3. H_0 क्यों आवश्यक हैं ?
4. हम विश्वसनीयता के 0.5 और 0.1 स्तरों का उपयोग क्यों करते हैं ।
5. I प्रकार और II प्रकार की त्रुटियों में विभेद कीजिए ।

(ब) दिए गए विकल्पों में से चयन कर रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए

1. प्राक्कल्पना स्थापित की जाती है - (अध्ययन के किसी भी स्तर पर, अध्ययन के अन्त में, अध्ययन के आरम्भ में)
2. शून्य प्राक्कल्पना है - (अनुसंधान प्राक्कल्पना, सांख्यिकीय, दोनों ही)
3. I और II प्रकार की त्रुटियाँ एक दूसरे की पूरक हैं - (हमेशा. कभी कभी, कभी नहीं)
4. .05 और .01 स्तर से - है'(न्यून, उच्चतर, समान)

7.11 सन्दर्भ ग्रन्थ (References)

- AGGARWAL, Y.P., Statistical Methods: Concepts, Application and Computation. New Delhi: Sterling 1992.
- Edwaards,Allen L.,1967: Statistical methods,

- 2d ed.,Holt,Rinehart and Winston,Inc., New York.
- - -,1968 : Experimental Design in Psychological Research.
- 3d ed.,Holt,Renehart and Winston,Inc., New York.
- Ferguson, George A., 1941 : The Reliability of Mental Tests, University of London Press, Ltd. London.
- - -,1965 : Nonparametric Trend Analysis, McGill University Press, Montreal.
- - -, 1976: Statistical Analysis in Psychology and Education, McGraw Hill, New York.
- Fisher,R.A., 1970 : statistical methods for Research workers, 14th ed. Hafner Publishing Company, Inc., New York.
- - -, and F.Yates, 1963 : Statistical Tables for Biological, Agricultural and Medical Research.
- 6th ed.,Hafner Publishing Company, Inc. New York.
- Garrett, Henry E.1973 : Statistics in Psychology and Education, Vakils, Feffer and Simon, Bombay.
- Glass, Gene V., and Julion C.Stanley, 1970 : Statistical Method in Education and Psychology, Prentice - Hall, Inc., Englwood Cliffs, N.J.
- Guilford,J.P., and Benjamin Fruchter, 1973 : Fundamental Statistics in Psychology and Education, 5th ed., McGraw-Hill Book Company New York.
- Hays, W.L., 1973 : Statistics for the Social Sciences, 2d ed., Holt, Renehart and Winston, Inc., New York.
- Siegel, Sidney 1956 : Nonparametic Statistics, McGraw- Hill Book Company, New York.
- Walker, Helen M, and Joseph lev, 1953: Statistical Inference, Holt, Rinehart and Winston, Inc. New York.
- Winer, B.J. 1971 : Statistical Principles in Experimental Design, 2d ed., McGraw- Hill Book Company, New York.

इकाई-8

दत्त - आवश्यकता महत्त्व और प्रकार
(Importance, Needs & Types of Data)

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

8.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

8.1 प्रस्तावना (Introduction)

8.2 आंकडों का महत्व (Importance of Data)

8.3 आंकडों की आवश्यकता (Need of Data)

8.4 अनुसंधान सामग्री के स्रोत (Sources of Research Material)

8.5 दत्त विश्लेषण के प्रकार (Type of Data Analysis)

8.6 स्वमूल्यांकन (Self Assessment)

8.7 सन्दर्भ ग्रन्थ (Reference)

8.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद छात्र इस योग्य हो जायेंगे कि वे समझ सकें कि -

- शैक्षिक शोध में आकड़ों का क्या महत्व तथा आवश्यकता है ।
- ये आँकड़े कितने प्रकार के होते हैं ।

8.1 प्रस्तावना (Introduction)

अनुसंधानकर्ता शोध समस्या को चयन करके उचित रीति विधान के आधार पर व्यवस्थित वैज्ञानिक उपकरणों या सामग्री के माध्यम से तथ्यों का संग्रह कर लेने के उपरान्त इस समस्या से घिर जाता है कि वह प्रदत्तों को किस प्रकार से व्यवस्थित करके उचित निष्कर्ष को प्राप्त कर सके। यह कभी सम्भव नहीं होता कि अनुसंधान के लिए जो सामग्री प्राप्त हो वह मात्रात्मक (Quantitative) ही हो । जब अनुसंधान सामग्री का रूप गुणात्मक हो तो उसके संकेतीकरण (Coding) की आवश्यकता पड़ती है । संकेतीकरण वह पद है जिससे यह आभास होता है कि प्रश्नों के प्रति उत्तरों तथा प्रस्तुतकर्ता द्वारा प्राप्त सूचना को विशिष्ट संवर्गो में इस उद्देश्य के साथ प्रस्तुत करता है, ताकि उनका विश्लेषण प्रस्तुत किया जा सके । इस प्रक्रिया के द्वारा गुणात्मक अनुसंधान सामग्री को मात्रात्मक रूप प्रदान किया जाता है । अगर ऐसा सही प्रकार से सम्भव हो जाय तो गुणात्मक सामग्री का स्वरूप वस्तुनिष्ठ एवं मात्रात्मक हो जाता है तथा उसे उचित ढंग से सारणीबद्ध करके आसानी से विश्लेषण किया जा सकता है ।

8.2 आकड़ों का महत्व (Importance of Data)

दत्तों के संकलन, सम्पादन, वर्गीकरण तथा सारणीकरण के बाद, समाज वैज्ञानिक उनके विश्लेषण का प्रधान उद्देश्य किये गये अवलोकनों का इस ढंग से संक्षिप्त करना है कि अनुसंधान प्रश्नों के उत्तरों को प्रस्तुत कर करें। दूसरी ओर निर्वचन में मुख्यत: इन उत्तरों के विस्तृत अर्थ

के लिए अन्वेषण करना होता है। इस सन्दर्भ में निर्वचन प्राप्य ज्ञान उनसे सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास करता है । सामान्यत: अनुसंधान की सम्पूर्ण प्रक्रिया इन दोनों उद्देश्यों से प्रशासित रहती है ।

सामाजिक दत्तों के विश्लेषण का प्रथम उद्देश्य सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक तथ्यों का इस प्रकार सूक्ष्मान्वेषण करना है जिससे उनकी प्रवृति तथ्यों के पारस्परिक सम्बन्धों तथा उनके नियामक सिद्धान्तों का पता लगाया जा सके और उनके बारे में भविष्यवाणी करना सम्भव हो सके ।

पी. वी. यंग के अनुसार - 'एक सामाजिक विश्लेषण यह मानकर चलता है कि दत्तों के संचयन के पीछे स्वयं तथ्यों तथा आकड़ों से बढ़कर कोई ऐसी वस्तु जो अधिक महत्वपूर्ण तथा विस्मयकारी है । वह धारणा बनाता है । कि सावधानीपूर्ण तथा सुव्यवस्थित तथ्यों तथा आकड़ों को जब दत्तों के सम्पूर्ण भाग से सम्बन्धित किया जाय तो महत्वपूर्ण सामान्य अर्थ प्रकट हो जाता है । जिसके आधार पर वैध सामान्यीकरणों को प्राप्त किया जा सकता है ।

वास्तव में अनुसंधान में किस प्रकार दत्तों को संकलन करना है, उन दत्तों की प्राप्ति हेतु किन प्रविधियों का प्रयोग करना है किन स्रोतों से दत्तों का संकलन करना है किस प्रकार की प्राक्कल्पनाओं तथा परीक्षणों का निर्माण करना है तथा किस प्रकार उनका परीक्षण किया जाय आदि का निर्धारण, वर्गीकरण तथा विश्लेषण की आवश्यकता तथा महत्व पर जोर देता है । जब संकलित दत्तों का सम्पूर्ण भाग एक ढेर के रूप में एकत्रित हो जाता है । तो उसका व्यवस्थित एवं सार्थक विश्लेषण करना अति आवश्यक हो जाता है । क्योंकि विश्लेषण के बिना तो वह उसी प्रकार है जैसे बिना आग के तपाया हुआ सोना । अर्थात् यह कहा जा सकता है कि व्यवस्थित विशलेषण का महत्वपूर्ण कार्य एक बौद्धिक भवन का निर्माण करना है जिसमें समुचित रूप से चयन तथा पृथक किये गये तथ्यों तथा आकड़ों को उनके उपयुक्त विन्यासों तथा आँकड़ो के सुसंगत सम्बन्धों में निर्धारित किया जाता है, ताकि उनसे सामान्य निष्कर्ष प्राप्त किया जा सके। जो कि परिपक्व विज्ञान का लक्ष्य है । अमेरिकन मार्केटिंग सोसाइटी के अध्ययन उपलब्धियों के अनुसंधानकर्ता द्वारा निर्धारित नियमों को मानने की अपेक्षा उसके सामान्य ज्ञान अनुभव पिछला ज्ञान तथा ईमानदारी पर अधिक निर्भर करती है । सामाजिक विश्लेषण के लिए आवश्यक है कि विश्लेषक को दत्त के बारे मे पूर्ण जानकारी हो । भेदनशील तथा सूक्ष्म दृष्टिपूर्ण ज्ञान के अभाव में विश्लेषण सम्भवत: उद्देश्यहीन बन जाता है । अत: विश्लेषणात्म प्रक्रिया की आवश्यक माँग यह है कि एक आलोचनात्मक तथा अनुशासित कल्पना शक्ति का विकास किया जाय जो कि वास्तविक तथ्यों के आधार पर एक वैज्ञानिक विचारधारा को विकसित कर सके, जो सम्पूर्ण तथ्यों को समझ सके तथा उसका आलोचनात्मक परीक्षण कर सके ।

इस प्रकार उपरोक्त विवचन के आधार पर यह स्पष्ट हो जाता है कि सांख्यिकीय अनुसंधान में दत्त विश्लेषण अत्यधिक महत्व बल्कि यह भी कहा जा सकता है कि जिस प्रकार से आकड़ों के बिना सांख्यकी की कल्पना शून्य है उसी प्रकार से विश्लेषण के बिना अनुसंधान कल्पना से परे है

8.3 आँकड़ों की आवश्यकता (Need of Data)

दत्तों का विश्लेषण अनुसंधान विज्ञान का वह पक्ष है जो वैश्लेषिक अध्ययन करके संकलित दत्तों से परिणाम निकालने से सम्बद्ध है । विश्लेषण अनुसंधान विज्ञान का अत्यंत उपयोगी तथा महत्वपूर्ण भाग है । अत: यह बिल्कुल सत्य है कि संकलित सूचनाओं की उपयोगिता उसके विश्लेषण पर ही निर्भर है ।

हार्पर के अनुसार - सदैव इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि निष्कर्ष उनके मौलिक आकड़ों का. जिन पर वह आधारित हैं से बेहतर नहीं हो सकता । यदि मौलिक आकड़ों का संकलन उचित रूप से नहीं किया जाता है तो उत्तरवर्ती विश्लेषण हर प्रकार से समय का अपव्यय होगा तथा सम्भवत: बर्बादीपूर्ण होगा क्योंकि वह गुमराह कर सकता है, जिसके भयंकर परिणाम हो सकते है तथापि जो दत्तों के संकलन के लिए सच है वही विश्लेषण के लिए भी सच है । भले ही दत्तों का संकलन निर्दोष ढंग से किया गया हो, दोषपूर्ण विश्लेषण अशुद्ध निष्कर्षो की ओर अग्रसर करेगा । विश्लेषणकर्ता से यह भी अपेक्षा की जाती है कि वह दत्तों का विश्लेषण करते समय अनुसंधान की समस्या का वैषयिक रूप से तथ्यानुरूप अवलोकन करेगा ।

डब्लू. जे. रिचमैन के अनुसार - 'विश्लेषण विश्लेषणकर्ता पर उतना ही निर्भर करता है जितना विश्लेषण दत्तों पर, तथा उसे सदैव अवास्तविकता, पूर्वाग्रह तथा तर्क असंगतता के विरूद्ध अवश्य जागरूक रहना चाहिए।'

सिम्पसन तथा काफका के अनुसार - विश्लेषण के चार सिद्धांत होते हैं :-

(i) सत्य विश्लेषण के लिए यह आवश्यक है कि विश्लेषणकर्ता यह देखने का इच्छुक हो कि दत्तों में क्या हैं ?

(ii) दत्तों के सत्य विश्लेषण के लिए यह आवश्यक है कि विश्लेषणकर्ता यह जानने का प्रयास करें कि दत्तों की पृष्ठभूमि में क्या हैं ?

(iii) दत्तों के विश्लेषण के लिए तर्कपूर्ण चिन्तन का नियम अनिवार्य है ।

(iv) ठोस विश्लेषण के लिए स्पष्ट तथा निश्चित आकड़ों उसका एक अंग होते हैं ।

विश्लेषण करने से पूर्व अनुसंधानकर्ता को निम्नलिखित बातों पर विशेष रूप से विचार कर लेना चाहिए ।

- संकलित दत्त अनुसंधान की समस्या के अध्ययन के लिए उपयुक्त तथा साथ ही विश्वसनीय होने चाहिए ।
- संकलित दत्त विशेष समस्या के लिए तथा उसके परिणाम निकालने के लिए होने चाहिए। -संकलित दत्त समायोजित होने चाहिए ।
- दत्तों का विश्लेषण उचित सांख्यिकीय विधियों द्वारा किया जाना चाहिए ।

अनुसंधानकर्ता को उपर्युक्त बातों से अपने को सन्तुष्ट कर लेने के बाद दत्तों के विश्लेषण की ओर अग्रसर होना चाहिए । अनुसंधान के इस चरण में फिर उसे सावधान एवं

सचेत होना पड़ता है क्योंकि दोष या विभ्रम दत्तों की विश्लेषण प्रक्रिया में भी सम्पन्न हो सकते हैं, जिसके निम्नलिखित कारण हो सकते है :-

1 संकलित दत्तों का त्रुटिपूर्ण विश्लेषण ।
2 मिथ्या सामान्यीकरण ।
3 अध्ययन न किये हुए परिव्ययों की उपेक्षा ।
4 निर्वाचित परिव्ययों की उपेक्षा
5 विश्लेषणात्मक मूल्यांकन की कठिनाइयाँ ।
6 साँख्यिकीय मापन के लिए गलत विश्लेषण ।

अत: यह कहा जा सकता है कि अनुसंधानककर्ता का कार्य दत्तों के संकलन तथा प्रक्रियाकरण से ही समाप्त नहीं हो जाता है । बल्कि उसे दत्त सामग्री से परिणाम निकालने के लिए उनका विश्लेषण करना होता है । विश्लेषण करने में पर्याप्त सावधानी की आवश्यकता होती है । अन्यथा भ्रामक निष्कर्ष प्राप्त हो सकते हे ।

8.4 अनुसंधान सामग्री के स्त्रोत (Sources of Research Material)

अनुसंधान के लिए अनेक विधियों का प्रयोग किया जाता है । सभी विधियों में आकड़ों का संकलन उस विधि की प्रकृति के अनुसार अलग-अलग ढंग से किया जाता है । यदि समग्र रूप से विचार किया जाए तो अनुसंधान की सामग्री दो प्रकार की होती है-

- वह सामग्री जिसे अनुसंधानकर्ता स्वयं अपने प्रयोग अथवा खोज द्वारा प्राप्त करता है । इसे प्राथमिक सामग्री (Primary data) कहते हैं । इस सामग्री को पहली बार प्राप्त किया गया है ।
- वह सामग्री जिसे अनुसंधानकर्ता दूसरों के प्रयोग अथवा अनुसंधान से प्राप्त कर लेता है । यह सामग्री स्वयं अनुसंधानकर्ता द्वारा नहीं प्राप्त की गयी । अपितु अन्य श्रोतों से प्राप्त हुई हैं । इस प्रकार के आकड़ों का एक बार साँख्यिकीय विश्लेषण हो चुका है और उससे कुछ निष्कर्ष निकाले जा चुके हैं । जब अन्य अनुसंधानकर्ता इसी आकड़े को अपने अनुसंधान के लिए प्रयोग में लाता है तो वह उसकी मौलिक सामग्री नहीं होती । प्राथमिक सामग्री के मूल स्त्रोत निम्नलिखित हैं-

8.4.1 प्राथमिक सामग्री के स्त्रोत (Source of Primary Material)-

8.4.1.1 व्यक्ति के स्वयं के प्रयोग अथवा सर्वेक्षण (Experiments and survey by researcher) - इस प्रकार के आकड़ों को प्राप्त करने के लिए अनुसंधानकर्ता स्वयं प्रयोग का आयोजन करता हैं अथवा सर्वेक्षण करके आकड़ों को प्राप्त करता है । इसके लिए उसे निरीक्षण तथा प्रयोग में पर्याप्त सावधानी रखनी पड़ती है ।

8.4.1.2 अप्रत्यक्ष अथवा प्रतिनिध्यात्मक सर्वेक्षण (Indirect and Representative Survey) - जब सम्पूर्ण जनता के प्रत्येक व्यक्ति से सम्पर्क स्थापित करना कठिन होता है तो उस जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करने वाले कुछ व्यक्तियों से सम्पर्क

स्थापित कर आँकड़े प्राप्त कर लेते हैं । इन व्यक्तियों के चयन में इस बात की सावधानी रखनी होती है कि वे लोग उस समस्या के विभिन्न पक्षों से परिचित हों ।

8.4.1.3 प्रश्नावली तथा परीक्षण-अनुसूची (Questionnaire and Check list) - प्रश्नावली तथा परीक्षण-अनुसूची का वर्णन "अनुसंधान के उपकरण' अध्याय में विस्तारपूर्वक किया जा चुका है । इनके द्वारा भी अनुसंधानकर्ता प्राथमिक आकड़ों को प्राप्त करने में सफल होता है । इनके बनाने मे सावधानी रखना आवश्यक है ।

8.4.1.4 स्थानीय प्रतिवेदनों द्वारा प्राप्त सूचनायें (Information from local Reports)- प्राथमिक सामग्री की प्राप्ति के हेतु स्थानीय प्रतिवेदन भी महत्वपूर्ण होते है । इसके अन्तर्गत वे सूचनायें आती हैं जो स्थानीय व्यक्ति अथवा संवाददाताओं द्वारा प्रदान की जाती हैं । इनसे किसी विशेष स्थिति की जानकारी में सहायता मिलती हैं । इनमें किसी विशेष स्थिति की जानकारी में सहायता मिलती है । इनमें सबसे बड़ा दोष यह होता है कि इनका संकलन व्यक्ति की इच्छानुसार होता है, अत: ये व्यक्तिगत पक्षपात में प्रभावित रहती है ।

8.4.2 द्वितीयक सामग्री के स्त्रोत Sources of Secondary Sources)-

8.4.2.1 अभिलेख (Documents) - अप्रत्यक्ष एवं लिखित सामग्री के रूप में अभिलेखों का महत्वपूर्ण स्थान है । इसके अन्तर्गत व्यक्तिगत अथवा सामूहिक विकास सम्बन्धी जानकारी विद्यमान रहती है । दूसरे शब्दों में, एक अभिलेख व्यक्तिगत अथवा सामूहिक विकास की प्रकृति को स्पष्ट करता है। स्थितियों की जटिलता के ऊपर केवल बन्धन है कि इसका लेखक स्थिति को भली प्रकार जानकर उनपर विचार एवं प्रयोग करें ।

अभिलेखों के अन्तर्गत न्यायालयों के अभिलेख, विभिन्न आयोगों की कार्यवाही, सामाचार पत्रों में प्रकाशित लेख, आदि होते है । अभिलेखों की सामग्री प्रकाशित व अप्रकाशित दोनों प्रकार की हो सकती है । प्रकाशित सामग्री में केन्द्रीय तथा प्रान्तीय सरकारों के प्रकाशन, आयोगों एवं समितियों के प्रतिवेदन, अनुसन्धान - संस्थाओं के प्रकाशन, आयोगों एवं समितियों के प्रतिवेदन, अनुसन्धान-संस्थाओं के प्रकाशन, व्यक्तिगत अनुसन्धानकर्ताओं के प्रकाशन, अनुसन्धान लेख आदि उल्लेखनीय हैं । अप्रकाशित सामग्री के अन्तर्गत सरकारी अथवा गैर सरकारी संस्थागत अथवा व्यक्तिगत रूप में किये गये कार्य और उनका संकलन प्रमुख हैं ।

8.4.2.2 अभिलेखों के प्रकार (Types of Documents)- अभिलेखों के कई प्रकार हो सकते हैं, यथा - (क) व्यक्तिगत पत्र (ख) जीवन वृत्त (ग़) दैनन्दिनी, आदि । अगर कोई शोध प्रतिवेदन अपनी मूल अवस्था हैं तो वह प्राथमिक स्त्रोत कहलायेगा । लेकिन यदि इस शोध प्रतिवेदन के निष्कर्ष किसी पत्रिका अथवा एनसाइक्लोपीडिया में से दिये गये तो यह द्वितीय स्त्रोत कहलायेगा।

(1) **व्यक्तिगत पत्र (Personal Letter)-** भावपूर्ण अभिलेखो में व्यक्तिगत पत्रों का प्रथम स्थान है । इनके द्वारा व्यक्ति की आन्तरिक भावनाओं को सरलता से ज्ञात किया जा सकता है।

(2) **जीवनवृत (Biography)** - इनका प्रयोग ऐतिहासिक अनुसंधानकर्ताओं ज्ञात किया जाता है ।

(3) **दैनन्दिनी (Diaries)-** इनके द्वारा व्यक्ति की उन सभी गुप्त सूचनाओं को प्राप्त करते हैं जिन्हें वह स्वयं किसी के समझ प्रकट नहीं करता, किन्तु शोध कार्य की दृष्टि से वे अत्यंत महत्वपूर्ण हैं ।

8.5 दत्त विश्लेषण के प्रकार (Types of Data Analysis)

सामान्यता दत्त विश्लेषण का वर्गीकरण निम्नलिखित प्रधान आधारों पर किया जा सकता है-

8.5.1 दत्तों के प्रकृति के आधार पर - (On the basis of nature of Data)

प्रकृति के आधार पर विश्लेषण के दो प्रकार हो सकते हैं-

क. गुणात्मक दत्तों का विश्लेषण ।

ख. मात्रात्मक व संख्यात्मक दत्तों का विश्लेषण ।

8.5.2 समष्टी के ज्ञान पर आधारित - (On the basis of Knowledge of Universe)

इसके अन्तर्गत भी जानकारी के आधार पर भी दत्त विश्लेषण दो प्रकार के होते है-

क. समष्टि विश्लेषण ।

ख. निदर्शन विश्लेषण ।

8.5.3 अनुसंधान के उद्देश्य के आधार पर - (On the basis of the object of the Research)

इस आधार पर दत्त विश्लेषण निम्न प्रकार का हो सकता है ।

क. अन्वेषणात्मक तथा निरूपणात्मक अनुसंधान विश्लेषण ।

ख. वर्णनात्मक अनुसंधान विश्लेषण ।

ग. निदानात्मक अनुसंधान विश्लेषण ।

घ. प्रयोगात्मक अनुसंधान विश्लेषण ।

ङ. संरचनात्मक - प्रकार्यात्मक विश्लेषण ।

8.5.4 `विश्लेषण के ढंगो या स्तरों के आधार पर - (On the basis of levels of Analysis of data)

इस आधार पर दत्तों का विश्लेषण दो प्रकार का होता है-

क. दत्तों का सांख्यिकीय विश्लेषण ।

ख. दत्तों के कारणात्मक सम्बन्धों का विश्लेषण ।

8.5.5 अनुसंधान पद्धतियों के आधार पर - (On the basis of the method of Research)

यह भी दो प्रकार का होता है ।

क. निगमनात्मक विश्लेषण (Deductive Analysis))

निगमनात्मक विश्लेषण का तात्पर्य है सामान्य से विशिष्ट निष्कर्ष निकालना निगमन पद्वति सामान्य से विशिष्ट की ओर तथा सार्वभौमिक से व्यक्तिगत की ओर तर्क करने की प्रक्रिया है ।

ख. आगमनात्मक विश्लेषण (Inductive Analysis) -

सामान्य कथन को सिद्ध करने के लिये तथ्यों का प्रस्तुतीकरण विशेष उदाहरणों से सामान्य नियम निकालना ।

8.6 स्वमूल्यांकन (Self Assessment)

1. अनुसंधान सामग्री के विभिन्न स्त्रोत क्या हैं?
2. आकड़े कितने प्रकार के होते हैं? इनकी क्या आवश्यकता है?
3. आंकड़ो के विश्लेषण एवं व्याख्या से क्या समझते हैं? विश्लेषण से विभिन्न प्रक्रियायें क्या हैं?

8.6 सन्दर्भ ग्रन्थ (References)

1. गोविन्द तिवारी पुस्तक मन्दिर आगरा, 1989 - 'शैक्षिक एवं मनोवैज्ञानिक अनुसंधान के मूलाधार,' विनोद
2. पारसनाथराम एवं आगरा, 1988 - 'अनुसंधान पश्चिम, लक्ष्मीनारायण चाँद भटनागर अग्रवाल
3. एच. के. कपिल 1982 - 'साँख्यिकी के मूल तत्व', विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा,
4. सुखिया, महरोत्रा तथा महरोत्रा, आर. एन. - 'शैक्षिक अनुसंधान के मूल तत्व विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा 1979
5. Best J. W. (Pvt.) Ltd., New Delhi 1987 - "Research in Education", Prancice Hall of Delhi.

इकाई-9

उपकरण एवं प्रविधियाँ

(Tools and Techniques)

इकाई की संरचना

9.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives))

9.। प्रस्तावना (Introduction)

9.2 विशेषतायें (Characteristics)

9.3 प्रश्नावली (Questionnaire)

9.4 अनुसूची (Schedule)

9.5 निर्धारण मापनी (Rating Scale)

9.6 वलोकन (Observation)

9.7 साक्षात्कार (Interview)

9.8 अभिलेखों के प्रकार एवं उपयोग (Types of Use)

9.0 स्वमूल्यांकन (Self Assessment)

9.10 सन्दर्भ ग्रन्थ (REferences)

9.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aim and Objectives8)

इस इकाई के अध्ययन के बाद छात्र इस योग्य हो जायेंगे कि वे समझ सकें कि -

- उपकरणों एवं प्रविधियों की क्या विशेषतायें है
- प्रमुख प्रकार के उपकरण कौन से हैं । तथा इनके क्या उपयोग है । तथा इनके मुख्य दोष क्या है?

9.1 प्रस्तावना (Introduction))

अनुसंधान समस्या में सम्बन्धित परिकल्पना की रचना के पश्चात उसके परीक्षण के लिए आवश्यक तथा तर्क संग्रह आंकड़ो के संकलन की आवश्यकता होती है । व्यावहारिक विज्ञानों में विशेषत: समाजशास्त्र तथा शिक्षाशास्त्र के क्षेत्रों में एक समस्या के अध्ययन में आंकड़ो का स्वरूप प्राय: एक सा ही रहता । यह दो प्रकार का होता है । प्रथम प्रकार के अनुसंधानकर्ता के द्वारा जो आकड़े स्वयं अध्ययन से सम्बन्धित परिकल्पना के परीक्षण के लिए संकलित किये जाते हैं इस प्रकार के आकड़ों का स्वरूप स्वरूप प्रत्यक्ष तथा मौलिक होता है ।तथा इनको प्राथमिक आंकड़े कहते हैं। वैज्ञानिक अध्ययन का आधार प्राथमिक आंकड़ो ही होते हैं । इनका संचालन स्वयं अनुसंधानकर्ता द्वारा वैज्ञानिक प्रक्रियाओं के माध्यम से वैज्ञानिक उपकरणों (tools) के उपयोग से किया जाता हैं ।

दूसरे प्रकार के आकड़ों का अध्ययनकर्ता स्वयं संचालन नहीं करता बल्कि उनका अपनी अनुसंधान समस्या के विश्लेषण तथा विवेचन में प्रयोग करता हैं । वास्तव में ऐसे आंकड़े किसी

अन्य व्यक्ति, एजेन्सी तथा संस्था द्वारा प्राय: अपने निजी उपयोग के लिए संकलित किये जाते हैं । इससे सम्बन्धित व्यक्ति संस्था तथा एजेन्सी का स्वरूप सरकारी, अर्द्धसरकारी तथा निजी कुछ भी हो सकता है । इस प्रकार के आंकड़े विद्वानों व वैज्ञानिकों द्वारा प्रस्तुत किये गये संस्मरण तथा अप्रकाशित प्रतिवेदनों तथा प्रकाशित पत्रिकाओं तथा पुस्तकों में उपलब्ध रहते हैं । कभी-कभी ऐसे अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों (जैसे - (UNESCO) द्वारा भी समय - समय पर प्रस्तुत किये जाते हैं ।

9.2 विशेषताएं (Characteristics)

किसी भी सामाजिक अनुसंधान का उद्देश्य एक घटना विशेष के सम्बंध में वैज्ञानिक निष्कर्ष निकालना होता है, वैज्ञानिक निष्कर्ष कल्पनाओं पर आधारित नहीं होता । वरन् वास्तविक तथ्यों पर आधारित यथार्थ व निश्चित निष्कर्ष होता है । वास्तविक तथ्यों को काल्पनिक ढंग से एकत्रित नहीं किया जा सकता है । इसके लिए तो कुछ प्रमाण सिद्ध तरीकों का होना आवश्यक है । सामाजिक अनुसंधान के लिए आवश्यक वास्तविक तथ्यों को एकत्रित करने के लिए काम में लिये गये निश्चित तथा प्रमाण सिद्ध तरीकों को ही प्रविधि कहते हैं । तथा जिस प्रकार एक मैकेनिक को एक इंजन या मशीन को ठीक करने के लिए अपने यंत्र बक्स में से एक उपयुक्त यंत्र की खोज करनी होती है, ठीक वैसे ही वैज्ञानिक अनुसंधान के अन्तर्गत एक समस्या के अध्ययन के लिए एक अनुसंधानकर्ता को ऐसे वैज्ञानिक उपकरण अथवा वैज्ञानिक प्रक्रिया का चयन करना पड़ता है। जिसके आधार पर मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके । अर्थात् जिन माध्यमों से अनुसंधानकर्ता अपने निश्चित लक्ष्य की प्राप्ति वैज्ञानिक निष्कर्षो के आधार पर करता है - टूल्स (Tools) कहलाते हैं ।

प्रो. मोजर ने लिखा है,- 'प्रविधियाँ तथा उपकरण एक सामाजिक वैज्ञानिक के लिए वे ग्रन्थ व सुव्यवस्थित तरीके हैं जिन्हे वह अपने अध्ययन विषयों से सम्बन्धित विश्वसनीय तथ्यों को प्राप्त करने के लिए उपयोग में लाता है ।

इसको और अधिक स्पष्ट रूप से समझने के लिए निम्नलिखित विशेषताओं का ध्यान में रखना लाभदायक होगा ।

1 प्रविधि अध्ययन विषय स्पष्ट रूप से समझने के लिए निम्नलिखित विशेषताओं को ध्यान में रखना लाभदायक होगा ।

2 प्रविधि व उपकरण मनमाने ढंग से अपनाया गया तरीका नहीं बल्कि एक सुव्यवस्थित व परीक्षित तरीका होता है ।

3 प्रविधि व टूल्स का सम्बन्ध संपूर्ण अनुसंधान से नहीं होता इसका सम्बन्ध तो वहीं तक सीमित होता हैं, जहां तक कि निर्भर योग्य तथ्यों, सूचनाओं आदि को एकत्रित किया जाता है ।

4 प्रविधि व उपकरण सभी विज्ञानों के लिए समान नहीं होता । प्रत्येक विज्ञान अपनी-अपनी प्रकृति के अनुसार अलग-अलग उपकरण एवं प्रविधियों को अपनाता है ।

5 प्रविधि कोई स्थिर तरीका नहीं है । समय-समय पर किसी भी मौजूदा प्रविधि में आवश्यक परिवर्तन व परिमार्जन हो सकता है, अथवा नई प्रविधियों को जन्म दिया जा सकता है।

9.3 प्रश्नावली (Questionnaire)

अनुसंधानकर्ता के लिए आवश्यक है कि उसे उपकरणों विधियों एवं यंत्रों का व्यापक ज्ञान हो । उसे यह भी ज्ञात होना चाहिए कि इन उपकरणों से किस प्रकार के आँकड़े प्राप्त होंगे उनकी क्या विशेषताएं तथा सीमायें हैं? किन आवश्यकताओं पर इनका उपयोग आधारित है तथा उनकी विश्वसनीयता, वैधता, एवं वस्तुनिष्ठता क्या हैं? इसके साथ ही इसमें उपकरणों के बनाने, प्रयोग करने तथा उनसे प्राप्त आँकड़े का विश्लेषण करने का कौशल भी होना चाहिए ।

उपरोक्त विवेचन के क्रम में प्रश्नावली प्रश्नों की यह क्रमबद्ध तालिका है जो विषयवस्तु के सम्बन्ध में सूचनायें अर्जित करने में योग देती है ।

लुण्ड वर्ग के अनुसार - 'मूल रूप में प्रश्नावली उत्तेजनाओं का समूह है । जिनके प्रतिशिक्षित व्यक्तियों को दिखाया जाता है । जिससे इन उत्तेजनाओं के प्रति उनके मौखिक व्यवहार का निरीक्षण किया ता सके ।

बौर्गाडस के अनुसार - प्रश्नावली विभिन्न व्यक्तियो को उत्तर देने हेतु दी गयी प्रश्नों की एक तालिका है । इससे निश्चित प्रमापीकृत परिणाम प्राप्त होते हैं । जिनका सारणीयन किया जा सकता है तथा साँख्यकीय उपयोग भी सम्भव होता है । '

9.3.1 प्रश्नावली के गुण (Merits of Questionnaire)

1 प्रश्नावली के द्वारा विस्तृत क्षेत्र से सूचना प्राप्त कर सकते हैं ।
2 इसके द्वारा भौगोलिक क्षेत्र के अन्य उन व्यक्तियों से भी सूचना ले सकते हैं जिसे सम्पर्क नहीं हो सकता ।
3 गोपनीयता की रक्षा करते हुए वे सूचनायें भी प्राप्त कर सकते हैं जो अन्य माध्यम से नहीं प्राप्त हो सकता ।
4 पर्याप्त समय मिलने से लोग सोच-विचार कर उत्तर देते हैं ।
5 साक्षात्कार के दोषों से बचाव होता है ।
6 एक अच्छी प्रश्नावली व्यापक क्षेत्र को समेटते हुए भी संक्षिप्त होती है ।
7 इसकी छपाई आदि आकर्षक होती है ।
8 इसमें पूर्ण स्पष्ट निर्देश दिये हुए होते हैं ।
9 महत्वपूर्ण प्रश्न स्पष्ट रूप से विश्लेषित होते हैं तथा एक प्रश्न में एक ही विचार निहित होता है ।
10 समुचित व्यवस्थापन एवं विश्लेषण की सुविधा के लिए प्रश्न श्रेणियों में विभक्त होते है।
11 अच्छी प्रश्नावली के प्रश्न वस्तुनिष्ट होते हैं ।
12 प्रश्नों का क्रम सरल से कठिन तथा सामान्य से विशिष्ट की ओर होता है ।
13 प्रश्न ऐसे होते हैं जिससे उत्तरदाता क्षुब्ध न हो उठे ।
14 अच्छी प्रश्नावली विश्वसनीय एवं वैध होती है ।

9.8.2 प्रश्नावली के दोष Demerits of Questionnaire)-

1 बहु धा प्रश्नावली काफी विस्तृत होती है ।
2 प्रश्नावली की शब्दावली भ्रमपूर्ण होती है ।
3 प्रश्न अधिकांश में वस्तुनिष्ठ नहीं होते है ।
4 प्रश्नो का क्रम संगत नही होता है ।
5 प्रश्नों की छपाई ठीक नही होती ।
6 प्रश्नों में व्यापकता का अभाव होता है ।
7 प्रश्नों का क्रम ऐसा होता है कि ऑकलन एवं मूल्यांकन कठिन होता है ।

9.3.3 प्रश्नावली के उपयोग में सुविधायें (Utility of Questionnaire)-

1 इससे संसार के कोने -कोने की सूचना घर बैठे ले सकते है ।
2 एक साथ हजारों लोगों को दे सकते हैं ।
3 इसके प्रयोग से समय श्रम तथा धन की बचत होती है ।
4 तुलनात्मक दृष्टि से सूचनायें अधिक वस्तुनिष्ठ एवं वैद्य होती है ।
5 इसका बनाना, प्रशासन करना एवं अंक देना सरल होता है ।

9.3.4 प्रश्नावली के उपयोग में (Drawbacks of Questionnaire)

1 प्रश्नों में यदि कोई भ्रम' है तो इसका निवारण कठिन होता है ।
2 प्रश्नकर्ता की अपेक्षानुसार उत्तर न मिलकर कुछ और उत्तर मिल सकता है ।
3 कभी-कभी उत्तर देना और उत्तरदाता की सामर्थ्य के बाहर होता है ।
4 कुछ उत्तरदाता ठीक उत्तर देना ही नहीं चाहते ।
5 कुछ प्रश्न छूट जाते हैं जिनकी पूर्ति असम्भव होती हैं ।
6 बच्चों पर तथा निरक्षरों पर इसका प्रयोग नहीं कर सकते ।
7 संवेगात्मक बातों को जानना कठिन होता है ।
8 उत्तर स्वाभाविक नहीं होते ।
9 अनेक बार प्रार्थना करने पर भी कुछ लोग लौटाते नहीं है ।

9.3.5 विधियाँ (Methods)

प्रश्नावली के प्रयोग की सामान्यता दो विधियाँ हैं-

1 **प्रत्यक्ष विधि (Direct Method) -** जब सम्पूर्ण जनसंख्या एक ही स्थान पर हो तो अनुसंधानकर्ता उनसे सम्पर्क स्थापित करके उन्हें प्रश्नावली देता है उसके महत्व को स्पष्ट करता है तथा यदि कोई शंका होती है तो उसे दूर कर देता है ।

2 **डाक द्वारा भेजकर (Through Post)-** जब जनसंख्या एक स्थान पर उपलब्ध नहीं होती है तो डाक द्वारा भेजकर उत्तर प्राप्त करने का प्रयास करते हैं । लेकिन अधिकांश अनुसंधानकर्ता यह शिकायत करते हैं कि लोग सहयोग नहीं करते या उत्तर लापरवाही से देते हैं । या उत्तर देते ही नहीं है ।

9.3.6 प्रश्नावली के प्रकार (Type of Questionnaire)- प्रश्नावली अनेक प्रकार की होती है । इनको हम निम्नलिखित शीर्षकों में विभक्त कर सकते हैं ।

प्रतिबन्धित प्रश्नावली (Closed Questionnaire)- इस प्रकार की प्रश्नावली में प्रश्नों की व्यवस्था इस प्रकार की होती है कि उत्तरदाता नियन्त्रित रूप में ही उत्तर दे सकता है । उत्तरदाता हो ही या नहीं में से एक को काटना होता है । किसी उत्तर पर निशान लगाना होता है या एक को काटना होता है ।

खुली प्रश्नावली (Open Questionnaire)- खुली प्रश्नावली में उत्तरदाता अपने शब्दों में अपने विचारानुकूल उत्तर देने के लिए स्वतंत्र होता है । इसमें उत्तरदाता को अपनी प्रेरणा तथा प्रवृति को व्यक्त करने का अवसर मिलता है तथा उन परिस्थितियों को भी सूचित करना होता है जिन पर उत्तर आधारित होता है ।

चित्ररूपी प्रश्नावली (Picture Questionnaire)- कुछ प्रश्नावलियों में प्रश्नों के स्थान पर चित्र दिये होते हैं जिनसे उत्तर दाता को उत्तर चुनने होते हैं । उन्हें मौखिक निर्देश भी दिये जा सकते हैं। इस प्रकार की प्रश्नावली विशेष रूप से बच्चों तथा कम पढ़े लिखे लोगों के लिए उपयोगी रहती हैं । चित्र ध्यान को शीघ्र आकर्षित कर लेते हैं तथा उत्तर देने के लिए प्रेरित करते हैं ।

मिश्रित प्रश्नावली (Mixed Questionnaire)- इसमें पहले दोनों प्रकार के प्रश्न रखे जाते है अत: दोनों के दोषों से बचाव हो जाता हैं ।

9.3.7 प्रश्नावली का निर्माण (Construction of Questionnaire) -

प्रश्नावली के निर्माण में निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना आवश्यक है -

क. उद्देश्य एवं स्वरूप निर्धारण -

1. प्रश्नावली बनाने से पूर्व उद्देश्य को स्पष्ट रूप से लिखकर उसके विभिन्न अंशों की विस्तृत सूची तैयार करनी चाहिए । यह विश्लेषणात्मक सूची जितनी विचारपूर्ण होगी एवं विस्तृत होगी प्रश्नावली उतनी ही अच्छी होगी ।
2. प्रश्नावली का प्रकार निश्चित कर लें कि वह किस प्रकार की होगी ।

ख. प्रश्नावली लेखन

1 प्रश्नावली अधिक लम्बी न हो ।
2 प्रश्नावली में केवल आवश्यक प्रश्न रखें जायें
3 प्रश्नावली के प्रत्येक भाग के लिए स्पष्ट निर्देश हों ।
4 प्रश्न सरल से कठिन तथा सामान्य से विशिष्ट की ओर हों ।
5 प्रतिबन्धित तथा खुली दोनों प्रकार की प्रश्नावलियों का मिश्रण हों ।
6 भ्रमपूर्ण एवं कठिन भाषा का प्रयोग न किया जाये ।
7 दुहरे प्रश्न न किये जायें ।
8 नकारात्मक प्रश्नों से बचना चाहिए ।
9 प्रश्न अपरिचित धारणा पर आधारित न हों ।
10 यदि किसी शब्द विशेष बल देना हो तो उसे रेखांकित कर दें ।

3. सहयोगियों तथा विशेषज्ञों से परामर्श - प्रश्नों का गठन करने के बाद सहभोगियों तथा विशेषज्ञों से उनके बारे मे राय ले लेनी चाहिए । इस चर्चा से प्रश्नों में सुधार, कमी अथवा विस्तार किया जा सकता है ।
4. प्राथमिक परीक्षण - प्रश्नावली तैयार कर लेने के बाद एक छोटा न्यादर्श लेकर उस पर प्रयोग करके यह निश्चित कर लेना चाहिए कि प्रश्न कहीं तक समझ में आते हैं तथा उत्तर कैसे प्राप्त होते हैं, एवं क्या कठिनाइयाँ आती है ।
5. प्रश्नावली की छपाई - निर्देश तथा मुख्य पृष्ठ आदि का निश्चय कर लेने के बाद प्रश्नावली को आकर्षक एवं शुद्ध छपा लेना चाहिए ।

9.4 अनुसूची (Schedule))

अनुसंधान कार्य में सूचना एकत्र करने के परीक्षण साधनों की अपेक्षा अप्रत्यक्ष साधनों का महत्व बढ़ता जा रहा है । समस्या के प्रत्यक्ष अवलोकन द्वारा संचित सूचनायें अत्यधिक उपयोगी एवं विश्वसनीय होती हैं, इस दृष्टि से अनुसूची विशेष महत्वपूर्ण है ।

अनुसूची का प्रयोग करने वाला अनुसन्धानकर्ता अध्ययन क्षेत्र में स्वयं उपस्थित होकर प्रश्न करता है । तथा अनुसूची भरता जाता है । प्रश्नावली भी एक प्रकार की अनुसूची ही है । परन्तु दोनों में अन्तर उनके प्रयोग के में निहित है । जब सूचनायें दूर-दूर से व्यापक क्षेत्र से लेनी होती हैं तो प्रश्नावली का प्रयोग करते हैं । उन्हें डाक से भी भेज सकते हैं और जब सूचनायें पास से लेनी होतीं हैं तो क्षेत्र में स्वयं जाकर सूचना प्राप्त करते हैं । और अनुसूची का प्रयोग करते हैं । प्रश्नावली में अनेक प्रश्न छूट जाते हैं परन्तु अनुसूची में इसकी सम्भावना नहीं रहती है । व्यक्तिगत प्रयोग के कारण अनुसूची प्रश्नावली से अच्छा उपकरण है ।

गुड तथा हैट के अनुसार- 'अनुसूची प्रश्नों के एक समूह के लिए प्रयुक्त नाम है जा साक्षात्कार करने वाले के द्वारा दूसरे व्यक्ति से आमने - सामने की स्थिति में पूछी और भरी जाती हैं ।

बोगार्डस के अनुसार - 'अनुसूची संक्षिप्त प्रश्नों की एक रचना है जिसे सामान्यत: सर्वेक्षणकर्ता स्वयं रखता है और अपने अन्वेषण में अग्रसर होने के साथ - साथ भरता जाता है' ।

प्रश्नावली तथा अनुसूची में समानता यह है कि दोनों में से सभी उत्तरदाताओं के लिए प्रश्नों की शब्दावली समान होती है ।

9.4.1 अनुसंधान में अनुसूची का महत्व (Importance of Research Schedule)-

अनुसंधान में अनुसूची का महत्व निम्नवत है :-

- इसके प्रयोग से वास्तविक तथ्यों की प्राप्ति होती है ।
- अस्पष्ट प्रश्नों का स्पष्टीकरण हो जाता है तथा उत्तर सही मिल जाता है ।
- आवश्यकतानुसार प्रश्न परिवर्तन का पर्याप्त अवसर होता है ।
- विषयवस्तु की पृष्ठभूमि का भी अध्ययन किया जा सकता है ।
- आवश्यक अध्ययन एवं विस्तार से भी बचाव होता है ।
- प्रामाणिक अवलोकन द्वारा विश्वसनीय सूचना मिलती है ।

9.4.2 अच्छी अनुसूची की विशेषतायें (Characteristics of गुड Schedule) -

एक अच्छी अनुसूची में निम्नलिखित विशेषतायें होती है-

- प्रश्न स्पष्ट एवं सरल होते हैं ।
- प्रश्न संक्षिप्त होते हैं ।
- एक अच्छी अनुसूची विश्वसनीय, वैध वस्तुनिष्ठ तथा व्यापक होती है ।
- प्रश्न परस्पर पुष्टि करने वाले होते हैं ।
- प्रश्न का स्वरूप क्रमबद्ध, वस्तुपरक तथा तर्कसंगत होता है ।
- अनुसूची का भौतिक स्वरूप सर्वमान्य तथा आकर्षक होता है ।
- अनुसूची का स्वरूप संरचित होता है ।

9.4.3 अनुसूची से लाभ Merits of Schedule)-

अनुसूची से अनेकानेक लाभ हैं जिनको हम निम्न प्रकार से विवरण स्पष्ट कर सकते हैं।

- अनुसंधानकर्ता तथा उत्तरदाता में अच्छा सम्बन्ध स्थापित हो जाता है ।
- अनुसूची में सभी प्रश्नों के उत्तर भरे जा सकते हैं ।
- उत्तरदाता को प्रेरित करना सरल होता है ।
- कार्य सरल एवं सुगमता से शीघ्र पूरा हो जाता है ।
- श्रम एवं धन की बचत होती है ।
- अनुसूची द्वारा वस्तुपरक आँकड़े प्राप्त होते हैं ।
- अनुसूची द्वारा यथार्थ तथा गहन जानकारी प्राप्त होती है ।
- प्रशिक्षित व्यक्तियों के अध्ययन में सम्मिलित होने की सम्भावना बढ़ जाती है ।
- तुलनात्मक तथा विश्वसनीय आँकडॉ की प्राप्ति होती है ।
- प्राप्त प्रति उत्तरों की वैधता का स्तर उच्च होती है ।

9.4.4 अनुसूची की सीमायें (Limitations of Schedule)

- दूर- दूर से सूचना प्राप्त करना कठिन होता है ।
- अनुसन्धानकर्ता की उपस्थिति उत्तरदाता को प्रभावित करती है । जिससे संगत सूचना मिलने में कठिनाई होती है ।
- अनुसूची के प्रशासनिक संयंत्र की व्यवस्था करने में कठिनाई का अनुभव होता है ।
- सार्वभौमिक प्रश्नों की सरंचना में कठिनाई आती हैं ।
- व्यक्तिगत पक्षपात की अधिक सम्भावना रहती है ।
- अपूर्ण तथा अपर्याप्त उत्तरों की प्राप्ति होती है ।
- इसमें कुशल तथा प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं की आवश्यकता पड़ती है ।
- यह अध्ययन की अधिक खर्चीली पद्धति है ।
- उद्देश्य प्राप्ति की तुलना में अपेक्षाकृत अधिक काम करना पड़ता है ।

9.4.4 अनुसूची के प्रकार (Types of Schedule)- अनुसूची की अनुप्रयुक्ति आकड़ों के संकलन की अन्य विभिन्न विधियों के साथ सरलता पूर्वक भी जा सकती है । तथा उसके साथ इसके प्रयुक्त किये जाने से अनेक उपयोगी तथा अनुसूची के मुख्यत: पांच प्रकार होते हैं -

1. **अवलोकन अनुसूची (Observation Schedule)-** इसे निरीक्षण अथवा किसी घटना के अवलोकन हेतु प्रयोग करते हैं ।

2. **साक्षात्कार अनुसूची (Interview Schedule)) -** इसका उपयोग साक्षात्कार के लिए किया जाता है जबकि आँकडों गुणात्मक हों । यह सामाजिक अनुसन्धानों में अधिक प्रचलित हैं । इसमें प्रश्नों के आगे रिक्त स्थान होते हैं । साक्षात्कारकर्ता उनकी पूर्ति स्वयं करता है ।

3. **लेख संबन्धी अनुसूची (Document Schedule))** - इसमें पूछने की आवश्यकता नहीं पड़ती । अभिलेखों से प्राप्त आँकड़ों के आधार पर अनुसूची की पूर्ति करते जाते हैं । यह ऐतिहासिक, विकासात्मक तथा सर्वेक्षण प्रकार के अनुसन्धान के लिए अधिक उपयोगी है ।

4. **निर्धारण अनुसूची (Rating Schedule) -** इसका उपयोग वहाँ करते हैं । जहाँ अनुसूची के आधार पर मूल्यांकन गुण निर्धारण अथवा उसकी तुलनात्मक क्षमता का निर्धारण करना होता है । अभिवृति, मत, प्रथा, फैशन, आदि गुणादि के बारे में अध्ययन करने हेतु इसका प्रयोग सफलता से किया जाता है ।

5. **संस्था सर्वेक्षण अनुसूची Institution Survey Schedule)-** इस प्रकार की अनुसूची का प्रमुख उद्देश्य एक विशेष संस्था की सामान्य समस्याओं का सर्वेक्षण तथा मूल्यांकन करना होता हे। इसमें संस्था से सम्बन्धित विभिन्न समस्याओं के विभिन्न पहलुओं का क्रमबद्ध तथा विशिष्ट रूप से अध्ययन किया जाता है ।

9.4.6 अनुसूची के उद्देश्य (Objectives of Schedule Formation) - अनुसूची द्वारा एक अनुसन्धान समस्या का अध्ययन, अपेक्षाकृत अधिक क्रमबद्ध तथा व्यवस्थित रहता है । अनुसूची के उपयोग के अनेक उद्देश्य है । इनके मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित है-

1. अनुसूची के उपयोग का मुख्य उद्देश्य वस्तुपरक आकड़ों का संकलन करना होता हैं ।
2. अनुसूची के उपयोग का दूसरा मुख्य उद्देश्य निश्चित, क्रमबद्ध तथा तर्कसंगत आँकड़ो का संकलन करना होता है ।
3. अनुसूची द्वारा अध्ययन में यह भरसक प्रयास किया जाता है कि अध्ययन से सम्बन्धित कोई आवश्यक पहलू छूट न जाये । अत: अध्ययन के अन्तर्गत समस्या का सम्पूर्ण अध्ययन किया जाता है ।
4. अनुसूची के उपयोग का एक अन्य उद्देश्य तुलनात्मक तथा विश्वसनीय आकड़ों का संकलन होता है ।
5. अनुसूची का मुख्य ध्येय केवल सम्बन्धित समस्या के प्रति रचित प्रश्नों के बाहरी उत्तरों को प्राप्त करना ही नहीं होता है बल्कि अनुसूची के उपयोग में साक्षात्कार के अन्तर्गत अध्ययन कर्ता द्वारा सूचनादाता की वास्तविक मनोवृतियों, अभिवृतियों व प्रतिक्रियाओं के आधार पर वैध उत्तर प्राप्त करना भी होता है ।

9.4.6 अनुसूची बनाने की पद्धति (Process of Schedule Formation)- अनुसूची बनाने में निम्नलिखित स्तर होते हैं :

1. प्रत्येक अंग के लिए वांछित सूचना के प्रकार का निर्धारण करना ।
2. अध्ययन के क्षेत्र का विश्लेषण करके प्रत्येक अंग को अंकित करना ।

3. प्रत्येक अंग के लिए महत्व निश्चित करना ।
4. विशिष्टीकरण तालिका का निर्माण करना ।
5. प्रश्नों का निर्माण ।
6. प्रश्नों का आयोजन एवं व्यवस्थापन ।
7. विशेषज्ञों की राय जानना ।
8. पूर्व परीक्षण ।
9. अन्तिम रूप प्रदान करना ।
10. प्रयोग ।

9.5 निर्धारण मापनी (Rating Scale)

निर्धारण मापनी (Rating Scale) मूल्यांकन के क्षेत्र में व्यवहार में आने वाले उपकरणों में सबसे अधिक प्रचलित हैं । यह अनेक रूपों में पायी जाती है ।

गुड तथा स्कैट्स के अनुसार - 'यह उपकरण मूल्यांकन की जाने वाली वस्तु के विभिन्न अंगों की ओर ध्यान आकर्षित करती हैं । किन्तु इसमें उतने प्रश्न अथवा खण्ड नहीं होते जितने चैकलिस्ट अथवा स्कोर -कार्ड में होते हैं ।

बानहैलेन के अनुसार - 'निर्धारण मापनी (Rating Scale) किसी चर की श्रेणी, उसकी गहनता अथवा महत्व अथवा बारम्बारता को निश्चित करती हे ।

जॉन. डब्लयू. वैस्ट के अनुसार - निर्धारण मापनी किसी व्यक्ति के गुणों अथवा वस्तु के सीमित पक्षों का गुणात्मक विवरण प्रस्तुत करती हैं निर्धारण मापनी दो मूल अवधारणाओं पर आधारित होती है (1) सातत्य की स्थिति और (2) उस सातत्य का प्रतिनिधित्व ।

पहले की जाँच अन्तिम वितरण के अध्ययन से तथा दूसरे की जाँच परीक्षण की वैधता से होती है

9.5.1 निर्धारण मापनी (Rating Scale) का वर्गीकरण -

- **समाजिक अन्तर मापनी (Social Distance Scale)-** समाजिक अन्तर की धारणा एक सत्यता को सूचित करती है । जिस समूह का सामाजिक अन्तर मापनी हो उसे एक सातत्य पर रखते हैं । इसके प्रणेता बोगार्डस थे।
- **प्रत्यय भिन्नता मापनी (The Semantic Differential Scale) -** इसके अन्तर्गत अनेक सप्त इकाई, दो ध्रुवीय ग्राफ सम्बन्धी मापनी होती है । वास्तव में इसका प्रयोग किसी प्रत्यय के अर्थ क्षेत्रों में भी इसका प्रयोग हो सकता हैं ।
- **कयू विधि Q-Technique) -**इस विधि कि खोज इस्टीफेसन ने 1953 में की थी । Q से तात्पर्य प्राप्तांकों को के सह सम्बन्ध से नहीं हैं, अपितु आन्तरिक एवं पारस्परिक सह सम्बन्ध से है । इस विधि में 50 से 100 कथन तक संग्रहीत किये जाते है । तथा उन्हें अलग-अलग कार्डो पर छाप देते हैं । विषयी कार्डों को 7911 के क्रम में एक सातत्य पर छांटना है जिसके एक सिरे पर पूर्णत: व्यवहार्य एवं दूसरे सिरे पर पूर्णत:

अनव्यवहार्य होता है । प्रत्येक ढेर में कार्डों की संख्या ही उस सातत्य पर अंको को सूचित करती है ।

- **आत्म निर्धारण विधि (Self-anchoring Techniques) -** यह एक अशाब्दिक निर्धारण मापनी है जिसका निर्माण किलपैट्रिक तथा कंट्रिल ने 1960 ई० में किया । इसमें विषयी से पूछा जाता है कि उसके लिए कौन सी जीवन शैली सवन्तिम होगी तथा कौन सी जीवन शैली सर्वोतम होगीं । तथा कौन सी सबसे खराब होगी । शब्दशः उत्तर लिख लिया जाता है । इसके बाद उसके सामने एक चित्र रूप में मापनी प्रस्तुत की जाती है: । जिसमें एक सीड़ी के दोनों किनारे होते हैं । एक सबसे अच्छा और दूसरा बुरे का प्रतीक होता है । विषयी से यह प्रदर्शित करने के लिए कहा जाता है कि वह समय अपने को किस खण्ड में स्थित समझता है ।
- **आन्तरिक संगत मापनी (Internal Consistency Scale) -** यह थर्स्टन की एटीट्यूट स्केलिंग में सुधार का फल है । इसके अन्तर्गत संगत प्रश्नों को उसी मूल्य के अन्य प्रश्नों के साथ रखते है ।
- **गुप्त संरचना विश्लेषण (Latent Structure Scale)-** यह गुणात्मक आंकड़ो के तत्व विश्लेषण की एक प्रमुख विधि है । यह मापन में उपयोगी है । परन्तु जटिल है ।
- **स्थिति मापनी (Ranking Scale)-** निर्णायकों के ऊपर निर्भर होने के कारण यह भी निर्धारण मापनी के ही समान है । एक निरपेक्ष मापनी पर निर्णय किये जाते हैं । उत्तेजना की पूरी शृंखला में तुलना की जाती है । इसे युग्मित तुलना विधि या समान अन्तर प्रदर्शिका विधि द्वारा करते हैं ।
- **निर्धारण मापनी (Rating Scale)-** यह बहुत प्रचलित है । निर्धारण मापनी के सम्बन्ध में अपने सर्वे पर व्यक्त करते हुए गुड ने लिखा है कि एक व्यवस्थित पद्धति के अनुसार किसी वस्तु अथवा व्यक्ति में निहित विशेषताओं की सीमाओं का आकलन है । जिसे गुणात्मक अथवा परिमाणात्मक विधि द्वारा प्रदर्शित करते हैं ।

9.5.2 निर्धारण मापनी के प्रकार Type of Rating Scale)- निर्धारण मापनी का वर्गीकरण अनेक प्रकार से किया जाता है । यहां पर गिलफोर्ड का वर्गीकरण जो अधिकांश लोगों द्वारा स्वीकृत है, दिया जा रहा है ।

- सांख्यिक मापनी (Numerical Scale)
- ग्राफ मापनी (Graphic Scale)
- स्तर मापनी (Standards Scale)
- संचित बिन्दु मापनी (Cumulate Point Scale)
- बाध्य विकल्प मापनी (Forced Choice Scale)

1. सांख्यिक मापनी - इसके अन्तर्गत पूर्व विश्लेषित अंको'की एक तालिका मापन करने वाले के समक्ष प्रस्तुत की जाती है । वह अपने निर्णयानुसार प्रत्येक वस्तु अथवा व्यक्ति को एक उचित अंक प्रदान करता हैं इसमें अंक 1 से 11, 1 से 7, अथवा 1 से 5 तक होते हैं जिसके दोनों अन्तिम अंक (पहला तथा आखिरी) अत्यंत एवं अनुकूल एवं अत्यंत प्रतिकूल को तथा बीच के अंक अनिश्चय को सूचित करते हैं ।

2. ग्राफ मापनी - इनमें बड़ी भिन्नता है तथा यह बहुत प्रचलित है । इसके अन्तर्गत किसी गुण से संबन्धित दोनों अति सूचक शब्द सातत्य के दोनों किनारों पर होते हैं । इसकी पंक्तियाँ खड़ी या पड़ी दोनों प्रकार की हो सकती हैं । इसमें निम्नलिखित बातें विचारणीय हैं -

1. प्रत्येक गुण के लिए एक पृष्ठ हो ।
2. रेखा 5 इंच लम्बी हो ।
3. संकेत एक बिन्दु पर केन्द्रित हो ।
4. कम प्रयोग में आने वाले संकेतो से बचना चाहिए ।
5. अंक देने के लिए स्टेन्सिल का प्रयोग करना चाहिए ।

3. स्तर मापनी - इसके अन्तर्गत स्तरों की एक वर्ग सूची मापन कर्ता के समक्ष प्रस्तुत की जाती है । यह सूची शाब्दिक संकेतों के स्थान पर होती है । मापनकर्ता नये न्यादर्शो को उस स्तर की तलना में निश्चित करता है । यह मापनी दो प्रकार की होती है ।

1 व्यक्ति - व्यक्ति मापनी । 2. चित्र तुलना ।

4. संचित बिन्दु मानी-

क. **चिन्हांकन-सूची विधि (Check list Method)-** इसके अन्तर्गत अनुकूल तथा प्रतिकूल गुणों की एक सूची प्रदान की जाती है । मापनकर्ता प्रत्येक प्रश्न की जांच करता है । जिसे वह मापन के लिए उचित समझता है । चिहांकन सूची - । सत्य - असत्य । बहुत विकल्प प्रकार की तथा मापनी प्रकार की हो सकती है । यह विधि मापन करने तथा अंक देने में सरल होती है ।

ख. **बूझों कौन विधि (Guesses who method) -** इसे हार्टशार्न तथा मोके द्वारा बच्चों के लिए बनाया गया था किन्तु युवको पर भी इसका प्रयोग कर सकते हैं । इसमें संक्षिप्त शाब्दिक चित्र निर्मित होते है । बच्चों से कहा जाता हैं कि वह अपने समूह के उन सभी बच्चों की सूची बनायें जो उस विवरण के अनुकूल हो श्रेणी प्रदान करने वालों को उनके समूह के सदस्यों के नाम की एक सूची कर दी जाती है । चयन अथवा मूल से दोष आ जाता है ।

5. बाध्य विकल्प मापनी - इसे हार्स्ट द्वारा स्तर मापनी के दोषों को दूर करने हेतु बनाया गया था । बेरी ने इसका प्रयोग व्यक्तित्व तालिका के रूप में किया था ।

9.5.3 निर्धारण मापनी (Rating Scale) का निर्माण - निर्धारण मापनी में 3 महत्वपूर्ण तत्व होते हैं-

1. निर्णायक (Judge or Rater), 2. विषयी Subject), 3. सातत्य (Continuum)

1. **निर्णायक -** एक की अपेक्षा लोगों द्वारा किया गया निर्णय सदैव उत्तम रहता है । गिलफोर्ड ने निर्णायको की 33 विशेषतायें बतायी हैं जिनका प्रभाव निर्णय पर पड़ता है । उनमें से कुछ प्रमुख विशेषतायें इस प्रकार हैं

- निर्णय क्षमता में लोगों मे व्यक्तिगत भिन्नता होती है ।
- एक ही परिस्थिति में विषयीं को न जानने के कारण उनमें भिन्नता हो सकती है ।
- निर्णय पर सतत् त्रुटियों का प्रभाव पड़ता है ।
- निर्णय पर प्रेरणा तथा रूचि का प्रभाव भी पडता है ।
- जो स्वयं के लिए निर्णय कर सकता है वह दूसरों का भी कर सकता है ।
- प्रशिक्षण से निर्णायक अच्छा कार्य करते है ।

- निकट सम्बन्धी के बारे में उच्च निर्णय दे दिया जाता है ।
- माँ - बाप अपने बच्चों को उच्च निर्धारित करते हैं ।
- निर्णय का उद्देश्य ज्ञात होना भी निर्णय को प्रभावित करता है ।
- बुद्धि मान व्यक्ति का निर्णय अधिक अच्छा होता है ।

2. **विषयी -** दूसरा महत्वपूर्ण भाग विषयी अथवा गुण हैं । जिसके बारे में निर्धारण करना है जिस विषयी अथवा गुण का निर्धारण करना है उसे स्पष्ट रूप से परिभाषित होना चाहिए तथा उसके लिए वस्तुनिष्ठ संकेत मिलने चाहिए । गिलफोर्ड ने इसके लिए निम्न विशेषताओं का होना आवश्यक माना हैं: - इसका वस्तुनिष्ठ तथा विशिष्ट वर्णन हो ।

- प्रत्येक गुण की अलग - अलग सत्ता हो ।
- उनका वर्गीकरण निर्धारण की शुद्धता एवं सहूलियत पर आधारित हो ।
- सामान्य पदों का प्रयोग न किया जाये ।
- विषय का निर्णय उसकी मूलभूत अथवा वर्तमान स्थिति से किया जाय ।
- -जहाँ पर और भी वस्तुनिष्ठ उपकरण हो वहाँ निर्धारण मापनी का प्रयोग न किया जाए।

3. **सातत्य -** सातत्य का निर्धारण अत्यंत सावधानी से करना चाहिए तथा इसके लिए समुचित संकेत देने चाहिए । समुचित निर्णय देने के लिए इनका पांच से सात श्रेणियों में विभाजन किया जा सकता

1. प्रतिभा सम्पन्न - बहुत अच्छा - सदैव ।
2. सामान्य से ऊपर - अच्छा - बहुधा
3. सामान्य - सामान्य कभी -कभी
4. सामान्य से कम - साम से कम - बहुत कम
5. हीन - बुरा - कभी नहीं

इसके अन्तर्गत गुण प्रकट करने वाले शब्दों को बायें से दायें आरोही अथवा अवरोही क्रम में रख सकते हैं । जो भी पद दिये जायें उनकी वस्तुनिष्ठ व्याख्या से निर्णय भी वस्तुनिष्ठ होगा ।

9.5.4 निर्धारण मापनी के गुण (Merits of Rating scale)-

- इसमें छात्रों की आवश्यकताओं को जानने में सरलता रहती है ।
- यह छात्रों के सम्बन्ध में अन्य साधनों द्वारा प्राप्त ज्ञान की पूर्ति करती हैं ।
- इसके आधार पर अभिलेखों की रिपोर्ट देना सरल होता है ।
- छात्र प्रवेश में सहायता मिलती है ।
- नौकरी के लिए संस्तुति करना सरल होता है ।
- विषयी के लिए प्रेरणा का साधन है ।
- इसमें कम समय लगता है तथा प्रयोग आसान होता है ।
- शैक्षिक परखों ज्ञात करने में शिक्षक निर्धारण मापनी का प्रयोग किया जाता है ।

9.5.5 निर्धारण मापनी के दोष (Demerits of Rating Scale) -

निर्धारण मापनी के उपयोग मे 'निम्नलिखित त्रुटियां आती है ।

- उदारता सम्बन्धी त्रुटि ।
- पूर्ण प्रभाव सम्बन्धी त्रुटि ।
- केन्द्रीय प्रवृत्ति सम्बन्धी त्रुटि ।
- तार्किक त्रुटि ।

9.6 अवलोकन (Observation)

हम सदैव अपने चारों ओर होने वाली क्रियाओं एवं घटनाओं का अवलोकन करते रहतें हैं । प्रात: सोकर उठने से लेकर रात्रि के सोने तक प्रंकभाति की छटा से लेकर भौतिक जगत के सभी क्रिया कलापों का अवलोकन करते हैं । यह संसार के बारे में सूचनायें प्राप्त करने का मूल साधन है ।

जहां पर आदि के अनुसार यह हमारे दैनिक जीवन की एक महत्वपूर्ण क्रिया ही नहीं है । बल्कि वैज्ञानिक जानकारी का एक प्रमुख साधन भी है । यह एक वैज्ञानिक विधि बन जाती है, यदि-

- यह अनुसंधान की समस्या के निर्धारण में सहायक होते हैं ।
- इसका नियोजन व्यवस्थित हो ।
- यह वैधता एवं विश्वसनीयता की जाँच का साधन हो ।

वास्तव में अनुसन्धान में एक उपकरण के रूप में इसका सम्बन्ध व्यक्ति के बाहा व्यवहार से है। इसका सम्बन्ध न तो लिखित अभिव्यक्ति से, न साक्षात्कार में उसके द्वारा दिये गये उत्तर से । अपितु स्वाभाविक परिस्थिति में उसके निरीक्षण से है ।

गुड तथा हैट (Good & Hatt) के अनुसार - विज्ञान का प्रारम्भ अवलोकन से होता है । तथा इसकी पुष्टि के लिए अवलोकन में ही लौटना पड़ता है ।

अवलोकन की अब से प्राचीनतम तथा आधुनिकतम प्रणाली के रूप में वैज्ञानिक अवलोकन में निम्नलिखित विशेषतायें होनी आवश्यक हैं-

- कुशलता से किया गया अवलोकन ।
- उद्देश्य पूर्ण अवलोकन ।
- व्यवस्थित अवलोकन ।
- सावधानी से किया गया अवलोकन ।
- सावधानी से किया गया शुद्ध, वैध तथा विश्वसनीय अवलोकन ।
- उपर्युक्त विशेषतायें होने पर ही अवलोकन वैज्ञानिक अनुसंधान का आधार बनता है ।

9.6.1 विशेषतायें (Characteristics)-

1. यह वर्णात्मक अनुसन्धान का प्रमुख साधन है ।
2. व्यक्तित्व के विशेष गुणों जितनी अच्छाई के साथ इस प्रत्यक्ष प्रणाली के साथ जाना जा सकता है अन्य से नहीं ।
3. पाठयक्रम सहभागी क्रियाओं के निरीक्षण के द्वारा अनेक तथ्य प्राप्त किये जा सकते है।

4. कक्षा में छात्रों के व्यवहार समूह में उनकी स्थिति तथा उत्तेजना की प्रतिक्रिया को स्वाभाविक रूप में जान सकते है ।
5. अन्य भाषा - भाषी तथा जो लिख - पढ़ और बोल सकते उन व्यक्तियों के अध्ययन का प्रमुख साधन है ।

9.6.2 अवलोकित आकड़ों का लेखन (Writing of Observed Data) - अवलोकित सामग्री के व्यवस्थित लेखन के लिए निम्नलिखित उपकरणों का प्रयोग करते हैं -

अवलोकित सामग्री के व्यस्थित लेखन के लिए निम्नलिखित उपकरणों का प्रयोग करते हैं-

1 चिन्हांकन सूची
2 निर्धारण मापनी
3 रिक्त स्थान पूर्ति -पत्र
4 प्राप्तांक कार्ड

अनुसंधानकर्ता समस्या के स्वरूप तथा उद्देश्य के अनुसार इनमें से किसी का उपयोग कर सकता

9.6.3 अवलोकन के आवश्यक तत्व (Important Elements of Observation) -

अच्छे अवलोकन के 4 महत्वपूर्ण तत्व हैं-

1. समुचित नियोजन (Proper Planning)-

समुचित नियोजन की मूलभूत आवश्यकतायें निम्नांकित हैं:-

क. अवलोकन सम्बन्धी व्यवहार का विश्लेषण (कौन सा व्यवहार?)
ख. न्यादर्श का निर्धारण (किनका अवलोकन)
ग. अवलोकन क्षेत्र (व्यक्ति का अथवा समूह का ?)
घ. अवलोकन के लिए समय का निश्चय
ङ. अवलोकन के लिए उपकरणों का निश्चय ।
च. विशेष परिस्थितियों का निश्चय जिनकी व्यवस्था करनी है ।
छ. अवलोकन के लिए आवश्यक प्रशिक्षण की व्यवस्था ।

2. इसके लिए निम्नलिखित बातों का ध्यान देना आवश्यक है ।

क. समुचित परिस्थितियों का निर्माण ।
ख. विशेष क्रिया के विशेष पक्ष पर ध्यान का केन्द्रीयकरण ।
ग. प्रत्यक्ष निरीक्षण तथा अनेक बार निरीक्षण ।
घ. लेखन उपकरण का उचित उपयोग ।
ङ. बाधारहित वातावरण में सजग अवलोकन उत्तम रहेगा ।

3. **समुचित लेखन (Proper Writing)-** यह लेखन अवलोकन के साथ-साथ भी हो सकता है । तथा बाद में भी । साथ-साथ अवलोकन करना अच्छा रहता है । क्योंकि बाद में अनेक बातें भूल जाती हैं ।

4. **वैज्ञानिक विश्लेषण (Scientific Analysis) -** अवलोकित सामग्री का सारणीकरण व्यवस्थापन तथा विश्लेषण वैज्ञानिक रूप में करके ही उचित फल प्राप्त कर सकते है ।

9.6.4 अवलोकन के प्रकार (Types of Observation)- अवलोकन दो प्रकार का होता है

1. **प्रत्यक्ष अवलोकन (Direct Observation)-** यह दो प्रकार का होता है । -
   क. सहभागिक अवलोकन
   ख. असहभागिक अवलोकन

क. सहभागिक अवलोकन (Cooperation observation)- विस्तृत सूचनाओं की प्राप्ति इस विधि से सम्भव है । इससे सामुदायिक व्यवहार का प्रत्येक्ष एवं स्वाभाविक ज्ञान होता है तथा यह विधि अल्प व्यय से बाध्य है । इसके द्वारा उन गहन सूचनाओं को भी प्राप्त किया जा सकता है । जो अन्य विधि से सम्भव नहीं है ।

ख. असहमागिक अवलोकन (Non-Cooperation Observation)- इसमें अवलोकनकर्ता अध्ययन किये जाने वाले समूह के मध्य केवल उपस्थित रहता है किन्तु समुदाय के क्रिया कलाप में भाग नहीं लेता । इसका प्रयोग बच्चों शिशुओं तथा असामान्य व्यक्तियों के अध्ययन में किया जाता है । अवलोकन कर्ता ऐसे स्थान के निरीक्षण करता है जिससे समूह प्रभावित न हो सके ।

अवलोकन कर्ता का वर्गीकरण 1- नियमित तथा अनियमित अवलोकन के रूप में भी करते हैं । परिस्थितियों का निर्माण कर वस्तुनिष्ठ वैज्ञानिक उपकरण की सहायता से अवलोकन एवं लेखन करते जाते है ।

9.7 साक्षात्कार (Interview)

साक्षात्कार शैक्षिक अथवा मनोवैज्ञानिक स्तर पर सम्पन्न की गयी वह प्रक्रिया है जिसमे दो अपरिचित एक दूसरे के सम्पर्क में आते हैं । गुड तथा हैट ने इसे स्पष्ट करते हुए लिखा है कि विश्वसनीयता तथा विस्तार को तब तक नहीं पाया जा सकता है जब तक कि मस्तिष्क में यह स्पष्ट नहीं है । अपितु आँकड़े प्राप्त करने का एक प्रमुख पूर्ण उदाहरण है, जो अन्य उपकरणों का पूरक है ।

जॉन डज्यू बेस्ट के अनुसार - साक्षात्कार एक प्रकार से एक मौखिक प्रकार की प्रश्नावली है । इसके अन्तर्गत उत्तर लिखने के बजाय आमने'-सामने की स्थिति में विषयी मौखिक उत्तर देता है।

9.7.1 साक्षात्कार की श्रेष्ठता के कारण (Reasons of Superiority of Interview)-

1. लोग लिखने की अपेक्षा बात करना अधिक पसंद करते है ।
2. साक्षात्कार में मित्रवत् व्यवहार कर गोपनीय सूचना भी प्राप्त की जा सकती है ।
3. यदि विषयनी ने किसी प्रकार का गलत अर्थ लगा लिया है तो साक्षात्कारकर्ता पूरक प्रश्न द्वारा स्पष्टीकरण कर सकता है ।
4. साक्षात्कार के द्वारा बच्चों, अशिक्षितों, भाषा की कम क्षमता रखने वाले तथा कम बुद्धि वालों से भी सूचना प्राप्त कर सकते हैं ।

5. साक्षात्कार से प्राप्त सूचना विश्वसनीय वैध वस्तुनिष्ठ तथा अनुसंधान के लिए उपयोगी है ।

9.7.2 साक्षात्कार की सीमायें (Limitations of Interview) - साक्षात्कार की निम्नलिखित सीमायें हैं -

1. साक्षात्कार में अनुसंधानकर्ता को विषयी की मौखिक रिपोर्ट पर बहुत अधिक आश्रित रहना पडता है ।
2. बोलने में कठिनाई आदि होने पर सूचनायें प्राप्त करने में कठिनाई हो सकती है ।
3. विषयी जानबूझ कर कुछ सूचनायें छिपा सकता हैं ।
4. विषयी के पक्षपातपूर्ण विचार से भी ठीक सूचना नहीं मिलेगी ।
5. साक्षात्कार में विषयी की स्मरणशक्ति पर निर्भर रहना पडता है । वह तुरन्त याद करने में असमर्थ हो सकता है ।
6. साक्षात्कारकर्ता का व्यवहार उसकी अभिवृत्ति तथा उपस्थिति भी उत्तर देने में बाधा डालती है।

9.7.3 साक्षात्कार के प्रकार (Types of Interview)- साक्षात्कार अनेक प्रकार का हो सकता है। इसका वर्गीकरण निम्नवत है :

(I) उपयोगानुसार (According to function)

इसके तीन भाग है -

अ निदानात्मक (Diagnostic)

ब. उपचार (Treatment)

स अनुसंधान (Research)

(II) भाग लेने वाले के अनुसार (According to participant)

इसको दो भागों में विभक्त कर सकते हैं -

क व्यक्तिगत (Individual)

ब. सामूहिक (Group)

(iii) सम्पर्क की अवधि के अनुसार (According to length of contact)

क अल्पकालीन सम्पर्क (Short Contact)

ब. दीर्घकालीन सम्पर्क (Prolong Contact)

(IV) साक्षात्कारकर्ता और विषयी के संबंध तथा अन्त: क्रिया के अनुसार- इसको निम्न बिन्दुओं में स्पष्ट कर सकते हैं :-

क. **अनिर्देशित साक्षात्कार (Non-Directional Interview) -** इसमें प्राय: प्रत्यक्ष एवं पूर्ण निर्धारित प्रश्नों का उपयोग नहीं किया जाता है । सामान्य वार्तालाप के माध्यम से सूचनादाता को अपनी सूक्ष्म अनुमति को प्रकट करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है ।

ख. **केन्द्रित साक्षात्कार (Centralized Interview) -** इसको गहन साक्षात्कार भी कहते हैं इसका प्रधान उद्देश्य परिकल्पना के उस औचित्य को परीक्षण करना होता है जिसके

प्रतिस्थापना मानव व्यवहार की पूर्ण विश्लेषित व्यवस्था के आधार पर हुई हो। इसके अन्तर्गत प्रेरणा के स्त्रोत तथा अन्य गहन बातों पर ध्यान केन्द्रित होता है ।

ग. **पुनरावृत्ति साक्षात्कार (Recapulatory Interview) -** इसका प्रयोग उन प्रगतिशील कार्य तथा दृष्टिकोणों के अध्ययन हेतु किया जाता है जो किसी मनुष्य के किसी व्यवहार विशेष को निर्धारित करते हैं । इसकी सहायता से प्रगतिशील क्रियाओं तथा घटनाओं का अध्ययन सरलता से किया जाता है तथा विश्वसनीयता निश्चित करते हैं ।

9.7.4 साक्षात्कार के विभिन्न स्तर पर महत्वपूर्ण बातें (Important things of different levels of Interview):

1. **साक्षात्कार के पूर्व तैयारी (Preparation before Interview)-** साक्षात्कार से पूर्व साक्षात्कार का क्षेत्र, उद्देश्य का निर्धारण सूचनायें जो प्राप्त करनी है, साक्षात्कार का प्रकार तथा साक्षात्कार से प्राप्त सूचनाओं की लेखन विधि आदि को पूर्व में ही निश्चित कर लेना चाहिए ।

2. **अनुकूल तथा उपयुक्त स्थान -** साक्षात्कार के लिए उपयुक्त स्थान एवं अनुकूल अवसर का सटीक चुनाव साक्षात्कार की सफलता की दृष्टि से अत्यन्त आवश्यक होता है ।

3. **पारस्परिक परिचय (Mutual Introduction)-** साक्षात्कार? के लिए आने के बाद सबसे कार्य सुदृढ़ आत्मीय संबंध स्थापित करने के लिए पारस्परिक परिचय कर लेना चाहिए ।

4. **साक्षात्कार का संचालन (Conduction of Interview) -** सारी व्यवस्था हो जाने पर आत्मीय सम्बन्ध हो जाने के बाद साक्षात्कार प्रारम्भ होगा । साक्षात्कार के लिए प्रश्न करने में निम्न बातों का ध्यान रखना आवश्यक हैं

   1. प्रश्नक्रम वृहद् न हों ।
   2. प्रश्न सरल तथा स्पष्ट हों ।
   3. भावात्मक प्रश्नों से बचना चाहिए ।
   4. यदि उत्तरदाता मूलविषय से हटकर साक्षात्कारकर्ता को दूर ले जाये तो ऐसी स्थिति में उसे सावधान रहकर उद्देश्य पर ही ध्यान केन्द्रित करना होगा ।
   5. **उत्तर लेखन तथा विश्लेषण (Answer Writing and Analysis) -** उत्तर लेखन भी सबसे महत्वपूर्ण विधि टेपरिकार्डर में संपूर्ण वार्तालाप को रिकार्ड कर लेना है किन्तु यदि टेपरिकार्ड उपलब्ध न हो तो इसे दो प्रकार से लिख देते हैं ।

      क. साक्षात्कार के साथ लिखते जायें ।

      ख. साक्षात्कार की समाप्ति के बाद लिख दें ।

9.7.5 साक्षात्कार की समाप्ति (End of Interview)- अन्त में धन्यवाद के दो शब्दों के साथ प्रसन्नतापूर्ण वातावरण में साक्षात्कार समाप्त कर देना चाहिए ।

9.8 अभिलेखों के प्रकार एवं उपयोग (Types & use of Documents)

वह सामाग्री जिसे अनुसंधानकर्ता दूसरों के प्रयोग अथवा अनुसंधान से प्राप्त कर लेता है वह सामग्री स्वयं अनुसंधानकर्ता द्वारा प्राप्त नहीं की जाती है अपितु अन्य स्त्रोतों से प्राप्त

होती है । इस प्रकार के आकड़े का एक बार सांख्यिकीय विश्लेषण हो चुका होता है तथा उससे कुछ निष्कर्ष निकले जा चुके होते हैं ।

अप्रत्यक्ष एवं लिखित सामग्री के रूप में अभिलेख का महत्वपूर्ण स्थान है । इसके अन्तर्गत व्यक्तिगत अथवा सामूहिक विकास संबंधी जानकारी विद्यमान होती है । दूसरे शब्दों में 'एक अभिलेख व्यक्तिगत अथवा सामूहिक विकास की प्रकृति को स्पष्ट करता है ।

9.8.1 अभिलेखों के प्रकार (Types of Documents)- अभिलेख निम्नलिखित प्रकार के हो सकते हैं -

- व्यक्तिगत पत्र (Personal letters)
- जीवनवृत्त (Life history)
- दैनन्दिनी (Diaries)

1. **व्यक्तिगत पत्र -** भावपूर्ण अभिलेखों में व्यक्तिगत पत्रों का प्रमुख स्थान है । इनके द्वारा व्यक्ति की आन्तरिक भावनाओं को सरलता से ज्ञान किया जा सकता है ।
2. **जीवन वृत्त -** इस प्रकार के अभिलेखों का प्रयोग ऐतिहासिक अनुसंधानकर्ताओं द्वारा किया जाता हैं
3. **दैनन्दिनी -** इनके द्वारा व्यक्ति उन सभी गुप्त सूचनाओं को प्राप्त करते हैं जिन्हें वह स्वयं किसी के समक्ष प्रकट नहीं करता, किन्तु शोधकार्य की दृष्टि से वे अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। उपर्युक्त स्रोतों का उपयोग करने में अनुसंधानकर्ता को अत्यधिक सावधानी बरतने की आवश्यकता है । अन्यथा वह धोखे में पड़ सकता है ।

9.8.2 अभिलेखों की उपयोगिता (Utility of Documents)- अभिलेखों के अन्तर्गत न्यायालय के अभिलेख, विभिन्न आयोगों की कार्यवाही, समाचारपत्रों में लेख आदि आते हैं । अभिलेखों की सामग्री प्रकाशित एवं अप्रकाशित दोनों प्रकार की हो सकती है । प्रकाशित सामग्री में केन्द्रीय तथा प्रान्तीय सरकारों के प्रकाशन, आयोगों एवं समितियों के प्रतिवेदन, अनुसंधान संस्थाओं के प्रकाशन, व्यक्तिगत अनुसंधानकर्ताओं के प्रकाशन, अनुसंधान लेख आदि उल्लेखनीय हैं उन अप्रकाशित सामग्री के अन्तर्गत सरकारी अथवा गैर सरकारी संस्थागत अथवा व्यक्तिगत रूप में किये गये कार्य और उनका संकलन प्रमुख हैं ।

इसके अतिरिक्त अभिलेखों की उपयोगिता और भी अनेक प्रकार से होती है जैसे -

- प्रमाणित आँकडों का संग्रह करने में ।
- सूचनायें प्रदान करने वाले व्यक्तियों का ज्ञान प्राप्त करने में ।
- उपयोगी सामग्री का मूल्यांकन करने में ।
- उद्देश्यपूर्ण सामग्री का संग्रह करने में ।

9.9 स्वमूल्यांकन (Self Assessment)

1. अनुसंधान के उपकरण से क्या तात्पर्य है? उपकरणो के चयन मे किन बातों का ध्यान रखना आवश्यक हैं?
2. प्रश्नावली क्या हैं, इसके गुण तथा दोषों की विवेचना कीजिये ।

3. अनुसूची से क्या समझते हैं? प्रश्नावली व अनुसूची में क्या अन्तर हैं? आप इन दोनों में से किसे श्रेष्ठ समझते हैं? और क्यों?'
4. 'अवलोकन' के महत्व, विधि तथा सीमाओं की व्याख्या करें? अच्छे अवलोकन की क्या विशेषतायें हैं?
5. साक्षात्कार एक प्रकार की मौखिक प्रश्नावली ही, इस कथन की समीक्षा कीजिये । साक्षात्कार में किन बातों का ध्यान रखना चाहिए?

9.10 संदर्भ ग्रंथ (Reference)-

1. गोविन्द - 'शैक्षिक एवं मनोवैज्ञानिक अनुसंधान के मूलाधार', विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा, 1989
2. पारसनाथराम एवं - अनुसंधानलय परिचय, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, चांद भटनागर आगरा, 1988
3. Best, J.W - Research in Education", Prencice Hall of India (Pvt.) Ltd., New Delhi, 1987

इकाई-10

मनोवैज्ञानिक, शैक्षिक व समाजमिति परीक्षण तथा उचित परीक्षण का चयन

(PSYCHOLOGICAL, EDUCATIONAL & SOCIO-METRIC TESTS AND SELECTION OF APPROPRIATE TOOLS)

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

10.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Objective)

10.1 मापन, उद्देश्य एवं मूल्यांकन का अर्थ, परिभाषा एवं अन्तर (Meaning, Definition and difference in Measurement and Evaluation)

10.2 मनोवैज्ञानिक एवं शैक्षिक परीक्षण ((Psychological and Educational)

(अ) निष्पत्ति परीक्षण (Achievement test)

(ब) बुद्धि परीक्षण (Intelligence Test)

(स) अभियोग्यता परीक्षण (Aptitude Test)

(द) रूचि परीक्षण (Interest Test)

(य) अभिवृत्ति परीक्षण (Attitude Test)

(र) व्यक्तित्व परीक्षण (Personality Test)

10.3 समाजमिति परीक्षण व समाज आलेख (Socialmetri Test)

10.4 उचित परीक्षण का चुनाव (Selection of Appropriate Test)

10.5 अच्छे परीक्षण की कसौटी (Criteria of Good Test)

10.6 स्वमूल्यांकन (Self-Assessment)

10.7 सन्दर्भ ग्रंथ (Reference)

10.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात छात्र इस योग्य हो जायेगा कि वे

- मापन एवं मूल्यांकन व अन्तर को समझ सकें ।
- प्रमुख मनोवैज्ञानिक, शैक्षिक तथा समाजमिति परीक्षणों की समझ सकें ।
- अच्छे परीक्षण की कसौटी को जानकर उसका चुनाव कर सकें ।

10.1 मापन और मूल्यांकन का अर्थ. परिभाषा तथा अन्तर Meaning, Definition and difference in Measurement and Evaluation

10.1.1 मापन का अर्थ (Meaning Measurement)

मापन का अर्थ मात्रात्मक मूल्य से है । मापन मूल्यांकन का वह भाग है जो कि प्रतिशत, मात्रा, अंक मध्यमान आदि में व्यक्ति किया जाता है । किसी मापन योग्य गुण की यथार्थ स्थिति का पता लगाना ही मापन है । संक्षेप में मान वह प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत किसी वस्तु एवं प्रणी की विशेषताओं को संख्यात्मक रूप प्रदान किया जा सके । साधारण शब्दों में मापन का अर्थ स्वीकृत नियमों के अनुसार किसी वस्तु या व्यक्ति के गुणों के परिमाण का निश्चित इकाईयों में पता लगाना है ।

10.1.2 मापन की

जी. पी. गिलफोर्ड के अनुसार - "मान वस्तुओं या घटनाओं को तर्कपूर्ण ढंग से संख्या प्रदान करने की क्रिया है ।"

ई. एल. थार्नडाइक के अनुसार - "प्रत्येक वस्तु जो तनिक भी सत्ता रखती है, किसी न किसी परिमाण में सत्ता रखती है, और कोई भी वस्तु जिसका एक निश्चित परिमाण व सत्ता है, मापन के योग्य है ।"

10.1.3 मूल्यांकन का अर्थ (Meaning of Evaluation)

मूल्यांकन एक व्यापक क्रिया है । किसी व्यक्ति, वस्तु या बात के विभिन्न पहलुओं को निश्चित मानकों की कसौटी पर कसना ही मूल्यांकन है । शिक्षा के द्वारा बालक के व्यवहार में परिवर्तन या शिक्षण के उद्देश्यों की प्राप्ति किस सीमा तक हुई । इन्हें पता लगाने के साधन को ही हम मूल्यांकन कहते है । इसमें छात्रों की सफलताओं और शारीरिक, मानसिक, सामाजिक और नैतिक गुणों की परीक्षा सम्मिलित रहती है ।

10.1.4 मूल्यांकन की परिभाषा (Definition of Evaluation) :

क्रानब्रेक - मूल्यांकन वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा शिक्षक तथा छात्र इस बात का निर्णय करते है कि शिक्षण के लक्ष्यों को प्राप्त किया जा रहा है या नहीं ।

क्लिंटन और हज्जा - छात्रों के व्यवहार में विद्यालय द्वारा किये गये परिवर्तनों के विषय में प्रमाणों को एकत्रित करना और उनकी व्याख्या करना ही मूल्यांकन है ।

10.1.5 मापन और मूल्यांकन में अन्तर (Difference in Measurement and Evaluation)

किन्हीं स्वीकृत नियमों के आधार पर किसी प्राणी, वस्तु या घटना के गुणों को तर्कपूर्ण ढंग से मात्रात्मक मूल्य प्रदान करने की क्रिया मापन है तथा मूल्यांकन गुणात्मक निर्णय करने की ।

मापन (Measurement) -

1. मापन का क्षेत्र सीमित है ।
2. मापन में व्यक्ति वस्तु या बात के किसी एक पक्ष को ही ध्यान में रखा जाता है ।
3. मापन मूल्यांकन का अंग मात्र है ।
4. मापन सतत् चलने वाली प्रक्रिया नहीं है ।
5. केवल किसी अंग विशेष के मापन के आधार पर भविष्यवाणी करना सम्भव नहीं ।
6. मापन में अपेक्षाकृत कम श्रम तथा कम समय लगता है ।
7. मापन एक अंगीय है ।
8. मापन में किसी भी वस्तु या तथ्य का संख्यात्मक चित्र होता है ।
9. मापन किसी छात्र के सम्बन्ध में स्पष्ट धारणा व्यक्त नहीं करता ।
10. मापन में अंक प्रदान किये जाते है ।
11. मापन में किसी घटना या तथ्य के विभिन्न परिमाणों के प्रतीक निश्चित किये जाते है ताकि उस घटना या तथ्य के बारे में यथार्थ निश्चय किया जा सकें ।

मूल्यांकन (Evaluation) -

1. मूल्यांकन का क्षेत्र बहुत व्यापक है ।
2. मूल्यांकन उस व्यक्ति, वस्तु या बात के समस्त पहलुओं के आधार पर किया जाता है ।
3. मूल्यांकन व्यापक अवश्य है, किन्तु मापन के बिना मूल्यांकन बड़ा कठिन है ।
4. मूल्यांकन अनवरत चलते रहने वाली प्रक्रिया है ।
5. मूल्यांकन के आधार पर भविष्यवाणी करना सम्भव है ।
6. मूल्यांकन मापन की अपेक्षा अधिक अधिक श्रम तथा अधिक समय लेता है ।
7. मूल्यांकन सर्वागीय है ।
8. मूल्यांकन में मापन के साथ-साथ परिमाणात्मक चित्र को भी सम्मिलित किया जाता है ।
9. मूल्यांकन के आधार पर किसी छात्र के विषय में स्पष्ट धारणा बनायी जा सकती है ।
10. मूल्यांकन में अंक प्रदान करने के पश्चात् अंकों का मूल्य भी निश्चित किया जाता है ।
11. जबकि मूल्यांकन में उस घटना या तथ्य का मूल्य निश्चित किया जाता है ।

10.1.6 परीक्षण की अर्थ (Meaning of Test) -

मनोवैज्ञानिक परीक्षण का अर्थ है कि ऐसा परीक्षा जो समूह में किसी व्यक्ति की सापेक्षित स्थिति को स्पष्ट करता हो, निश्चित व्यवहार के किसी प्रतिदर्श का प्रमाणीकरण एवं वस्तुगत मापन करता हों, इस के अतिरिक्त विश्वसनीय एवं बोध हो । विभिन्न मनोवैज्ञानिकों ने इसकी निम्न प्रकार से परिभाषित किया है ।

क्रानब्रेक के अनुसार - दो अथवा दो से अधिक व्यक्तियों के व्यवहार का तुलनात्मक अध्ययन करने की व्यवस्थित प्रक्रिया को परीक्षण कहते है ।

मन के शब्दों में - "मनोवैज्ञानिक परीक्षण एक ऐसी परीक्षा है जो बुद्धि, व्यक्तित्व अभियोग्यता या उपलब्धि के संदर्भ में समूह में किसी व्यक्ति की सापेक्षित स्थिति को स्पष्ट करती है । "

फ्रीमैन के अनुसार - "मनोवैज्ञानिक परीक्षण वह प्रमाणीकृत यंत्र है, जिसकी रचना वस्तुगत रूप से पूर्ण व्यक्तित्व के एक अथवा अधिक पक्षों का अध्ययन शाब्दिक अथवा अशाब्दिक प्रतिक्रियाओं के प्रतिदर्श के माध्यम से अथवा अन्य व्यवहारों के माध्यम से करने के लिए की गई हो ।"

इन परिभाषाओं के आधार पर कहा जा सकता है कि एक परीक्षण वह व्यवस्थित प्रक्रिया है, जिसमें परीक्षित व्यक्ति के सम्मुख संचरित उद्दीपकों की प्रस्तुत किया जाता है, जिनके प्रति वह प्रतिक्रिया करता है । इन प्रतिक्रियाओं को संख्यात्मक रूप देकर जिस तथ्य का परीक्षण द्वारा मापन किया गया है उसके सम्बन्ध में परीक्षित व्यक्ति के विषय में भविष्यवाणी की जाती है ।

10.2 मनोवैज्ञानिक एवं शैक्षिक परीक्षण (Psychological and Educational Test)

व्यवहार के विभिन्न पक्षों, गुणों तथा तथ्यों के वर्णन करते व मापने के आधार पर परीक्षण विभिन्न प्रकार के हो सकते है । वे परीक्षण इस प्रकार हैं :-

i निष्पति के लिए 'निष्पति परीक्षण'
ii बुद्धि के लिए 'बुद्धि परीक्षण'
iii अभियोग्यता के लिए 'अभियोग्यता परीक्षण'
iv रूचियों के लिए 'रूचि परीक्षण'
v अभिवृति के लिए 'अभिवृति मापनी'
vi व्यक्तित्व के लिए 'व्यक्तित्व परीक्षण'

10.2.1 निष्पत्ति परीक्षण (Achievement Test)- इस प्रकार के परीक्षणों का सर्वाधिक उपयोग शैक्षिक, अनुसंधानों में तथा विद्यालयों में होता है । इनके माध्यम से प्रमुख रूप में यह मापन किया जाता है कि औपचारिक व अनौपचारिक शिक्षण के परिणाम स्वरूप शिक्षार्थी में क्या और कितना (ज्ञान, कौशल आदत) विकास हुआ है, विद्यार्थी किस कक्षा में विषय के लिए उपयुक्त है या उसमें कौन-कौनसी कमियां है । फ्रीमेन (Freeman) के अनुसार "शैक्षिक निष्पति परीक्षण' का निर्माण इस प्रकर किया जाता है कि विद्यार्थी द्वारा ग्रहण किये गये कुछ ज्ञान कुछ दक्षता या कौशल का मापन किया जा सकता है । निष्पति परीक्षणों को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है ।

(क) **सामान्य निष्पति परीक्षण ((General Achievement Test) -** ये किसी विषय अथवा क्षेत्र में व्यक्ति की सामान्य उपलब्धि का मापन कहते है ।

(ख) **निदानात्मक परीक्षण (Diagnostic Test)-** ये परीक्षण किसी विषय में व्यक्ति की दुर्बलता तथा अच्छाई का पता लगाते है ।

निष्पत्ति परीक्षण के प्रकार

निष्पति परीक्षण निम्न प्रकार के होते है -

इनमें अध्यापक निर्मित परीक्षण स्थानीय उद्देश्यों की पूर्ति हेतु विद्यालय विशेष के पाठ्यक्रम पर आधारित होता है ।

लेकिन मानकीकृत निष्पत्ति परीक्षण का प्रमाणीकरण विस्तृत दृष्टि व उद्देश्यों के साथ किया जाता है तथा आयु - अन्तर, ग्रेड - अन्तर, लिंग - अन्तर आदि के आधार पर मानक (Norms) ज्ञात किया जाता है ।

वस्तुनिष्ठ परीक्षणों के गुण -

ये वस्तुनिष्ठ, वैध तथा उच्च विश्वसनीयता से युक्त होते है । इनमें व्यापकता होती है । तथा इनका प्रशासन, अंकन, सारणीयन व विश्लेषण सरल होता है । ये मानक होते है । वस्तुनिष्ठ परीक्षणों की सीमाएं

- इसमें भाषा प्रवाह अभिव्यक्ति व शैली का मापन नहीं हो सकता ।
- इनके द्वारा रचनात्मक चिन्तन का विकास नहीं होता ।
- इनमें मौलिकता व मौलिक चिन्तन का अभाव होता है ।
- छात्र नकल कर सकते हैं ।
- इन्हें तैयार करना कठिन, खर्चीला तथा समय लेने वाला हैं ।

10.2.1 कुछ प्रमुख सामान्य निष्पत्ति परीक्षण (Some important General Achievement Test)

केलीफोर्निया निष्पत्ति परीक्षण

"व्यक्ति के मूल कौशल (Intelligence Test) यथा - शाब्दिक वाचन, वचन-समझ, गणित में मूल समस्याओं, तर्क, अंक प्रत्यय तथा भाषा व्याकरण के परीक्षण सम्मिलित है ।

सीक्वेंसल शैक्षिक उन्नति प्रगति

विभिन्न आयुस्तरों (4 से 14 वर्षो तक) के बालकों के वाचन, लेखन, गणित, विज्ञान, सामाजिक अध्ययन, श्रवण आदि के मापन हेतु इस परीक्षण का निर्माण किया गया है।

स्टेनफोर्ड निष्पत्ति परीक्षण

यह सबसे प्राचीन निष्पत्ति परीक्षण ।

मैट्रोपोलिटन निष्पत्ति परीक्षण

इसमें पांच परीक्षण मालाएं है तथा अनेक विषयों से सम्बन्धित पद परीक्षण माला में हैं।

इसके अतिरिक्त कुछ विशिष्ट निष्पत्ति परीक्षणों का भी निर्माण हुआ है जिनके आधार किसी विशिष्ट क्षेत्र में व्यक्ति की योग्यता या निष्पत्ति का मापन किया जा सकता है ।

10.2.2 बुद्धि परीक्षण (Intelligence Test)

कुछ मनोवैज्ञानिकों ने बुद्धि को सीखने की योग्यता व समायोजन की योग्यता "माना है तो कुछ ने अमूर्त चिन्तन की योग्यता माना है । लेकिन वह सर्वमान्य तथ्य है कि बुद्धि का सम्बन्ध प्रशिक्षण, आयु शरीर गठन, वंशानुक्रम, व्यवसाय एवं जाति आदि महत्वपूर्ण कारकों से है । बुद्धि जैसे- महत्वपूर्ण तथ्य के मापन के लिए बुद्धिपरीक्षणों का निर्माण किया गया है । जो इस प्रकार है-

10.2.2.1 व्यक्तिगत बुद्धि परीक्षण (शाब्दिक तथा अशाब्दिक) (Individual Intelligence Test (Verbal and Non-Verbal)

इनके द्वारा एक समय में एक ही व्यक्ति की बुद्धि का मापन होता है । शाब्दिक परीक्षण भाषा और शब्दों के प्रयोग के कारण पढ़े लिखें लोगों के लिए हैं तथा इसमें ज्यामितीय आकृतियों के द्वारा व्यक्ति की हाथ द्वारा की गयी आकृतियों का पता लगाया जाता है । कुछ प्रमुख परीक्षण इस प्रकार हैं :-

(क) **बिने द्वारा परीक्षण** - सन् - 1905 में बिने ने 30 प्रश्नों का ऐसा परीक्षण तैयार किया जिसका संबंध छात्रों को विभिन्न वर्गो में बांटने से था । इसका नाम (कागज पेन्सिल) परीक्षण था ।

(ख) **बिने साइमन बुद्धि परीक्षण** - सन् - 1906 में उसे 15 वर्ष तक के बालकों की मानसिक उम्र ज्ञात करने के लिए था। 1911 में इसमें कुछ पुराने प्रश्न हटाकर नये प्रश्न जोड़े गये।

(ग) **स्टेनफोर्ड बिने परीक्षण (1918)** - स्टेनफोर्ड विश्वविद्यालय में एम. एल. टरमैन ने उपर्युक्त परीक्षण में कुछ संशोधन करके पहली बार उपलब्धि जानने का प्रयास किया । सन - 1937 में इसमें पुन: संशोधन हुआ और 99 प्रश्न कर दिये । इस प्रकार इन परीक्षणों का उपयोग व्यक्तिगत जानकारी के आधार पर दैनिक समस्याओं के समाधान के लिए किया गया ।

(घ) **वेश्लर - बेलेव्यू (Wecheler-Bellueu) परीक्षण -** वेश्लर - बेलेब्यू परीक्षण को 10 से 60 वर्ष के व्यक्तियों के लिए बनाया गया । 1955 में बुद्धि परीक्षण के साथ इसमें सम्प्राप्ति मापन को भी जोड़ा गया ।

(ङ) **मिनेसोटा पूर्व विद्यालय स्केल -** इसका उद्देश्य 18 मास से लेकर 8 वर्ष तक की आयु के बच्चों का बुद्धि मापन करना था ।

(च) **गैसेल - विकास अनुसूचि -** शिशु विकास प्रयोगशाला येल में डौसेल एवं उसके सहयोगियों ने जन्म से लेकर 1 वर्ष की आयु वाले शिशुओं के विकासात्मक व्यवहार को अध्ययन करने के लिए यह सूचना बनाई गयी थी ।

10.2.2 सामूहिक बुद्धि परीक्षण (शाब्दिक ब अशाब्दिक) (Group Intelligence Test (Verbal and Non-Verbal)

इनका प्रयोग बिना पढ़े लिखें व्यक्तियों पर किया गया । इनका प्रारम्भ 1917-18 में प्रथम विश्वयुद्ध के समय हुआ। इनका क्रम निम्नांकित है-

1. आर्मी अल्का परीक्षण
   यह शिक्षित सैनिकों के लिए था ।
2. आर्मी बीटा परीक्षण
   यह अशिक्षित सैनिकों के लिए था ।
   इन दोनों परीक्षणों से साढ़े छह लाख योग्य सैनिकों एवं अफसरों की अल्प समय में परीक्षा ली गई ।
3. एन' जी. सी. टी. (Navy General Classification Test)
4. ए. जी सी टी. (Army General Classification Test)
5. डी. ए. बी. डी. टी. (D.A.V.D. Test)
6. सी. एम. एम. टी. (California Mental Maturity Test)
7. टी. एम. एम. टी. (Terman McNamar Test)
   यह परीक्षण विदेशी है । भारत में मनोविज्ञान उ प्र. इलाहाबाद द्वारा 12,13,14 वर्षो के बालकों के लिए B.P.T. नाम का परीक्षण बनाये गयें । डॉ. जलोटा ने भी शाब्दिक सामूहिक परीक्षण 1972 में बनाया ।

10.2.2.3 क्रियात्मक. अशाब्दिक या निष्पादन परीक्षण (Non-Verbal or Performance Test) सन् - 1911 तक बुद्धि परीक्षणों में नाप का प्रयोग होता था । अत: 1911 में हिली ने प्रथम निष्पादन परीक्षण बनाया । इसका प्रयोग बालक की बुद्धि धैर्य या मानसिक स्थितियों को समझने में किया जाता है । इसके बाद भी अन्य परीक्षण बनाये गये । उनमें से महत्वपूर्ण निम्नलिखित हैं-

1. सैंग्युन आवृत्ति फलक परीक्षण ।
2. हिली चित्रपूर्ति परीक्षण ।
3. न्णिटनर पेटर्सन मापदण्ड ।
4. रेबिन उत्तरोत्तर रूपांकन परीक्षण ।
5. गुडइनफ निष्पादन परीक्षण ।
6. भाटिया बुद्धि परीक्षण ।
7. शिकांगो अशाब्दिक परीक्षण ।

निष्पादन परीक्षों में निम्नांकित तरीकों से बुद्धि मापन होता हैं -

1. चित्रपूर्ति परीक्षा
2. चित्रांकन परीक्षा
3. भूल - भूलैया परीक्षण
4. वस्तु संयोजन

5. आकृति फलक परीक्षा

10.2.3 अभियोग्यता परीक्षण (Aptitude Test)

अभिरूचि और विशेष योग्यता को प्राय: एक ही अर्थ में ग्रहण किया जाता है जबकि "अभियोग्यता स्वाभाविक रूप से प्रत्येक मनुष्य में होती है फिर भी ये योग्यताएं नहीं हैं । यह कहना ठीक होगा कि अभियोग्यता अव्यक्त मानसिक झुकाव है जबकि विशेष योग्यताओं और अभिरूचियों के परीक्षण एक ही कोटि में रखे जाते हैं । "अभिरूचि वर्तमान दशा है जो व्यक्ति की भविष्य की क्षमताओं की ओर संकेत करती है ।"

(एम. ई. ट्रेक्सलर)

"अभियोग्यता परीक्षा किसी व्यक्ति की किसी विशेष क्रिया में उपलब्धि की क्षमता अथवा स्तर के सम्बन्ध में भविष्य कथन करता है । "

इन परीक्षणों के द्वारा हम यह जान सकते हैं कि किसी विशेष कार्य को करने की किसी विशेष कार्य को करने की किसी व्यक्ति में कितनी और किस स्तर की क्षमता है । अभियोग्यताएं सापेक्षिक रूप से स्थायी होती है । अत: अभियोग्यता के निम्नलिखित चार तत्व हैं, जिन्हें परीक्षणों के निर्माण में ध्यान रखना होता है -

1. किसी क्षेत्र में ज्ञान तथा कौशल प्राप्त करने की क्षमता ।
2. सफलता प्राप्त करने की तत्परता ।
3. प्रयास का जारी रखना ।
4. अपने व्यवसाय में सन्तुष्टि ।

10.2.3.1 अभियोग्यता का मापन (Measurement of Aptitude):

अभियोग्यता का प्रत्यक्ष मापन नहीं किया जा सकता अपितु वर्तमान उपलब्धियों के आधार पर उसके सम्बन्ध मे अनुमान लगाते हैं कि इस विशेष क्षेत्र में उचित वातावरण एवं प्रशिक्षण मिलने पर उसे कितनी सफलता मिल सकती है । किसी क्षेत्र में अभियोग्यता परीक्षण का निर्माण करने के लिए उस विशेष क्रिया अथवा व्यवसाय का विश्लेषण करके विभिन्न तत्वों के आधार पर प्रश्नों का निर्माण करतें है । उदाहरणार्थ । -संगीत सम्बन्धी अभियोग्यता के मापन के लिए व्यक्ति की लय, ताल ध्वनि आदि को याद रखने तथा उसमें भिन्नता को परखने की क्षमता को ध्यान में रखते है । इसी प्रकार कानून सम्बन्धी अभियोग्यता मापन के लिए तात्कालिक स्मरण, कानूनी लेखों के अध्ययन व ग्रहण, तार्किक शक्ति व विश्लेषणात्मक अमूर्तचिन्तन की क्षमता को ध्यान में रखते हैं ।

10.2.3.2 अभियोग्यता परीक्षण के प्रकार क्षेत्र (Types of Aptitude Test)

1. सामान्य अभियोग्यता परीक्षण	प्राविधिक क्षमता, लिपिक क्षमता
2. विशेष अभियोग्यता परीक्षण	भाषा, गणित, विज्ञान में अभियोग्यता
3. व्यवसायिक अभियोग्यता परीक्षण	कानून, चिकित्सा, इंजीनियरिंग, शिक्षण
4. क्षमता अभियोग्यता परीक्षण	संगीत, कला अभियोग्यता परीक्षण

10.2.3.3 अभियोग्यता परीक्षण (Aptitude Test)

- **लिपिकीय अभिक्षमता परीक्षण (Clarical Aptitude Test)**

1. मिनेसोटा व्यवसायिक परीक्षण
2. औद्योगिक मनोविज्ञान राष्ट्रीय संस्थान लिपिक परीक्षण
3. डिट्रोइट लिपिक परीक्षण
4. सामान्य लिपिक परीक्षण
5. थर्स्टन लिपिक परीक्षण

- **यान्त्रिक अभियोग्यता परीक्षण (Mechanical Aptitude Test)**

1. स्टानाक्विस्ट यान्त्रिक एकत्रीकरण परीक्षण ।
2. मिनेसोटा यांत्रिक एकत्रीकरण परीक्षण ।
3. बेने यान्त्रिक योग्यता परीक्षण ।
4. ओ. रुरके यान्त्रिक अभिरूचि परीक्षण ।

- **कलात्मक अभिक्षमता परीक्षण (Fine Arts Aptitude Test)**

1. मियर कला निर्णय परीक्षण ।
2. मेक एडोरी कला परीक्षण ।
3. सीशोर संगीतात्मक परीक्षण ।
4. ड्रे संगीतात्मक स्मृति परीक्षण ।

- **गत्यात्मक दक्षता अभिक्षमता के लिए (Aptitude for Dynamic Skill)**

1. ओकोनर चिमटी दक्षता परीक्षण
2. स्टेडीनेस टेस्टर ।
3. बेने हस्त औजार योग्यता परीक्षण ।

- **आन्तरिक्षिक योग्यता परीक्षण (Internal Ability Test)**

1. मिनेसोटा आन्तरिक सम्बन्ध परीक्षण ।
2. बी. पी. एस. टी. आन्तरिक्षिक योग्यता परीक्षण इलाहाबाद ।
3. औद्योगिक मनोविज्ञान संस्थान लन्दन परीक्षण ।

- **चिकित्सा अभिक्षमता परीक्षण । (Medical Aptitude Test)**
- **कानून अभिक्षमता परीक्षण । (Law Aptitude Test)**
- **व्यापार अभिक्षमता परीक्षण । (Business Aptitude Test)**
- **इंजीनियरिंग अभिक्षमता परीक्षण । (Engineering Aptitude Test)**
- **शिक्षण विद्वता अभिक्षमता परीक्षण । (Teacher Efficiency Aptitude Test)**
- **विशिष्ट विद्वता अभिक्षमता परीक्षण । (Special Aptitude Test)**

1. **भेदात्मक अभिक्षमता परीक्षणमाला (Differential Interest Battery)-** इसके अन्तर्गत शाब्दिक तर्क, सांख्यिक योग्यता, गहन तर्क, भाषा व्यवहार आदि के मापन की विधियां सम्मिलित हैं ।

2. **प्रमुख रूचि परीक्षण माला (Prominent Interest Battery)** इसमें "क्यूडर का व्यवसायिक
पसन्द लेख, अत्यन्त प्रसिद्ध और उपयोगी परीक्षण हैं ।

10.2.4 रूचि परीक्षण (Interest Test)

रूचि का सम्बन्ध मुख्य रूप से शिक्षाशास्त्र से रहा है ।

विन्धम के अनुसार

"रूचि किसी अनुभव में सविलीन होने व इसमें संलग्न रहने की प्रवृत्ति है ।"

रूचि के सम्बन्ध में डी. चौहान एव अन्य सहयोगियों ने अपने शोध ग्रन्थ में लिखा है - "रूचियाँ मानव व्यवहार के संवेगात्मक, ज्ञानात्मक, व आनुवंशिक पक्ष से सम्बन्धित होने के कारण विभिन्न प्रकार की ग्रन्थियों से युक्त व संवेगात्मक रूप से संगठित व्यवहार का निर्माण करता है और उसे कार्यरत करती है । अर्जित रूढियां जिनका निमार्ण स्वभाव अन्त: स्त्रावी - निष्पत्ति, सामाजीकरण, बुद्धि आधात्मक अनुभव आदि से होता हैं, एक विशेष प्रकार की दिशा या आयाम प्रस्तुत करता है । इसका विकास मध्य स्तर की निष्पत्ति व प्रत्याशित की अन्त: क्रिया के परिणाम स्वरूप होता है । कि मनुष्य के कार्यो से सम्बन्धित होती है ।" 'चौहान स्वरूप होता है । जो कि मनुष्य के कार्यो से सम्बन्धित होती है । "चौहान एन. एस. तिवारी जी. पी. एवं राजपूत सी. एल. इन्ट्रस्ट मॉडिलिटी एज ए फंक्शन आफ सेक्स, आगरा विश्वालय जनरल आफ रिसर्च (लेटर्स)

10.2.4.1 रूचियों के प्रकार (Types of Interest)

Jon's ने रूचियों के दो प्रकार बताये हैं ।

आन्तरिक (Intrinsic)- क्रिया में ही आन्तरिक रूचि निहित होती है । इसमें बिना किसी बाह्य प्रेरणा के क्रिया के प्रति ही वास्तविक आकर्षण होता है । यह स्थायी प्रकार का होता है और जारी रहता है । यद्यपि निकट का लक्ष्य पूरा हो चुका होता है ।

वाहाय (Extrinsic)- किसी क्रिया के लक्ष्य अथवा उद्देश्य से सम्बन्धित सुखद संवेग होता है । इसके अन्तर्गत यश, नाम, धन, विजय आदि प्राप्त करना लय हो सकता है । लय प्राप्त होते ही यह समाप्त हो जाती है ।"

रूचियों के व्यक्त, अव्यक्त तथा मापित तीन प्रकार हैं ।

10.2.4.2 रूचि मापन के उपकरण (Tools for Interest Management)

ये दो प्रकार के होते है :

1. वैज्ञानिक रूप से तैयार की गई रूचि तालिकाऐ अर्थात् नियमित तालिकायें ।
2. व्यक्ति द्वारा स्वयं दिये गयें अभिलेख, क्रियायें प्रत्यक्ष निराकरण आदि जो जानने के इच्छुक लोगों द्वारा किये जाते हों । अर्थात् अनियमित उपकरण ।

10.2.4.3 प्रमुख रूचि परीक्षण (Important Interest Test)

शिक्षा व मनोविज्ञान के क्षेत्र में अनेक रूचि परीक्षणों का निर्माण हुआ । जिनका संक्षेप में यहां वर्णन किया गया है ।

1. **स्ट्रांग व्यावसायिक रूचि प्रपत्र (Strong :Vociational Interest Inventory)**- सन् 1919 में स्ट्रांग ने इसका प्रकाशन कराया, जिसमें विभिन्न विषयों, क्रियाओं, स्कूल विषयों व्यक्तिगत विशेषताओं से सम्बन्धित 420 पद थे । स्ट्रांग ने अपने अनुसंधान परिणामों से यह निष्कर्ष निकाला कि जो व्यक्ति विभिन्न व्यवसायों में कार्यरत होते हैं । इनका प्रशासन 17 वर्ष से अधिक आयु वालों पर किया जाता है तथा प्रशासन में करीब 5० मिनट लगते हैं ।
2. **कूडर प्राथमिकता या अधिमान लेखा -** यह परीक्षण औद्योगिक व व्यावसायिक व व्यक्तिगत तीन रूपों में हैं । इसका मुख्य उद्देश्य विभिन्न व्यावसायों की अपेक्षा आपेक्षित रूचि का मापन करना है ।
3. **थर्स्टन रूचि सूचि (Thurston Interest Inventory)-** इसका प्रशासन व फलांकन काफी सरल है । इसके अन्तर्गत 100 व्यावसायिक शीर्षकों के युग्म दिये है । जिनको परीक्षार्थी अपनी -रूचि के अनुसार चयन करती है । इन व्यावसायिक युग्मों का सम्बन्ध 10 क्षेत्रों से है । ये क्षेत्र हैं - भौतिकविज्ञान, जीव विज्ञान, गणना, व्यापार, अनुनयात्मक, भाषा विज्ञान प्रशासन, कलात्मक संगीतात्मक व समाजोपकार ।
4. **गिलफोर्ड शनीडमैन व जिगरमैन रूचि परीक्षण (Gilford, Sheiderman and Gigarman)** - इस रूचि परीक्षण मे परीक्षार्थी को 360 क्रियाओं के सम्बन्ध मे अपनी पसन्द का क्रम बताना पड़ता है । इन 360 क्रियाओं को 9 रूचि क्षेत्रों में विभाजित किया गया है ।
5. **अन्य रूचि परीक्षण -** कुछ महत्वपूर्ण रूचि सूचि निम्न हैं ।
   1. क्लीटन की व्यावसायिक रूचि सूची
   2. हेपनर की व्यावसायिक रूचि लब्धि
   3. ली - जार्वे सूची
   4. डी. चौहान व डी. तिवारी जीस्ट चित्र रूचि सूची

10.2.5 अभिवृत्ति परीक्षण या मतावली (Attitude test)

शैक्षिक व मनोवैज्ञानिक अनुसंधान का महत्वपूर्ण क्षेत्र अभिवृत्ति का मापन व वर्णन करता है । इनका सम्बन्ध संवेगों से होता है । सुख व दुख के लिए जैसे - भय, प्यार, व घृणा आदि । अभिवृत्ति कुछ मात्रा में वस्तुओं विचारों, संस्थाओं या व्यक्तियों के प्रति धनात्मक या ऋणात्मक प्रवृत्तियां हैं अभिवृत्तियों के मापन के लिए तीन प्रकार की विधियों का प्रयोग किया जाता है ।

1. **निरीक्षण (Observation) -** कुछ मामलों में किसी भी विधि का प्रयोग नहीं करना पड़ता । जैसे - अधिक मारने वाले अध्यापक के प्रति बच्चों की नकारात्मक अभिवृत्ति ।

2. **आत्म रिर्पोट (Self Report) -** इसमें छात्र के वक्तव्यों की एक सूची होती है । जिसमें भिन्न मात्राओं को धनात्मक व नकारात्मक भावनाएं होती है उससे सभी से सहमत या असहमत होने के लिए कहा जाता है जैसे

स्पष्टीकरण :

1. S.D. = Strongly Disagree
2. D = Disagree
3. D.S. = Disagree Slightly
4. A.S. =Agree Slight
5. A = Agree
6. S.A. =Strongly Agree

3. मनोबैज्ञानिक प्रविधियां (Psychological Techniques)

1. **थर्स्टन तथा चेव की समदृष्टि अन्तर बिधि -** इसमें वस्तु प्रक्रिया या व्यक्ति के विचार करने वाले कथनों को 11 भागों में बांटा गया है । इन श्रेणियों - अंतरों को सातत्य पर बांटते हैं । उदाहरणार्थ -

इस विधि में कथनों का मध्यांक मूल्यों के आधार पर सार्थक पदों (कथनों) का प्रतिशत ज्ञात करके मापनी मूल्य चतुधशि मूल्य ज्ञात करतें हैं । यह ही इसकी प्रमुख कसौटी है । विश्वसनीयता - 0.85 है ।

2. **लिकर्ट : योग निर्धारण विधि -** इस विधि में अनुकूल तथा प्रतिकूल मनोवृत्तियों की मापनी निर्माण के लिए बड़ी संख्या में धनात्मक तथा ऋणात्मक कथनों को एकत्रित करके विभेदात्मक या मूल्यों के आधार पर सार्थक अन्तर वाले कथनों को मापनी में सम्मिलित कर लिया जाता है । साथ ही यह सम्बन्ध भी ज्ञात किया जाता है । इस मापनी की प्रमुख समस्या अधिकतम व निम्नतम अंको की विवेचना करना है । क्योंकि इस मापनी में तटस्थ या शून्य बिन्दु नहीं होते । इसकी विश्वसनीयता थर्स्टन प्रणाली से अधिक है ।

3. **सफरि क्रमबद्ध अन्तर विधि -** यह विधि थर्स्टन की विधि का दूसरा रूप है । इसमें सिर्फ एक व्यक्ति का ही निर्णय लेते हैं । नियम व आदेश उसी प्रकार के हैं जैसे थर्स्टन के ।

4. **गटमैन की स्केलोग्राम विधि -** इस विधि में जोड़े के रूप में कथनों का चयन करके सहमत व असहमत मे बांटा जाता हैं । जो व्यक्ति अधिक अनुकूल उत्तर देते हैं, उतने ही अधिक अभिवृत्ति अंक भी होते हैं ।

5. **एडवर्ड्स तथा किलपेट्रिक की मापनी** : भेदात्मक विधि - इसमें कथनों का चौथाई मूल्य ही ज्ञात करते हैं विश्लेषण में 50% को निकाल कर 50% को लिकर्ट विधि के अनुसार 6 भागों में बाँट देते हैं । फाई सम्बन्ध के निम्न सूत्र की सहायता से ज्ञात किया जाता है और उसी के आधार पर कथनों का आखिरी रूप चयन कर लिया जाता है ।

$$Phi-coefficient = r = \frac{bc-ac}{(a+b)(b+d)(c+d)}$$

6. **ओसगुड की सिमेन्टिक डिफरेन्सियल बिधि -** इसमें भिन्न - भिन्न वस्तुओं, व्यक्तियों आदि के प्रति अभिवृत्तियों का मापन किया जाता है । इसके लिए 7 बिन्दुओं वाली मापनी का प्रयोग करते हैं ।

7. **रेमर्स की मास्टर टाईप मापनी -** रेमर्स ने एक अभिवृत्ति मापनी कर रचना की । इसके अतिरिक्त अन्य मापनियां हैं -

अ - हिल की अभिवृत्ति मापनी ।

ब - कूम्ब तथा ट्रेवर्स की अध्यापन के प्रति अभिवृत्ति मापनी ।

स - बागार्डे सामाजिक अन्तर मापनी ।

8. **प्रक्षेपण विधियां -** इनका वर्णन आगे व्यक्तित्व मापन के अतिरिक्त किया जायेगा ।

10.2.6 व्यक्तित्व परीक्षण (Personality Test)

मन के अनुसार "व्यक्तित्व प्रणाली की बनावट व्यवहार के प्रकारों, रूचियों मनोवृत्तियों, क्षमताओं योग्यताओं और अभिरूचियों का विशेषतापूर्ण समन्वय है"

आलपोर्ट के अनुसार "व्यक्तित्व व्यक्ति के उन मनोशारीरिक ढंगो का गत्यात्मक संगठन है जो पर्यावरण के प्रति उसके अपूर्व समायोजन को निर्धारित करता हैं ।"

जुंग के अनुसार "व्यक्ति अर्न्तमुखी, बर्हिमुखी व उभयमुखी होता है । व्यक्ति पर वंश परम्परा, पर्यावरण, माता-पिता, रूढियों सिनेमा, खेल, जीवन, लक्ष्य, आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक व सामाजिक पर्यावरण का प्रभाव पड़ता है । एक समन्वित व्यक्तित्व में शारीरिक एवं मानसिक स्वस्थता, समायोजनशीलता सामाजिकता आत्मचेतना व आत्मविश्वास, लक्ष्य, प्रेरित जीवन, संतोष और महत्वकांक्षा, अदम्य संकल्पशक्ति, चरित्र की उत्तमता तथा संगठनात्मक अस्तित्व की प्रखरता आदि लक्ष्य होते है ।

10.2.6.1 व्यक्तित्व मापन की विधियां (Methods/Techniques of Personality Assessment)

10.2.6.2 व्यक्तिनिष्ठ विधियां या आत्मनिष्ठ विधियां (Subjective Method)

1. **आत्मकथा लेखन विधि (Autobiography)-** इस विधि में व्यक्ति से जीवन की प्रमुख घटनाओं या आत्मकथा लिखकर व्यक्तित्व का मापन किया जाता है । लेकिन इसमें व्यक्ति अपने दोष छिपा भी सकता है।

2. **व्यक्ति इतिहास विधि (Case History Method) -** इस विधि में व्यक्ति के शारीरिक स्वास्थ्य, शिक्षा, सामाजिक सम्बन्ध पारिवारिक सम्बन्ध, बुद्धि तथा व्यवसाय आदि से सम्बन्धित सूचनाएं उनके मित्रों परिवार चिकित्सक शिक्षकों आदि के सहयोग से एकत्रित करके व्यक्तिगत का मापन किया जाता है जिसमें आत्मकथा लेखन की अपेक्षा अधिक यथार्थता 'होती है ।

3. **साक्षात्कार (Interview) -** इस विधि में परीक्षणकर्ता द्वारा व्यक्ति से सामान्य ज्ञान विचारों, चरित्र, शिक्षा आदि के बारे में प्रश्न पूछकर व्यक्तित्व का मापन किया जाता है । इसमें व्यक्ति निष्ठता की अधिकता तथा विश्वसनीयता और बेधता का अभाव पाया जाता है ।

4. **प्रश्नावली (Questionnaire) -** इस विधि में बालक के गुणों व अभिरूचियों आदि से सम्बन्धित प्रश्न तैयार करके हां या ना में उत्तर लेकर मापन किया जाता है । यह सामूहिक भी हो सकता है । इसमें विश्वसनीयता व वैधता का अभाव पाया जाता है । इसमें आत्म अभिव्यक्ति का अवसर दिया जाता है । व्यक्तित्व परख प्रश्नावली के पांच प्रकार इस प्रकार हैं. -

1. समायोजना प्रश्नावली ।
2. उपचारात्मक प्रश्नावली ।
3. असन्तुलित एवं सामान्य मनोशारीरिक दशा प्रश्नावली ।
4. विशिष्ट लक्षण परख प्रश्नावली ।
5. रूचि एवं मूल्य जांच प्रश्नावली ।

10.2.6.1.2 वस्तुनिष्ठा विधियां (Objective Method)

व्यवहार परीक्षण विधि (Behaviour Assessment Techniques)- इस विधि मे बालकों के व्यवहार में वैयक्तिक भेद, आपत्ति के समय सहयोगपूर्ण कार्य, किसी परिस्थिति में अलग-अलग प्रतिक्रियाएं देखकर व्यावहारिक भेद से आन्तरिक व्यक्तित्व का भी अनुमान लगा लिया जाता है ।

परिस्थिति परीक्षण - इसके अन्तर्गत 6 बिन्दुओं पर व्यक्तित्व की जांच की जाती है : -

परिस्थिति परीक्षण

बुद्धि लब्धि	आवृत्ति (जनसंख्या में)	आवृत्ति (न्यादर्श में)
90-100	130	13.0
80-90	150	15.0
70-80	60	6.0
60-70	30	3.0
	370	37.0

समाजमिति चरित्र जांच सिक्षा परीक्षण परिस्थिति तनाव परीक्षण नेतारहित समूह परिस्थिति कार्य करना साक्षात्कार

मूल्यांकन विधियां (Evaluation Method)

इस विधि में किसी व्यक्ति के एक गुण या लक्षण की मात्रा जानने के लिए उससे परिचित व्यक्तियों का मत लेने के लिए उस गुण को कई श्रेणियों में विभक्त किया जाता हैं फिर अधिक मत वाले श्रेणी को परिणाम में गिन लिया जाता है । जैसे -

<u>उदारता गुण</u>

1.	2.	3.	4.	5.	6.	7.
पूर्ण उदार	अधिक उदार	औसत उदार	उदार	कुछ उदार	अनुदार	कंजूस

स्थिति मापन रेखा :

इसके अन्तर्गत निम्नलिखित पैमाने हैं -

1. हेगर्टी आलसन विकमे मापन सूचि - कक्षा 1 से 10 तक के बालकों के लिए
2. ब्राइनलेण्ड सामाजिक परिपक्वता पैमाना - 2 वर्ष से 30 वर्ष तक के लिए
3. फेल्स माता पिता व्यवहार पैमाना
4. विटर्न वर्न साइकेट्रिक मापन पैमान - मानसिक रोगियों के लिए ।

निरीक्षण विधि (Observation Method) - इस विधि में भिन्न - भिन्न पर्यावरण में बालक के आचरण का निरीक्षण इस प्रकार से किया जाता है । कि बालक को उसका पता न लग सके इसकी अन्तर्निरीक्षण और बाहय निरीक्षण दो विधियां है । इसमें कुशल व तटस्थ निरीक्षण वैज्ञानिक यंत्र व टेप रिकार्ड केमरा, तत्काल लेखा व आवश्यक निरीक्षण आदि होना आवश्यक है।

शारीरिक परीक्षण विधि (Physical Test Method)- इस विधि में यंत्रो की सहायता से रक्त दबाब, हृदयगति, नाड़ी गति श्वासक्रिया आदि का अध्ययन किया जाता है ।

बाहय शारीरिक परीक्षण विधि (Independent Contact Method) - इस विधि से शरीर के बाहय लक्षणों यथा डील-डौल, मस्तिष्क का आकार, हस्तरेखाओं आदि का अध्ययन ज्योतिष के माध्यम से होता है । जैसे - बड़े कपाल वाला बुद्धिमान होता हैं इसे सामुद्रिक शास्त्र भी कहते है । इसी प्रकार हस्तरेखाओं, हस्ताक्षर तथा लेखन को काटने वाली प्रवृत्ति देखकर व्यक्तिव का पता लगता है ।

स्वतन्त्र सम्पर्क विधि (Indepdent Contact Method)- इस विधि में परीक्षक परीक्षार्थी के साथ घुलमिलकर उसकी अंतरंग बातें पूछता है और घनिष्ठता के आधार पर परीक्षार्थी अपनी गोपनीय बातें भी बता देत है । कभी - कभी छिपाता भी है लेकिन परीक्षक ताड़ जाता है ।

व्यक्तित्व सूची (Personality Inventory) - व्यक्तित्व सूचियों के माध्यम से विभिन्न व्यक्तित्व शीलगुणों का मापन व मूल्यांकन किया जाता है । एक शीलगुणवाली 'एकविभावली ' सूची में निम्न सूचियाँ आती हैं -

1. बर्नरिटर व्यक्तित्व सूची ।
2. बुडवर्थ की व्यक्तित्व प्रदत्त सूची ।
3. कोलगेट मानसिक स्वास्थ्य परीक्षण ।
4. थर्सटन व्यक्तित्व अनुसूची ।
5. वर्नरिटर की आत्म पर्याप्ति परीक्षण ।
6. मिनेसोटा व्यक्तित्व मापनी ।
7. गिलफोर्ड जिमरमैन स्वभाव सर्वेक्षण ।

बहु आयामी उपागम (Multidimensional approach) में व्यक्तित्व के अनेक कुछ शीलगुणों की एक सूची के माध्यम से अध्ययन करना सम्भव होता है । रेमण्ड वी कैटल ने अनेक बहु विमा सूचियों का निर्माण किया।

1. व्यक्तित्व कारक परीक्षण
2. स्नायु दौर्बल्य परीक्षण
3. टी. पी. ए. टी. हाई स्कूल व्यक्तित्व प्रश्नावली ।

इसके अतिरिक्त समायोजना सूचियों में वेल समायोजन सूची मिनेसोटा बहुपक्षीय व्यक्तित्व सूची।

मनोवैज्ञानिक विधि (Psychological Method) - इसके जन्मदाता फ्रयड का विश्वास था कि सामाजिक नैतिकता के भय से व्यक्ति अपनी बहुत सी इच्छाओं को दामित कर देता है जो अचेतन मन में रहकर बाहा व्यवहारों को प्रभावित करती रहती है । जिससे व्यक्तित्व में कुछ दोष आ जाते हैं । इसकी दो प्रमुख विधियां हैं ।

क. **स्वतंत्र साहचर्य विधि (Independent Association Method)-** इसमें एक शब्द उद्दीपक के रूप में बोल दिया जाता है और बालक अचेतन रूप से अनेक सम्बन्धित शब्द बोलता है जिससे बालक की दामित का आशय प्रकट होता है ।

ख. **स्वतंत्र विश्लेषण विधि (Independent Analysis Method)-** इसके द्वारा स्वप्न की वस्तुओं और स्वरूप का अध्ययन कर दामित इच्छाओं का पता लगाया जाता है ।

प्रक्षेपण विधियां (Projective Method) - एल. फ्रेक के अनुसार - "प्रक्षेपण परीक्षण से इस बात का ज्ञान होता है कि व्यक्ति किसी कार्य को ढंग से विचारता, सोचता और कहता है । यह संवेगात्मक कुसमायोजन और मानसिक रोगों की निदानात्मक विधि है जो विज्ञान पर आधारित है । इसकी प्रमुख विधियां इस प्रकार है -

रोशा इंक - ब्लाठ

क. **रोशाइंक-ब्लाठ परीक्षण -** (1921) इसमें दो कार्डो पर पड़े धब्बों के आधार पर दृढ़ता आदि का पता लगता है । यह परीक्षण अत्यधिक वैध है । तथा इसकी विश्वसनीयता "0.95" तक मानी जाती है । यह व्यक्तिगत तथा सामूहिक रूप से प्रयोग हो सकती है । यह किसी देश की संस्कृति से मुक्त है ।

ख. **कथाबोध परीक्षण (Story Appreciation Test)-** (मार्गन एवं मरे 1935) : इसमें तीस चित्रों के द्वारा बालक-बालिकाएं अपने मनोभावों, मनोवेगों, तनावों संवेगों आदि की अनजाने ही अभिव्यक्ति कर देता है । यह मानसिक चिकित्सा व व्यक्तिगत निर्देशन आदि के लिए बहुत उपयोगी है ।

ग. **बालकों का प्रसंगबोध परीक्षण (Children Apperception)** पशुओं के दस चित्रों की सहायता से 12 वर्ष तक के बालकों के लिए कहानी पूरी करने को कहा जाता है । इसका भारतीय करण सम्भव नहीं है ।

घ. **शब्द साहचर्य (Word Association) -** इस परीक्षण में 50 से 100 शब्दों का परीक्षण उच्चारण करता है और बालक तत्काल प्रतिक्रिया व्यक्त करता है जिसको अंकित करके व्यक्तित्व का मापन किया जाता है । इसमें रेपार्ट, मिल, युंग और केन्ट रोजानाफ के शब्द साहचर्य परीक्षण प्रसिद्ध है ।

10.3 समाजमिति परीक्षण व समाज आलेख (Socio-Metric Test and Record Inventories)

सामाजिक दूरी मापनी के 15 वर्ष पश्चात् हेलेन जेनिंग्स ने सामाजिक अध्ययन की विधि का आविष्कार कर इसके बारे में कहा - समाजमिति एक साधन है जिसके द्वारा एक दिये

गये समूह में एक निश्चित समय मे उसके सदस्यों के सम्बन्धो को सामान्य रूप से ग्राफ रूप में प्रस्तुत करते है । इसके द्वारा विचारों के आदान - प्रदान अथवा आकर्षण एवं विकर्षण के स्वरूप का एक दृष्टि में विस्तृत अध्ययन कर सकते हैं इसका उपयोग अनियमित समूहों, विद्यालयों, कक्षाओं. जेलो औद्योगिक तथा अन्य संगठनों के लिए किया जा सकता है ।

10.3.1 समाजमिति सूचिकायें (Socio-Metric Inventories)

1. समाजमिति परख मे समूह के आकार के अनुसार एक विशेष संख्या में चुनाव का अवसर प्रत्येक सदस्य को दिया जाता है ।
2. समूह की व्यावहारिक क्रिया से सम्बद्ध विशेष मापदण्ड का प्रयोग किया जाता है ।
3. प्रत्येक चुनाव के लिए विभिन्न स्तरों के चयन निश्चित करते है ।

10.3.1.1 सूचिकायें (Inventories)

(अ) आन्तरिक समूह सूचिकाएं (Internal Group Inventories)

1. समूह अन्त: क्रिया सूची

$Ca\,x100$ $Ca =$ समूह के अन्दर व्यक्त पसन्द की संख्या $\sqrt{1 - f\frac{s}{\sqrt{n}}}$

$gi = \overline{Xa} = \frac{1}{n}\sum {}^{0}x\left(30/2000 = .015\right)$

Ca_{-00} $Ca^{00} =$ समूह के अन्दर संदक्तिक रूप में सम्भव पसन्दों की संख्या

2. समाजमितिय चयन - स्तर सूची ।
3. समूह मे मेलमिलाप सूची ।
4. समूह मे मेलमिलाप सूची ।
5. समूह एकता सूची ।

(ब) अन्तर समूह सूचिकाएं (Inter Group Inventories)

1 समूह में मिलाप सूची ।

10.4 उचित परीक्षण का चुनाव (Selection of appropriate Tools)

किसी कार्य को करने हेतु जिन मूर्त साधनों का उपयोग किया जाता है, उन्हें उपकरण (Tools) तथा उन साधनों को सावधानी पूर्वक उपयोग मे लाने का तरीका तकनीकी (Techniques) कही जाती है । विभिन्न प्रकार के परीक्षण आदि, जिनके द्वारा हम व्यक्ति से सम्बन्धित उसकी योग्यताओं एवं क्षमता क्षमताओं को मापने का प्रयास करते हैं । ये सभी मनोविज्ञान, शिक्षा और समाजमिति के उपकरण (Tools) हैं । मानव व्यवहार अत्यन्त जटिल है । आयु विकास के साथ विभिन्न परिस्थितियों, क्षेत्रों तथा सन्दर्भो में मानव अपने व्यवहार का प्रदर्शन करता है । इन सभी व्यवहारों का अध्ययन विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण से किया जाता है । जिससे मानव व्यवहार की व्याख्या, नियंत्रण तथा भविष्यवाणी की जा सके । इन तीनों

उद्देश्यों की पूर्ति के लिए विभिन्न प्रकार के परीक्षणों की रचना की गई है । जब भी कोई परीक्षणकर्ता किसी व्यक्ति अथवा समूह के किसी गुण का मापन करना चाहता है तब उसके सामने समस्या के अनुसार यह तो ज्ञात होता है कि उसे वैयक्तिक, सामूहिक शाब्दिक या निष्पादन परीक्षण में से कौन सा चुनना है। वह यह भी जानता है कि बुद्धि, व्यक्तित्व, अभियोग्यता अथवा उपलब्धि परीक्षण में कौन सा परीक्षण उसके प्रयोजन को सिद्ध करेगा । प्रत्येक वर्ग में अनेक परीक्षण होते है । उसे केवल यह निश्चित करना होता है कि अपना चुनाव वह किस आधार पर करें । कौन सा परीक्षण उसके प्रयोजन को सिद्ध करेगा । प्रत्येक वर्ग मे अनेक परीक्षण होते है । उसे केवल यह निश्चित करना होता है कि अपना चुनाव वह किस आधार पर करें । कौन सा परीक्षण उसके उद्देश्य की पूर्ति अधिकतम सीमा तक करेगा ।

10.5 अच्छे परीक्षण की कसौटी (Criteria of Good Test)

विश्वसनीयता (Reliability)- विश्वसनीयता किसी अच्छे परीक्षण का वह गुण है जिसके अनुसार कोई भी परीक्षण न तो परिस्थिति से प्रभावित होता है और न ही समय से । उस परीक्षण का प्रयोग किसी भी परिस्थिति में और कितने ही अन्तराल से क्यों न किया जाये, परिणाम हर परिस्थिति में और हर समय ज्यों के त्यों रहते हैं । इसमे कोई परिवर्तन नहीं होता।

वैधता (Validity)- इस गुण के अनुसार, कोई परीक्षण, जिस उद्देश्य के लिए उसका निर्माण किया गया है उसके लिए जितना उपयुक्त सार्थक और उपयोगी है उतना ही वैध है अर्थात् वही मापें जिसके लिए बनाया गया हो । यह आवश्यक नहीं कि जिस परीक्षण मे विश्वसनीयता हो, उसमें वैधता भी हो ।

वस्तुनिष्ठता Objectivity) - जिस परीक्षण में परीक्षणकर्ता की व्यक्तिगत मान्यताओं को जितना कम स्थान प्राप्त होगा या होगा ही नहीं, वह परीक्षाएं उतना ही अधिक वस्तुनिष्ठ होगा । सभी परीक्षकों से प्राप्त प्राप्तांक समान होने चाहिए । परीक्षा के फलांको पर व्यक्तिगत रूचि का प्रभाव नहीं पड़ना चाहिए । इससे प्रश्नों की भाषा ऐसी नहीं होनी चाहिए जिसके अनेक अर्थ निकाले जा सके । एक प्रश्न के अनेक अर्थ वस्तुनिष्ठता को कम कर देते हैं । वस्तुनिष्ठता का प्रभाव विश्वसनीयता तथा वैधता पर भी पड़ता है ।

विभेदकता (Discrimination)- एक अच्छी परीक्षा की विशेषता यह है कि वह सामान्य प्रखर तथा मन्द बुद्धि बालकों में अन्तर कर सके । इसी आधार पर छात्रों का वर्गीकरण किया जाता है । परिक्षा में ऐसे प्रश्न रखे जाने चाहिए जो सरल भी हो और कठिन भी । प्रश्न सरल से कठिन की ओर बढने चाहिए । कुछ ऐसे प्रश्न होने चाहिए जिन्हें बालक हल कर सकें । तथा कुछ जिन्हें प्रखर बुद्धि ।

व्यापकता (Broad Based)- एक अच्छे परीक्षण में समग्र पाठ्य वस्तु से प्रश्न होने चाहिएं । जिससे केवल कुछ प्रश्न रटकर उन्हें उत्तीर्ण न किया जा सके । समग्रता या व्यापकता के अभाव में परीक्षण में वैधता नहीं आ सकती । परीक्षा के द्वारा केवल एक ही अंग या अंश का मापन न होकर अपेक्षित अंगों का मापनी होना चाहिए ।

समय की बचत (Economy)- परीक्षण के इस गुण के अनुसार कोई परीक्षण जितने कम समय में जितनी अधिक बातों की जांच कर सकता है वह परीक्षण उतनी ही अधिक अच्छा होता है । साथ ही यह परीक्षण निर्माण, प्रशासन और परिणाम प्राप्त करना किसी भी दृष्टि से अधिक व्यवसाय नहीं होना चाहिए ।

प्रशासन अंकन तथा व्याख्या (निर्वाचन) (Administration, Scoring & Interpretation)- एक अच्छे परीक्षण के मुख्य गुण यह हैं कि उसे आसानी से प्रयोग किया जा सके । परीक्षण मे व्यवहारित हो, मूल्यांकन आसानी से किया जा सके तथा उसकी व्याख्या और निर्वाचन मे कठिनाई नहीं आये ।

10.6 स्वमूल्यांकन (Self Assessment):

अब तक आपने क्या समझा, इसका आप स्वय मूल्याँकन निम्न लिखित अभ्यास प्रश्नों द्वारा कीजिए -

1. मापन एवं मूल्यांकन से आप क्या समझते है? दोनों मे क्या अन्तर है? स्पष्ट कीजिए ।
2. मनोवैज्ञानिक व शैक्षिक परीक्षण से आप क्या समझते है? यह कितने प्रकार के होते हैं?
3. निम्न से आप क्या समझते हैं :-
   (अ) बुद्धि परीक्षण (ब) अभियोग्यता परीक्षण
4. रूचि परीक्षण का क्या अभिप्राय है? विस्तार से वर्णन करों ।
5. व्यक्तित्व मापन की आत्मनिष्ठ व वस्तुनिष्ठा क्या विधियां हैं? दोनों मे क्या अन्तर है व दोनों में कौन सा श्रेष्ठ है ।
6. सजमिति मापन व समाज पर लेख लिखे ।

10.7 सन्दर्भ ग्रन्थ (Reference)

1. सुरिवया महरोत्रा तथा महरोत्रा, आरएन - "शैक्षिक अनुसंधान के मूल तत्व' विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा 1979
2. सिन्हा, एच. पी - "शैक्षिक अनुसंधान' विकास पब्लिशिंग हाउस प्रालि नई दिल्ली 1979
3. तिवारी, गोबिन्द - "शैक्षिक एवं मनोवैज्ञानिक अनुसंधान के मूलाधार' विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा 1979 पू 221 से 223
4. कपिल, एच. के - 'सांखिकी के मूल तत्व' विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा, 1981
5. राय, पारसनाथ - "अनुसंधान परिचय"
6. Best J.W - “Research in Education” frenica Hall of India (Pvt.) Ltd.,New Delhi-1987

इकाई-11

प्रतिचयन या न्यादर्श का-महत्व विधियां आकार एवं-प्रतिचयन की त्रुटियां

(IMPORTANCE, METHODS, SIZE & ERRORS OF SAMPLING)

11.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objective)

11.1 प्रस्तावना (Introduction)

11.2 प्रतिचयन क्या है? (What is Sampling)

11.3 प्रतिचयन का अर्थ (Meaning of Sampling)

11.4 प्रतिचयन की परिभाषाएं (Definitions of Sampling)

11.5 प्रतिचयन या न्यादर्शन का उद्देश्य (Objective of Sampling)

11.6 न्यादर्शन का महत्व (लाभ और उपयोगिता) ((importance of Sampling)

11.7 प्रतिचयन विधि के दोष (Demerits of Sampling Method)

11.8 अच्छे प्रतिचयन की विशेषताएं या आवश्यक तत्व (Characteristics of Good Sampling)

11.9 प्रतिचयन की विधियां (Methods of Sampling)

11.10 प्रतिचयन या न्यादर्शन का आकार (Size of Sampling)

11.11 प्रतिचयन त्रुटि (Sampling Error)

11.12 स्वमूल्यांकन (Self Assessment)

11.13 सन्दर्भ ग्रन्थ (Reference)

11.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aim and Objective)

इस इकाई के अध्ययन के बाद छात्र इस योग्य हो जायेंगे कि वे समझ सके कि-

- प्रतिचयन क्या है तथा शैक्षिक शोध में इसका क्या महत्व है ।
- प्रतिचयन की विधियां क्या है तथा इसके क्या गुण-दोष है ।
- प्रतिचयन की प्रमुख त्रुटियां क्या है।

11.1 प्रस्तावना (Introduction)

किसी एक समिष्ट से संबन्धित अध्ययन की दो प्रमुख विधियाँ हैं- पहली प्रचलित विधि, लेकिन मनोविज्ञान तथा शिक्षा के क्षेत्र में इस प्रकार की विधि का प्रयोग एक प्रकार से असम्भव ही है । अत: विश्वसनीय निष्कर्ष प्राप्त करने के लिए दूसरी विधि "आगमनात्मक सांख्यिकी" अथवा 'प्रतिचयन सांख्यिकी' का उपयोग किया जाता है ।

11.2 प्रतिचयन क्या है? (What is sampling)

मनोविज्ञान व शिक्षा के क्षेत्र मे हम जिन इकाइयों का प्रयोग करते है, उनका स्वरूप अत्यंत विषमजातीय रहता है । आधुनिक सांख्यिकी में प्रतिचयन से अभिप्राय उस क्रमबद्व चयन पद्वति से है, जिसकी सहायता से समष्टि से सम्बन्धित वैज्ञानिक अध्ययन के लिए कम से कम इकाईयों की आवश्यकता पड़ती है। प्रतिचयन में प्रसम्भाव्यता सिद्वान्त के अनुसार थोड़े गिने-चुने व्यक्तियों के अध्ययन के आधार पर ही समस्त जन संख्या के सम्बन्ध में वैज्ञानिक निष्कर्ष प्राप्त किये जा सकते है ।

11.3 प्रतिचयन का अर्थ (Meaning of Sampling)

प्रतिदर्श समष्टि का वह अंश होता है, जिसमें समिष्ट के अध्ययन हेतु समस्त विशेषताओं का स्पष्ट प्रतिबिम्ब दिखाई पड़ता है।

प्रतिदर्श से अभिप्राय अध्ययन क्षेत्र की इकाई अथवा इकाईयों के समूह से लिया जाता है जबकि न्यादर्शन से अभिप्राय न्यादर्श की चयन पद्वति से रहता है । न्यादर्शन ज्ञान की उस प्रक्रिया के आधार पर ज्ञान किया जाता है जिसकी प्रक्रिया लघु से वृहत की ओर प्रसारित होती है । एक मनोवैज्ञानिक ने इसका अर्थ स्पष्ट करते हुए लिखा है- "प्रतिचयन सम्पूर्ण अध्ययन का केवल एक अंश मात्र ही नहीं है, बल्कि प्रतिचयन वह कला तथा विज्ञान है, जिसकी सहायता से उपयोग में लाये जाने वाले आकड़ों की विश्वसनीयता को प्रसम्भाव्यता सिद्वान्त के द्वारा नियन्त्रण में रखा जा सकता है तथा उसका मापन भी किया जा सकता हैं।"

11.4 प्रतिचयन की परिभाषाएं (Definition of Sampling)

विभिन्न विद्वानों ने इसे निम्नप्रकार से परिभाषित किया है : -

(1) "प्रतिदर्शन जनसंख्या या लोक में से लिया गया कोई भाग होता है जो जनसंख्या या लोक के प्रतिनिधि के रूप में कार्य करता है ।" **- करलिंगर**

(2) "एक सांख्यिकी प्रतिदर्शन उस सम्पूर्ण समूह या योग का एक अति लघु चित्र है जिसमें से कि निदर्शन लिया गया है ।" - **युंग**

11.5 प्रतिचयन या न्यादर्शन के उद्देश्य (Objectives of Sampling) न्यादर्शन के निम्नलिखित उद्देश्य हैं -

1. समस्त समष्टि का अध्ययन न करके केवल कुछ ही विशेष इकाईयों का ही अध्ययन करना।
2. शीघ्र निष्कर्ष ज्ञात करने की क्षमता प्रदान करना ।
3. निष्कर्षी में परिशुद्धता ((Precision) के स्तरों को स्थापित करना ।
4. कम खर्च पर आवश्यक सूचना प्रदान करना ।
5. प्रतिचयन प्रसरण (Sampling Variance) को कम करना ।
6. कभी-कभी संगणना विधि द्वारा आकड़ों की सत्यता की जांच करना ।

7. कुछ समस्याओं के निरन्तर विधि अध्ययन की आवश्यकता के लिए जैसे -सरकारी योजनाओं के प्रति जनता की प्रक्रियाए, राजनैतिक दलों की लोकप्रियता की जांच, चुनावों के समय जनमत की दिशा का अध्ययन, बाजार में दैनिक उपयोग की वस्तुओं के मूल्यों में परिवर्तन आदि के लिए ।

11.6 प्रतिचयन का महत्व (Importance of Sampling)

इसके अन्तर्गत प्रतिचयन के लाभ या उपयोगिता को लिया जा सकता है जो इस प्रकार है-

समय की बचत - प्रतिचयन द्वारा केवल कुछ गिनी-चुनी इकाईयों के अध्ययन के कारण समय की बचत होती है ।

धन की बचत - प्रतिचयन द्वारा सीमित न्यादर्श पर अध्ययन करने के कारण बहुत कम खर्च पर समान परिणाम प्राप्त हो सकते हैं ।

व्यापक अध्ययन - प्रतिचयन द्वारा थोड़े से खर्च व कम समय में दूर-दूर तक के क्षेत्रों का अध्ययन सम्भव हो सकता है ।

गहन अध्ययन - अपेक्षाकृत कम इकाईयां होने से उनका गहन अध्ययन सम्मव होता है, जिससे प्राप्त परिणामों में अधिक परिशुद्धता व यथार्थता की सम्भावना अधिक रहती है ।

प्रशासकीय सुविधा - अध्ययन के लिए कम इकाईयाँ होने के कारण संगणना और अध्ययन में अपेक्षाकृत अधिक प्रशासकीय सुविधा रहती है ।

विश्वसनीयता तथा वैध निष्कर्ष - प्रतिचयन द्वारा अध्ययन मे गहनता के कारण विश्वसनीय तथा वैध निष्कर्ष प्राप्त हो सकते है और उनकी व्याख्या प्रसम्भाव्यता सिद्धान्त (Probability theory) के आधार पर सरलता से की जा सकती है ।

प्रायोगिक अध्ययन में उपयुक्तता - मनोवैज्ञानिक प्रयोगशालाओं के साधन सीमित होते हैं तथा अनेक प्रकार के अध्ययनों को बहुत ही कम समय में पूरा करने की आवश्यकता होती है । अतएव ऐसी स्थिति में प्रतिचयन द्वारा अध्ययन अधिक उपयुक्त रहते हैं ।

बोधगम्यता - अध्ययन सम्बन्धी आकड़े कम होने से उनका स्वरूप बोधगम्य होता है ।

शुद्ध विवेचन तथा प्रस्तुतीकरण की सुविधा - प्रतिचयन के आधार पर संग्रह किये गये आकड़ों को स्तम्भ आकृतियों व अन्य आरेखों द्वारा सरलतापूर्वक स्पष्ट किया जा सकता है, तथा प्रसम्भाव्यता सिद्धान्त के आधार पर उनकी व्याख्या तथा विवेचना शुद्ध रूप से तथा सुविधापूर्वक की जा सकती है ।

दक्षता में वृद्धि - फल एवं उसको 'प्राप्त करने के लिए किये गयें व्यय के अनुपात को दक्षता कहते हैं । यदि सभी इकाईयों का अध्ययन न करने से फल में कुछ त्रुटि रह गयी, तो भी व्यय में अधिक कमी हो जाने के कारण सर्वेक्षण की दक्षता बढ़ जाती है ।

संगणना अध्ययन की कठिनाईयों से छुटकारा - प्रतिचयन द्वारा विश्वसनीयता, परिशुद्धता व यथार्थता की सम्भावना अधिक होने से संगणना अध्ययन की कठिनाईयों से छुटकारा मिल जाता है।

11.7 प्रतिचयन विधि के दोष (Demerits of Sampling Method)

1. पक्षपात पूर्ण प्रतिचयन की आशंका
2. पक्षपातपूर्ण प्रतिचयन के कारण भ्रामक निष्कर्षो की प्राप्ति
3. तकनीकि ज्ञान की आवश्यकता
4. प्रतिनिधि प्रतिदर्श के चयन में कठिनाई

   व्यावहारिक रूप से प्रतिनिधि प्रतिदर्श के चयन में निम्नलिखित कठिनाई उत्पन्न होती है-

   (क) समष्टि की संरचना में जटिलता

   (ख) चयन की गई इकाइयों से सम्पर्क की समस्या

   (ग) चयन की गई इकाइयों की अनुपस्थिति, उनका असहयोग

11.8 अच्छे प्रतिचयन की विशेषताएं या आवश्यक तत्व (Characteristics of Good Sampling)

एक अच्छे प्रतिचयन के लिए निम्न बातों को ध्यान में रखना चाहिए ।

11.8.1 लोकतत्व का उचित प्रतिनिधित्व - एक अच्छे प्रतिदर्शन में उन सब विशेषताओं का समावेश होना चाहिए जो कि समस्त समिष्टिज में पायी जाती है । अगर न्यादर्श में चर के मूल्यानुसार जनसंख्या के अनुपात में ही इकाइयां हो तो वह प्रतिनिधि न्यादर्श कहलायेगा ।

उदाहरण : एक कक्षा के विद्यार्थियों की जनसंख्या के अनुपात में बुद्धिलब्धि का वितरण निम्न प्रकार से है -

11.8.2 प्रसम्भाव्यता सिद्धान्त पर आधारित - 'वैज्ञानिक मापदण्ड से वही प्रतिदर्श अच्छा कहा जा सकता है, जिसका चयन प्रसम्भाव्यता सिद्धांत के आधार पर किया गया हों । यदि ऐसा नहीं होता तब प्रतिदर्श प्राप्त निष्कर्षो में प्रतिचयन त्रुटियों की भरमार होती है और प्राप्त परिणाम दूषित (Contaminated) हो जाते है ।

11.8.3 समष्टि की सजातीयता - एक अच्छे प्रतिदर्श के लिए समष्टि का स्वरूप जहां तक सम्भव हो, सजातीय ही रहना चाहिए, क्योंकि यदि एक समष्टि में दो या तीन समष्टियों का समावेश रहता हैं, तो उस स्थिति में प्रतिदर्श के पक्षपातपूर्ण हो जाने की आशंका उत्पन्न हो जाती है ।

11.8.4 पर्याप्त प्रतिदर्श - एक अच्छे प्रतिदर्श में इकाइयों की मात्रा पर्याप्त होनी चाहिए । न इतनी कम हो कि प्राप्त सूचना अपूर्ण रहे न इतनी अधिक हो कि गणना का कार्य अनावश्यक रूप से बढ़ जाये ।

11.8.5 आकड़ों के संग्रह के लिए नियंत्रित स्थितियों का होना - प्रतिदर्श द्वारा संग्रह करने के लिए प्रत्येक इकाई के प्रति जहां तक सम्भव हो सके, समान स्थितियों का होना आवश्यक है । यदि ऐसा नहीं होता, तब प्राप्त सूचना की निरपेक्षता संदिग्ध हो सकती है । सूचना संग्रह की विधि भी यथासम्भव एक समान ही होनी चाहिए ।

11.8.6 विश्वसनीयता के स्तर का उच्च श्रेणी का होना - प्रतिदर्श के चयन में ऐसी विधियों का प्रयोग किया जाना चाहिए जिनका उपयोग समस्या के अध्ययन के दृष्टिकोण से अधिक उपयुक्त हो, उसी स्थिति में प्रतिदर्श द्वारा परिणाम विश्वसनीय कहे जा सकते हैं ।

11.9 प्रतिचयन की विधियां (Sampling Method)

प्रतिदर्श को मुख्यत: दो भागों में विभाजित किया जा सकता है : -

(क) संभाव्य या प्रायिकता न्यादर्शन (Probability Sampling)

इसके निम्न मुख्य प्रकार हैं ।

1. साधारण आकस्मिक या यादृच्छिक न्यादर्शन
2. यादृच्छिक सांख्यासारिणी का प्रयोग
3. व्यवस्थित प्रतिदर्शन
4. स्तरित यादृच्छिक या आकस्मिक न्यादर्शन
5. गुच्छ न्यादर्शन
6. द्विश: प्रतिदर्शन

(ख) असंभाव्य या अप्रायिकता प्रतिदर्शन (Non-Probability Sampling)

इसके निम्न प्रकार है

1. सोद्देश्य न्यादर्शन
2. यथान्श का कोटा न्यादर्शन
3. आकस्मिक न्यादर्शन

11.9.1 सम्भाव्य या प्रायिकता न्यादर्शन

संभाव्य प्रतिदर्शन वह रोजाना है जिसके कारण ही प्रतिनिधिपूर्ण प्रतिदर्शन योजना की सम्भावना बनती है । इसमें यह मानकर चला जाता है कि जो विशेषताएं जनसंख्या मे विद्धमान हैं वही प्रतिदर्शन में भी वर्तमान होनी चाहिए । इसके मुख्य प्रकार नीचे वर्णित हैं -

11.9.1.1 साधारण आकस्मिक या यादच्छिक न्यादर्शन (Incidental sampling)- इस प्रकार के न्यादर्शन में तत्वों के प्रत्येक प्रकार के युडम को चुने जाने की समान सुविधा विद्यमान रहती है । जनसंखया की प्रत्येक इकाई को न्यादर्शन में चुनने का संयोग (Chance) रहता है । इस प्रक्रिया के मुख्य चरण निम्न है-

(अ) जनसंख्या या लोक की प्रत्येक इकाई को क्रमांकित करना इससे प्रत्येक इकाई को चुने जाने की समान संभावना रहती है तथा एक इकाई के चुने जाने पर दुसरी इकाई की सम्भावना प्रभावित नहीं होती ।

(आ) विभिन्न विधियों के द्वारा निर्धारित प्रतिदर्श संख्या का चुनाव करना । ये विधियां निम्न चार प्रकार की हो सकती हैं |

(i) **लाटरी विधि -** जनसंख्या की प्रत्येक इकाई को अलग-अलग कागज के टुकड़ों पर लिख लिया जाता है । इन कागज के टुकड़ों को एक बडे पात्र मे रखकर भली-भांति हिलाइए-डुलाइए, तत्पश्चात जितनी इकाईयों का चयन करना है उतने ही कागज के टुकड़ों को आख बन्द करके

उठा लीजिए । जिनके नाम टुकड़ों पर लिखे होंगे वे ही प्रतिदर्श में सम्मिलित होंगे । इसे ही लाटरी विधि कहते हैं ।

(ii) **टिपिट अंक विधि -** टिपिट महोदया ने संख्याओं की तालिकाएं बनाई है जो कि यादृच्छिक प्रतिदर्शन के लिए काफी सहायक है । मान लीजिए आपको एक कक्षा के 100 छात्रों में से 10 का चुनाव करना है। 10 के प्रतिदर्शन के लिए सर्वप्रथम 100 छात्रों के नामों की एक सूची का निर्माण करेगें । इसके बाद टिपिट की सारिणी का कोई भी पृष्ठ खोलकर तथा प्रथम 10 संख्याओं के आधार पर प्रतिदर्श का चयन करेंगे । जैसे टिपिट के प्रथम 40 नम्बरों की सूची (निम्नसारणी) के आधार पर प्रथम संख्या 2952 है तो हम 100 छात्रों की सूची में से 52 नम्बर वाले छात्र का चयन अपने प्रतिदर्श के लिए कर लेंगे । इसी प्रकार टिपिट अंक विधि के आधार पर अन्य नौ छात्रों का भी चयन कर लेंगें ।

टिपिट की प्रथम 40 नम्बरों की सूची

2952	4167	3992	9'92	1396	2762	3170	5624
2370	0560	1545	6107	9025	7979	1300	2963
2754	6641	3408	7203	3563	6008	6913	7691
9524	7483	1112	7002	5911	5356	4433	8776
5246	9154	1405	1089	8726	6111	8816	6446

(iii) **निश्चित क्रम विधि -** इस विधि मे लोक की समस्त इकाईयों की सूची बनाकर एक निश्चित क्रम के अनुसार प्रतिदर्श इकाईयों का चयन कर लिया जाता है । मान हमें 100छात्रों की जनसंख्या में से 10 का चयन करना है तो सर्वप्रथम हम एक सूची (प्रथम अक्षर क्रमानुसार) का करेंगे तथा प्रत्येक 10वें छात्र को अपने प्रतिदर्श में ले लेंगे ।

(iv) **ग्रिड विधि -** इस विधि के अन्तर्गत कार्ड या कांच के ऊपर वर्गाकार खाने बने होते हैं । इसे प्रतिदर्श के नमो पर रखकर यह देखा जाता है कि कौन से खाने (Square Cells) प्रतिदर्श के नक्शे पर पड़ते है जो-जो अंक इन खानों में पड़ते है उन्हें प्रतिदर्श के अन्तर्गत सम्मिलित कर दिया जाता है ।

11.9.1.2 यादृच्छिक संख्या-सारणी का प्रयोग

इस प्रकार की सारणियों का निर्माण टिपेट तथा फिशर (Tippett & Fisher) ने किया। जिनमें से टिपिट सारणी ऊपर दी गयी है ।

वैसे आकस्मिक अंकसारिणी के द्वारा भी प्रतिदर्श का चयन किया जा सकता है । उदाहरण के लिए 2000 की जनसंख्या में से 30 का प्रतिदर्श लेना है तो -

प्रतिदर्श मूल्यांकन

1. प्रतिदर्श मूल्य $\overline{xa} = \frac{1}{n}\sum^{n} x\left(30/2000\right) = 0.15$
2. लोक मूल्य = $2000 + .015 = 30.0$
3. मानक त्रुटि = $\sqrt{1 = F\frac{s}{n}}$

11.9.1.3 व्यवस्थित न्यादर्शन (Systematic Sampling):

यह प्रतिदर्शन साधारण आकस्मिक या यादृच्छिक प्रतिदर्शन का ही एक प्रकार है । इस विधि को अपनाने के लिए यह आवश्यक है कि हम पहले जनसंख्या व प्रतिदर्श के आकार में आनुपातिक सम्बन्ध को निश्चित कर लें । मान लीजिए कि हमें 1000 में से 100 का प्रतिदर्श लेना है तो जनसंख्या व प्रतिदर्श में 1:10 का अनुपात होगा अर्थात प्रतिदर्श मूल्य 100/1000 =1 इससे तात्पर्य है कि हम जनसंख्या की 10 संख्या में से किसी 1 का चयन कर सकते हैं । मान लीजिए कि हमने 7 की संख्या चुनी तो प्रतिदर्श में 7,17,27,37,47,57,67,77,87..... आदि का चयन कर लेंगे । इस प्रकार से प्रतिदर्श को चयन करने का व्यवस्थित न्यादर्शन कहते है ।

11.9.1.3 स्तरित दृच्छिक या आकस्मिक प्रतिदर्शन (Stratified Sampling)

जब जनसंख्या विस्तृत हो और सावधानी सहित प्रतिदर्श का चयन करना है तो इस प्रकार को प्रतिदर्शन विधि का सहारा लिया जाता है । इस प्रकार के प्रतिदर्शन को प्राप्त करने के लिए सर्वप्रथम जनसंख्या को प्राप्त किया जाता है । स्तरों का निर्माण समस्या प्रकृति के आधार पर किया जाता है । यह एक लक्षण पर भी आधारित हो सकता है तथा अनेक लक्षणों पर भी । जैसे -

दो स्तर = नर, नारी

बहु स्तर = शिशु बाल, किशोर, प्रौढ़, वृद्ध ।

अगर अनेक लक्ष्णों के आधार पर स्तर चयन करना है तो वर्गीकरण आव्यूह (Matrix) का उपयोग किया जाता है । उदाहरणार्थ - ग्राम व शहर में से स्त्री व पुरूष का प्रतिदर्श चयन करना है। इस प्रकार की स्थिति में सम्पूर्ण जनसंख्या या लोक को चार स्तरों में विभाजित करना होगा । ये चार स्तर होगे । स्त्री/पुरूष/ग्रामीण/शहरी ।

आव्यूह (Atrix)

	शहरी	ग्रामीण
स्त्री	शहरी स्त्री	ग्रामीण स्त्री
पुरुष	शहरी पुरुष	ग्रामीण पुरुष

स्तरीकरण ही क्यों : -

यहां यह प्रश्न स्वाभाविक है कि हम स्तरीकरण का उपयोग क्यों करते हैं । वास्तव में इसके मुख्य कारण निम्न है -

1. कभी-कभी अनुसंधान समस्या ही इस प्रकार की होती है कि इसके समाधान के लिए लोक या जनसंख्या के विभिन्न स्तरों का ज्ञान आवश्यक प्रतीत होता है ।
2. प्रशासकीय सुविधा के लिए ।
3. अन्य विधियों की अपेक्षाप्रतिचयन में प्रतिनिधित्व की अधिक सम्भावना के लिए
4. सांख्यिकीय दृष्टि से क्योंकि इस विधि से प्राप्त प्रतिदर्श की इकाइयों के मान का प्रसार (Dispersion) कम हो जाता है । जिसके परिणाम स्वरूप मानक त्रुटि कम

हो जाती है । यह न्यादर्शन (समानुपाती, असमानुपाती तथा महत्तम एलोकेशन) तीन प्रकार का होता है ।

11.9.1.4 गुच्छ प्रतिदर्शन (Cluster Sampling)

गुच्छ प्रतिदर्शन का उपयोग उस स्थिति में होता है जब लोक काफी विस्तृत हो तथा जनसंख्या दूर-दूर तक फैली हों । इस प्रकार के लोक की संख्या के सम्बन्ध में हमें जानकारी नहीं होती, हमें गुच्छों का हाँ पता होता है । ऐसी स्थिति में केवल गुच्छों का बहुस्तरीय प्रतिदर्शन (Multistage sampling) के ही आधार पर न्यादर्शन का चयन किया जाता है । इस प्रकार की विधि से न्यादर्शन ज्ञात करने के लिए सर्वप्रथम लोक में विद्यमान विशेषज्ञों के आधार पर गुच्छों का निर्माण कर लेते है । इनके निर्माण प्राय: का आधार प्राय: यादृच्छिक या वर्गबद्ध अनियत विधि (Stratified Random Method) होता है, जो गुच्छे चुने जाते है । उनकी गणना जनसंख्या के अनुसार ही होती है । सामान्य रूप से गुच्छ का आधार भौगोलिक व सामाजिका होता है, परन्तु अन्य गुणों, यथा-नगरखण्ड, घर परिवार, संगठन, फार्म आदि के आधार भी इनका निर्माण सम्भव है । बड़े समूहों की विश्वसनीयता गुच्छ विश्लेषण विधि (Cluster Analysis Method) द्वारा होती है । जो कि कारण विश्लेषण (Factor Analysis) से मिलती जुलती है । इस प्रकार के न्यादर्शन को अधिक प्रभावकारी बनाने के लिए निम्न बातों पर ध्यान देना आवश्यक है ।

1. गुच्छों को खण्ड में विभाजित करना ।
2. गुच्छों की संख्या घटाते जाना ।
3. उप न्यादर्शन ।

इस प्रकार का न्यादर्शन अधिक प्रतिनिधित्वपूर्ण होता है । इस विधि की प्रमुख महत्व यह है कि हम विस्तृत जनसंख्या का अध्ययन अपेक्षाकृत कम समय व धन व्यय के साथ कर सकते हैं। परन्तु पूर्ण रूप से समान गुणों व विशेषताओं के आधार पर गुच्छ बनाना सरल कार्य नहीं है ।

11.9.1.5 द्विश: न्यादर्शन (Double Sampling)

कभी-कभी जनसंख्या के स्तरीकरण के लिए कोई आधार नहीं ज्ञात होता है । ऐसी स्थिति में मुख्य चर (जिसके लिए न्यादर्शन किया जा रहा है) से सम्बन्धित किसी चर के लिए नयादर्शन कर लिया जाता है । यह न्यादर्शन अपेक्षाकृत बड़ा होता है । इस बडे न्यादर्शन में सम्बन्धित चर का आवृत्ति वितरण पढ़कर उसे स्वीकृत, यादृच्छिकी न्यादर्श लिया जाता हैं । यह न्यादर्श अपेक्षाकृत छोटा होता है । इस प्रकार छोटे न्यादर्श में मुख्य चर का अध्ययन किया जाता है । इस प्रकार छोटे न्यादर्श को चुनने की प्रक्रिया को द्विश: न्यादर्श कहते है ।

कभी-कभी जब मुख्य चर का मुल्य ज्ञात करना कठिन होता है तो मुख्य चर के मान को सम्बन्धित चर के मान की सहायता से अनुमानित करने के लिए रिग्रेशन समीकरण (Regression equation) स्थापित कर लिया जाता है ।

11.9.2 सम्भाव्य या अप्रायिकता न्यादर्शन

11.9.2.1 सोद्देश्य न्यादर्शन (Purposeful Sampling)

इस प्रकार की विधि का मुख्य आधार वह कसौटी होती है जिसके आधार पर प्रतिदर्श के व्यक्तियों का चयन किया जाता है। अनुसंधानकर्त्ता अपनी शोध समस्या की पूर्ति के लिए सम्पूर्ण जनसंख्या में से किसी एक वर्ग का चयन कर लेता है । इस प्रकार के प्रतिदर्श में सांख्यिकीय औचित्य का अभाव रहता है। चुनाव के समय में किये गयें पूर्वकथनों के अध्ययन का आधार प्राय: सोद्देश्य न्यादर्शन ही होता है । क्योंकि कुछ नगरों के मतदाताओं की मनोवृत्ति अध्ययन करने के उपरान्त चुनाव के सम्बन्ध में पूर्व कथन कर दिया जाता है ।

11.9.2.2 यंविधि (कोटाविधि) (Quota Sampling)

इस प्रकार की विधि सोद्देश्य न्यादर्शन के समान ही है क्योंकि इस विधि में ही जनसंख्या की उन इकाईयों का अध्ययन किया जाता हैं जिसे चयनकर्त्ता अपने ज्ञान के आधार पर यह समझता है कि यह भाग जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करता है । कोटा विधि में जनसंख्या के छोटे से भाग के अध्ययन के आधार पर प्राप्त परिणामों को सम्पूर्ण लोक (Universe) पर लागू किया जाता है । यही इस प्रकार के न्यादर्शन की सीमा है ।

11.9.2.3 आकस्मिक प्रतिदर्शन (Incidental Sampling)

इस प्रकार की विधि में अनुसंधानकर्ता को सुविधानुसार लोक या जनसंख्या में से जो व्यक्ति मिल जाते हैं उन्हें ही न्यादर्श में सम्मिलित कर लिया जाता है । अर्थात् आकस्मिक रूप से लोक में से न्यादर्श को चयन करने को आकस्मिक न्यादर्शन कहते है ।

11.10 न्यादर्श का आकार Size of Sampling)

न्यादर्शन के सम्बन्ध में यह सर्वाधिक महत्वपूर्ण तथ्य है । कि न्यादर्श का आकार क्या होना चाहिए? इस सम्बन्ध में निम्न बातों का विचार करके न्यादर्शन के आकार का निश्चय करना चाहिए-

1. न्यादर्श का आकार अध्ययन की प्रकृति पर निर्भर करता है । जैसे - व्यक्ति अध्ययन में छोटा और सर्वेक्षण अनुसंधान के लिए बड़े न्यादर्श का प्रयोग होगा ।
2. न्यादर्श चाहे छोटा हो या बड़ा सम्पूर्ण समष्टि का प्रतिनिधित्व अवश्य करता हो ।
3. परिणामों में जितनी परिशुद्धता की मात्रा आवश्यक हो उसके हिसाब से प्रतिनिधिकारी अनुकूल न्यादर्श लेना उपयुक्त होता है ।
4. एक से अधिक शीलगुणों के मापन और उसमें परिशुद्धता के लिए अनुकूल आकार का निर्णय लेना चाहिए ।
5. प्रतिदर्श की संख्या के आकार से सम्बन्धित समय व खर्च आदि तत्वों को ध्यान मे रखकर आकार का निर्णय लिया जायें ।
6. यदि जनसंख्या का स्वरूप सजातीय है तो छोटे न्यादर्श से काम चल सकता है । विषम जातीय स्वरूप में कुछ बड़े न्यादर्श की आवश्यकता पड़ती है ।

7. अनुसंधान में किसी सांख्यिकी विधि का प्रयोग करना है इस पर भी आकार का निर्णय निर्भर करता है । सांख्यिकीय दृष्टि से 30 से बड़ा न्यादर्श बड़ा और छोटा न्यादर्श माना जाता हैं । काई स्क्वायर के लिए 20 प्रतिशत से अधिक खानों में 5 से अधिक आवृत्ति (फ्रीकैन्सी) नहीं होनी चाहिए। 200 से अधिक के न्यादर्श पर 2 का सह सम्बन्ध भी सार्थक हो जाता है जबकि विश्लेषण की दृष्टि से यह मूल्यहीन है ।

   अत: आकार का निर्णय अध्ययन की प्रकृति, सांख्यिकी ओर परिशुद्धता की अपेक्षा आदि को D यान में रखकर किया जाना चाहिए ।

11.11 प्रतिचयन त्रुटि (Sampling Error)

यदि हम एक अध्ययन में सम्पूर्ण समष्टि का अध्ययन, उसमें पायी जाने वाली प्रत्येक इकाई के आधार पर करते है तो हमें मापन किये जाने वाले शील गुण का वास्तविक मान ज्ञात हो सकता हैं। परन्तु यदि हम सम्पूर्ण समष्टि का अध्ययन प्रसम्भाव्यता प्रतिचयन के आधार पर करते हैं तो अध्ययन में शीलगुण सम्बन्धी अनुमानित मान (Estimate value) में वास्तविक मान की अपेक्षा कुछ अन्तर आ सकता है । जिसका कारण प्रतिचयन का घटता बढ़ता स्वरूप होता है। इस तरह वास्तविक मान तथा अनुमानित मान में जो अन्तर स्वरूप होता है । इस तरह वास्तविक मान तथा अनुमानित मान मे जो अन्तर या त्रुटि (Sampling Error) पायी जाती है । उसे प्रतिचयन त्रुटि (Discrepancy) कहते हैं। इसके आधार पर प्राय: हम एक प्रतिदर्श का परिशुद्धता, यथार्थता तथा विश्वसनीयता का अध्ययन करते है।

इस त्रुटि को कम करने के लिए निम्न बातों का ध्यान रखा जाना चाहिए-

- प्रतिचयन का आधार प्रसम्भाव्यता सिद्धान्त हो ।
- समष्टि का स्वरूप जातीय हो ।
- प्रतिचयन में इकाइयों का चयन कठोर संयोजक आधार पर किया गया हो ।
- प्रतिदर्श का आकार पर्याप्त मात्रा में बड़ा हो ।
- प्रत्येक प्रतिचयन इकाई के समान रूप से सम्पर्क किया गया हो ।
- मापन के लिए श्रेष्ठ श्रेणी के यंत्रो के यंत्रो का प्रयोग किया गया हो ताकि मापन सम्बन्धी त्रुटियां कम से कम हो ।
- न्यादर्श की विश्वसनीयता

न्यादर्श के ज्ञात करने के लिए निम्न विधियों को प्रयोग में लाया जाना चाहिएं-

1. समान्तर न्यादर्श द्वारा
2. जनसंख्या के मध्यमान एवं विचलन में तुलना द्वारा
3. उपन्यादर्श विधि द्वारा

11.12 स्वमूल्यांकन (Self Assessment)

1. प्रतिचयन से आप क्या समझते हैं? प्रतिचयन के क्या उद्देश्य हैं ।
2. प्रतिचयन की मुख्य विधियां कौन सी हैं? अच्छे प्रतिचयन की विशेषताएं बतायें ।
3. निम्न पर लेख लिखें

   (क) 'प्रतिचयन का आकार।

(ख) प्रचियन की त्रुटि।

(ग) स्तरित प्रतिचयन।

11.13 सन्दर्भ ग्रन्थ (Reference)

1. सुखिया महरोत्रा तथा आर० एन० - "अनुसधान मूल तत्व " पुस्तक मन्दिर, आगरा - 1979
2. सिन्हा एच. सी० - "शैक्षिक अनुसंधान " विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा. लि. नई दिल्ली - 1979
3. तिवारी, गोविन्द -"शैक्षिक एवं मनोवैज्ञानिक अनुसंधान के मूलाधार " विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा - 1979 प. 212 से 223
4. 4.कपिल, एच. के .- "सांख्यिकी के मूल तत्व' विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा, 1978
5. राय, पारसनाथ - "अनुसंधान परिचय"
6. Best, J. w. - “Research & Education” Prencice Hall of India(Pvt. Ltd. New Delhi-1987
7. Agrawal, V.P. Sampling Methods for Social Investigaton, Bharat Vidhya Vihar, Ambala Cantt. 1976

इकाई- 12

ऐतिहासिक अनुसंधान उपागम - अर्थ, आवश्यकता, प्रक्रिया सोपान विशेषताएं एवं सीमाएं

(HISTORICAL APPROACH-MEANING, NEED, PROCESS, STEPS, MERITS AND DEMERITS)

इकाई की संरचना (Structure Of the Unit)

12.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

12.1 परिचय-अर्थ एवं परिभाषाएं (Introduction:Meaning and definitions)

(अ) ऐतिहासिक अनुसंधान उपागम (Historical Research Approach)

(ब) ऐतिहासिक अनुसंधान (Historical Research)

12.2 (i) आवश्यकता एवं प्रयोजन (Need and Purpose)

(।।) सम्बन्धित अनुसंधान क्षेत्र, उदाहरण एवं शोध अध्ययन (Related Research areas examples and study)

12.3 प्रक्रिया एवं सोपान (Process and steps)

12.3.1 शोध समस्या/शीर्षक का चयन एवं कथन (Research Problem-Selection of the topic and statement)

12.3.2 प्रदत संग्रह - स्त्रोत निर्धारण (Data Collection Source)

12.3.2.1 प्राथमिक एवं गौण स्त्रोत (Primary Collection Source)

12.3.3 प्रदत संग्रह प्रक्रिया (Data Collection Process)

12.3.3.1 पुस्तकालय अध्ययन (Library Study)

12.3.3.2 टीपिट लेने की विधि (Random Method)

12.3.4 संग्रहित प्रदतों की प्रामणिकता एवं वैधता (Validity and standardized collection of data)

12.3.4.1 बाह्य आलोचना (External Criticism)

12.3.4.2 आन्तरिक आलोचना (Internal Criticism)

12.3.5 प्रदत अनुकूलता - प्रस्तुतीकरण एवं विश्लेषण (Data Adaptation-Presentation and Analysis)

12.3.5.1 तार्किक क्रमानुसार (Logical Sequence)

12.3.5.2 विषय कमानुसार (Subject Sequence)

12.3.6 प्रदत व्याख्या - परिणाम निरुपण एवं निष्कर्ष (Explanation of Data findings of Results and conclusion)

12.3.7 कार्य प्रक्रिया सम्पादन में ऐतिहासिक अनुसंधानकर्ता के गुण एवं दायित्व
12.3.7.1 अनुसंधानकर्ता के गुण (Quality of Researcher)
12.3.7.2 अनुसंधानकर्ता के दायित्व (Responsibility of Researcher)
12.4 ऐतिहासिक उपागम की विशेषताएं (Characteristics of Historical approach)
125 ऐतिहासिक उपागम की सीमाएं (Limitation of Historical Approach)
12.6 स्वमूल्यांकन (Self Assessment)
12.7 संदर्भ ग्रन्थ (Reference)

12.0 लक्ष्य एवं उदेश्य (Aims and Objectives)

इस इकाई की समाप्ति पर आप इस योग्य होने चाहियें कि :

- ऐतिहासिक अनुसंधान उपागमका सामान्य परिचय प्राप्त करें अर्थ एवं विभिन्न परिभाषाओं से अवगत हों ।
- ऐतिहासिक अनुसंधान उपागम की आवश्यकता एवं प्रयोजन को समझ कर वरीयतम शोध क्षेत्रों तथा शोध समस्याओं की अन्त:संकायी परिप्रेक्ष्य में अनुभूति कर सके ।
- ऐतिहासिक अनुसंधान की उपागम की प्रक्रिया एवं सोपान से परिचय प्राप्त कर गहनतम अध्ययन कर सकें ।
- ऐतिहासिक अनुसंधानकर्ता के विशिष्ट व्यावसायिक गुणों से परिचित हो सकें तथा उसके विशिष्ट व्यावसायिक दायित्वों के बारें में समझ निहित गुणों की जानकारी कर सके ।
- ऐतिहासिक शोध उपागम की विशेषताओं से परिचित होकर उसमें निहित गुणों की जानकारी कर सके ।
- ऐतिहासिक शोध उपागम की सीमाओं एवं दुर्बलताओं से परिचय प्राप्त कर यह सुनिश्चित करनें के योग्य बनें कि किन कारणों सें ऐतिहासिक अनुसंधान उपागम इतना प्रयुक्त नहीं हुआ हैं ।

12.1 (अ) ऐतिहासिक उपागम परिचय (Introduction:Historical Approach)

ऐतिहासिक उपागम शिक्षा शोध का वह उपागम हैं जिसका सम्बन्ध "अतीत" सें हैं जहां अतीत के विभिन्न अवशेषों, घटनाओं, तथ्यों, अभिलेखों के आधार पर वर्तमान में विषय वस्तु समस्या या सम्प्रत्य को समझने का प्रयास किया जाता हैं ।

यहां भूतकालीन घटनाओं को वर्णित एवं विवेचित कर वर्तमान को समझने का प्रयास किया जाता हैं। ऐतिहासिक शोध उपागम विद्वानों के अनुसार जीवन के कुछ रुपों को जोड़ने का प्रयास हैं । जहां शिक्षा से सम्बन्धित विभिन्न सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक समस्याओं के ऐतिहासिक संदर्भ में अध्ययन किया जाता हैं, तथा अतीत में खोजे गए एवं प्रस्तावित किये गयें समाधानों से दिशा-ग्रहण की जाती हैं । शिक्षा शोध विशेषज्ञों तथा गुड एवं स्केटस (Good and scates) के अनुसार शोध उपागम के अन्तर्गत प्रत्येक वर्तमान अंकुरण का उसके सम्पूर्ण भूतकालिक संदर्भ में अध्ययन किया जाता हैं क्योंकि भूतकालिक घटनाएं ही वर्तमान की कुंजी

हुआ करती हैं तथा किसी भी शिक्षण एवं समाजशास्त्री द्वारा अतीत की घटनाओं की अनदेखी नही की जाती हैं । शैक्षिक अनुसंधानकर्ता को तों अतीत कालीन घटनाओं सें हुए सामाजिक सांस्कृतिक एंव शैक्षिक परिवर्तनों में केवल अपनी रुचि ही अभिव्यक्त करनी पडती वरन उनका गहन अध्ययन भी करना पड़ता हैं ।

12.2 (ब) ऐतिहासिक अनुसंधान - अर्थ एवं परिभाषाएं (Historical Research-Meaning and definition)

जी डब्ल्यू वैस्ट(1985-86) के अनुसार ऐतिहासिक अनुसंधान का सम्बन्ध शिक्षा सम्बन्धित ऐतिहासिक समस्याओं के वर्तमान एवं भविष्य में कियें जानें वालें वैज्ञानिक अध्ययन एवं विश्लेषण सें हैं ।

इस शोध प्रकिया के माध्यम से हमे भूतकालिक समस्याओं को वर्तमान के संदर्भ में समझने में नयी सूझ" प्राप्त होती हैं । भूतकाल में कियें गयें शैक्षिक प्रयासों कें सम्बन्ध में सुव्यवस्थित जानकारी हमें ऐतिहासिक अनुसंधान सें ही प्राप्त होती हैं । एफ एल विहटनी (1954 पृष्ठ 192) है नें ठीक ही कहा कि ऐतिहासिक अनुसंधान भूतकालीन शिक्षा सम्बन्धित ऐसी समस्याओं का वैज्ञानिक अध्ययन एवं विश्लेषण करता हैं (Back ward study and protection of the present situation) जिनका समाधान अतीत काल में नही हो सकता हैं । इसके माध्यम से मानवीय विचारों एवं क्रियाओं के विकास की विशिष्ट दिशा की खोज की जा सकती हैं तथा सामाजिक क्रियाओं के अध्ययन के लिए सबल आधार सुनिश्चित किया जा सकता हैं । सुखिया मेहरोत्रा (1973 पृष्ठ 205) शर्मा (1983-167) के मतानुसार ऐतिहासिक अनुसंधान अतीत की घटनाओं विकासकम तथा अनुभवों का निश्चित अन्वेषण हैं जिस कम में अतीत से सम्बन्धित सूचनाओं एवं साधनों की सन्तुलित विवेचना की जाती हैं तथा उनकी विश्वसनीयता एवं वैधता का सावधानीपूर्वक परीक्षण किया जाता हैं । आज भी बहुत सी शैक्षिक परिस्थितियों का उदगम कैसे हुआ? किसी उच्च कोटि की संस्था नें किस प्रकार विकास किया? भूतकालिक अपनाई जानें वाली शैक्षिक नीतियों के क्या परिणाम रहें। ढौढियाल एवं पाठक (1972-56)ए के अनुसार ऐसे बहुत से प्रश्न हैं जिनका उत्तर ऐतिहासिक अनुसंघान से ही प्राप्त हो सकता हैं ।

12.2 (i) ऐतिहासिक अनुसंधान - आवश्यकता एव प्रयोजन (Historical Research-Need and Purpose)

विद्वानो (पी. वी. यंग -1966, सिन्हा -1979-87) के अनुसार चूंकि वर्तमान की चाबी अतीत में होती हैं तथा मानव की तीव्र अभिलाषा अपनें इतिहास को जानने की भी होती हैं तथा कल एवं आज अपनें आनें वाल कल को प्रभावित करतें हैं, अत: शिक्षा शोध के क्षेत्र में ऐतिहासिक उपागम के आधार पर कियें जानें वाल अनुसंधानों का विशेष महत्व हैं -

12.2.1 किसी शैक्षिक सामाजिक समस्या परिस्थिति के अध्ययन हेतु ऐतिहासिक अध्ययन आवश्यक

किसी वर्ग विशेष का शैक्षिक-सामाजिक परिस्थितियों एवं समस्याओं कों भली प्रकार समझने एवं अध्ययन करनें हेतु इतिहास का अध्ययन किया जाना आवश्यक ही नही वरन समय की आवश्यकता हैं । आज पिछड़ी, शोषित एवं उपेक्षित वर्ग की छात्र-छात्राओं को सुशिक्षित व्यक्तियों से सहानुभूति इस कारण मिलना आवश्यक हैं क्योंकि इन जातियों का शैक्षिक एवं सामाजिक दृष्टि से किया जानें वाला अध्ययन यह स्पष्ट दर्शाता हैं कि इस वर्ग के लोग पीढ़ी दर पीढी उपेक्षित, तिरस्कृत एवं शेषित रहतें आयें हैं तथा उनके भली प्रकार सुशिक्षित बन पाने का तों प्रश्न ही नही उठ पाया हैं ।

12.2.2 सामाजिक शैक्षिक विकार /अवरोध के सफल हल ढूंढने में स्त्रोत का गहन अध्ययन आवश्यक

जिस प्रकार किसी एकाकी, कुसमायोजित एवं बाल-अपराधी बालक के उपचार के लिए उसके जीवन वृत इतिहास को जानना आवश्यक होता हैं, इसी प्रकार किसी सामाजिक शैक्षिक विकार एवं अवरोध के सफल हल एवं चिकित्सा ढूंढने के लिए सम्बन्धित कारणों-क्षेत्रों से सम्बन्धित स्त्रोतों का गहन अध्ययन करना आवश्यक हैं जिससे कि शीघ्रता में कहीं कारणों की खोज एवं उपचार में समाज के परम्परागत मूल्यों को एकाएक ऐसे न झकझोर दें कि कही प्रचलित समाज में विद्रोह ही हो जाये । ऐतिहासिक अनुसंधान इस दिशा में समाज के उन परम्परागत मूल्यों एवं परम्पराओं कों उजागर करेगा जिन के साथ-साथ हमें उन्हें सीमा एवं अवरोध समझकर शैक्षिक कार्यक्रम आयोजित करना पडेगा ।

12.2.3 भविष्यगत योजनाओं एवं कार्यक्रम के पूर्वानुमान में ऐतिहासिक अनुसंघान सहायक-

बहुत सी " सामाजिक शैक्षिक एवं सांस्कृतिक कुरीतियों के संदर्भ में कियें जानें वालें ऐतिहासिक शोध अध्ययन यह बताने में समर्थ होतें हैं कि बहुंत सी सामाजिक कुरीतियों को जिनके कारण कोई जाति वर्ग विशेष शैक्षिक दृष्टि से आज भी बहुत उपेक्षित एवं पिछड़ा रहा हैं, उसे संवैधानिक दृष्टि से कानून बनानें से काम नहीं बनेगा वरन शिक्षा के व्यापक प्रसार एवं कार्यक्रम में निहित निष्ठा से ही काम चलेगा । अत: शिक्षा के क्षेत्र में किये जानें वालें ऐतिहासिक शोध अध्ययन हमें भविष्यगत कार्यक्रम एवं योजनाओं की सफलता के पूर्वानुमान में सहायक होतें हैं ।

12.2.4 प्राचीन भारतीय संस्कृति के अध्ययन एवं उसके महत्वों को समझने में ऐतिहासिक अनुसंधान सहायक

प्राचीन भारतीय संस्कृति के अध्ययन करने, समझने तथा इसकी भली प्रकार सराहना करनें में ऐतिहासिक अनुसंधान सहायक होता हैं जिस के माध्यम से यह अध्ययन किया जाना आसान प्रतीत होता हैं । शिक्षा की प्रगति ने संस्कृति एवं सभ्यता के विकास में अपनी प्रभावी भूमिका को निभाया हैं । किसी भी काल एवं युग विशेष को लेकर इस प्रकार का ऐतिहासिक अनुसंधान किया जा सकता है ।

12.2.5 अतीत कालीन शिक्षा सम्बन्धित पूर्वाग्रहों, विचारधाराओं को समझने में सहायक- ऐतिहासिक अनुसंधान के माध्यम से हमें शिक्षा की प्रगति में अब तक आनें वाले बाहा तत्वों विभिन्न प्रकार के पूर्वाग्रहों, भ्रान्तियों, मान्यताओं एवं परम्पराओं को समझने में आसानी होती हैं । हम उनके प्रभाव का अध्ययन करनें में सफल हो जातें हैं तथा भविष्यगत योजनाओं को बनानें में उनके दुष्प्रभाव से बचने का प्रयास भी करते है।

12.2.6 अतीत कालीन महान शिक्षा शस्त्रियों दार्शनिकों एवं विचारकों का गहन अध्ययन करने में सहायक

अतीत के महान शिक्षा शास्त्रियों, शिक्षा-समाज सुधारकों, दर्शनिकों के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का समग्र गहन अध्ययन करनें में ऐतिहासिक अनुसंधान सहायक होता हैं । इस प्रकार के अध्ययन के आधार पर हम उनके द्वारा अर्जित की जानें वाली उपलब्धियों के प्रति भी अपनी कृतज्ञता एवं सराहना प्रस्तुत कर सकतें हैं ।

II. ऐतिहासिक अनुसंधान - क्षेत्र एवं उदाहरण (Historical Research-Areas and Examples)

ऐतिहासिक अनुंसधान के उदाहरण प्रस्तुतीकरण हेतु भारतीय संदर्भ में सुखिया मेहरोत्रा (1963 पृष्ठ 300-303) ढौंढियाल एवं पाठक (1972, पृष्ठ 57) तथा शर्मा (1983, पृष्ठ 177) के आधार पर निम्नलिखित शोध समस्याओं को उदाहरण स्वरुप चुना जा सकता हैं :-

- मद्रास राज्य में 1906 में माध्यमिक स्तरीय शिक्षा का विकास ।
- भारत में बुनियादी शिक्षा का विकास एवं मूल्यांकन (1940 से 965) तक ।
- स्वतंत्रोतर युग में तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षा ।
- प्रौढ़ शिक्षा/अनौपचारिक शिक्षा का ऐतिहासिक अध्ययन ।
- भारतीय मध्यकालीन शिक्षा पद्धति का स्वरुप ।
- स्वतंत्रोतर काल में सभी शिक्षा का विकास ।
- अध्यापक शिक्षा की प्रगति एवं विकास - कोठारी आयोग के पश्चात से आज तक ।
- राष्ट्रीय शिक्षा नीति (कार्यान्वयन एवं मूल्यांकन 965 से आज तक)
- भक्तिकालीन शिक्षा दर्शन एवं समाज सुधार ।
- शिक्षा प्रोद्योगिकी का विकास - भारतीय संदर्भ में (1965 से 1990) तक ।
- किसी प्रान्त या मण्डल विशेष में शिक्षा व्यवस्था का अध्ययन ब्रिटिश शासन के दौरान।

12.2.8 ऐतिहासिक दस्तावेजों का बाह्य एवं आन्तरिक मूल्यांकन (External and Internal criticism/evaluation)

शिक्षा के क्षेत्र में अनुसंधान हेतु ऐतिहासिक उपागम को समाहित करतें हुए सुखिया महरोत्रा (1973, पृष्ठ 213) के अनुसार निम्न समस्याओं का चुनाव किया जा सकता हैं-

(अ) प्राचीन शिक्षा शास्त्रियों का व्यक्तित्व एवं कृतित्व एक अध्ययन ।

(ब) संगठन एवं संस्थाओं का इतिहास एवं प्रगति आधारित अध्ययन ।

(स) किसी स्थान एवं समय विशेष की शैक्षिक परम्पराओं पर सामाजिक-सांस्कृतिक एवं भौगोलिक प्रभाव ।

(द) शैक्षिक सिद्धान्त एवं व्यवहार को प्रभावित करनें वालें दर्शन ।

12.3 प्रक्रिया एवं सोपान (Process and Step)

सामान्यत: दोनों शब्दों का प्रयोग शोध कार्य सम्पादन के दौरान किया जाता हैं । "प्रक्रिया" वह माध्यम हैं जिसके आधार पर कार्य को विधिवत पूरा किया जाता हैं अथवा वह मार्ग हैं, जिस पर चलकर हम अपनें लक्ष्यों को प्राप्त करतें हैं । इसके साथ-साथ सोपान के अन्तर्गत उन निश्चित-पदों का अनुसरण किया जाता हैं जिसमें 'क्रमिकता' निहित होती हैं, जिनकी सहायता से शोध कार्य सम्पादन प्रकिया के दौरान वे सीढ़ियां हैं जिन पर चढ़कर ही शोध जिज्ञासु अन्तिम सीढ़ी तक पहुंच कर लक्ष्य की प्राप्ति करता हैं ।

चूँकि, ऐतिहासिक अनुसंधान का सम्बन्ध अतीत की घटनाओं के एकीकृत वर्णन, विश्लेषण एवं विवेचन से हैं, जो एक बार घटित होने पर पुन: दोहराई नहीं जायेंगीं, जिन की विवेचना तात्कालिक एवं वर्तमान के संदर्भ में भी किया जाना हैं । अत: ऐतिहासिक अनुसंधान की कार्य प्रकिया एवं सोपान शिक्षा शोध के अन्तर्गत शोध उपागम एवं पद्धतियों से थोड़े हट कर होतें हैं । इस अनुसंधान प्रकिया को सम्पादित करनें में शोधकर्ता को ऐतिहासिक अनुसंधान के विभिन्न उपागमों-अर्थात प्रत्यक्षदर्शी एवं परोक्षदर्शी उपागमों को ध्यान में रखकर तथ्य एकत्रित करनें होतें हैं तथा ऐतिहासिक स्त्रोतों यथा प्रमुख गौण संदर्भ ग्रन्थ, सूचनात्मक प्रकिया तथा वस्तुओं के संगठन के आधार पर तथ्यों का संग्रह करना पड़ता हैं तथा उनकी आन्तरिक एवं बाह्य आलोचना करनी पड़ती हैं ।

ऐतिहासिक अनुसंधान को सामान्यत: निम्न प्रकिया एवं सोपान से निबद्ध किया जाता हैं

- शोध समस्या/शीर्षक का चयन एवं कथन
- प्रदत्त संग्रह स्त्रोत निर्धारित - प्राथमिक एवं गौण स्त्रोत
- प्रदत्त संग्रह प्रकिया - पुस्तकालय अध्ययन एवं टीप लेने की विधि
- संग्रहीत प्रदत्तों की - प्रामणिकता एवं वैघता, बाह्य एवं आन्तरिक आलोचना
- प्रदत्त प्रस्तुतीकरण एवं विश्लेषण
- प्रदत्त व्याख्या, परिणाम निरुपण एवं निष्कर्ष
- सम्पूर्ण कार्य प्रकिया सम्पादन में ऐतिहासिक अनुसंधानकर्ता के गुण एवं दायित्व
- शोघ समस्या/शीर्षक का चयन एवं कथन

12.3.1 समस्या शीर्षक का चयन एवं कथन

ऐतिहासिक अनुसंधान को शिक्षा क्षेत्र में संचालन हेतु शीर्षक एवं समस्या का चुनाव-पहचान एवं उसका परिभाषीकरण सबसें प्रमुख सोपान हैं । समस्या का चुनाव करतें समय निम्नलिखित प्रमुख बिन्दुओं पर ध्यान दिया जाना आवश्यक हैं ।

12.3.1.1 विषय का क्षेत्र अनुसंधानकर्ता की योग्यतानुरुप हों ।

123.1.2 विषय नवीन भी हो सकता हैं तथा कभी-कभी किसी विषय के संदर्भ में पुरानी सामग्री अविश्वसनीय होने तथा नवीन सामग्री की खोज होने पर पुराने अनुसंधान की पुनर्वलोकन भी किया जा सकता हैं ।

12.3.1.3 विषय का इस प्रकार चुनाव किया जाय जिससें कि किसी शैक्षिक समस्या की पृष्टभूमि को आसानी से समझा जा सकें यथा "1970 से सेवारत अध्यापक वर्ग के प्रशिक्षण में आनें वाली समस्याओं का अध्ययन"

12.3.1.4 सम्बन्धित सामग्री की उपलब्धता की आशा भी शोध समया में सुनिश्चितीकरण के बीच होनी आवश्यक हैं । ऐतिहासिक अनुसंधान की सबसें बड़ी अड़चन यही होती हैं कि प्रदत सामग्री के मिलने में कठिनाई होती हैं । अत: महत्वपूर्ण अनुसंधान सम्पादित नही हो पाते हैं । शर्मा (1983, पृष्ठ व 7०) एवं सिन्हा (1979, पृष्ठ 9०) के अनुसार ऐतिहासिक अनुसंधान हेतु समस्या का महत्व इस की स्थिति तथा उपयोगिता मात्र सें नही वरन् वैध एवं विश्वसनीय प्रदतों को विभिन्न स्त्रोतों से खोजना पड़ता हैं । अत: यह पता लगाने की पूर्व में ही आवश्यकता होती हैं कि पर्याप्त सामग्री कितनी, कैसे तथा कहां-कहां उपलव्य हो पायेगी ।

12.3.1 विषय समस्या कथन (Subject/Problem Statement)

समस्या/विषय का चयन करनें के साथ साथ उचित कथन हेतु उसका उचित सीमांकन भी किया जाना आवश्यक होता हैं । अर्थात "अन्वेषण क्षेत्र" का सीमांकन परिष्कृत भाषा में किया जाय । यदि शीर्षक के जटिल एवं लम्बें होने की सम्भावना होती हैं तों "उप-शीर्षक" का भी प्रयोग किया जा सकता हैं । विषय-शीर्षक के सीमांकन एवं उपयुक्तीकरण हेतु ऐसा किया जाना आवश्यक हैं । शीर्षक के कथन के साथ-साथ उदेश्य एवं लक्ष्य के निर्धारण एवं आलेख हेतु उसके क्षेत्र, पक्ष, स्तर तथा काल के संदर्भ को ध्यान में रखा जाना आवश्यक हैं ।उदाहरणार्थ यदि हम "स्वतंत्रता के पश्चात स्त्री शिक्षा के विकास "पर ऐतिहासिक अध्ययन करना चाह रहें हैं तों हमें समस्या के उदेश्य निर्धारण के साथ-साथ विवेचित करना पडेगा कि हम शिक्षा के किन स्तरों, यथा प्राथमिक, माध्यमिक, उच्च शिक्षा तथा कौन-कौन से पक्षों यथा वित, प्रशासन, पाठ्यक्रम, कौन-कौन सी संस्थाओं यथा शासकीय, व्यक्तिगत तथा किन-किन मण्डल या राज्यों का अध्ययन करेंगें ।

12.3.2 प्रदत संग्रह (Data Collection)

ऐतिहासिक अनुसंधान प्रक्रिया का द्वितीय सोपान हैं प्रदत संग्रह-स्त्रोत निर्धारण एवं शोध हेतु उपयुक्त स्त्रोत खोज । विद्वानों के अनुसार प्रदत संग्रह हेतु सामान्यत: दो प्रकार के स्त्रोत ऐतिहासिक प्रक्रिया से सम्बन्धित रहते हैं - यथा प्राथमिक एवं गौण स्त्रोत ।

12.3.2.1 प्राथमिक स्त्रोत (Primary Source)

ऐतिहासिक अनुसंधान उपागम के "प्राथमिक स्त्रोत" से तात्पर्य उन स्त्रोतों सें हैं जो हमें सीधी एवं स्पष्ट जानकारी प्रदान करतें है अर्थात् जो ऐतिहासिक काल की घटनाओं के प्रत्यक्ष साक्षी होतें हैं। इतिहास में इनका प्रमुख स्थान होता हैं क्योंकि इन में विश्वसनीयता एवं वैधता समाहित होती हैं। इन से प्राप्त प्रदत एवं सूचनाएं अत्यन्त वस्तुनिष्ठ होती हैं, तथा प्राप्त सूचनाओं पर दुराग्रह का प्रभाव नही पड़ता हैं । प्राथमिक स्त्रोत के निम्न उदाहरण हों सकतें हैं-

अनुसंधान वृतान्त, शैक्षिक प्रतिवेदन, संविधान पत्र/सामग्री-पत्र, डायरियां, चित्र - फिल्म चित्र, समाचार पत्र-पत्रिकाएं, प्रशासनिक अभिलेख, राजपत्र, डाक टिकट, मानचित्र, मुद्राएं, न्यायालय-निर्णय, साक्षी शपथ-पत्र, धोषण-पत्र आदि। ये वे प्रमाण हो सकतें हैं जो समकालीन योग्य व्यक्तियों के स्वयं देखे या सुनें गये हो अथवा उन वस्तुओं को समाहित करतें हों जिनका प्रत्यक्ष निरीक्षण किया जा सके । ऐसे सभी प्रमाण, वस्तुएं एवं चित्र देश के राष्ट्रीय पुरालेखागार (National Archives) दिल्ली तथा अन्य राज्य के पुरालेखागार में मिल सकते हैं । कभी-कभी बडे- बडे पुस्तकालयों में भी इन्हें खोजा जा सकता हैं । किसी विशेष काल से सम्बन्धित भवन, वेश-भूषा-पोशाक, बर्तन, प्रमाण, चित्र, सिक्के, मूर्तियों आदि को विभिन्न संग्रहलायों में जाकर निरीक्षण किया जा सकता हैं तथा उनके चित्र आदि प्राप्त किये जा सकते हैं । संक्षेप में प्राथमिक स्त्रोत ऐतिहासिक प्रदत्त का मूल भण्डार होता हैं, मौलिक घटना विशेष का मूल अभिलेख होता हैं तथा किसी प्रत्यक्षदर्शी द्वारा घटना-बैठक का सभा का सही विवरण या सही चित्र होता हैं ।

12.3.2.2 गौण स्त्रोत (Secondary source)

करलिंगर (Kerlinger 1964) के मतानुसार यह ध्यान रख जायें कि गौण स्त्रोत वास्तविक इतिहास अथवा एक ऐतिहासिक घटना या कुछ परिस्थिति का एक लेखा-जोखा या अभिलेख हो। गौण स्त्रोत में व्यक्ति वहां उस घटना का प्रत्यक्षदर्शी या लेखक नही होता हैं, वरन् उस अन्य व्यक्ति को जो वहां प्रस्तुत था, उसने क्या कहा या क्या लिखा, उसका उल्लेख करता हैं। गौण स्त्रोत घटनाओं परिस्थिति या वस्तु वर्णन के परोक्ष प्रमाण हैं । अर्थात उन व्यक्तियों के प्रतिवेदन हैं जिन्होंनें इन्हें स्वयं नही देखा हैं । वरन् अभिलेखों या अन्य व्यक्तियों से प्राप्त किया हैं । गौण स्त्रोत के उदाहरण हो सकते हैं - विश्वकोश, इतिहास की पुस्तकें सम्पादकीय एवं निरीक्षण प्रतिवेदन, पाठ्यपुस्तकें एवं सैलानियों - यात्रियों के वर्णन ।

12.3.2.3 प्राथमिक, गौण स्त्रोत सीमांकन असम्भव परन्तु शोध प्रक्रिया के दोनों पूरक:

गौण स्त्रोत का प्रयोग उन्हीं परिस्थितियों में ही किया जाना चाहिये जब हमें प्राथमिक स्त्रोत उपलव्य न हो क्योंकि ये कम विश्वसनीय होतें हैं । इन स्त्रोतों का उपयोग करने से छ हमें स्त्रोतों को जानकारी कर लेनी आवश्यक हैं । प्राथमिक एवं गौण स्त्रोतों को एक निश्चित सीमा या सूची में निबद्ध नही किया जा सकता हैं । एक समय संदर्भ या स्थान पर गौण हो सकता हैं, दूसरे समय संदर्भ या स्थान पर वह ही प्रमुख स्त्रोत बन गया जाया करता हैं उदाहरणार्थ - विद्यालय में विभिन्न वर्षो में आयोजित किये जानें वाले निरीक्षण प्रतिवेदन 'गौण स्त्रोत' हैं । परन्तु यदि हम देखना चाहें कि निरीक्षण प्रहजवेदन में पिछलें 20 वर्षो में कौन-कौन से प्रमुख शैक्षिक एवं प्रशासकीय बिन्दु समाहित किये जाते हैं तो यह वे निरीक्षण-प्रतिवेदन प्राथमिक स्त्रोत हो जायेंगें । इसी प्रकार "राष्ट्रीयता के बदलते महत्व " का अध्ययन करने के लिए पाठ्य पुस्तकें गौण स्त्रोत होगी । जबकि सामान्यत: पाठ्य पुस्तकें गौण स्त्रोत हैं । अर्थात वस्तुएं एवं अभिलेख कुछ उदेश्यों की पूर्ति एवं विवेचन के लिए गौण - स्त्रोत तथा कुछ उदेश्यों-

प्रयोजनों की पूर्ति के लिए प्रमुख स्त्रोत बन जाया करती हैं । यह निश्चित ही हैं कि गौण स्त्रोत में प्रथम साक्षी से द्वितीय स्त्रोत तक पहुंचते - पहुंचते वास्तविकता व विश्वसनीयता में परिवर्तन आ जाया करता हैं । इससे दोषयुक्त रहने की सम्भावना रहती हैं । अत: प्राथतिक स्त्रोतों के न मिलने पर ही गौण स्त्रोतों का प्रयोग करना चाहियें ।

12.3.3.3 प्रदत्तसंग्रह प्रक्रिया (Data Collection Process)- पुस्तकालय अध्ययन - टीपिट लेने की विधि (Random Method):

प्रदत्त संग्रह हेतु स्त्रोत निर्धारण के पश्चात एक प्रमुख सोपान आता हैं । प्रदत्त संग्रह प्रकिया का सम्पादन, पुस्तकालय-वाचनालय अध्ययन एवं तथ्य एकत्रित करनें की विधि तथा सम्बन्धित सूचनाओं एवं प्रदत्तों का एकत्रीकरण।

3.1 ऐतिहासिक अनुसंधान हेतु शोधकर्ता को अपनी सामग्री एकत्र करनें के लिए पुस्तकालय का उपयोग करना बहुत आवश्यक होता हैं । यहां पुस्तकालय के साथ राष्ट्रीय एवं राज्य के अभिलेखागार तथा संग्रहालयों में एक विशिष्ट प्रकार सें सूचनाओं का एकत्रीकरण करना होता हैं। इसके लिए उस संदर्भ ग्रंथ-सूची, विषयगत तथा लेखक के अनुसार तैयार करनी होती हैं। पाठायोचित ग्रंथ सूची का निर्माण करना भी विशेष आवश्यक होता हैं । टीप लेने (Notes) की विधि के बारें में शर्मा (1990, पृष्ठ - 51-64) एवं सिद्ध (1983, पृष्ठ -9899) नें अपनें सुझाव दियें हैं । सामान्यत रुप से तीन प्रकार के ग्रन्थों को अध्ययन कर टीप ली जा सकती हैं-

अ. संदर्भ ग्रंथ सूची का निर्माण :-

संदर्भ गन्थ सूची के निर्माण के साथ-साथ शोधार्थी द्वारा चर्चित विषय बिन्दुओं के विश्लेषण करनें के साथ-साथ आलोचना भी प्रस्तुत की जाती हैं ।

ब. विषय शीर्षक आधारित टीप -

यहीं शोधार्थी की दृष्टि संदर्भित स्थल पर जम जाती हैं तथा उसें नोट बुक उद्धरण सहित लिख लिया जाता है । कभी टीप लेखक के शब्दों उद्धरण चिन्ह सहित ली जा सकती हैं तथा कभी पैरा पृष्ठ का सार भग ही लिखा जाता हैं । ऐसी स्थिति में उद्धरण - चिन्ह आवश्यक नही होते हैं । कभी - कभी उद्धृत अंश पर अनुसंधानकर्ता अपनें विचार भी लिख देता हैं जो उनकी अपनी प्रतिक्रिया होती हैं

स. टीपित लेने की विशिष्ट विधि :-

अनुसंधानकर्ता को विभिन्न तथ्यों एवं सूचनाओं के एकत्रीकरण हेतु शोघ कार्ड का प्रयोग प्रत्येक अंश की टीप लेने के लिए अलग - अलग करना चाहिये । एक कार्ड पर एक पुस्तक/पत्र-पत्रिका के एक विषयवार शीर्षक ही समाहित होना चाहिये । प्रत्येक कार्ड पर ' 'विषय का शीर्षक' ' अवश्य लिखा जाय । पुस्तकालय की पुस्तकों से उद्धरण लिखते समय उसके "काल नम्बर" भी टीप लेनी चाहिये । टीप अधूरी न ली जाय । टीप की कार्ड हेतु स्थायी फाइल बनायी जायें । पत्रिका में लेखक का नाम, संस्करण, पृष्ठ संख्या सभी कुछ रहना चाहिये । कार्ड पर सामग्री अधूरी रहने पर दूसरा कार्ड भी उसके साथ नत्थी किया जाय ।

अन्त में जब आवश्यक सामग्री विषयवार एकत्रित कर ली जाय तत्पश्चात् ही संदर्भ ग्रन्थ सूची तैयार की जाय । यह अध्यायवार भी तैयार की सकती हैं ।

12.3.3.4 संग्रहीत प्रदतों की वैघता एवं प्रामाणिकता आधारित आलोचना-बाहय एवं आन्तरिक आलोचना:

चूंकि, ऐतिहासिक अनुसंधानविधि में निरीक्षण की प्रत्यक्ष विधि को नही अपनाया जाता हैं, क्योंकि जो घटनाएं घट चुकी है । उन्हें दोहराया नहीं जा सकता हैं, अत: विश्वसनीयता का अध्ययन संकलित किसी प्रदतों एवं सूचनाओं के संदर्भ में किया जाना आवश्यक होता हैं । विश्वसनीयता के साथ प्रदतों की वैधता एवं सार्थकता को ध्यान में रखकर आलोचना की जानी आवश्यक होती हैं, जिससे कि विद्वानों (सुखिया मेहरोत्रा, 1973 पृष्ठ-208-2०9), शर्मा (1983, पृष्ठ 173-175)ए के अनुसार अनुसंधान में निरर्थक, मिथ्या, अप्रमाणिक तथा भ्रान्तिपूर्ण तथ्यों का समावेश न हो जाय तथा संकलित प्रदत्तों एवं सूचनाओं पर ही प्रश्न चिन्ह न लग जाये । इसके लिए संकलित प्रदतों की आलोचना दो प्रकार से की जाती हैं -

4.1 बाहय आलोचना

4.2 आन्तरिक आलोचना

12.3.4.1 बाहय आलोचना (External Criticism)

इस आलोचना का उद्देश्य प्रदत्तों की सत्यता तथा यथार्थता को स्थापित करना हैं । इसमें ऐतिहासिक स्त्रोतों की सामग्री के असली शुद्ध होने की पुष्टि की जाती है । जहां यह तय किया जाता हैं कि यह स्त्रोत इसी काल का हैं, जिसका बताया गया हैं, यह उसी व्यक्ति के द्वारा लिखा गया हैं, जिसे उसका लेखक या निर्माता बताया गया हैं । प्रदत्त सामग्री एवं स्त्रोत के असली होने या नकली होने का पता बाह्य आलोचना के माध्यम से लगाया जाता हैं । प्रलेखों के लेखक अथवा काल की सत्यता को स्थापित करनें के लिए व्यक्ति को हस्ताक्षर, हस्तलेखन, टाइप, अक्षर-विन्यास, भाषा, प्रयोग प्रलेख आदि अनेक गहन परीक्षणों का उपयोग करना पड़ता हैं । इसका उतर पाने के लिए दो विधियों का प्रयोग किया जाता हैं -

- प्रदत्तों का रासायनिक एवं भौतिक परीक्षण
- प्रदत्तों की अनुकूलता
- आज प्रदतों के भौतिक एवं रासायनिक परीक्षण की विधियां उपलव्य हैं जिससे कि हम स्त्रोत की काल
- आयु का पता चला सकते हैं । इसमें उपयोग की गई स्याही, प्रयोग किया गया कागज, कपडा, धातु लकड़ी, रंग का परीक्षण करके काल आयु का पता लगाया जाता हैं ।
- अनुकूल विधि से यह सुनिश्चित कर लिया जाता हैं कि प्रदतों के स्त्रोत के आधार पर रचना की शैली उस युग के लेखक या कलाकार की शैली से मेल खाती हैं या नहीं । अर्थात् शर्मा (199० - 93-94) शिल्प विज्ञान की प्रगति की दृष्टि से रचना या वस्तु कितनी संगत प्रतीत होता हैं । इस प्रकार विषय सामग्री का मूल्यांकन अनुसंधानात्मक

कार्यो में प्रयोग में लाने से पूर्व ही स्थापित किया जाना आवश्यक होता हैं । अत: बाह्य आलोचना का ऐतिहासिक अनुसंधान प्रकिया में विशेष महत्व हें ।

12.3.4.2 आन्तरिक आलोचना (Internal Criticism)

संग्रहीत प्रलेखों के महत्व एवं यर्थाथवादी का मूल्यांकन करना इसका प्रमुख उदेश्य हैं । स्त्रोत के विषय वस्तु का सही अर्थ क्या हैं तथा उसमें जो कुछ भी वर्णित या विवेचित किया गया हैं वह किस सीमा तक सत्य हैं । प्रदत एवं सूचनाओं की सत्यता की परख के पश्चात उसकी यथार्यता को जानना अधिक आवश्यक हैं । विद्वानों कें अनुसार (सुखिया मेहरोत्रा, 1973 पृष्ठ 2०8) एक प्रलेख कालानुसार प्रामाणिक हो सकता हैं लेकिन विश्वसनीय या प्रासंगिक नही हो सकता हैं कि उसमें घटना-व्यक्ति या विषय के बारें में सच्चा या पूर्ण चित्रण न हुआ हो या भय, लोभ एवं अभियान तथा पूर्वाग्रह ग्रसित रहा हो ।

प्रलेख के अध्ययन एवं आलोचना में इस काल विशेष की भाषा तथा प्रतीकों (Symboles) का ज्ञान होना आवश्यक है अर्थात जो शब्द आज प्रचलित हैं उनका अर्थ कही उस काल में भिन्न तो नहीं था । अत: अनुसंधानकर्ता को उस काल विशेष के ज्ञान के स्वर, प्रथाओं एवं मूल्यों की पूर्ण जानकारी होनी चाहिये । हो सकता हैं कि किसी प्रथाओं एवं मूल्यों शाब्दिक अर्थ वही न हो जो कि उसका वास्तविक अर्थ हैं । अतीत के प्रलेखों को समझने में अप्रचलित एवं अव्यवहारिक शब्दों के कारण तथा विचित्र परम्पराओं के संदर्भ के कारण अतिरिक्त कठिनाइयों का सामना करना पडता हैं । आन्तरिक आलोचना सकारात्मक पाठ्य वस्तु के यथार्थ शाब्दिक एवं वास्तविक अर्थ के आधार पर की जाती हैं । नकारात्मक आलोचना का प्रयोग तभी किया जाता हैं जबकि अनुसंधानकर्ता पूर्व में प्रस्तुत किये गये कथन के प्रति अपना अविश्वास या भिन्न मत प्रकट करें तथा अविश्वास प्रकट करनें के लिए सम्भावित कारणों की खोज करनें का प्रयास करें । आन्तरिक आलोचना के आधार पर अन्तत: अनुसंधानकर्ता को यह तय करना पडता हैं कि लेखक, चित्रकार तथा मूर्तिकार में घटनाओं एवं परिस्थितियों के सही मूल्यांकन एवं अभिव्यक्ति की कितनी योग्यता थी तथा कितना पक्षपात या पूर्वाग्रह होने की सम्भावना थी?

12.3.5 प्रदतों का प्रस्तुतीकरण एवं विश्लेषण (Presentation ad analysis of data):

ऐतिहासिक स्त्रोत सामग्री की उचित समालोचना के पश्चात प्रदतों के संगठन विश्लेषण प्रस्तुतीकरण की समस्या रह जाती हैं । सामान्यत: दो प्रकार से संकलित प्रदतों का प्रस्तुतीकरण किया जाता हैं :-

- तार्किक क्रमानुसार प्रस्तुतीकरण
- विषय क्रमानुसार प्रस्तुतीकरण

तार्किक कमानुसार प्रस्तुतीकरण में अनुसंधानकर्ता द्वारा विधियों के अनुकूल घटनाओं का वर्णन किया जाता हैं । इसे ही कमानुसार विषय वस्तु का प्रस्तुतीकरण कहा जाता हैं जिसमें घटनाओं की शृंखला को छोटी - छोटी समय इकाइयों में विभक्त किया जाता हैं । अध्यायों को

भी सार्थक घटना के तथ्यों के परिवर्तनानुसार (माह/ 2वर्ष) की कालाविधि द्वारा पृथक-पृथक किया जाता हैं तथा तथ्यों के अन्ततोगत्वा कालानुकमानुसार सजा दिया जाता हैं ।

ऐतिहासिक विषय वस्तु को संगठित तथा प्रस्तुतीकरण करने की दूसरी विधि हैं प्रकरण/विषयवस्तु संगठन विधि, जिसमें तथ्यों को कुछ निश्चित विषयों एवं समस्याओं के संदर्भ में प्रस्तुत किया जाता हैं । उदाहरणार्थ - विद्वानों के अनुसार (ढौंढियाल - 1972, पृष्ठ 63) भारत में ' 'स्त्री शिक्षा विकास, 'शिक्षा में स्वतंत्रता' भारत में विश्वविद्यालयी शिक्षा का विकास आदि विषयों का ऐतिहासिक अनुसंधान आधारित विवेचन किया जा सकता हैं । शैक्षिक - बिन्दुओं या समस्याओं की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में प्रस्तुतीकरण की प्रकिया इसी के अन्तर्गत आती हैं - तथा शिक्षा इतिहास की इकाइयां बनती हैं यथा - शिक्षा संचालन, अध्यापन विधाएं, पाठ्यचर्चा, शाला-संचालन आदि ।

संक्षेप में ऐतिहासिक तथ्यों-प्रदतों के प्रस्तुतीकरण एवं विश्लेषण में पूर्ण विचाराभिव्यक्ति की बहुत आवश्यकता होती हैं ।

12.3.6 प्रदत व्याख्या - परिणाम निरुपण एवं निष्कर्ष (Explanation of Data-Findings of results and conclusions)

ऐतिहासिक प्रदत्तें एवं सूचनाओं के एकत्रीकरण, प्रमाणिकता एवं विश्वसनीयता निर्धारण के पश्चात् उनका प्रस्तुतीकरण तथा उनकी प्रभावी अर्थ व्याख्या शोध का प्रमुख एवं आवश्यक पद हैं। जिसके आधार पर परिणाम निरुपित किये जायेंगें । तथा निष्कर्ष निकाल जायेंगें । यहां अनुसंधानकत का अगाध अध्ययन, धैर्य, परिश्रम, एवं लगान बहुत कम आता हैं । उस के चिन्तन एवं लेखन में ऐतिहासिक वस्तुनिष्ठता बहुत अधिक आवश्यक होगी जिसके आधार पर वह प्रदतों आन्तरिक सत्य के स्वरुप को ग्रहण करनें में सफल होगा । वह अपनी कल्पनाशक्ति एवं तर्कपूर्ण वैध साधनों के उपयोग से अतीत का सत्यापूर्ण पुन: निर्माण कर सकेगा । विभिन्न तथ्यों, सिद्धान्तों एवं बिन्दुओं की व्याख्या सामान्यत: निम्न में सें किसी न किसी एक के आधार पर अवश्य की जायेगी ।

12.3.6.1 जीवन गाथा अथवा महान सिद्धान्त - इतिहास के प्रमुख कारणात्मक कारक (Causative Factors) अतीत के महान् व्यक्तित्व होतें है ।

12.3.6.2 आदर्शात्मक दर्शन - ऐसा दर्शन जो घटनाओं के कम को निर्धारित करनें वाली प्रबल आध्यात्मिक शक्ति की खोज करता है ।

12.3.6.3 वैज्ञानिक एवं शिल्प वैज्ञानिक सिद्धान्त - ऐसा सिद्धान्त जों मानवीय प्रगति को प्रत्यक्ष रुप सें वैज्ञानिक एवं शिल्प विज्ञान सम्बन्धी प्रगति से सह-सम्बन्धित करते हुए व्याख्या करता हैं ।

12.3.6.4 आर्थिक समुदाय - जिस का विश्वास है कि सामाजिक एवं सांस्कृतिक प्रगति केप्रमुख निर्धारक तत्व आर्थिक परिस्थितियां होती हैं ।

12.3.6.5 भौगोलिक सिद्धांत - जो मानवीय किया एवं घटना की पर्याप्त रुप से व्याख्या करनें के लिए भौगोलिक परिस्थितियों पर बल देता हैं ।

12.3.6.6 समाजशारत्रीय व्याख्या - जो सामूहिक जीवन के अध्ययन सें संकलित सामान्यीकरण को ऐतिहासिक प्रदतों में सम्मिलित करता हैं ।

उपयुक्त वर्णित व्याख्या के सिद्धान्तों में पारस्परिक निरपेक्षता नहीं हैं प्रदत-व्याख्या में इन सिद्धांतों का संश्लेषण किया जाना अधिक अच्छा रहेगा । इसी लिए प्रदत्त व्याख्या का "संश्लेषण मनोवैज्ञानिक सिद्धांत " उपयुक्त रहेगा ।

12.3.7 कार्य-प्रकिया सम्पादन में ऐतिहासिक अनुसंधानकर्ता के गुण एवं दायित्व (Work-Quality and Responsibility of Historical Researcher)

- अनुसंधानकर्ता के गुण
- अनुसंधानकर्ता के दायित्व

12.3.7.1 वैध प्राकल्पना के सूचीकरण, व्याख्या एवं परिणाम निरुपण के लिए अनुसंधानकर्ता को निम्नलिखित गुणों से युक्त होना चाहियें । जिससे कि शोध कार्य प्रकिया भली प्रकार सम्पादित हो सके - ऐतिहासिक दर्शन अर्थात् तथ्यों को भूतकाल के संदर्भ में देखनें की क्षमता - जिसके आधार पर भूतकालीन घटनाओं, चरित्रों एवं सामुदायिक व्यवहारों की व्याख्या वर्तमान के संदर्भ में की जा सके । अनुसंधानकर्ता को भूतकाल की उचित व्याख्या उसी काल के संदर्भ में करनें में सक्षम होना बहुत आवश्यक हैं अन्यथा प्रदत व्याख्या वस्तुनिष्ठ ढंग से नहीं की जा सकेगी और न परिणाम निरुपण ही हो पायेगा ।

- दृश्यों, भावनाओं, विचारों तथा तथ्यों को "यन्त्रवत् फोटोग्राफर" के रुप में प्रस्तुतीकरण क्षमता-अनुसंधानकर्ता घटनाओं, दृश्यों तथा परिस्थितियों के वर्णन एवं व्याख्या में अपनें विचारों से उन्हें रचित न कर यंत्रवत फोटोग्राफर के कैमरे के समान प्रस्तुत हो तभी व्याख्या एवं विश्लेषण में वस्तु-निष्ठता आ पायेगी । वह प्रदत्त व्याख्या एवं परिणाम-निरूपण प्रक्रिया में केवल प्रमाणों एवं तटस्थ तर्को को ही प्रमुख स्थान प्रदान करें । अपनी कल्पना का प्रयोग व्याख्या को आत्मनिष्ठ बना देगा ।
- कारण निर्धारण में संतुलन एवं सतर्कता-एक अनुसंधानकर्ता जो ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में तथ्यों की व्याख्या एवं विवेचना कर रहा है, को निर्धारण (Assignment) में अधिक सतर्क रहना आवश्यक है । चूंकि व्यक्ति अथवा समूह के विशिष्ट व्यवहार के कारण अनेक हुआ करते है, अत: इतिहासकार जो अनुसंधानकर्ता भी है, को 'क्यों का उत्तर देने में बहुत सतर्कता बरतनी पड़ती है तथा संतुलित रहना पड़ता है । अत: कारण निर्धारण के दौरान सतर्कता एवं संतुलित व्याख्या में वस्तुनिष्ठता उत्पन्न करती है ।
- भाषा पर पूर्ण अधिकार-ऐतिहासिक अनुसंधान के परिणामों को इतिहास के रूप में प्रस्तुत करने के लिए भाषा पर पूर्ण अधिकार होना चाहिये । अनुसंधानकर्ता को ऐसे भाषागत कौशलों में युक्त होना चाहिये जिससे कि वह रोचक परिष्कृत एवं सुशिष्ट भाषा में सत्य को भली प्रकार प्रस्तुत कर सके । उसका प्रतिवेदन इतना अधिक वैज्ञानिक भी न बने कि भाषा नीरस हो और न इतनी अधिक सरलीकृत की सत्य हाथ से ही छूट जाये ।

12.3.7.2 अनुसंधानकर्ता के दायित्व-ऐतिहासिक अनुसंधान प्रक्रिया के सम्पादन में अनुसंधानकर्ता को निम्न दायित्वों का निर्वाह बहुत ही सावधानी से करना पडता है-

- चूंकि ऐतिहासिक अनुसंधान अतीत की घटनाओं, विकासक्रम तथा अनुभवों का गहन एंव विशिष्ट अन्वेषण होता हैं अत: कार्य प्रकिया के दौरान उपलव्य सूचनाओं तथा तथ्यों की विवेचना उपलव्य वैध तथ्यों के आधार पर सावधानीपूर्वक की जाये ।
- ऐतिहासिक अनुसंधान के बीच अपनाई जाने वाली कार्य प्रकिया में अतीत की घटनाओं के अन्वेषण के साथ-साथ समस्याओं के संदर्भ में उचित चिन्तन विधि का प्रयोग किया जाय।
- शिक्षा के इतिहास, उपलव्य साहित्य की विशेषताओं के अध्ययन एंव मूल्यांकन के दौरान शोध कार्य प्रकिया को वस्तुनिष्ठ ढंग से अपनाया जाय । उसे किसी प्रकार से पूर्वाग्रह जनित न बनाया जाय। किसी भी समय की शैक्षिक पद्धति का अध्ययन करते समय उसकी उपलब्धियों एवं कमजोरियों को ज्यों का त्यों प्रस्तुत किया जाय । बढ़ा चढ़ा कर प्रस्तुतीकरण करना अनुसंधानकर्ता की एक व्यक्तिगत कमजोरी ही समझी जायेगी ।
- चूंकि, ऐतिहासिक प्रदत्त एवं विषय सामग्री भूतकालीन परिधि में बंधी रहती है, अत: उन्हें ' 'अपरिवर्तित या बन्द प्रदत्त' ' कहा जाता है । अत: उनके वर्णन एवं विश्लेषण से पूर्ण उनका संकलन भी विशेष सतर्कता से किया जाना आवश्यक है ।
- ऐसी घटनाओं, विकास क्रम-अभिवृति-प्रवृतियों से सम्बन्धित बन्द एवं अपरिवर्तन प्रदत्तों के विश्लेषण एवं विवेचन मे विशेष सतर्कता रखी जाए । भूतकालीन घटनाओं एवं अवशेषों के आधार पर ही उन प्रदत्तों का सजीव रूप में चित्रण किया जाया । वहां पर "व्यक्तिगत पक्षपात" पर विशेष ध्यान दिया जाय तथा विश्लेषण, वर्णन एवं विवेचन में वस्तुनिष्ठता रखी जाय ।
- चूंकि, जे. डब्ल्यू वैस्ट के अनुसार ऐतिहासिक अनुसंधान का संबंध ऐतिहासिक प्रदत्तों के विश्लेषण से है, और वह भी पूर्णरूपेण वैज्ञानिक हो, अत: प्रदत्तों के विश्लेषण में उन की उपयुक्तता सम-सामयिकता एवं वैधता पर विशेष ध्यान रखा जाए । सम्बन्धित प्रदत्त, उस समय विशेष के हों, जिसके काल, समय, स्थान विशेष के संदर्भ में उनका वर्णन किया जा रहा है ।
- ऐतिहासिक अनुसंधान की शोध कार्य प्रक्रिया भूतकालीन प्रवर्तित घटना-समस्या एवं विशेषता के संदर्भ में सत्य एवं शुद्ध प्रमाण देने के समर्थ हो । क्यों एवं कैसे का सही उत्तर वैध प्रमाणों के आधार पर प्रतुत किया जाए ।

12.4 ऐतिहासिक अनुसंधान उपागम की विशेषताएं (Characteristics of Historical Approach)

ऐतिहासिक अनुसंधान उपागम की प्रक्रिया एवं सोपान निरूपण के पश्चात् उपागम विशेष की विशेषताओं पर भी विचार करना आवश्यक होता है, जो कि शैक्षिक अनुसंधान के क्षेत्र में ऐतिहासिक उपागम की अ होगी । विशिष्ट समस्याओं पर इस विधि से कार्य कर सकेंगे । ऐतिहासिक अनुसंधान द्वारा अर्जित की जाने वाली विभिन्न उपलब्धियाँ को इस उपागम विशेष के रूप में यहां प्रस्तुत किया जा रहा है-

12.4.1 शैक्षिक अनुसंधान का यह उपागम भूतकालीन अवशेषों के आधार पर उन शैक्षिक घटनाओं, परिस्थियों एवं आदर्शों का सजीव चित्र प्रस्तुत करता है, जिनका प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष सम्बन्ध वर्तमान से होता है ।

12.4.2 शैक्षिक अनुसंधान के अन्य उपागम के समान यह शोध उपागम वर्तमान के आधार पर भविष्य के विषय से पूर्व कथन नहीं करता है । ऐतिहासिक अनुसंधान उपागम की सहायता से शोधकर्ता वर्तमान के आधार पर भूतकाल का विश्लेषण करने का प्रयास करता है । ऐतिहासिक अनुसंधान भूतकालीन घटनाक्रम तथा तथ्यों के आधार पर किया जाता है ।

12.4.3 ऐतिहासिक अनुसंधान के माध्यम से यह अध्ययन करना आसान होता हे कि विभिन्न सामाजिक, राजनैतिक एवं धार्मिक संस्थाओं का किसी विशेष कालावधि, परिस्थिति विशेष में शिक्षा के विकास में क्या योगदान रहा है? बदलती हुई परिस्थितियों में इन संस्थाओं ने अपने उत्तरदायित्व को वहन करने में किसी प्रकार की कठिनाईयों का अनुभव किया तथा सूझबूझ के आधार पर किस प्रकार के हल खोजे तथा समाज में शिक्षा के प्रति कितनी व कैसी नवीन चेतना उत्पन्न की ।

12.4.4 ऐतिहासिक अनुसंधान शिक्षा एवं मनोविज्ञान के क्षेत्र में अनुभवित समस्याओं के हल ढूंढने में भूतकालीन परिस्थितियों का सम्यक विवेचन एव विश्लेषण प्रस्तुत करता हैं । यह शोधकर्ता को अतीत की त्रुटियों से परिचित कराकर भविष्य के प्रति सतर्क करता है।

12.4.5 शैक्षिक अनुसधान का ऐतिहासिक उपागम अतीत के शिक्षा-दर्शन-शास्त्रियों, समाजशास्त्रियों तथा गणमान समाज सेवियों, प्रशासकों तथा मनोवैज्ञानिक के "व्यक्तित्व एवं कृतित्व" का लेखा-जोखा प्रस्तुत करता ह । इस प्रकार अध्ययन उनके व्यक्तित्व या कृतित्व का एक पक्षीय अथवा बहुपक्षीय अध्ययन हो सकता है जिस मे उनकी कार्यशैली और उपलब्धियों निहित रहती है । यही नहीं उनके क्रिया-कलाप एव सोच-विचार का आलोचनात्मक विवेचन भी किया जाता है ।

12.4.6 शिक्षा में ऐतिहासिक अनुसंधान भूतकालीन इतिहास के अध्ययन एवं अतीत के जीवन के कुछ रूपों के लिखित प्रमाण प्रस्तुतीकरण का एक सबल उपागम है । यह उपागम यह स्पष्ट करता है कि वर्तमान की कुंजी अतीत में निहित है, जिसका अध्ययन सावधानी पूर्वक किया जाना आवश्यक है।

12.4.7 शिक्षा मनीषियों एवं विचारकों के अनुसार ऐतिहासिक अनुसधान "समय" अनुभूति सम्बन्धी सबल उपागम (Time Sense Approach शर्मा 1983-168) है। जिसमें वैयक्तिक अध्ययन विधि एवं प्रजनन विधि समाहित रहती है । जिनका प्रयोग इस अनुसंधान प्रक्रिया में किया जाता है ।

12.5 ऐतिहासिक अनुसंधान उपागम की सीमाएं (Limitation of Historical Approach)

यद्यपि, शिक्षा के क्षेत्र मे स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् के प्रारम्भिक दो दशाब्दियों के सम्पादित अनुसंधानात्मक अध्ययन में ऐतिहासिक उपागम का प्रयोग हुआ है, लेकिन बाद के शोध अध्ययन इस उपागम पर आधारित न होकर वैज्ञानिक उपागम को समाहित किये हुए है तथा प्रयोगाधारित रहे है । ऐतिहासिक उपागम में स्थिर वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग नहीं हो सकता है । इस उपागम की निम्न दुर्बलताओं तथा सीमाओं को विवेचित किया जा सकता है -

ऐतिहासिक उपागम द्वारा न तो वर्तमान समाज का ही ज्ञान हो पाता है और न ही किन्हीं वैध निष्कर्षो पर पहुंचा जा सकता है, चूंकि ऐतिहासिक अनुसंधान आधारित अध्ययन में निर्मित परिकल्पना (Hypothesis) की परीक्षा सम्पन्न नहीं हो पाती है ।

ऐतिहासिक उपागम को अनुसंधान कार्य में प्रयोग करने पर शोधकर्ता अनुमानों के आधार पर ही प्रदत्तों की व्याख्या करता है, यथार्थता तक नहीं पहुंच पाता है । इस पद्धति के प्रयोग करने पर समाज एवं संस्कृति के विकास के नियमों का केवल अनुमान ही लगाया जाता है । सत्यता के आधार पर उन को स्वीकार या अस्वीकार नहीं किया जा सकता है ।

चूंकि ऐतिहासिक अनुसधान उन विचित्र घटनाओं पर आधारित है जो केवल एक बार घटित होती है, दो बार घटित नहीं होती अथवा हो सकती है, अत: उनकी पुनरावृत्ति के अभाव में उनका वैज्ञानिक विश्लेषण असम्भव सा प्रती होता है । ऐतिहासिक घटनाओं के क्रमिक विकास के प्रस्तुतीकरण से यहां काम नहीं चल पाता है ।

ऐतिहासिक अनुसंधान से सम्बन्धित प्रलेखों में स्तरीय तर्क पूर्ण विश्लेषण, व्याख्या एवं परिणाम निरूपण देखने को नहीं मिलते है। प्रदत्त व्याख्या एवं परिणाम निरूपण प्रक्रिया में निम्न तत्व उपागम की दुर्बलता के रूप में दृष्टिगोचर होते है (सुखिया मेहरोत्रा 1973, पृष्ठ 212-213)

12.5.4.1 आवश्यक से अधिक प्रदत्तों की व्यवस्था में सरलीकरण जहां अनुसंधानकर्ता घटनाओं के घटित होने के केवल एक या दो सरल कारणों की ही व्याख्या करता है, सब की नहीं, विशेष रूप से जो जटिल है ।

12.5.4.2 आवश्यकता से अधिक प्रदत्त व्याख्या में सामान्यीकरण - जहां शोधकर्ता अनुपयुक्त प्रमाणों एवं मिथ्या तर्क के आधार पर सामान्यीकरण करता है, जो अनावश्यक समानताओं पर आधारित होते है ।

12.5.4.3 ऐतिहासिक अभिलेखों की व्याख्या करने में कठिनाई-जहां शोधकर्ता पात्रों, डायरी, अभिलेखों, अवशेषों का सही विश्लेषण एवं व्याख्या करने में कठिनाई अनुभव करता है ।

12.5.4.4 प्रचलित शब्दों, तथ्यों, रीतियों की अस्पष्ट व्याख्या-प्राचीन प्रायोजित शब्दों, अभिव्यक्तियों, तथ्यों, परिभाषाओं की अस्पष्ट एवं अपुष्ट व्याख्या भी शोध उपागम की दुर्बलता के रूप में प्रकट होती है । जहां शोधार्थी कभी-कभी इन में निहित अन्तर को स्पष्ट करने में असफल हो जाया करता है ।

12.5.4.5 विद्वानों के अनुसार, कभी-कभी ऐतिहासिक प्रालेखों में सरलता, श्रेष्ठता, शक्ति, स्पष्टता एवं वस्तुनिष्ठता जेसे गुणों के न पाये जाने से वे अल्प स्तरीय बन जाया करता है, इसीलिए संस्थाओं के इतिहास तथा जीवन गाथा एवं कृर्तव्य से सम्बन्धित शोध अध्ययन "आत्मनिष्ठता" को समाहित कर जाया करते है ।

12.6 स्वमूल्यांकन (Self Assessment)

ऐतिहासिक अनुसंधान उपागम - विशेषताएं

निर्देश: ऐतिहासिक शोध उपागम के अर्थ, महत्व, आवश्यकता एवं कार्य-प्रक्रिया का गहन अध्ययन करने के पश्चात आपने लघु उत्तरीय प्रश्नों के उत्तर लिख कर अपनी प्रगति एवं स्व-मूल्यांकन को सुनिश्चित किया था । आप ने जब स्वयं इस उपागम विशेष की विशिष्ट उपलब्धियों का अध्ययन किया होगा तथा उपागम विशेष की सीमओं को भी अध्ययन कर चुके होंगे । आप प्रत्येक प्रश्न के संदर्भ में उसका स्पष्ट उत्तर दो पृष्ठ से अधि में न लिखें । क्योंकि प्रत्येक प्रश्न में एक-एक बिन्दुवार से आप का स्पष्ट अध्ययन एवं विवेचन चाहा गया है।

लघूत्तरीय प्रश्न

- ऐतिहासिक अनुसंधान उपागम वर्तमान के आधार पर भूतकाल का विश्लेषण करने में किस प्रकार समर्थ होता है? उदाहरण सहित स्पष्ट करें ।
- अतीत के शिक्षाशास्त्रियों, समाजशास्त्रियों एवं विचारकों के व्यक्तिव एवं कृतित्व से हम इस अनुसंधान उपागम के माध्यम से किस प्रकार परिचित होते है? विवेचित करें ।
- 'वर्तमान की कुंजी अतीत में ही निहित है ' जिसकी सावधानी से खोज ऐतिहासिक अनुसंधान उपागम में की जाती है-कथन को स्पष्ट उदाहरण सहित करें ।
- "ऐतिहासिक अनुसंधान" समय एवं अनुभूति सम्बन्धित शिक्षा शोध का एक सबल उपागम है उदाहरण सहित इस कथन की व्याख्या करें ।
- ऐतिहासिक अनुसंधान की सीमाएं - ऐतिहासिक अनुसंधान कार्य प्रक्रिया आयोजित करते समय पूर्व निर्मित 'प्राकल्पना' की हम किन कारणों से विधिवत व्याख्या नहीं कर पाते है? स्पष्ट करें।
- ऐतिहासिक अनुसंधान आयोजित करते समय अतीत में घटित घटनाओं की पुनरावृत्ति के अभाव में हमें सम्बन्धित प्रदत्तों के विश्लेषण एवं विवेचन में क्या-क्या कठिनाइयां उपस्थित होती है ।
- ऐतिहासिक अभिलेखों की व्याख्या करने में अनुसंधानकर्ता की किन-किन समस्याओं से निरन्तर जूझना पड़ता है?
- "संस्थाओं के इतिहास" जीवन गाथा एवं कृतित्व से सम्बन्धित शोध अध्ययन कभी-कभी अल्प स्तरीय किन कारणों से बन. जाया करते है? स्पष्ट करें ।

12.7 संदर्भ ग्रंथ (References)

1 वेस्ट, जे. डब्लू. - रिसर्च इन एजुकेशन, नयी दिल्ली, प्रेंटिस हाल प्रा.लि. 1963

2 ढौढियाल, एस एन. - "शैक्षिक अनुसंधान का विधि शस्त्र, जयपुर, राजस्थान कथ अकादमी, 1972, अध्ययन चतुर्थ, पृष्ठ 55-85

3 राय, पी.एन. -"अनुसंधान परिचय" आगरा, लक्ष्मी नाराण लाल 1985 सप्तम अध्याय,पृष्ठ 108-114

4 राय, पी.एन-"शिक्षा अनुसंधान" मेरठ, लायल बुक डिपो, 1985-1985 सप्तम अष्टम, पृष्ठ 164-179

5 शर्मा, बी. - "शोध-प्रविधि" नयी दिल्ली, नेशलन पब्लिशिंग हाउस, 1990, अध्याय 22, पृष्ठ 128-135

6 सिंह, के. एस. -मैथेडोलेजी ऑफ रिसर्च इन एजूकेशन, नयी दिल्ली स्टिलिंग पब्लिशर्स, 1983, पृष्ठ 93-106

7 सिन्हा, एच.सी. - "शैक्षिक अनुसंधान नयी दिल्ली, विकास पब्लिशिंग हाउस, 1979, अध्याय अष्ठम, पृष्ठ 89-98

8 सुख्यिा एस.पी.मेहरोत्रा, आर. एन. आदि - "शैक्षिक अनुसंधान के मूल तत्व" आगरा, विनोद पुस्तक मन्दिर, अध्याय अष्ठम, 1973, पृष्ठ 2०2-217

9 व्हिटनी, एफ. एल. - दी एलीमेंटस ऑफ एजूकेशन रिसर्च, नयी दिल्ली, न्यूयार्क, प्रैंटिस हाल, 1961, पृष्ठ 533

भविष्यगत अग्रिम अध्ययन हेतु

1 Buch M. Ed।) "सर्वे आफ रिसर्च इन एजुकेशन" सेंटर आफ एडवांस स्टडीज इन एजूकेशन बडौदा, उपलव्य ग्रंथ में ..... ऐतिहासिक अनुसंधान पर आधारित अध्ययन का गहन अध्ययन करे ।

2 गुड, कार्टर, वी. स्केट्स डी.ई. - "मैथोडोजोजी आफ एजुकेशन रिसर्च न्यूयार्क, एप्लेटन सेन्चुरी क्राफटस, 11941, पृष्ठ 239-285

इकाई-13

दार्शनिक उपागम - अर्थ, आवश्यकता. प्रक्रिया, सोपान, विशेषताएँ एवं सीमाएँ

(PHILOSOPHICAL APPROACH-MEANING, NEED, PROCESS, STEPS, CHARACTERISTICS AND LIMITATION)

इकाई की संरचना (Structure of the Unit)

13.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

13.1 दार्शनिक अनुसंधान उपागम-परिचय, अर्थ एवं परिभाषा परिचय, दर्शन का अर्थ. दार्शनिक अनुसंधान से आश्य
(Philosophical Research Approach Introduction, Meaning, definition)

13.2 दार्शनिक उपागम की आवश्यकता (Necessity of Philosophical Approach)

13.3 प्रक्रिया एवं सोपान (Process and Stages)

13.3.1 समस्या का चुनाव व्यवस्थापन एवं अभिकथन
(Election of Problem its arrangement and statement)

13.3.2 प्राक्कल्पना-निर्धारण (Formulation of Hypothesis)

13.3.3 सम्बन्धित सूचनाओं का सर्वेक्षण एवं प्रदत्त संकलन
(Survey of related information data collection)

13.3.4 अनुसंधान प्रदत्त-संकलन. स्त्रों, साहित्य आलोचना
(Research Data-collection, Critical Literature Source)

13.3.5 प्रदत्त/साहित्य सामग्री का वर्गीकरण, विश्लेषण व्याख्या प्राक्कल्पना-सूत्रीकरण
(Classification of data/literature material, analysis, explanation, Hypothesis- Formulation)

13.4 दार्शनिक उपागम-आधारित अनुसंधान की विशिष्टताएँ-उपलब्धियाँ
(Philosophical approach-Specification of research- Achievements)

13.5 दार्शनिक उपागम-आधारित अनुसंधान की सीमाएँ
(Philosophical approach-Limitation of research)

13.6 स्वमूल्यांकन (Self-Assessment)

13.7 संदर्भ ग्रंथ(References)

13.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

इस इकाई की समाप्ति पर आप इस योग्य होने चाहिये कि- 'दार्शनिक अनुसंधान उपागम' का सामान्य परिचय प्राप्त कर दर्शन, के अर्थ तथा 'दार्शनिक अनुसंधान उपागम' की विभिन्न परिभाषाओं से अवगत हो सकें ।

- दार्शनिक अनुसंधान उपागम' की आवश्यकता एवं प्रयोजन को समझकर शिक्षा में गुणात्मक शोध की सम्भावनाओं से परिचित हो सकें ।
- दार्शनिक अनुसंधान उपागम' की विशेषताओं से परिचित होकर निहित गुणों की जानकारी कर सकें ।
- 'दार्शनिक अनुसंधान उपागम' की सीमाओं एवं दुर्बलताओं से परिचय प्राप्त कर यह समझने के समर्थ बन सके कि किन विशिष्ट कारणों से शिक्षा के क्षेत्र में 'दार्शनिक अनुसंधान उपागम' इतना अधिक प्रयुक्त नहीं हुआ है ।

13.1 परिचय (Introduction)

सामान्य शिक्षा के दो पक्ष हुआ करते है-सैद्धान्तिक पक्ष एवं व्यावहारिक पक्ष । सैद्धान्तिक पक्ष 'क्यों' तथा 'क्या' के उत्तर को समाहित किये रहता है । अर्थात् शिक्षा क्या है? उसकी प्रक्रिया या प्रक्रम क्या है? उसके मूलाधार क्या है? कौन-कौन सी प्रमुख विचारधाराएँ शिक्षा में समायोजित है, जिनके आलोक में शिक्षा के उद्देश्य निर्धारित किये जाने है? पाठ्यक्रम में शाश्वत मूल्यों को किस रूप में तथा क्यों समाहित किया जाए? किन आदर्शों, मूल्यों तथा मानदण्डों को शिक्षा में समाहित कर उसे विवेचित किया जाये? विद्यालय समाज की लघु इकाई, कला एवं संस्कृति का केन्द्र कब बन सकता है? शिक्षक का शिक्षण-प्रक्रिया के आयोजन में क्या स्वरूप हो, क्या वह पर्दे के पीछे हो या आगे आकर अपनी अहम भूमिका का निर्वाह करें? विद्यालय में प्रभावात्मक, दमानात्मक एवं मुक्तात्मक अनुशासन में किसी प्रकार का अनुशासन शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर उपयुक्त रहेगा तथा क्यों? इसी प्रकार शिक्षण विधि के संदर्भ में आगमन-निगमन प्रविधि का मिला जुला रूप आयोजित करना आवश्यक है? प्रश्न विधि, निर्देश विधि, तर्क विधि एवं समवाय विधि का प्रयोग शिक्षक के द्वारा शिक्षार्थी को शिक्षित करने में कब तथा कैसे किया जाय? आदि कुछ ऐसे ही प्रश्न हैं जो शिक्षा के सैद्धांतिक पक्ष से सम्बन्धित है, दार्शनिक पृष्ठभूमि को समाहित किये रहते है तथा उनके उत्तर दार्शनिक अनुसंधान उपागम' की सहायता किये रहते है तथा उनके उत्तर दार्शनिक अनुसंधान उपागम' की सहायता से प्राप्त किये जा सकते है । शिक्षा के सैद्धान्तिक पक्ष का विकास दार्शनिक अनुसंधान आयोजित करके किया जा सकता है। दार्शनिक अनुसंधान आधारित प्रक्रम की सहायता से ही शिक्षा का व्यावहारिक पक्ष अपनी आवश्यकताओं की चूंकि कर सकेगा । वर्तमान इकाई में अनुसन्धान के दार्शनिक उपागम को उसके अर्थ, आशय, आवश्यकता, प्रक्रिया, सोपान विशेषताओं एवं सीमाओं के संदर्भ में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

13.1 दर्शन, दार्शनिक अनुसन्धान उपागम का अर्थ (Philosophy, Meaning of Philosophy research Approach)

दर्शन क्या है?

दर्शन ज्ञान एवं सत्य के प्रति एक अनुराग है जिसका उद्देश्य है सृष्टि में व्याप्त अन्तिम सत्य की खोज एवं उसका व्यवस्थित अध्ययन । विद्वानों के अनुसार (शर्मा 1983, पृष्ठ 18।) जीवन के अनुभवों को बौद्धिक स्तर पर तार्किक ढंग से समग्र रूप में उनकी सार्थकता को बोधगमय करने का प्रयोग किया जाता है, जिसका केन्द्र बिन्दु 'सत्य' होता है तथा अनुभूतियों एवं अनुभवों को सहज में ही समाहित कर सत्य का प्रतिपादन किया जाता है । दर्शन के तीन पक्ष है-ज्ञान-मीमांसा, तत्व-मीमांसा वं मूल्य-मीमांसा तथा यह शिक्षा का सैद्धांतिक पक्ष है ।

दार्शनिक अनुसन्धान उपागम (Philosophy research Approach):

यह एक ऐसा अनुसन्धान उपागम है जिस में व्यक्ति या समुदाय के शैक्षिक विचारों में निहित दार्शनिक अथवा सैद्धांतिक पक्षों का अध्ययन किया जाता है, सत्य के नियमों एवं असितत्व के सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया जाता है तथा बौद्धिक स्तर पर तार्किक ढंग से उनका चिन्तन एवं विवेचन किया जाता है । दार्शनिक उपागम में विशेष रूप में जीवन के शाश्वत एवं अन्तिम नियमों का विधिवत अध्ययन कर, उन्हें संदर्भ विशेष मे प्रतिपादित कर मानव तथा विश्व के अस्तित्व का अध्ययन किया जाता है । शिक्षा शोध शास्त्रियों के अनुसार (सिन्हा, 1979, पृष्ट 1718 ओड़ 1985 पृष्ट 27-33, माथुर 1985 पृष्ट 107-209) शैक्षिक दर्शन में अनुसंधान उपागम से आशय है व्यक्तियों अथवा किसी समाज विशेष के विचारों को समझना तथा अर्थीकरण द्वारा उनके अनुकूल शिक्षा के लक्ष्य एवं रूप को निर्धारित करना । दार्शनिक शोध उपागम की सहायता से दार्शनिकों के शैक्षिक विचारों को उनकी जीवनी, महत्वपूर्ण घटनाओं तथा उनके लेखों का कथन कर के उपलव्य कराना पडता है । फिर, उनका संकलन कर एक अर्थपूर्ण स्वरूप प्रस्तुत करना होता है ।

13.2 दार्शनिक उपागम की आवश्यकता (Necessary of Philosophical Approach)

शैक्षिक अनुसंधान के दार्शनिक उपागम का अपना एक विशिष्ट स्थान है । जिसे निम्न रूप में विवेचित किया जा सकता है-

13.2.1 दार्शनिक अनुसन्धान उपागम शिक्षा, शिक्षालय, शिक्षक, एक शिक्षण प्रक्रिया की विशेषतया उनके मूल आधारों को विवेचित करने का एक वैज्ञानिक प्रयास है ।

13.2.2 दार्शनिक उपागम की सहायता से शिक्षा के उद्देश्य वास्तविकता परक अच्छे, बुरे एवं अन्तिम रूप मे व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन के संदर्भ में वर्णित किये जा सकते है । उनकी विवेचना भी की जा सकती है ।

13.2.3 इस उपागम विशेष की सहायता से ज्ञान की पिपासा को वास्तविक ज्ञान की ओर प्रेरित किया जा सकता है । शिक्षा से सम्बन्धित व्यावहारिक निर्णयों की दार्शनिक संदर्भ में व्याख्या की जाती है तथा उनका मूल आधार सुनिश्चित किया जाता है ।

13.2.4 शिक्षा का दार्शनिक विश्लेषण इस उपागम विशेष की सहायता से निम्न प्रमुख प्रश्नों के उत्तर खोज कर किया जाता है । विभिन्न दार्शनिक विचारों (प्रकृतिवाद, आदर्शवाद, प्रयोगवाद

आदि) तथा मान्यताओं एवं सिद्धांतों की शिक्षा जनित व्यावहारिक क्षेत्र में किस प्रकार व्याख्या एवं प्रस्तुति की जाय? शिक्षा की प्रति सोचने-विचारने का क्या उपयुक्त एवं वैज्ञानिक तरीका हो ? (अवस्था, 1985, पृष्ठ 393-424)

13.2.5 शिक्षा शोध में दार्शनिक उपागम को अपनाकर शिक्षा के उद्देश्य एवं क्रियाओं को निर्देशित किया जा सकता है विभिन्न दार्शनिकों यथा फ्रोबेल, पैस्टालाची, गाँधी, स्वामी विवेकानन्द, कृष्णमूर्ति आदि ने शिक्षा के दार्शनिक पक्ष की विवेचना की तथा श्री अरविन्द, प्लेटो, ड्यूवी (Deway) टैगोर आदि ने उसे और क्रमबद्ध रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया । यही कारण हे कि विद्वानों यथा 'एडम्स' ने शिक्षा को दर्शन का गत्यात्मक पहलू कहा है । ड्यूवी के मतानुसार शिक्षा दर्शन का सिद्धांत है ।

13.2.6 दार्शनिक शोध उपागम को अपनाकर शिक्षा शास्त्रियों एवं शिक्षा विचारकों के दर्शन एवं सिद्धांतों की विवेचना की जा सकती है । विभिन्न ग्रन्थों, लेखों तथा अन्य स्त्रोतों की सहायता से विचार सामग्री का संकलन, विश्लेषण एवं प्रस्तुतीकरण किया जा सकता है । (सिन्हा, 1979, पृष्ठ 94)

13.2.7 शिक्षा में गुणात्मक शोध विधि (Qualitative Research) का प्रयोग दार्शनिक शोध उपागम को अपनाकर ही किया जा सकता है । अमुक विषय यथा तर्क, नीति, संस्कृति एवं धर्म से युक्त विषय को किरन स्तर से तथा क्यों पढाया जाये तथा विषय-विशेष में क्या पढाया जाय? यह शिक्षा के गुणात्मक शोध से सीधे सम्बन्धित है, जो विषय विशेष के 'महत्व' एवं मूल्य पर प्रकाश डालती है । तर्क, नीति, धर्म एव संस्कृति के स्नातक स्तर पर अध्ययन से शिक्षार्थी का भावी जीवन किन धारणाओं या मूल्यों से युक्त हो सकेगा? उसकी सोचने-विचारने के तरीकों में क्या परिवर्तन होंगे' इन जिज्ञासा द्य। प्रश्न की विवेचना 'गुणात्मक शोध विधि' को अपनाकर ही की जा सकेगी ।

13.2.8 किसी दार्शनिक विचार प्रणाली एवं दर्शन के ज्ञान, तत्व एवं नीति विशेष के महत्वपूर्ण पक्षों का अध्ययन प्रथमत: किसी समुदाय एव राष्ट्र के व्यक्तियों के विचारो का अध्ययन जीवन की उपलब्धियां, आदर्शों एवं सृजित साहित्य के संदर्भ में किया जा सकेगा । यह समय राष्ट्र विशेष या समुदाय विशेष की विचार प्रणाली के विवेचन (A Dymesty of Thought) से सम्बन्धित होगा । शोध उपागम की द्वितीय दिशा में महान् दार्शनिकों, विचारकों, शिक्षा शास्त्रियों द्वारा सृजित साहित्य में मूल्य मीमांसा, तत्व-मीमांसा तथा ज्ञान-मीमांसा का विश्लेषण एवं विवेचन किया जा सकता है । यह महान् विचारकों के विचार एवं दर्शन का आलोचनात्मक अध्ययन (A Critical Approach of the thoughts of great thinkers) प्रस्तुत करेगा।

13.3 प्रक्रिया एवं सोपान (Process and Steps)

शैक्षिक अनुसंधान के संदर्भ मे दार्शनिक उपागम से आशय अर्थ एवं आवश्यकता विवेचन के पश्चात् अनुभूति होती है कि दार्शनिक उपागम की शोध कार्य प्रक्रिया एवं निहित विभिन्न सोपान से परिचित हुआ जाय । साधारणत: दार्शनिक अनुसंधान उपागम की शोध प्रक्रिया को निम्न सोपान के अन्तर्गत प्रस्तुत किया जा सकता है :

- समस्या का चुनाव, व्यवस्थापन अभिकथन
  - समस्या का चुनाव-विभिन्न आधार
  - समस्या का व्यवस्थापन-शीर्षक तथा अभिकथन एवं परिभाषीकरण
  - विशिष्ट प्रकार के प्रश्न जो दार्शनिक विचारधारा पर आधारित होगा न कि उत्तर के लिये शोध कार्य किया जाय ।
- उपलब्ध पूर्व शोध अध्ययन के आधार पर
  - प्राथमिक/प्रत्यक्ष स्त्रोत-साहित्य
  - गौण/अप्रत्यक्ष स्त्रोत-साहित्य
- सम्बन्धित सूचनाओं का सर्वेक्षण एवं संकलन
- अनुसंधान सम्बन्धित प्रदत्त सकल-स्त्रोत साहित्य आलोचना
  - बाह्य आलोचना - आन्तरिक आलोचना
- प्रदत्त/साहित्य सामग्री का वर्गीकरण-विश्लेषण एवं व्याख्या - प्राकल्पना का सूत्रीकरण
- परिणाम-निरूपण, निष्कर्ष एवं शोध उपलब्धियॉ

13.3.1 समस्या-चुनाव. व्यवस्थापन एवं अभिकथन

दार्शनिक अनुसन्धान उपागम' में समस्या का चुनाव एक दुष्कर कार्य है । सुनियोजित क्रम में निम्न अनेक चरणों में अनितम रूप से समस्या का चुनाव करना होता है ।

समस्या चुनाव एवं विभिन्न आधार

समस्या का व्यवस्थापन - शीर्षक अभिकथन एवं परिभाषीकरण

(i) समस्या चुनाव एवं विभिन्न आधार

एक अनुसन्धानकर्ता को विशिष्ट रूप से दार्शनिक अनुसंधान के क्षेत्र में अपने चयनित क्षेत्र की व्यापक जानकारी होनी आवश्यक है -

विशेष रूप से (अ) क्षेत्र में क्या-क्या अनुसंधान किये जा चुके है, (ब) कौन-कोन से अनुसंधान इस समय चल रहे है (स) किस प्रकार के अनुसंधानों की आवश्यकता है । दार्शनिक अनुसंधान की समस्याएँ दो प्रकार की हो सकती है-

- किसी दार्शनिक तथ्य या विचार प्रणाली से उत्पेरित समस्या जो किसी राष्ट्र सम्प्रदाय या समाज के विशिष्ट काल से सम्बन्धित हो ।
- ऐसी दार्शनिक तथ्यों पर आधारित समस्या जो किसी महान पुरूष या दार्शनिक के व्यक्तित्व-कृतित्व एवं जीवन दर्शन पर आधारित हो ।

समस्या का चुनाव करते समय विषय क्षेत्र शोधार्थी की योग्यता के अनुरूप होना चाहिए । समस्या नवीन होनी आवश्यक है । कभी-कभी नवीन दल सामग्री के प्राप्त होने अथवा पुरानी सामग्री के अविश्वसनीय सिद्ध होने पर किसी पुराने अनुसन्धान कार्य का पुनरावलोकन अथवा पुन: विवेचन भी किया जा सकता है । दल सामग्री के सरलता से उपलब्ध होने की आशा भी होनी चाहिए विशेष रूप से 'ऐतिहासिक-दार्शनिक' सम्मिलित शोध उपागम को अपनाते समय महत्वपूर्ण अनुसंधान भी इसीलिए सम्पादित नहीं हो पाते है । क्योंकि दत्त सामग्री मिलने में अनेक बाधाएँ उपस्थित हो जाया करती है । (सिन्हा 1979 पृष्ठ 90)

(ii) समस्या का व्यवस्थापन. शीर्षक-अभिकथन

समस्या का चुनाव कर अन्तिम रूप से अन्वेषण हेतु स्वीकार कर लेने पर अगला चरण यह आता है कि शीर्षक को उपयुक्त शब्दावली में प्रस्तुत किया जाय । जिस का अभिकथन अत्यन्त स्पष्ट हो । शीर्षक प्रस्तुतीकरण में अलंकारिक, तर्क-वितर्क एवं पक्षपातपूर्ण प्रकृति के किसी पद को सम्मिलित न किया जाए (सुख्यिा-मेहरोत्रा)ए (1973, पृष्ठ 95) यथा 'महान दार्शनिक' शीर्षस्थ महान् शिक्षाशास्त्री 'दर्शक के प्रवर्तक श्री अरविन्द.....' ।

दर्शन से सम्बन्धित शीर्षक अभिकथन में अनुसन्धान के प्रमुख उद्देश्य को ज्यों की त्यों शीर्षक न बनाया जाए । शीर्षक विशिष्ट-क्षेत्र, विशिष्ट-पक्ष एवं काल विशेष को अवश्य स्पष्ट करें । तथा तर्क संगत रूप से परिसीमित भी हो जिससे कि अध्ययन प्रक्रिया में वस्तुपरक दृष्टिकोण (Objective out looks) को अपनाया जा सके । समस्या अभिकथन करते समय शोधार्थी दो विकल्प चुन सकता है- ज़) समस्या अभिकथन प्रश्न रूप में किया जा सकता है अर्थात् अनेक जिज्ञासाएँ प्रश्न रूप में प्रस्तुत की जा सकती है, जिसके समाधान स्वरूप उत्तर खोजे जाने का प्रयास अनुसन्धान प्रायोजना में किया जायेगा । (ब) घोषणात्मक कथन भी प्रस्तुत किये जा सकते है अर्थात् सामान्य कथन एवं उनके साथ अनुगमन करते हुए आश्रित कथन । सुझाव रूप में समस्या के प्रारम्भिक कथन में दोनों विधियों का संयोग सफलतापूर्वक किया जा सकता है ।

संक्षेप में शीर्षक अभिकथन के दौरान उसके औचित्य एवं महत्व को वर्णित किया जाये, क्षेत्र का स्पष्टीकरण उपलव्य साहित्य के सर्वेक्षण पर आधारित हो, तकनीकी शब्दों की परिभाषाएँ एवं आधारभूत मान्यताएँ अवश्य दी जाये ।

13.3.2 परिकल्पना-निर्धारण (Hypothesis-Formulation)

दर्शन की सामान्य भाषा में परिकल्पना एक विचार है जो स्वानुभव एवं परानुभाव से उत्पन्न होती है, यह शोध का प्रारम्भ है, जिसे अन्त में शोध निष्कर्षो के परिणामस्वरूप प्रतिपादित किया जाता है । दर्शन, आधारित शोध अध्ययन में प्राक्कल्पनाओं का पूर्व में ही निर्धारण किया जाना बहुत आवश्यक है । यह अनुसंधान प्रक्रम का एक प्रमुख चरण है । प्राक्कल्पनाओं को गहन अध्ययन एवं परीक्षण के पश्चात् ही सिद्धान्त रूप में परिभाषित किया जाता है । इन निर्मित सिद्धान्तों तथा विवेचनाओं में नवीन प्राक्कल्पनाओं का सूत्रपात होता है । दार्शनिक उपागम आधारित अनुसन्धान में प्राक्कल्पनाओं का निर्धारण उपलव्य साहित्य के आधार पर पूर्व में किया जाना आवश्यक है । प्राक्कल्पना सूत्रीकरण के लिए अनुसंधानकर्ता को निम्न प्रक्रिया अपनानी पड़ती है -

- अनुसंधानकर्ता की सुसंस्कारिता के - आधार पर
- अनुसंधानकर्ता का व्यापक - महान अध्ययन एवं अनुभव
- सम्बन्धित साहित्य में उपलव्य शोध- निष्कर्षो के सत्यापन हेतु प्राक्कल्पनाओं में परिवर्तित कर, अनुसंधानकर्ता अपने शोध अध्ययन का शुभारम्भ किन मान्यताओं को ध्यान में रखकर कर रहा है, उससे भी उसे अध्ययन प्रारूप में प्राक्कल्पना सूत्रीकरण में सहायता मिलेगी । उदाहरणार्थ - यदि अनुसंधानकर्ता 'महात्मा गांधी द्वारा प्रस्तावित बेसिक शिक्षा योजना में निहित दार्शनिक पृष्ठभूमि' का अध्ययन करना चाह रहे है तो उसे गाँधी दर्शन में तात्कालिक परिस्थितियों का भी समावेश करना पड़ेगा तथा वह अपनी सुसंस्कारित के आधार पर अनेक प्राक्कल्पनाओं का सूत्रीकरण करेगा यथा गाँधी

जी का मानववादी एवं समाजवादी दर्शन तात्कालिक परिस्थितियों एवं अनुभवित समस्याओं यथा 'हरिजन उद्धार', निर्धनता निवारण स्वदेशी आन्दोलन से प्रभावित था । यहाँ शोधार्थी की सुसंस्कारिता विभिन्न प्राक्कल्पनाओं के निर्माण में सहायक होगी ।

प्राक्कल्पनाओं का निर्माण सम्बन्धित साहित्य के अध्ययन के आधार पर भी किया जाता है । गाँधी जी के दर्शन एवं विचार प्रक्रिया में 'आध्यात्मिकता भी दृष्टिगोचर होती है । जिसके लिए उनके विभिन्न लेख, भाषण, आम्मकथा के साथ-साथ एवं समय-समय पर उनके द्वारा विभिन्न विद्वानों एवं प्रशासक वर्ग से किये जाने वाले विचार-विमर्श का भी अध्ययन करना पडेगा । तत्कालीन एवं पूर्वकालीन कौन-कौन से विभिन्न संतों का उन पर प्रभाव पडा यथा कबीर, तुकाराम नानक आदि । कबीर की प्रमुख वाणी 'पोथी पढ़-पढ़ जग मुआ, पंडित हुआ न कोय स्वयं गाँधी जी के शिक्षा दर्शन में प्राक्कल्पना का आधार हो सकती है । गाँधी जी ने 'ढाई अक्षर प्रेम' की किस प्रकार से विवेचना की । सुयोग्य प्राथमिक स्तरीय शिक्षक किन गुणों से युक्त होकर 'ढाई अक्षर प्रेम का पाठ छात्र वर्ग को कैसे पढाये ।

दर्शनपरक शोध कार्यो में यह शंका अवश्य उपस्थित होती है कि शोध कार्य प्रारम्भ करने से पूर्व प्राक्कल्पना का निर्माण किया जाना आवश्यक है? यहाँ दो मत उपस्थित होते है (शर्मा 199० पृष्ठ 35) एक मत है कि शोध प्राक्कल्पना तभी निर्मित की जानी चाहिये जब विषय का शोध कार्य काफी आगे बढ़ जाये क्योंकि शोध कार्य के पूर्व का मत है कि ऐसे अनेक शोध अध्ययन उपलब्ध है जिनमे पूर्व प्राक्कल्पना के बिना मान्याताएं के आधार पर शोध अध्ययन को प्रारम्भ किया गया हो तथा विषय से सम्बन्ध पर्याप्त सामग्री एकत्रित होने पर ही प्राक्कल्पनाओं का निर्माण किया गया है । प्राक्कल्पनाओं के निर्माण में आत्मकथाएँ जीवन चरित्र एवं लिखित सामग्री अधिक उपयोगी बन सकती है ।

अन्य मतानुसार अध्ययन के पश्चात् प्राक्कल्पनाओं का निर्माण किया जाना अनुचित है । वहाँ तो विषयाधारित मूल अध्ययन के पश्चात् पूर्व निर्मित प्राक्कल्पनाओं का परीक्षण ही किया जायेगा, उपलब्ध विषय सामग्री के आधार पर उसे निष्पक्ष भाव से परीक्षित एवं विवेचित किया जायेगा । गुड एवं हैट एवं (माथुर 1985 पृष्ठ 200) के अनुसार प्राक्कल्पनाओं का निर्माण अध्ययन साक्ष्यों के आधार पर प्राक्कल्पनाओं का निर्माण पूर्व में किया जाना आवश्यक है । पिछली मान्यताओं एवं शोध निर्णयों उपलब्धियों को ही विद्वानों (शर्मा 1990 गुडहैट) के मतानुसार प्राक्कल्पनाओं के रूप में स्वीकार किया जा सकता है । सम्पादित किये गये दार्शनिक शोध अध्ययन में पुराने शोध के निष्कर्षो का खण्डन-मण्डन भी किया गया है तथा सम्बन्धित नवीन प्राक्कल्पनाओं के अन्तिम अध्याय में विवेचना भी की गई । ऐसे अध्ययन में पुराने शोध निष्कर्षो का खण्डन हुआ है तथा नवीन शोध निष्कर्षो की विवेचना की गई । संक्षेप में दर्शन उपागम आधारित शोध अध्ययन में प्राक्कल्पनाओं का निर्माण किया जाना आवश्यक है तथा निष्पक्ष भाव से सत्यापन एवं विवेचना ही शोध परियोजना की विशेष उपलब्धि होगी ।

13.3.3 सम्बन्धित सूचनाओं का सर्वेक्षण एवं प्रदत्त संकलन (Survey of related information and data collection)

दर्शन आधारित शोध अध्ययन संचालित करने के दौरान ऐतिहासिक शोध उपागम अध्ययन प्रक्रिया के समान ही हमें सूचनाओं/प्रदत्तों के संकलन हेतु दल स्त्रोतों को दो वर्ग में बाँटना होगा- -प्रथमत: प्राथमिक प्रत्यक्ष स्त्रोत -द्वितीय गौण/अप्रत्यक्ष स्त्रोत

(I) प्राथमिक प्रत्यक्ष स्त्रोत

प्रथमत: प्राथमिक स्त्रोत के अन्तर्गत वे स्त्रोत आयेंगे जो हमें विषय से सम्बन्धित सीधी जानकारी प्रदान करते है, इस में विभिन्न दर्शनशास्त्रियों के जिनके बारे में हम अध्ययन कर रहे है स्वयं के लेख आत्मकथाएँ अनेक अव२२र पर दिये भाषण, रेडियों, टेलीविजन साक्षात्कार, समाचार पत्र-पत्रिकाओं के सम्पादकों द्वारा आयोजित साक्षात्कार, उनके द्वारा सम्पादित लिखित ग्रन्थ पुस्तकें आदि । कभी-कभी प्रत्यक्ष स्त्रोत के लिये हमें राष्ट्रीय स्तर के शासकीय एवं प्रशासकीय अभिलेखागार, पुस्तकालयों एवं संग्रहालयों का भी गहन अध्ययन करना पड़ सकता है । कभी-कभी ऐसी सामग्री उन के सम्बन्धियों/इष्टमित्रों/सहयोगियों से भी प्राप्त हो सकते है । उपर्युक्त वर्णित विवेचन प्राथमिक/प्रत्यक्ष स्त्रोत सं सीधे सम्बन्धित है ।

(II) गौण/अप्रत्यक्ष स्त्रोत (Secondary/Indirect Source)

उन व्यक्तियों के लेख एवं वर्णन जिन्होंने स्वय व्यक्ति/दार्शकि विशेष के विचार, लेख जिन्होंने उस घटना 7 परिस्थिति एवं व्यक्ति विशेष को नही देखा, लेकिन जिनके बारे में उसने अन्य आधार पर लिखा है अप्रत्यक्ष स्त्रोत के अन्तर्गत आयेंगे तथा अप्रत्यक्ष प्रमाण कहलायेंगे, इन्हें भी विभिन्न विश्वविद्यालयों/राष्ट्रीय स्तर के पुस्तकालयों में देखा जा सकता है । लेकिन यह सूचना, चूंकि, अधिक लोगों से होकर आती है, यद्यपि ऐतिहासिक विवेचन के लिए तो उनकी विश्वसनीय नहीं है लेकिन दर्शन विचाराध्ययन के लिए अप्रत्यक्ष स्त्रोतों से उपलब्ध होने के पश्चात् भी उपयोगी है । यही हमें घटना/व्यक्ति विशेष का सत्यापन नहीं करना है । जो कि ऐतिहासिक अध्ययन में किया जाता है । वरन् केवल अध्ययन ही करना है । ही, इतना सुनिश्चित किया जाना आवश्यक है कि वह विश्वसनीय एवं मौलिकता लिये हुए अवश्य हों । यद्यपि गौण सूचनाओं को जब विश्वकोष, रिसर्च एब्सट्रेक्ट्स, शोध प्रत्रिकाओं, एवं माइक्रो पत्रिकाओं से प्राप्त किया जाता है तो वे अधिक प्रमाणित होती है तथा उनका प्रयोग किया जाना ही उपयुक्त होता है। दर्शन आधारित शोध उपागम से सम्बन्धित शोध अध्ययन में इस प्रकार के प्रदत्त ही सामान्यत: उपलब्ध होते है जिनको प्रथमत: संग्रहीत किया जाता है ।

13.3.4 अनुसंधान सम्बन्धित विभिन्न संकलन, स्त्रोत साहित्य समालोचना

ऐतिहासिक अनुसधान की भाँति दार्शनिक शोध अध्ययन में बाह्य समालोचना के आधार पर उपलब्ध सामग्री की वैधता एवं प्रामाणिकता का भी कभी-कभी अध्ययन किया जाता है, विशेष रूप से जब इतिहास-परक दार्शनिक अध्ययन सम्पादित किये जाते है । उस काल या उस व्यक्ति विशेष की सामग्री सिद्ध करने के लिए हम विभिन्न रासायनिक एवं भौतिक विधियों का सहारा लेते है, जिनकी विवेचना विस्तार से ऐतिहासिक उपागम का सहारा लेते है, जिनकी विवेचना विस्तार से ऐतिहासिक उपागम परक शोध अध्ययन प्रक्रिया के (Process of Historical Approach) अन्तर्गत की गई है । अनुकूल विधि से हम यह देखने का प्रयास

करते है कि संकलित सामग्री उस युग के लेखक/विचारक एवं दार्शनिक से मेल खाती है या नही।

आन्तरिक आलोचना का दार्शनिक अनुसंधान में विशेष महत्व है । जहाँ यह सुनिश्चित किया जाना होता है कि स्त्रोत द्वारा संकलित विषय वस्तु का सही अर्थ क्या है, जो उसमें वर्णित एवं विवेचित किया गया उसमें कितना पूर्वाग्रह हित वैधता एवं सत्यता है । इसके लिये हमें उस कालगत निर्णयों, परम्पराओं, ध्वनियों, प्रतीकों मूल्यों का सहारा लेना पडता है तथा उसी के आधार पर उपलव्य सामग्री को वर्णित एवं विवेचित करना होता है । दर्शन आधारित शोध अध्ययन में आन्तरिक आलोचना को विशेष महत्व होता है, जहाँ विषय वस्तु की काल विषयक वेधता एवं प्रसंगकिता का अध्ययन किया जाना बहुत आवश्यक है । दार्शनिक शोध अध्ययन प्रक्रिया में काल गौण होता है । जबकि ऐतिहासिक अध्ययन में काल प्राथमिकता होता है । (सिन्हा, 1980 पृष्ठ 94) दार्शनिक अनुसंधान का मूल विषय निराकार विचार होता है जबकि ऐतिहासिक अनुसंधान में अनुसन्धानकर्ता की अभिरूचि साकार घटनाओं में ' होती है ।

13.3.5 प्रदत्त/सामग्री का वर्गीकरण, विश्लेषण एवं विवेचन प्राक्कल्पना का परीक्षण

विभिन्न प्राथमिक एवं गौण श्रोत से प्रदत्त सामग्री एकत्रित करके तथा उनके बाह्य आन्तरिक आलोचना करने के पश्चात् प्रदत्तों/सम्बन्धित सूचनाओं का क्रमिक प्रस्तुतीकरण, विश्लेषण एवं विवेचन किया जाता है । यह शोध प्रक्रिया का बहुत ही महत्वपूर्ण सोपान है, जहाँ अनुसंधानकर्ता की महती आवश्यकता होती है । यहाँ के प्रथम अथवा द्वितीय अध्याय में विवेचित उद्देश्यों एवं लक्ष्यों तथा पूर्व विश्लेषित शोध सामग्री की व्याख्या एवं विवेचन प्रस्तुत करना होता है । अनुसन्धानकर्ता जितना अधिक वस्तुनिष्ठ दृष्टिकोण से युक्त होगा, जितनी अधिक पैठ एवं सूझ विषय सामग्री के एकत्रीकरण एवं विश्लेषण में निहित होगी, उतनी सूक्ष्मता एवं स्पष्टता से वह उपलव्य शोध प्रदत्त सामग्री की व्याख्या एवं विवेचना कर सकेगा ।

दर्शन आधारित प्रदत्त विश्लेषण, विवेचन एव व्याख्या में प्रमुख रूप दो प्रकार से किया जा सकता है- प्रथम अनुसन्धान उपागम के आधार पर शोधकर्ता किसी विचार प्रणाली A system of thought के विशिष्ट पक्षों का विवेचन करेगा । उस प्रणाली के ज्ञान-मीमांसा, तत्व-मीमांसा एवं नीतिशास्त्र के संदर्भ में उदाहरणार्थ-किसी विशेष काल/परिधि की शैक्षिक उपलब्धियों एवं सिद्धान्त तथा दर्शन । द्वितीय अनुसन्धान उपागम के अनुरूप वह किसी महान् विचारक शिक्षाशास्त्री के दर्शन का आलोचनात्मक विवेचन (A Critical appraisal of the thought of great personage) प्रस्तुत करेगा, जिसमें प्रमुख रूप से शिक्षा के उद्देश्य, पाठ्यक्रम, शिक्षण विधि, अनुशासन एवं शिक्षण-व्यूह रचना एवं शैक्षिक प्रशासन विशेष के संदर्भ में प्रस्तुत विचारों की समालोचनात्मक व्याख्या होगी (शर्मा, 1986, पृष्ठ 1 85- 186)

शोधकर्ता उपलव्य सामग्री का अर्थापन एवं विवेचन करने मे पूर्व निर्मित प्राक्कल्पनाओं पर ही केन्द्रीभूत करेगा तथा शोध जिज्ञासाओं के रूप में प्राक्कल्पनाओं का वस्तुनिष्ठ रूप से परीक्षण करने का प्रयास करेगा । प्रत्येक अध्याय मे पूर्व विवेचित प्राक्कल्पनाओं अथवा शोध जिज्ञासा के आधार पर अपने विषय बिन्दु से सम्बन्धित तथ्यों को विवेचित कर अन्त में उसे

अनेक शोध जिज्ञासाओं से सम्भावित उत्तर भी वस्तुनिष्ठ ढंग से प्रस्तुत करने होंगे । यह उस अध्याय में विवेचित एवं अर्थापित व्याख्या का सार होगा । तथा अध्याय में प्रस्तुत प्रथम अनुच्छेत में वर्णित शोध जिज्ञासाओं का संभावित उत्तर होगा, जिसके प्रस्तुतीकरण में उसे अधिक सावधानी भी रखनी होगी ।

13.3.6 परिणाम निरूपण - निष्कर्ष एवं शोध उपलब्धियाँ (Result Findings Conclusion and research achievement)

प्रदत्त संग्रहण एवं प्रदत्तों के विश्लेषण अर्थापन एवं समग्र व्याक्ष्या को प्रत्येक अध्यायवार प्रस्तुती के पश्चात् अनुसन्धानकर्ता को प्रथम अथवा द्वितीय अध्याय में विवेचित शोध जिज्ञासाओं/ प्राक्कल्पनाओं के सम्भावित उत्तर एवं नवीनतम प्राक्कल्पनाओं की प्रस्तुत करनी होगी । अन्तिम अध्याय में उसे समग्र अर्थापन एवं व्याख्या के आधार पर अनेक परिणाम निरूपित करने भी आवश्यक होंगे । उसे निरूपित परिणाम विवेचन एवं समग्र व्याख्या को निष्कर्ष रूप में अत्यन्त सावधानी से आलेखित करना होगा । निष्कर्षो के प्रस्तुतीकरण में उसे विभिन्न पक्षों से सम्बन्धित शोध जिज्ञासाओं के सही, सुसंगठित एवं परिष्कृत भाषा 'क्या', कैसे' ओर 'क्यों' के रूप में यथा सम्भव उत्तर देने होंगे । ये सम्पूर्ण शोध कार्य प्रक्रिया की सूक्ष्म में उपलब्धियां होंगी जो उपलव्य दल सामग्री की एक समग्राकृति प्रस्तुत करेगी । निष्कर्षो में अनुसन्धाकर्ता एक प्रकार से नवीन प्राक्कल्पनाओं को सूत्रीकरण भी करेगा, जिसमे सब के सब तथ्य, विचार एवं विवेचन क्रम में एक दूसरे से निबद्ध होंगे । अन्तिम रूप से विवेचित उपलब्धियाँ जितनी अधिक ठोस प्रमाणों से युक्त होगी, जितनी अधिक व्याख्या वस्तुनिष्ठ ढंग से की जायेगी, उतनी वे अधिक मान्य होगी । शोध कार्य प्रक्रिया के इस अन्तिम सोपान में अनुसंधानकर्ता की न्यूनतम व्यक्तिनिष्ठता (Subjectivity) होना आवश्यक है ।

13.3.7 दार्शनिक उपागम पर आधारित अनुसंधान प्रक्रिया एवं अनुसन्धानकर्ता

जैसा कि पूर्व ऐतिहासिक अनुसन्धान उपागम की शोध कार्य प्रक्रिया में अनुसंधानकर्ता की अनेक व्यावसायिक दक्षताओं की विवेचना की गई है, दर्शन आधारित शोध कार्य प्रक्रिया के सफल संचालन में . अनुसन्धानकर्ता को निम्न गुणों से युक्त होना आवश्यक है ।

- अन्य वैज्ञानिक की भाँति दार्शनिक अनुसंधानकर्ता को तथ्यों एवं प्रदतों के संकलन के आधार पर अवधारणाओं की पुष्टि एवं नवीन प्राक्कल्पनाओं का सूत्रीकरण ईमानदार एवं वस्तुनिष्ठ ढंग से करना होगा ।
- उसके द्वारा प्रस्तुत किये गये शोध निष्कर्ष समग्रता लिये हुए होंगे तथा दार्शनिक, तार्किक क्षमताओं से युक्त होंगे ।
- दार्शनिक उपागम आधारित अनुसन्धानकर्ता अपने विवेक से परिणामों का अर्थापन करेगा, नवीन प्राक्कल्पनाओं का सूत्रीकरण करेगा तथा सार रूप में अपने विवेकपूर्ण समग्र दृष्टिकोण को रखेगा ।
- यद्यपि इस प्रकार के अनुसंधान कार्य में ऐतिहासिक अनुसन्धान की तुलना में अनुसन्धानकर्ता को अर्थापन एवं विवेचन के साथ चिन्तन प्रक्रिया में स्वतंत्रता तो अधिक

होगी, लेकिन उसे अधिक वस्तुनिष्ठ ढंग से कार्य करना होगा तथा तार्किक चिन्तन के आधार पर अनुभवों एवं अनुभूतियों की खोज करनी होगी ।

13.4 दार्शनिक उपागम आधारित अनुसंधान की विशिष्टता एवं उपलब्धियां (Specification and achievement of Philosophical Approach)

अनुसन्धान प्रक्रिया एवं सोपान निरूपण के पश्चात् यह जानना भी हमें बहुत आवश्यक होता है कि दार्शनिक उपागम आधारित अनुसन्धान की क्या विशिष्टताएं एवं उपलब्धियाँ है जिनकी सहायता से इस उपागम के विशिष्ट महत्व को समझा जाना आवश्यक होगा । विषय सम्बन्धित महत्वपूर्ण तथ्यों को इस शोध उपागम की उपलब्धि के रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है-

13.4.1 चूँकि दर्शन ही शिक्षा के उद्देश्य निश्चित करता है, जीवन मूल्यों एवं लक्ष्यों को निर्धारित करता है, अत: दार्शनिक उपागम आधारित अनुसंधान आयोजित कर शिक्षा के संदर्भ में ठोस जीवन दर्शन आधारित करना सम्भव हो जायेगा ।

13.4.2 जहाँ, हम एक ओर गाँधीवादी अर्थव्यवस्था को अपनाने के इच्छुक रहे है, दूसरी और शिक्षा के माध्यम से औद्योगीकरण एवं आधुनीकरण की मांग भी की जा रही है, अत: ऐसी शोध योजनाएं दार्शनिक उपागम को अपनाकर ली जा सकती है, जिससे शिक्षा के माध्यम से इसके सभी स्तरों पर प्राचीन अध्यात्मवाद एवं नवीन भौतिकवाद में सन्तुलन स्थापित हो तथा एक विशिष्ट प्रकार का वैज्ञानिक दृष्टिकोण अगली पीढी में शनैःशनै निर्धारित होने लगे ।

13.4.3 दार्शनिक उपागम आधारित अनुसंधान आयोजित कर हम विभिन्न स्तरों पर शिक्षा सम्बन्धित विभिन्न बर्गीय-धार्मिक, सांस्कृतिक एवं राजनैतिक ज्वलन्त समस्याओं के सम्भावित उत्तर एवं हल खोजने में भी सफल हो सकेंगे । विभिन्न शोध परियोजनाओं के संचालन में प्रयास सही होगा कि कहीं दर्शन में आधारित शोध कार्य नितान्त सैद्धान्तिक ही न बन जाए वरन् उसमें कार्यपरकता एवं लक्ष्य निर्धारित भी अवश्य हो, जिसका लाभ जनसामान्य शिक्षार्थी-शिक्षक एवं शिक्षा नियोजक को मिले । उपर्युक्त वर्णित कार्यपरक अनुसन्धान योजनाओं को लागू कर निष्कर्ष रूप में यह विवेचित करने में सफल हो सकेंगे कि यदि कहीं आधुनिकीकरण के मोह में हमने अपने मूल्यवान रत्नों को कंकड समझ कर फैंक दिया तो फिर शिक्षार्थी के व्यक्तित्व की राष्ट्रीय-विशेषता को सहज में ही खा देंगे । फिर मौलिकता की बलिबेदी पर दिखावटी जिज्ञासुओं का ही विकास किया जायेगा ।

13.4.4 शिक्षा सम्बन्धित मौलिक अनुसंधान आयोजित कर हम उस प्रणाली के ज्ञान एवं तत्व मीमांसा के साथ नीतिशास्त्र का अध्ययन कर जीवन एवं शिक्षा के भारतीय लक्ष्य को पूर्णत: समझने तथा आत्मसात करने में सफल हो सकेंगे । सम्बन्धित प्राचीन ग्रन्थों के अध्ययन के आधार पर हम नये शैक्षिक दर्शन की खोज करने में भी सफल हो सकेंगे ।

13.4.5 दार्शनिक उपागम की सहायता से हम शिक्षा के गुणात्मक शोध' (Qualitative research) करने में सक्षम होंगे । जिसका एक विशिष्ट महत्व है । आज 'परिमाणात्मक' (Quantitative) शोध तो शिक्षा में बहुत किया जा रहा है, लेकिन अच्छी गुणात्मक शोध विधि का कम प्रयोग हुआ है । जिसे दार्शनिक शोध प्रक्रिया की सहायता ' से किया जा सकता है - उदाहरणार्थ - 'क्या 'संस्कृत-दर्शन-संस्कृति' स्नातक स्तर पर सभी को अनिवार्य विषय के रूप में पढाये जाए-छात्रों में मानव मूल्यों के सम्वर्द्धन हेतु- 'अच्छा जीवन एवं व्यक्तित्व के सम्पूर्ण विकास में संस्कृति- संस्कृत, दर्शन का क्या महत्व है ' यहाँ 'अच्छा-जीवन' क्या है? 'सम्पूर्ण विकास' से हमारा क्या आशय है ' उपर्युक्त वर्णित शोध विषय गुणात्मक शोध के है ।

13.4.6 तार्किक चिन्तन' दार्शनिक शोध की प्रमुख विशेषता होती है, अत: उपलब्ध साहित्य एवं सूचनाओं के आधार पर हम शीर्षक आधारित वास्तविकता की खोज करने में सफल होंगे तथा हम 'अनुभव एवं अनुभूतियां' का भी विश्लेषण कर अन्तिम लक्ष्यों पर विशेष महत्व प्रदान करेंगे जिसमें मानवता, मानवीय जीवन एवं सम्पूर्ण मानवीय व्यवहार की विवेचना प्रमुख होगी तथा 'सत्यम-शिवम्-सुन्दरम्' की सहज में अनुभूति की जा सकेगी । तथ्यों के सत्य का प्रतिपादन दार्शनिक शोध का प्रमुख लक्ष्य होगा । (कुन्डु 1985, पुष्ट 1 95- 196)

13.4.7 दार्शनिक शोध उपागम की शिक्षा के क्षेत्र में अपनाकर मानव मस्तिष्क के चिन्तन प्रक्रिया के आधार पर तथ्यों' के सत्य का प्रतिपादन हम आसानी से करने में सफल हो सकेंगे । दार्शनिक विधि को अपनाकर 'सतत अन्वेषण' की प्रवृत्ति विकसित कर सकेंगे तथा अन्ततोगत्व तथ्यों के मूल्यों एवं उनके महत्व का अध्ययन कर सकेंगे ।

13.4.8 यह शोध उपागम विद्वानों के अनुसार (कुन्डु 1985, शर्मा 1986) यद्यपि तार्किक चिन्तन एवं मनन पर आधारित तो है लेकिन इसमें केवल आगमन एवं निगमन विधि का ही सम्मिश्रण नहीं है । यह अपूर्ण या अर्द्ध-विवेचित तथ्यों अथवा सामान्यीकरण का पुन: विश्लेषण, विवेचन एवं मूल्यांकन करता है । सत्यान्वेषण के आधार पर अनेक शोध परिमाम की वैधता का पुन: अध्ययन करता है । जो नीति, धर्म, परिणाम की वैधता का पुन: अध्ययन करता है । जो नीति, धर्म, शिक्षा, मनोविज्ञान के क्षेत्र में पूर्ण करता है अथवा खोजे जा चुके है । शिक्षा शोध के क्षेत्र में दार्शनिक उपागम को अपनाने को सबसे बडह लाभ यही है कि शिक्षा सम्बन्धित विभिन्न समस्याओं का दार्शनिक दृष्टि से सत्यान्वेषण एवं विवेचन किया जा सकता है तथा शिक्षा से सम्बन्धित ऐसी सामाजिक, धार्मिक, मनोवैज्ञानिक समस्याओं की मौलिक विवेचन भी की जा सकती है, जिन के बारे में सम्भवत: शोधकर्ता को पूर्वानुभव ही नहीं था।

13.5 दार्शनिक उपागम-आधारित अनुसन्धान की सीमाएँ (Philosophical Approach-Limitation of Research)-

विद्वानों ने दार्शनिक अनुसन्धान की विभिन्न सीमाओं को निर्धारित किया है । उनके आधार पर दार्शनिक उपागम की अनुसंधान के क्षेत्र में विस्तार से समालोचना की है उन निम्न कमियों को शोध उपागम की सीमाएँ या दोष (Demerits) कहा जा सकता है ।

शिक्षा के क्षेत्र में दार्शनिक उपागम के आधार पर सम्पादित किये गये शोध अध्ययन को सामान्यत: निम्न सीमाओं से युक्त देखा गया है-

13.5.1 दार्शनिक उपागम पर आधारित शैक्षिक शोध अध्ययन से दर्शन आधारित विषय वस्तु की गहनता का अभाव खटकता अनुभव होता है । ओड (1965) के अनुसार शिक्षा सम्बन्धित दर्शन क्षेत्र के अनेक अनुसंधानों में विषय वस्तु जो वर्णित एवं विवेचित की गई है, वह इसी कारण अल्प स्तरीय रही है क्योंकि अनुसंधानकर्ता ने दर्शन विषय का गहन अध्ययन नहीं किया है । उनके अनुसार भारतीय परिवेश में सम्पादित 1944 से 1980 के बीच शिक्षा दर्शन पर आधारित विश्वविद्यालयी पी.एच.डी. स्तरीय शैक्षिक अनुसन्धानों में केवल 12% ही शोधार्थी के गहन अध्ययन से युक्त उच्च स्तरीय रहे है। सम्भवत: व 980 से 1990 तक के दस वर्ष के अन्तराल में इसी स्थिति में सुधार हुआ हे, यद्यपि ऐसे साक्ष्य उपलब्ध नही है ।

13.5.2 दार्शनिक-उपागम पर आधारित अनुसन्धान मे समालोचनात्मक विश्लेषण 'का अभाव भी दिखलाई पडता है । अनुसन्धान परियोजनाओं मे विवेचित विषय वस्तु को क्रमिक ढंग से प्रस्तुत तो किया गया है लेकिन तथ्यों की समालोचनात्मक व्याख्या मौलिक रूप में नही की गई है । जिससे कि आलोचना की मौलिकता पर प्रश्न चिन्ह लगता दिखाई देता है । समालोचित विषय वस्तु पर अनुसन्धाकर्ता का पर्याप्त अधिकार भी नहीं दिखाई देता है ।

13.5.3 विषय वस्तु का विभिन्न स्त्रोतों से प्राप्त किये जाने के सम्बन्ध में विस्तार एवं सम्यक दृष्टिकोण से भी विवेचना नहीं की गई है । उसमें बाह्य एवं आन्तरिक आलोचना का सामंजस्य भी भली प्रकार दिखाई नहीं पडता है । यही कारण है कि विभिन्न शोध अध्यायों में वर्णित एवं विवेचित विषय वस्तु को बाह्य एवं आन्तरिक आलोचना के अभाव में ज्यों का त्यों प्रस्तुत किया गया है । विद्वानों के अनुसार (माथुर व 985, पृष्ठ 199, अस्थाना, पृष्ठ 396-98) सर्वेक्षात्मक-शोध अध्ययन में तो ऐसा किया जाना उचित प्रतीत होता है, लेकिन दार्शनिक-उपागम आधारित शोध अध्ययन में विषय वस्तु एवं तथ्यों की बाह्य एवं आन्तरिक दृष्टि से समालोचना होनी बहुत आवश्यक हे, जिससे कि विषय वस्तु की मौलिकता एवं वैधता पर कोई शंका अथवा प्रश्न न लगा सके ।

13.5.4 अभी तक दर्शन आधारित शिक्षा शोध परियोजनाओं में शोध अभिकल्प (Research Methodology) भी अधिक उच्च स्तरीय नहीं बन पायें है । वर्णित शोध अध्ययन

प्रक्रिया में उच्च स्तरीय तार्किक विश्लेषण की उपलब्धि नहीं हो पाई है । अनेक शोध अध्ययन में मौलिकता एवं संश्लेषण की उपस्थित भी कम सीमा में दृष्टिगोचर होती है। इससे शोध अध्ययन-अभिकल्प में वैज्ञानिक अन्तदृष्टि का अभाव भी खटकता सा दिखलाई पडता है ।

13.5.5 इस प्रकार के शोध अध्ययन अभिकल्पों में परिकल्पना का सूत्रीकरण निर्धारण एवं निर्माण (Formulation of hypothesis) भी पर्याप्त शोध साक्ष्यों के आधार पर कम किया गया है । दर्शन आधारित शोध अध्ययन में सीमित ज्ञान एवं सीमित साक्ष्यों के आधार पर प्राक्कल्पना का निर्धारण एवं सूत्रीकरण किया जाना अधिक उपयुक्त एवं वैध नहीं प्रतीत होता है । प्राक्कल्पना का सूत्रीकरण, विवेचना एवं प्रस्तुतीकरण अनुमानाधरित होना भी शोध कार्य की एक विशेष विचारणीय सीमा ही विवेचित की जायेगी ।

13.5.6 दार्शनिक उपागम आधारित शोध कार्यो की एक प्रमुख सीमा या कमी यह भी अनुभव की जाती है कि यहाँ विभिन्न तथ्यों के विवेचन एवं अर्थापन में बहुधा वैज्ञानिक अनुसंधान की भाँति वस्तुनिष्ठता नहीं दिखाई पडती है । दार्शनिक उपागम आधारित शोध कार्य प्रक्रिया में वस्तुनिष्ठता के स्थान पर व्यक्तिनिष्ठता अधिक प्रयुक्त की जाती है । यहाँ कोई विशिष्ट परिधि को प्रयोग न कर ऐतिहासिक अनुसंधान की भाँति विषय वस्तु विश्लेषण विधि का ही प्रयोग किया जाता है जिसमें व्यक्ति निष्ठता अधिक अनुभव की जाती है, क्योंकि? शोधकर्ता अपनी सूझबूझ से ही परिस्थितियों एवं तथ्यों का अर्थापन एवं विवेचन करता है। साध्य की सत्ता की परख में भी अनुसंधानकर्ता की व्यक्तिनिष्ठता ही निहित होती है।

13.6 स्वमूल्यांकन (Self Assessment)

लघुत्तरीय प्रश्न

1. 'दार्शनिक शोध उपागम' का अर्थ स्पष्ट करें तथा इसे स्वयं अपने शब्दों में परिभाषित करने का प्रयास करें ।
2. दार्शनिक शोध उपागम में किन कारणों से शिक्षा से सम्बन्धित व्यावहारिक पक्ष एवं परीक्षणों का अध्ययन नहीं होता है?
3. 'दार्शनिक शोध उपागम' की आवश्यकता को किन प्रमुख कारणों से अनुभूत किया गया है?
4. दार्शनिक शोध उपागम अपनाकर किस प्रकार निम्न उपलब्धियाँ अर्जित की जा सकती है-
   (अ) शिक्षा के उद्देश्य एवं क्रियाओं को निर्देशन
   (ब) शिक्षा में ज्ञान, नीति एवं दर्शन का संयोग
5. दर्शन विशेष के विभिन्न पक्ष यथा तत्व, ज्ञान एवं मूल्य मीमांसा को आधारित मान कर शिक्षा-दर्शन आधारित शोध कार्य किये जाने क्यों आवश्यक है?

13.7 संदर्भ ग्रन्थ (References)

1. अस्थाना, आर एल. 'रिसर्च इन मॉर्डन फिलासफीस ऑफ एजूकेशन, क्वालिटी कन्ट्रोल इन एज. एस, (पाल-सक्सैना द्वारा सम्पादित) 1965, पृष्ठ 393-424
2. बेस्ट, जें. डब्लू. 'रिचर्स इन एजूकेशन' एंजिलबुड क्लिफस प्रेटिंस हाल,1997
3. गुड, कार्टर. पी 'एंसिशियल्स ऑफ एजूकेशन रिसर्च न्यूयार्क, ऐफलीटल, सैन्यूरी कोफ्टस, 1972 4. कौल, लोकेश, "मैथेडोलोजी ऑफ एजूकेशन रिसर्च, नई दिल्ली, पिकास पब्लिएकेशन हाउस,1994
4. कुन्डु स्टे. एल. रिसर्चेज इन दी एरिया ऑफ थ्योरी ऑफ एजूकेशन क्वालिटी कन्ट्रोल इन एज. रिसर्च, (पाल-सक्सैना द्वारा सम्पादित) 1985, पृष्ठ 1891196
5. माथुर, एस.एस. रिसर्च मैथोडोलोजी इन एजूकेशन फिलोसोफी ऑफ एजूकेशन, लिमीटेशन्स माडल्स एण्ड एप्रोचैज क्वालिटी कन्ट्रोल इन एजू रिसर्च, 1985, पुष्ट 197-2०9
6. मुले जी जी 'दी साईंस ऑफ एजूकेशनल रिसर्च, न्यूयार्क. वान नोरहांड रीन होल्ड कम्पनी, 1970
7. पाल, एस के एवं सक्सैना, पीसी क्वालिटी कन्ट्रोल उप एजूकेशनल रिसर्च ' नयी दिल्ली, मैट्रोपालिटन, 1985 सम्पादित ग्रन्थ में विभिन्न दार्शनिक अनुसंधान उपागत आधारित लेख
8. शर्मा, आर ए 'शिक्षा अनुसंधान, मेरठ, लायल बुक डिपो, 1980, पृष्ठ 180 - 196
9. शर्मा, वी एम. शोध प्रविधि, नयी दिल्ली, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, 199०, पृष्ठ 11,19,49,64
10. सिद्धु के. एस मैथोडोलोजी ऑफ रिसर्च इन एजूकेशनल नयी दिल्ली, स्टर्लिग पब्लिशर्स 1985, अध्याय तृतीय, पृष्ठ 34-35
11. सिन्हा, एच सी 'शैक्षिक अनुसंधान ' नयी दिल्ली, विकास पब्लिशिंग हाऊस, 1979, पृष्ठ 89-98
12. सुखिया, एसपी, पी वी, एवं मेहरोत्रा, आरएन 'शैक्षिक अनुसंधान के मूल तत्व', आगरा विनोद पुस्तक मन्दिर, 1973
13. ट्रेवलस, आर डब्ल्यू एम 'एन इंट्रोडक्शन एजूकेशनल रिसर्च, न्यूयार्क मैकमिलन, 1978 15. वर्मा, एम एन 'एलन इंट्रोडक्शन एजूकेशन एण्ड साइकोलोजी रिसर्च ' न्यूयार्क, एशिया पब्लिशिंग हाऊस, 1985
14. विहटनी, एफ एल दी एलीमैन्टस आफ रिसर्च ऑफ एजेकेशन लन्दन एशियन पब्लिशिंग हाऊस, 1961

इकाई-14

वर्णनात्मक अनुसन्धान उपागम- अर्थ. आवश्यकता, प्रक्रिया, सोपान विशेषताएँ एवं सीमाएँ (DESCRIPTIVE RESEARCH APPROACH-MEANING, NEED, PROCESS, STEPS, MERITS AND DEMERITS)

इकाई की संरचना (Structure of the Unit)

14.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

14.1 परिचय, अर्थ, परिभाषाएँ एवं जिज्ञासाएँ
(Introduction, Meaning, Definition Queries)

14.2 उद्देश्य-लक्ष्य एवं प्रयोजन (Aims-Objectives and Purpose)

14.3 वर्णनात्मक शोध उपागम के विभिन्न प्रकार
(Different types of Descriptive research approach)

14.3.1 सर्वेक्षण अध्ययन (Survey study)

14.3.2 अन्तर्सम्बन्ध अध्ययन Interpersonal Study)

14.3.3 विकासात्मक अध्ययन (Developmental Study)

14.4 आवश्यकता एवं महत्व (Importance and Necessity)

14.5 प्रक्रिया एवं सोपान (Process and Steps)

14.5.1 समस्या का चुनाव (Selection of problem)

14.5.2 शोध कार्य योजना निर्माण (Planning for Research Work)

14.5.3 उपकरण निर्माण (Tool Construction)

14.5.4 प्रदत्त एकत्रीकरण (Data Collection)

14.5.5 प्रदत्त प्रस्तुतीकरण - वर्गीकरण एवं व्याख्या
(Data Introduction-Classification and Explanation)

14.5.6 प्रदत्त-विश्लेषण एवं व्याख्या (Data-Analysis and explanation)

14.5.7 परिणाम निरूपण एवम् सामान्यीकरण
(Result Formulation and Generalization)

14.5.8 प्रतिवेदन का प्रस्तुतीकरण (Introduction of the report)

14.6 वर्णनात्मक-शोध उपागम की विशेषताएँ एवं सीमाएँ

14.7 स्वमूल्यांकन (Self-Assessment)

14.8 संदर्भ ग्रन्थ (Reference)

14.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

इस इकाई की समाप्ति पर आप इस योग्य होने चाहिये कि -

- वर्णनात्मक अनुसंधान उपागम का सामान्य ज्ञान प्राप्त करे, विभिन्न परिभाषाओं के अध्ययन के साथ निहित विभिन्न परिकल्पनाओं से भी परिचित हो सकें ।
- वर्णनात्मक अनुसंधान उपागम के उद्देश्य, लक्ष्य एवं प्रयोजन से परिचित होकर उपागम विशेष के विभिन्न प्रकारों का भी अध्ययन करने में सक्षम हो सकें उसकी आवश्यकता एवं महत्व से भी अवगत हो सकें ।
- वर्णनात्मक अनुसंधान उपागम की प्रक्रिया एवं विभिन्न सोपानों का भी गहन अध्ययन कर सकें।
- वर्णनात्मक अनुसंधान उपागम की विभिन्न विशेषताओं से परिचित होकर आप यह सुनिश्चित कर सकें कि शिक्षा-शोध क्षेत्र में इस उपागम विशेष का सब से अधिक प्रयोग क्यों सम्भव हुआ है - वर्णनात्मक अनुसंधान उपागम की सीमाओं एवं दुर्बलताओं का भी अध्ययन करने में सक्षम हो सकें तथा यह सुनिश्चित कर सकें कि किन शोध अध्ययनों में वर्णनात्मक अनुसंधान उपागम भली प्रकार प्रयोग नहीं किया जा सकता है ।

14.1 वर्णनात्मक शोध उपागम - परिचय. अर्थ. परिभाषाएँ. जिज्ञासाएँ (Descriptive Research approach-Introduction, Meaning, Definition and related queries)

अतीत कालीन अन्वेषण एवं सम्बन्धित प्रदत्त व्याख्या का प्रबल आधार ऐतिहासिक अनुसंधान उपागम है, जबकि दार्शकि अनुसन्धान उपागम' में शिक्षा के ज्वलन्त प्रश्नों का सैद्धान्तिक दृष्टि से उत्तर खोजने का प्रयास किया जाता है । परन्तु वर्तमान में शिक्षा, शिक्षालय तथा शिक्षण आधारित तथ्यों का अध्ययन एवं व्याख्या अन्य विशिष्ट प्रकार के अनुसंधान उपागम में की जाती है, जिसे वर्णनात्मक अनुसन्धान उपागम कहा जाता है । विद्वानों एवं शोध विशेषज्ञों (बैस्ट, 1963-102, मोले, 1963-231, सुखिया मेहरोत्रा 1973-219 एवं शर्मा 1990-11) के अनुसार शिक्षा सम्बन्धित स्थितियाँ, प्रचलित व्यवहार विश्वास दृष्टिकोण-जो स्थापित हो चुके है, प्रक्रियाएँ जो गतिशील है, 'प्रभाव जो अनुभव किये जा रहे है, नयी दिशाएँ एवं प्रवृतियाँ-जो निरन्तर विकसित हो रही है, का अध्ययन वर्णनात्मक शोध उपागम में किया जाता है । वर्णनात्मक शोध उपागम प्रमुखत: क्या है? की व्याख्या एवं विश्लेषण करता है।

“Descriptive Research approach describes and interprets ‘What is’. It is concerned with conditions or relationships that exist practices that prevail.. process that are going on ..” (Best 1963 - 102)

विद्वानों ने (मोले, 1963-23 सिद्ध, 1985-106, शर्मा, 1985-86 - 150-15) “वर्णनात्मक शोध उपागम'' अनेक नामों से वर्णित किया है-'वर्णनात्मक सर्वेक्षण विधि' (शर्मा

1990-11) "सामान्य सर्वेक्षण" (शर्मा 1988-150) "आदर्श मूलक सर्वेक्षण विधि" (सुखिया-मेहरोत्रा, 1973-218 "सर्वेक्षण" (ढौडियाल-पाठक, 1972-67 मोले, व 903-231) के अनुसार चाहे प्रस्तुत उपागम की आंग्ल में सर्वे (Survey), नार्मेटिव सर्वे (Normative Survey) स्टेटस सर्वे (Status Survey) या अन्य नाम से किया जाये, सभी को समाहित करता हुआ 'वर्णनात्मक सर्वेक्षण उपागम' शिक्षा के क्षेत्र में सबसे प्रयोग हुआ है । तथा उसका सम्बन्ध, वर्तमान आधारित तथ्यों, परम्पराओं, विश्वासों एवं प्रक्रियाओं' के अन्वेषण, व्याख्या एवं विवेचना से रहा है ।

(Exposition of the real facts with regard to existing conditions). “No category of educational research is more widely used than the type known variously as “Survey”, Narrative Survey Status and descriptive Research” (Maulay 1963-231).

14.1.2 वर्णनात्मक-शोध उपागम एवं "आदर्श" मूलक सर्वेक्षण (Descriptive-research approach and ideal survey):

सम्भवत: वर्णनात्मक शोध उपागम" को आदर्श मूलक सर्वेक्षण विधि' से शीर्षाकित करने में (सुखिया-मेहरोत्रा 1972-219), सिद्ध 1986-108) विद्वानों की अवधारणा यही रही हो- एक ऐसा शोध उपागम जो अन्ततोगत्वा यह विवेचन करें कि "वर्तमान काल में सामान्य अथवा प्रतिनिधि (Typical) स्थिति या व्यवहार क्या है।" (Normal or typical conditions under practice), यहाँ सर्वेक्षण शब्द का विशेष महत्व है जिसका अर्थ है एक ऐसा शोध उपागम जहाँ अनेक मन्तव्य, विचार, अभिव्यक्तियाँ एकत्रित की जाती है-ऐसे उत्तरदाता जो एक निश्चित जन समुदाय के प्रतिनिधि हुआ करते है । यहाँ सम्भवत: जन-समुदाय की अभिव्यक्तियों, विचारों, प्रतिक्रियाओं को वैज्ञानिक आधार पर विश्लेषित एवं विवेचित किया जाता है । लेकिन बैस्ट (1983-102) के अनुसार शिक्षा से सम्बन्धित सामाजिक अनुसंधान में इसे वर्णनात्मक अनुसंधान-कहा जाना उपयुक्त ही है । (राय 1985-120)

संक्षेप में ' वर्णनात्मक अनुसंधान उपागम" से तात्पर्य एक ऐसे अनुसन्धान उपागम से है जिसके आधार पर हम किसी शैक्षिक संस्था, परिस्थिति, व्यवस्था, प्रविधि, स्थिति जन-समुदाय आदि के वर्तमान स्वरूप का व्यवस्थित अध्ययन करते है, वर्तमान स्तर की वैध जानकारी प्राप्त करते है ।

"वस्तुनिष्ठता" इस अनुसंधान उपागम की एक प्रमुख विशेषता होती है जिसके आधार पर संकलित किये गये प्रदत्तों एवं सूचनाओं की व्याख्या की जाती हैं । ऐसे प्रदत्त जिन्हें विश्वसनीय एवं प्रामाणिक ढंग से एकत्रित किया गया हो, जो "प्रतिनिधि न्यादर्श" से चयनित हों तथा जिनके वर्णन एवं व्याख्या में वैज्ञानिकता एवं वस्तुनिष्ठता निहित हो ।

सामान्यत: " वर्णनात्मक शोध उपागम" में तीन प्रमुख जिज्ञासा के उत्तर खोजे जाते है:-

14.1.3 तीन निहित शोध जिज्ञासाएँ - वर्णनात्मक उपागम

(अ) वर्तमान स्थिति क्या है?

(ब) हम क्या चाहते है?

(स) हम उन्हें कैसे प्राप्त कर सकते है?

14.1.3.1 प्रथम जिज्ञासा में सूचनाएँ वर्तमान स्थिति के महत्वपूर्ण पक्षों के अध्ययन एवं विश्लेषण से प्राप्त की जाती है ।

14.1.3.2 द्वितीय जिज्ञासा में सम्बन्धित सूचनाएँ, लक्ष्यों, उद्देश्यों, स्थानों एवं स्त्रोतों से सम्बन्धित होती है, जिन्हें हम पाना चाहते है ।

14.1.3.3 तृतीय जिज्ञासा में लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए सम्भावित साधनों, अनेक लोगों के अनुभवों या विशेषज्ञों के बहु मूल्य विचारों के आधार पर सूचनाएँ एकत्रित की जाती है ।

उदाहरण के लिए, यदि किसी भी प्रदेश के शिक्षा विभाग द्वारा प्रचलित पाठ्यक्रम की स्थिति, निहित गुण एवं दोषों का, शिक्षक, अभिभावक एवं छात्र वर्ग के माध्यम से अध्ययन करना चाहते है, तो हम पाठ्यक्रम की विशेषताओं गुण एवं दोषों के अध्ययन के साथ-साथ यह भी अध्ययन करेंगे कि पाठ्यक्रम में निहित दोषों, दुर्बलताओं को कैसे दूर किया जा सकता है ।

14.2 वर्णनात्मक शोध उपागम - उद्देश्य, लक्ष्य एवं प्रयोजन (Descriptive Research Approach-Aim, Objectives and Purpose)

समाधान खोजने का एक प्रभावी उपागम है, जिसका प्रयोग विद्वानों (सुखिया-मेहरोत्रा 1973-219 सिद्ध 1988-110, राय 1985-120 शर्मा 1985-153) के अनुसार स्थानीय एवं राज्य स्तरीय पक्षों का अध्ययन करने के लिए किया जाता है । इस उपागम-विशेष को निम्न उद्देश्य/प्रयोजन है-

14.2.1 वर्णनात्मक अनुसंधान उपागम का उद्देश्य वर्तमान स्थिति का स्पष्टीकरण तथा भावी नियोजन करना रहा है । यह भावी नियोजन में परिवर्तन किये जाने के सुझाव भी प्रदान करता है तथा अध्ययन हेतु नवीन प्राक्कल्पनाएँ (New Hypothesis) भी प्रस्तुत करता है । अत: अनुसंधान उपागम का प्रयोजन "तात्कालिक एवं दीर्घकालिक" दोनों ही को समाहित करता है । (Its purpose is immediate and Long range)

14.2.2 वर्णनात्मक अनुसन्धान का उद्देश्य "भावी अनुसंधान के प्राथमिक अध्ययन में सहायता" प्रदान करना रहा है । जिससे कि अनुसंधान योजना को अधिक नियंत्रित एवं वस्तुनिष्ठ बनाया जा सके, तथा तात्कालिक अनुसंधानरत कमियों को दूर किया जा सके ।

14.2.3 वर्णनात्मक अनुसन्धान के आयोजित किये जाने का उद्देश्य विद्यालय, अथवा शैक्षिक प्रशासक को अपने निर्णय लिये जाने में सबल आधार प्रस्तुतीकरण है। ऐसी पृष्ठ भूमिका प्रस्तुतीकरण है जिसमें उचित एवं सामयिक निर्णय लिये जा सके ।

14.2.4 प्रस्तुत अनुसन्धान उपागम का प्रयोजन मानव व्यवहार के प्रमुख पक्षों का अध्ययन एवं प्रभावी प्रस्तुतीकरण रहा है । यह शैक्षिक परिस्थितियों तथा मानवीय गुणों के सम्बन्ध में गहन अध्ययन एवं परीक्षण कर विस्तृत लेखा-जोखा प्रस्तुत करता है । भविष्यगत नियोजन (Future Planning) में संलग्न विशेषज्ञों को शोधारित वैध सूचनाएँ प्रदान करता है ।

14.2.5 वर्णनात्मक अनुसन्धान उपागम शोध कार्य सम्पादन हेतु विभिन्न मनोवैज्ञानिक एवं शैक्षिक उपकरणों की निर्माण प्रक्रिया पर विशेष बल प्रदान करता है । शोध कार्य हेतु उपकरणों यथा अनुसूचियों (Inventories) प्रश्नावलियों (Questionnaire) वर्गक्रम मापनी जैसे अनेक उपकरण निर्माण में सहायता प्रदान करता है ।

14.2.6 वर्णनात्मक शोध उपागम का उद्देश्य प्रयोगात्मक एवं नियंत्रित शोध अध्ययन हेतु उपयुक्त सूचनाएँ प्रदान करना रहा है। प्रयोगात्मक अध्ययन सम्पादित किये जाने के लिए यह शोध उपागम उपयुक्त वातावरण का सृजन करता है तथा पृष्ठभूमि का निर्माण करता है, जिस की सहायता से प्रयोगात्मक-नियंत्रित शोध अध्ययन सम्पादित किये जा सके ।

14.3 वर्णनात्मक शोध उपागम-विभिन्न प्रकार (Descriptive Research Approach-Different Types)

शिक्षा क्षेत्र में वर्णनात्मक शोध उपागम का उपयोग विभिन्न प्रकार के शोध अध्ययन कर सम्पादित किया गया है । वानडैलेन 1962, गुड बार स्केट्स 1954-454 सुखिया-मेहरोत्रा 1973-222 राय 1985-123 एवं शर्मा 1985-86-152 ने अपने दृष्टिकोण से इस अनुसंधान उपागम विशेष के विभिन्न प्रकार वर्णित किये है-

14.3.1 सर्वेक्षण अध्ययन (Survey Studies)

14.3.2 अन्तर सम्बन्ध अध्ययन (Inter-relationship Studies)

14.3.3 विकासात्मक अध्ययन (Development Studies)

14.3.1 सर्वेक्षण अध्ययन

शिक्षा सम्बन्धित वर्तमान स्तरीय पक्षों क्रियाकलापों स्थितियों के निर्धारण-तुलना एवं विकासात्मक लघु अध्ययन के लिये इस प्रकार के शोध परक सर्वेक्षण आयोजित किये जाते है । प्रतिनिधिकारी न्यादर्श का चयन कर प्रदत्तों को संकलित किया जाता है । सर्वेक्षण निम्न में से किसी में भी किये जा सकते है यथा (अ) विद्यालय सर्वेक्षण (ब) कार्य व्यवसाय सर्वेक्षण (स) समुदाय-जनमत सर्वेक्षण (द) आलेख-प्रलेखी विश्लेषण ।

14.3.1.1 विद्यालय सर्वेक्षण

यहाँ प्रदत्त प्रश्नावली, साक्षात्कार, मानक-अमानक परीक्षण, प्राप्तांक प्रपत्र एवं वर्ग क्रम मापनी के माध्यम से प्राप्त किये जाते है । विद्यालय सर्वेक्षण व्यक्तिगत एवं सामूहिक दोनों प्रकार से किया जाता है । विद्यालय सर्वेक्षण के सम्बन्धित वरीयता विशिष्ट क्षेत्र है, विद्यालय

में भौतिक सुविधाएँ, उपलव्य आलेख, शिक्षक वर्ग सम्बन्धी विभिन्न सूचनाएँ एवं छात्र वर्ग की रूचि, अभिरूचि निष्पत्ति, मूल्य, सामाजिक-आर्थिक स्तर से सम्बन्धित तथ्यों का संकलन, सर्वेक्षण एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन। विद्यालय की पाठ्येत्तर क्रियाओं में सहभागिता का सर्वेक्षण भी शिक्षक एवं छात्र वर्ग के संदर्भ में किया जा सकता है अथवा किया जा चुका है ।

14.3.1.2 कार्य-व्यवसाय सर्वेक्षण

कार्य-व्यवसाय सर्वेक्षण में भी कर्मचारियों, अधिकारियों की कार्य पद्धति, क्षमताओं, उत्तरदायित्वों, सेवाकालीन प्रशिक्षण कार्यक्रम, स्थानांतरण एवं पदोन्नतियों से सम्बन्धित नीतिगत व्यावसायिक अध्ययन किये जाते है । इस प्रकार के शोधपरक उपकरण होते है- प्रश्नावली, साक्षात्कार, कार्य एवं अभिलेख निरीक्षण ।

14.3.1.3 समुदाय एवं जनमत-सर्वेक्षण

प्रदेश के शिक्षा विभागीय किसी नीति विषयक अध्यादेश पर भी जनमत एवं सामुदायिक सर्वेक्षण किया जा सकता है । इसके ज्वलन्त उदाहरण है उप्र. शिक्षा विभाग द्वारा प्रसारित - "स्वकेन्द्र परीक्षा पद्धति" एवं "नकल अध्यादेश" पर जनमत अध्ययन । प्रथम में तो शिक्षक, अभिभावक एवं छात्र वर्ग के दोनों नीतिगत योजनाओं पर सर्वेक्षणात्मक अध्ययन किया जा सकता है । अर्थात् यदि बोर्ड परीक्षा में अपने ही विद्यालय को परीक्षा केन्द्र बनाया जाता तथा यदि नकल को संज्ञेय-अपराध' घोषित कर दिया जाता है, तो उस नीति आदेश-अध्यादेश पर शिक्षक, अभिभावक, शिक्षा अधिकारी, प्रबन्धाधिकरण एवं छात्र वर्ग अपनी क्या प्रतिक्रिया करते है? इसी प्रकार शिक्षा के सभी स्तरों पर चल रही "ट्यूशन प्रथा" के बारे में अभिभावक, छात्र, शिक्षक, शिक्षा अधिकारी सभी का अभिमत किया जा सकता है । इस प्रकार के शोध अध्ययन विभिन्न संस्थाओं द्वारा सम्पादित किये जा रहे है । (डी.ई. आई. शिक्षा संकाय, एम.एड. शोध निबन्ध 1991 से 93) इसके सामान्यत: उपकरण हो सकते हैं-प्रश्नावली एवं साक्षात्कार । अनेक परिकल्पनाओं का निर्माण कर उनका परीक्षण भी किया जा सकता है । जनमत-सर्वेक्षण की आवश्यकताएँ हैं-उपयुक्त न्यादर्श का चुनाव, वस्तुनिष्ठता एवं विश्वसनीयता निर्धारण । सामुदायिक सर्वेक्षण का उदाहरण हो सकता है- "अनुसूचित जाति-जनजाति के छात्र वर्ग का शासन एवं शिक्षा विभाग द्वारा विभिन्न स्तरों पर प्रदान की जाने वाली सुविधाओं के उपयोग का सर्वेक्षण ।" इस प्रकार का अध्ययन भी शिक्षा विभाग, शासन या शोधार्थी वर्ग द्वारा किया जा सकता है, अथवा किया जा चुका है तथा किया रहा है (डी.ई.आई. शिक्षा संकाय में एम.एड.शोध-बिन्ध 1991 एवं आरसी.ई, अजमेर द्वारा सम्पादित परियोजना)

14.3.1.4 आलेखी / प्रलेखी विश्लेषण

इसे अन्य शब्दों में विषय वस्तु क्रिया एवं सूच्यात्मक विश्लेषण (राय 1985-271) भी कहा जाता है । यहाँ वर्तमान अभिलेखों का अध्ययन एवं विश्लेषण किया जाता है । (शर्मा 1985-86 - 160-161 न्यायिक-निर्णयों, विद्यालय समिति एवं शिक्षा विभागीय नीतिगत

निर्णयों, प्रशासकीय अभिलेखों-यथा छात्र उपस्थिति, स्वास्थ्य अभिलेख, विद्यालयी क्रिया-कलापों का अध्ययन । छात्र वर्ग को अध्ययन कराई जा रही पाठ्य पुस्तकों के बारे में शिक्षक वर्ग द्वारा (सुखिया-मेहरोत्रा 1973-230-231) पाठ विश्लेषण, चित्रों, त्रुटियों का अध्ययन । यहाँ भी अर्थ-पूर्ण तथ्यों का भली प्रकार विश्लेषण एवं विवेचन किया जाता है ।

14.3.2 अन्तर्सम्बध अध्ययन

वर्णनात्मक अनुसन्धान उपागम के अन्तर्गत अन्तर्सम्बन्ध अध्ययनों का प्रयोग अनुसन्धानकर्ता केवल वर्तमान स्थिति का अध्ययन ही नहीं करता वरन् उन तत्वों को ढूँढने का भी प्रयास करता है जो स्थितियों का भली प्रकार विवेचन करने में सक्षम होते है । राय 1985-131) इसके अन्तर्गत तीन प्रकार के अध्ययन किये जा सकते है :-

14.3.2.1 व्यक्ति अध्ययन (Case Study)

14.3.2.2 कार्यकरण तुलनात्मक अध्ययन (Casual Comparative Study)

14.3.2.3 सह-सम्बन्धात्मक अध्ययन (Correlational Study)

14.3.2.1 व्यक्ति अध्ययन

इस प्रकार के अध्ययन में एक व्यक्ति, इकाई, परिवार, संस्था, समुदाय का किसी विशिष्ट संदर्भ में विभिन्न पक्षीय गहन अध्ययन किया जाता हैं । वैयक्तिक अध्ययन (Case study) जिज्ञासा प्रधान होने के साथ बहुत गहन होता हैं । किसी सामाजिक शैक्षिक संस्था कार्यक्रम का सम्पूर्ण या विशिष्ट पक्षीय अध्ययन भी हो सकता है । उदाहरणार्थ "शासन द्वारा तथा अन्य ऐच्छिक-संस्थाओं द्वारा संचालित अनौपचारिक शिक्षा केन्द्रों/आंगन/बालवाडी का वैयक्तिक गहन अध्ययन। यहाँ सामान्य संस्थाओं के अतिरिक्त प्रतिष्ठित उल्लेखनीय विशिष्ट संस्थान, व्यक्ति, छात्र संस्थान, व्यवसाय एवं सामाजिक संस्थाएँ भी गहन अध्ययन के विषय क्षेत्र हो सकते है । वैयक्तिक अध्ययन (Case study) की विचारणीय सीमाएँ हैं उनका अधिक श्रम, साहस, समय-साध्य एवं व्यय-साध्य होना । व्यक्ति, संस्था एवं इकाई अध्ययन के आधार पर सम्पूर्ण जनसंख्या के बारे में सामान्यीकरण की अंसगतता का दृष्टिगोचर होना भी इस प्रकार के अध्ययन की एक उल्लेखनीय सीमा है ।

14.3.2.2 कार्यकरण तुलनात्मक अध्ययन

इस प्रकार के अध्ययन में किसी विशिष्ट ज्वलन्त व्यवस्था का उत्तर उस के कार्यकरण के संदर्भ में खोजा जाता है। किसी व्यवहार, परिस्थिति अथवा घटना सें सम्बन्धित तथ्यों के विश्लेषणात्मक अध्ययन से गुड, बार तथा स्केट्स (1954- 1955) के अनुसार दो परिस्थितियों की तुलना (जो दृश्यभाव से सम्बन्धित है) करके समानता एवं विषमता के कारणों का पता लगाया जाता है जिनके कारण कोई प्रभाव उत्पन्न होता है । यहाँ 'कार्य- कारण सम्बन्ध' की स्थापना तथा कार्यकारण की तुलना की जाती है । विद्वानों (राय 1985-135) के अनुसार 'कार्यकारण तुलनात्मक अध्ययन' इस मान्यता पर आधारित है कि किसी घटना के पीछे कोई न कोई कारण अवश्य रहा होगा । यदि वह कारण विशेष न हुआ होता तो घटना न घटती

। यही इस प्रकार के अध्ययन की विषय वस्तु है। उदाहरण हो सकते है (अ) आज्ञापालन एवं आज्ञा न मानने वाले छात्रों के व्यक्तित्व का अध्ययन (ब) प्रतिभा सम्पन्न-सामान्य एवं उच्च बौद्धिक स्तर से युक्त छात्र वर्ग की शैक्षिक उपलब्धि एवं कक्षा-समायोजना का अध्ययन (स) जूनियर हाईस्कूल उत्तीर्ण एवं हाईस्कूल संस्थाओं के कक्षा 8 उत्तीर्ण परीक्षार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन, (द) प्रतिभा सम्पन्न एवं प्रतिभाविहीन शिक्षक वर्ग में भिन्नता का अध्ययन ।

14.3.2.3 सह सम्बन्धात्मक अध्ययन

सह सम्बन्धात्मक अध्ययन किसी भी अध्ययन के माध्यम से दो चरों के बीच सम्बन्ध स्पष्ट करते हुए भविष्यगत कथन करने में समर्थ होता हैं यहाँ पर दो चरों के बीच निहित सम्बन्ध की सीमा निश्चित की जाती है । उदाहरणार्थ छात्र वर्ग की गणित तथा भाषाओं की शैक्षिक उपलब्धि के साथ-साथ उनके मानसिक स्तर के साथ सम्बन्ध । सह सम्बन्धात्मक अध्ययन विद्वानों (मोले 1964-387 राय 1985-137) के अनुसार दो चरों के बची तीन प्रकार के सम्बन्ध को स्पष्ट करता है-घनात्मक सह सम्बन्ध, ऋणात्मक सह सम्बन्ध तथा शून्य सह सम्बन्ध । सह सम्बन्ध की मात्रा भी -1 से +1 के मध्यस्थ रहती है । शून्य मध्य स्थिति में रहता है । इस अध्ययन की प्रमुख सीमा है कि सह सम्बन्धात्मक मान को प्रतिशत समझना भूल होगी 1.8 तथा .4 में दुगने का अन्तर है यह भी व्यक्त घटना गलत है । मापन की त्रुटियाँ भी यहाँ निहित होती है, यह कार्यकारण सम्बन्ध का मत स्पष्ट नहीं करता है ।

14.3 विकासात्मक अध्ययन

वर्णनात्मक शोध उपागम का अन्तिम एवं महत्वपूर्ण प्रकार है विकासात्मक अध्ययन जिसका सम्बन्ध है वर्तमान को स्पष्ट करना तथा यह स्पष्ट करना कि समय या अवधि व्यतीत होने पर क्या-क्या परिवर्तन देखने को मिलते है । यहाँ अनुसन्धानकर्ता एक लम्बी अवधि तक (क्यों एवं महीनों) चरों के विकास का अध्ययन करता है, इसके अन्तर्गत दो प्रकार के अध्ययन आते है-

14.3.1.3.1 विकासात्मक अध्ययन (Growth Studies)

14.3.1.3.2 उपनीति अध्ययन (Trend Studies)

विकासात्मक अध्ययन दो प्रकार से किया जाता है एक तो अनुलम्ब विधि से Longitudinal Approach) तथा दूसरे प्रतिनिधिक समूह (Cross Sectional) से अनुलम्ब विधि से अध्ययन के लिए शोधकर्ता को 5-7-8 एवं 10 वर्ष के बालकों की विकासात्मक प्रगति के अध्ययन हेतु सभी 20 बच्चों का 5 वर्ष पर, 7 वर्ष पर 8 वर्ष एवं 10 वर्ष पर अध्ययन किया जायेगा, जबकि प्रतिनिध्यात्मक विधि से अध्ययन किया जायेगा । संक्षेप में प्रथम विधि में 20 बाललों का विभिन्न 15 वर्षो में अनेक बार अध्ययन किया जायेगा, जबकि दूसरी विधि में एक निश्चित समय में आयु के बालकों का अध्ययन किया जाता है । अनुलम्ब अध्ययन में श्रम एवं समय की सुविधा होती है, जबकि प्रतिनिध्यात्मक अध्ययन में बहुत से बालकों को

विभिन्न स्तरों पर एक समय में ही खोजना पडता है । प्रथम में न्यादर्श छोटा होता है, लेकिन धैर्य की अधिक आवश्यकता होती है, दूसरी ओर प्रतिनिधित समूह अध्ययन में यह कठिनाई दिखाई देती है ।

उपनीति अध्ययन (Trend Studies)

वर्णनात्मक उपागम के माध्यम उपनीति अध्ययन में किसी वर्ग, स्तर विशेष के छात्र वर्ग, शिक्षक वर्ग को अध्ययन कर वर्तमान उपनीति की व्याख्या की जाती है । इन अध्ययन के आधार पर कभी-कभी भविष्यवाणियाँ भी की जाती है कि "आगे क्या होने वाला है" किसी नीति के निर्धारण से पूर्व किसी भी स्तर पर सभी क्रियाओं का पूर्व नियोजन करना आवश्यक है उदाहरणत: वर्तमान स्थिति को देखते हुए यह निश्चित करना कि दस वर्ष बाद हमें अनुमानत: 7 से 12 वर्ष के छात्रों के लिए कितने स्थान, क्षेत्र विशेष के संदर्भ में कितनी अधिक पाठशालाओं की आवश्यकता होगी । उपनीति अध्ययन के आधार पर किसी स्तर विशेष की शिक्षा को अधिक उपयोगी एवं योजनापरक बनाया जा सकता है । दीर्घकालीन भविष्यगत कथन "उपनीति अध्ययन" से प्रभावित दृष्टिगोचर होते है ।

इस प्रकार संक्षेप में वर्णनात्मक शोध अध्ययन उपागम में पिछले पृष्ठों में वर्णित विभिन्न प्रकार के अध्ययन किये जाने की एक परिपाटी सी चली आ रही है । अगले उप विभाग में हम 'वर्णनात्मक उपागम विधि' के माध्यम से इस उपागम विशेष के विभिन्न पदों (Steps) एवं क्रियाओं के संदर्भ में चर्चा करेंगे ।

14.4 वर्णनात्मक शोध उपागम-आवश्यकता एवं महत्व (Descriptive Research Approach-Need and Importance)

वर्णनात्मक अनुसंधान एक ऐसा विशिष्ट, सुनियोजित एवं वैज्ञानिक शोध उपागम है जिसकी सहायता से शिक्षा, शिक्षण, शिक्षालय, पाठ्यक्रम एव पाठ्यक्रमीय क्रियाकलापों को वर्तमान में विद्यमान तथ्यों के संदर्भ अध्ययन, वर्णन एवं विवेचन किया जाता है । वर्तमान से सम्बन्धित सूचनाओं को एकत्रित किया जाता है तथा यह विशेष रूप से ध्यान अवश्य रखा जाता है कि सूचनाएँ अथवा प्रदत्त प्रतिनिधिकारी अवश्य हों । वर्णनात्मक अनुसंधान में 'आदर्शमूलता इसका प्रमुख गुण तथा आवश्यकता है ।

14.4.1 शिक्षा के अनेक ज्वलन्त प्रश्नों, जिज्ञासाओं के उत्तर "वर्णनात्मक अनुसंधान उपागम" के माध्यम से आसानी से प्राप्त किये जा सकते है यथा प्राथमिक स्तरीय शिक्षा के ज्वलन्त प्रश्न है:-

14.4.1.1 (अ) प्राथमिक स्तर पर ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों में रहने वाले अभिभावकगण अपने बच्चों के लिए किस प्रकार का पाठ्यक्रम चाहते है?

14.4.1.2 (ब) ग्रामीणांचल तथा मलिन बस्तियों के रहने वाले बच्चे सामान्यत: किस स्तर किस आयु पर तथा किन कारणों से विद्यालय जाना छोड़ देते है?

14.4.1.3 (द) ऐसे शाला-त्यागी लड़के-लड़कियाँ फिर घर-बाहर क्या करते देखे जाते है? किन कारणों से विद्यालय छोड़ते देखे जाते है ?

14.4.1.5 (य) वैकल्पिक व्यवस्था के रूप में चलने वाले या चलाये जाने वाले "अनौपचारिक शिक्षा केन्द्रों' से ऐसे "शाला-त्यागी बालक-बालिकाएँ" कितना लाभ प्राप्त करते है तथा शिक्षा की मुख्य धारा से कितने प्रतिशत बच्चे अपने को जोड़ने में समर्थ होते है?

14.4.2 शिक्षा सम्बन्धित ज्वलन्त प्रश्न-जिज्ञासाओं, स्थितियों के अध्ययन के (सम्भावित हल के खोजने के) साथ-साथ सह सम्बन्धात्मक अध्ययन एवं भविष्यवाणी करने में सहायक- "वर्णनात्मक शोध उपागम" की सहायता से अनुसन्धानकर्ता केवल कार्य कारण की खोज नहीं करता वरन् वह कभी-कभी गहन अध्ययन के आधार पर भविष्यवाणियाँ भी करने में सक्षम हो जाता है तथा यह निर्भर करता है और किसी भी विषय शीर्षक से सम्बन्धित वैध, विश्वसनीय एवं जन प्रतिनिधिकारी सूचनाओं के एकत्रीकरण प्रक्रिया पर प्रदत्तों के वस्तुनिष्ठ एवं उपयुक्त अध्ययन पर । उदाहरणार्थ शोधकर्ता को यह अनुमान लगाना आसान हो जाता है कि यदि किसी गांव में "अनौपचारिक शिक्षा केन्द्र" प्रतिवर्ष 30 उपेक्षित बच्चों को शिक्षा की मुख्य धारा से जोड़ने में सफल होता है तो वह कितने वर्ष में 6 से 14 वर्ष के सभी बच्चों को गाँव में शिक्षित कर देगा? विशेष रूप से शिक्षा को रोजगार परक बनाकर, उपयोगितापरक बनाकर, स्वावलम्बनपरक बनाकर। अन्य उदाहरण में "अभियान्त्रिकी अभियोग्यता परीक्षण" (Engineering Aptitude)पर चुने गये कम से कम कितने प्रतिशत अंक प्राप्त करने वाले छात्र भविष्य में सुयोग्य एवं सफल इंजीनियर बनेंगे" यह भी 'वर्णनात्मक शोध उपागम" की सहायता से ऐसी प्रायोजना बनाकर एवं आवश्यक प्रदत्त एकत्रित कर उपकरण की पूर्व कथन वैधता (Predictive Validity) को निकाल कर जानकारी की जा सकती है ।

यहाँ अनुसन्धानकर्ता अपनी प्रायोजना सम्बन्धित विभिन्न चरों मे सह सम्बन्धात्मक अध्ययन करता है तथा सैद्धान्तिक रूप से अध्ययन एवं उपलब्धियों के आधार पर आवश्यक भविष्यवाणियाँ भी किया करता है ।

14.5 वर्णनात्मक शोध उपगम-प्रक्रिया एवं सोपान (Descriptive Research Approach-Process and Steps)

वर्णनात्मक शोध उपागम से सम्बन्धित आशय, उद्देश्य, आवश्यकता अध्ययन के पश्चात् उपागम विशेष के अनुसंधान-सोपान एवं प्रक्रिया विशेष का सोपान वार प्रस्तुतीकरण किया जाना आवश्यक प्रतीत होता है, जिससे कि अनुसंधान-प्रक्रिया के विभिन्न पदों को अलग-अलग समझा जा सके तथा विभिन्न सोपान-पदों में निहित अन्तर्सम्बन्ध का भी अध्ययन किया जा सके । वर्णनात्मक अनुसंधान के विभिन्न सोपान प्रक्रियावार निम्न रूप में प्रस्तुत किये जा रहे है ।

समस्या का चुनाव

शोध कार्य योजना का निर्माण

उपकरण निर्माण

प्रदत्त एकत्रीकरण
प्रदत्त प्रस्तुतीकरण - वर्गीकरण एवं व्यवस्था
प्रदत्त एवं व्याख्या
परिणाम- निरूपण एवं सामान्यीकरण
प्रतिवेदन की प्रस्तुति

14.5.1 समस्या का चुनाव

विद्वानों (सिन्हा 1979-32 सुख्यि-मेहरोत्रा 1973-9) के मतानुसार उपयुक्त समस्या के चुनाव एवं प्रस्तुतीकरण में शोध प्रक्रिया का आधा समाधान स्वत: ही दृष्टिगोचर होने लगता है तथा बहुत सा कार्य स्वत: ही सुगम होने लगता है । वर्णनात्मक शोध उपागम में (करलिंगर 1988, एवं टाउनसैण्ड 1953-32 एवं रय 1985-40 के अनुसार) शोध की समस्या स्वयं में "प्रश्नवाचक वाक्य विचरण है" जिसका वैज्ञानिक विधि द्वारा अन्वेषण किया जाना सम्भावित है। समस्या की रचना (ढौढियाल-पाठक 1972-33 सिद्धु 1985-55 एवं 113) इस प्रकार की जायें कि वह स्पष्ट एवं मूर्त (explicit and concrete) हो, उसका समाधन योग्य (Solvable) होना भी आवश्यक है।

"समस्या समाधान" के लिए यह भी आवश्यक है कि परिकल्पनाओं का भली प्रकार निर्माण भी किया जा सके । शोध समस्या के प्रमुख स्त्रोत है कक्षा विद्यालय एवं सम्पूर्ण समुदाय जिनमें सम्बन्धित साहित्य के अध्ययन के आधार पर ऐसे स्कूलों को खोजा जा सकता है, जहाँ शोध निष्कर्षो की भली-भांति जाँच नही पाई है । (बैस्ट 1959-19) हायश 1985-46)ए एवं (ढौढियाल 1972-3) के अनुसार वर्णनात्मक के शोध उपागम में पर्याप्त भिन्नता एवं वैषम्यता है या फिर भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में अध्ययन सम्पादित किये गये है ।

सुखिया-मेहरोत्रा (1973-95) के अनुसार समया के चुनाव के लिए अनुसंधानकर्ता में खोजपूर्ण आलोचनात्मक दृष्टिकोण होना आवश्यक हैं । जिससें कि वह कक्षा के व्याख्यान, वाद-विवाद, परिचर्चा-प्रतिवेदन तथा कक्षा के बाहर अपनें साथियों, प्राध्यापक वर्ग सें ज्वलन्त समस्याओं पर अनौपचारिक रुप सें चर्चा कर सके, तथा जानकारी हासिल कर सके । विशेष रुप सें जब शोध परियोजना "संस्थागत नियोजन एवं विकास" से सम्बन्धित हैं तों ऐसी परिस्थिति में समस्या के चुनाव एवं निर्धारण करतें समय शिक्षक, प्रधानाचार्य. शिक्षा अधिकारीगण प्रबन्धाधिकारीगण सभी से परामर्श ली जानी चाहिए।

14.5.2 शोध कार्य योजना का निर्माण

कार्य योजना निम्रित करते समय अध्ययन के उद्देश्यों, परिकल्पनाओं तथा विशेषताओं में वस्तुनिष्ठता एवं वैज्ञानिकता को सुनिश्चित किया जाये । कार्य-प्रकिया को सुनिश्चित करतें समय यह देखा जायें कि शोध अध्ययन सम्पादित करनें में किस भौगोलिक क्षेत्र को प्रधानता दी जायेगी, न्यादर्श को सम्पूर्ण समिष्ठ (Population) के आधार पर किस प्रकार प्रतिनिधिकारी (representative) बनाया जायेगा, यदि कार्य सामूहिक प्रयास पर आधारित हैं तो कौन सा "उपसमूह" न्यादर्श पर उपकरण प्रविधियों (Testing Techniques) को प्रशासित कर सूचनाएं

एकत्र करेगा, प्रदत्त एकत्रीकरण प्रकिया में कितनी अधिक से अधिक समयावधि लगेगी आदि उपयुक्त वर्णित तथ्यों को कार्य योजना निर्माण में विशेष स्थान प्रदान किया जायेगा । यही शोध सर्वेक्षण का स्वरुप भी उद्देश्यों के आधार पर सुनिश्चित करना होगा तथा क्या सर्वेक्षण अनुप्रस्थ काट (Cross Sectional) पर आधारित होगा या फिर अनुदैर्ध्य (longitudinal) या फिर दोनों को ही समाहित करेगा । यह सब शोध कार्य योजना के उद्देश्यों तथा निर्मित परिकल्पनाओं पर आधारित होगा जिन पर कि सम्पूर्ण कार्य योजना की सफलता निर्भर करेगी। अर्थात उद्देश्यों एवं परिकल्पनाओं का निर्धारण शोध कार्य योजना का एक प्रमुख भाग होगा। यह भी कार्य योजना में निश्चित करना हैं :

(अ) क्या प्रदत एकत्रीकरण हेतु उपकरण उपलब्ध हैं? (ब) उपकरण समय की सीमा में तैयार किये जा सकते हैं? क्या उपलव्य उपकरणों में परिवर्तन किया जा सकता हैं?

14.5.3 उपकरण प्रविधियॉ (चुनाव-निर्माण-पूर्व प्रशासन आदि)

कार्य योजना में वर्णित उपकरणों में सामान्यत: प्रश्नावलियाँ, अभिवृत्ति, मापनी, सूचियाँ, साक्षात्कार, वर्ग कम मापनी एवं अन्य शैक्षिक मनोवैज्ञानिक उपकरणों का विवेचन किया जाता हैं। इसके लिए आवश्यक हैं कि यदि नवीन उपकरण का निर्माण करना हैं तों सभी उपकरण सम्बन्धित उपकरणों का अध्ययन किया जाये, सूचनाएं, (Units) इकाइयाँ विषयवस्तु सुनिश्चित की जाये तथा पदों का स्वरुप निश्चित किया जाये । यदि सम्बन्धित उपकरण कार्य योजना के अनुरुप उपलव्य हैं तो उनमें से सर्वोपयुक्त उपकरण का चुनाव किया जाय। यहां यह सुझाव दिया जाता है कि नवीन उपकरण का निर्माण करनें या सर्वोपयुक्त उपकरण का चुनाव करनें के पश्चात एक "लधुन्यादर्श" पर उन्हें प्रशासित कर संकलित प्रदतों के स्वरुप के आधार पर उसकी उपयुक्ता का अध्ययन अवश्य किया जाये । इससें यह भी प्रशासन के दौरान कितना समय लगेगा । इसके अतिरिक्त न्यादर्श-उपकरण प्रशासन के आधार पर सर्वेक्षण की सफलता का पूर्वानुमान भी आसानी से लगाया जा सकता हैं ।

14.5.4 प्रदत्त एकत्रीकरण

उद्देश्य, परिकल्पना एवं न्यादर्श-निर्धारण के पश्चात उपकरण-प्रविधि के चुनाव, निर्माण एवं पूर्व प्रशासन के आधार पर कार्य योजना को सम्पादित करनें तथा प्रदत्त एकत्रीकरण की प्रकिया यही से प्रारम्भ होती हैं । इसे यदि " प्रदत एकत्रीकरण अभिकल्प " कहा जाये तो कोई अत्युक्ति नही होंगी । प्रदत एकत्रीकरण के दौरान यह तथ्य ध्यान में रखता हैं न्यादर्श के आधार पर पद, घटनाऐं अथवा वस्तुओं को ध्यान में रखा गया हैं। क्या समष्टि/जनसंख्या (Population) के प्रत्येक घटक (Units) से प्रदत/सूचनाएं एकत्रित की जा रही हैं? क्या विद्यालयों की विविधता आधार पर उनके स्वरुप को भी ध्यान में रखा गया हैं? उदाहरण: शासकीय सहायता प्राप्त एवं पूर्णत: व्यक्तिगत विद्यालयों के सभी घटकों को ध्यान में रखकर प्रदत एकत्रित किये जा रहें हैं ऐसा कभी-कभी मामूली परिवर्तन प्रपत्र एकत्रीकरण प्रकिया के अंतर्गत करना पड़ जाता हैं । यहाँ अनुसंधानकर्ता को जनसंख्या के प्रत्येक घटक (Units) को ध्यान में रखकर चुनें गयें न्यादर्श (सिन्हा 1978-) पर सूचनाएँ एकत्रित करनी होती हैं । "प्रदत्त

एकत्रित करनें की प्रकिया " पर शोध कार्य की व्यावहारिक सफलता अवश्य निर्भर करती हैं। जहाँ शोधकर्ता की सूझ-बूझ बहुत काम में आती हैं । विद्वानों में मतानुसार (शर्मा 1 988-325)

14.5.4.1 प्रदत्त संकलन प्रामाणिक उपकरण की सहायता से किया जाये ।

14.5.4.2 प्रदत्त इस प्रकार के संकलित हों जिनके विश्लेषण सांख्यिकी प्रविधियों द्वारा किये जा सकें ।

14.5.4.3 प्रदत्त संकलन में न्यादर्श त्रुटि एवं मान त्रुटि कम से कम हो ।

14.5.4.4 प्रदत्त स्वरूप इस प्रकार हो जिनका प्रस्तुतीकरण एवं अर्थ आसानी से किया जा सके।

14.5.4.6 प्रदत्त संकलन वस्तुनिष्ठ रूप में होकर पूर्ण तथा व्यापक हो ।

14.5.4.7 प्रदत्त संकलन में गोपनीयता हर स्तर पर बनाये रखनी चाहिये । प्रदत्त एकत्रीकरण में प्रदत्त प्रस्तुतीकरण को भी समाहित किये जाना आवश्यक है जिसका विवरण निम्नवत है ।

14.5.5 प्रदत्त प्रस्तुतीकरण - वर्गीकरण एवं व्यवस्था

प्रदत्तों के प्रस्तुतीकरण में एक निश्चित व्यवस्था को ध्यान में रखा जाना आवश्यक होता है । प्रारम्भ में अस्पष्ट, विस्तृत, अर्थहीन तथा उलझे हुए प्रदत्तों को वर्गीकरण के आधार पर व्यवस्थित करना अपरिहार्य होता है । प्रदत्त वर्गीकरण के अनिवार्य गुण है : स्पष्टता (Clarity), स्थिरता (Stability) एवं परिवर्तनशीलता (Flexibility)। प्रदत्त वर्गीकरण के प्रमुख आधार है: गुणात्मकता, संख्यात्मकता तथा गौण आधार है - प्रदत्तों का सामयिक आधार तथा भौगोलिक आधार ।

प्रदत्त वर्गीकरण के भी अनेक प्रकार हो सकते है - यथा

14.5.5.1 सरल अथवा द्विचरक (Unit or Bivariate) वर्गीकरण - यहाँ प्रदत्तों को किसी विशेष गुण के आधार पर दो भागों में विभाजित किया जाता है उदाहरणार्थ - कार्य कुशलाअकुशल अध्यापकगण ।

14.5.5.2 बहुचरण वर्गीकरण (Multi Varieties) वर्गीकरण - प्रदत्तों को अनेक गुणों के आधार पर अनके वर्गो में विभाजित किया जाता है । उदाहरणार्थ न्यादर्श के प्रदत्तों का (अ) लिंग के आधार पर वर्गीकरण (ब) साक्षात्कार के आधार पर वर्गीकरण - साक्षर- निरीक्षक (स) बुद्धिस्तरक आधार पर उच्च, औसत एवं निम्न ।

14.5.53. संख्यात्मक)Quantitative) वर्गीकरण :- संख्यात्मकता के आधार पर प्रदत्त वर्गीकरण यथा - ऊंचाई, वजन, जाति, आयु सामाजिक, आर्थिक स्तर । इन्हें आवृत्ति विवरण के रूप में व्यवस्थित किया जाता है ।

14.5.5.4 आयु पर आधारित (Chronological) वर्गीकरण - यथा शैशवास्था, बाल्यावस्था, किशोरावस्था. युवावस्था किसी काल से युक्त-आधारित प्रदत्त ।

14.5.5 स्थानान्तरित (Situational) वर्गीकरण - प्रदत्तों का स्थानानुसार वर्गीकरण यथा ग्रामीण-शहरी, स्वदेशी-विदेशी नागरिक, अनुसंधान प्रक्रिया में प्रदत्त व्यवस्थापन इसीलिये

किया जाता है जिससे उनमें संक्षिप्तता, स्पष्टता एवं व्यवस्था आ जाये तथा शोध आधारित उद्देश्यों एवं परिकल्पनाओं के परिप्रेक्ष्य में उचित सांख्यिकी का प्रयोग किया जा सके तथा उचित निष्कर्ष निकाले जा सकें । रूप, गुण तथा लक्षण के आधार पर प्रदत्तों का तुलनात्मक अध्ययन भी किया जाना तभी सम्भव हो पाता है । जबकि उन्हें उचित व्यवस्थात्मक रूप प्रदान किया गया हो । प्रदत्त विश्लेषण एवं व्याख्या से पूर्व उन्हें स्पष्ट आवश्यक होता है । सारणीयन के माध्यम से प्रदत्त-विश्लेषण में सरलता एवं स्पष्टता आ जाती है तथा वर्णनात्मक तथा अधिक व्यवस्थित एवं प्रदर्शन योग्य दिखलाई देने लगते है प्रदत्तों की तर्कपूर्ण व्यवस्था एवं संक्षिप्तता के कारण उनका विश्लेषण करना सरल हो जाता है । जब प्रदत्तों को सही प्रकार से प्रस्तुत किया जा रहा होता है तो उद्देश्यानुसार तुलनात्मक अध्ययन करना भी आसान होता है । यह सब कुछ निर्भर करता है उनके उचित सारणीयन पर ।

14.5.6 प्रदत्त विश्लेषण एवं व्याख्या का अर्थ है प्रदत्तों का इस प्रकार व्यवस्थायीकरण जिससे कि समस्या के सम्बन्ध में वांछित परिणामों को प्रस्तुत किया जा सके । विद्वानों के अनुसार (डब्लू कुक 1958 शर्मा 1986-330 राय 1985-310) प्रदत्तों का वैज्ञानिक विश्लेषण अध्ययन है तथ्यों, परिणामों तथा वैज्ञानिक ज्ञान के सम्बन्धों की खोज करता है । प्रदत्त विश्लेषण परिकल्पना के परीक्षण में सहायता पहुँचाता है । निश्चित ज्ञान की प्राप्ति प्रदत्त विश्लेषण एवं व्याख्या पर ही आधारित होती है ।

वर्णनात्मक सर्वेक्षण प्रक्रिया के दौरान जो कुछ भी प्रदत्त/सूचनाएँ व्यवस्थित रूप में प्रस्तुत की जाती है उनके विश्लेषण एवं व्याख्या के लिए निम्न प्रक्रिया में से शोधार्थी को गुजरना होता है-

14.5.6.1 प्रदत्तों को सारणीबद्ध करना

14.5.6.2 प्रदत्त विश्लेषण हेतु सांख्यिकी प्रविधि प्रयोग

14.5.6.3 सांख्यिकी परिणाम प्रस्तुतीकरण

14.5.6.4 सांख्यिकी परिणाम की व्याख्या

14.5.6.5 शोध परिणाम निरूपण

प्रदत्तों के सारणीयन, फलांकन एवं व्याख्या के लिए रूपों को अपनाया जा सकता है-

- जिन उपकरणों का प्रयोग किया गया है या सर्वेक्षण फार्म भराये गये है उनमें उपलब्ध सूचनाओं का सीधे विश्लेषण किया जा सकता है ।
- जो भी सूचनाएँ प्राप्त की है, उनमें प्रत्येक अनुक्रता के फार्म के आधार पर एक एक कार्ड बनाया जा सकता है ।
- कभी-कभी विशिष्ट प्रकार के निर्मित छेदयुक्त शोध कार्ड का भी प्रयोग किया जा सकता है ।
- या फिर अन्ततोगत्वा "उपलव्य पंच कार्ड" का प्रयोग किया जा सकता है ।

उपर्युक्त वर्णित प्रक्रिया का उद्देश्य के प्रदत्तों को विश्लेषित किये जाने के लिए उन्हें भली प्रकार प्रस्तुत करना जिससे कि कोई बिन्दु या सूचना विश्लेषण होने से रह न जाये ।

प्रदत्त-विश्लेषण जब सांख्यिकी आधार पर किया जाता है तो हमें देखना होता है कि प्रदत्त संख्यात्मक रूप में उपलव्य हों जिससे कि सभी क्रम या उपक्रमों (Units or sub-unit)

की सूचनाओं के विश्लेषण हेतु उन्हें व्यवस्थित किया जा सके । प्रत्येक को पक्तिवार या कालमवार योग किया जा सके । मध्यमान (Mean) एवं प्रामाणिक विचलन (Standard deviations) भी निकाले जा सके विशेष रूप से उस परिस्थिति में जबकि पारिणामात्मक माप "गणनाश्रित एवं अन्तरयुक्त" होने के साथ सत्यता लिये हुए है।

- प्रदत्त विश्लेषण संख्यात्मक एवं गुणात्मक आधार पर लेकिन जब सूचनाएँ गुणात्मक रूप (Qualitative) में उपलव्य है यथा (ही/नहीं कह ही सकते) तो वहाँ प्रदत्त विश्लेषण हेतु प्रत्येक प्रश्नवार टैलीज लगाई जाती है तथा बारम्बारता (Frequencies) के आधार पर प्रतिशतांक निकाला जाता है तथा विभिन्न वर्ग में उपलब्ध प्रतिशतमान की सार्थकता को ज्ञान करने के लिए "काई वर्तमान (Chi square Test) का प्रयोग किया जाता है । विशेष रूप से वे प्रदत्त, जहाँ "गुणात्मक" समाहित है, में अधिक सांख्यिकी प्रविधियों का प्रयोग प्रपत्र विश्लेषण के दौरान नहीं किया जा सकता है । "वर्णनात्मक शोध उपागम" में सामान्यत: गुणात्मक तथ्यों के विश्लेषणात्मक अध्ययन के लिए 'प्रतिशतमान' ही उपर्युक्त रहता हैं लेकिन जहां प्रदत्तों में संख्यात्मक समाहित इकाईयों "सामान्य वितरण" (Units-Rationally distributed) पर आधारित है वहाँ अनेक सांख्यिकी प्रविधियों का प्रयोग किया जा सकता है ।

जब कभी-कभी विभागीय परियोजनाओं पर कार्य किया जाता है या शोध कार्य बहुत विस्तृत गहन एवं सामूहिक रूप से सम्पादित किया जाता है, तो शोधकर्ता या उनके समूह को प्रदत्त विश्लेषण एवं व्याख्या के लिए निम्न विभिन्न प्रक्रियाओं के अनुसार कार्य होता है-

प्रदत्त सम्पादन (Editing of Data)

प्रदत्त में निहित महत्वपूर्ण लेकिन कमजोर एवं सन्तोषप्रद अंशो को सुधार कर उन्हें शोध प्रयोग एवं विश्लेषण के उपयुक्त बनाना ।

प्रदत्त वर्गीकरण (Classification of Data)

वर्गीकरण में बिखरे हुए आँकडों की व्यवस्था जिससे वे गुणों के आधार पर पृथक हो, संक्षिप्त हो, स्पष्ट हो एवं सरल हो ।

प्रदत्त (सामग्री) संकेतन (Coding of Data)

वर्गीकरण के पश्चात् प्रत्येक वर्ण के लिए कोई नाम, चिन्ह अथवा संकेत प्रदान किया जाता है, जिसके प्रदत्त विश्लेषण सुगत हो जाता है ।

प्रदत्त सारणीयन (Tabulation of Data)

विश्लेषण के संदर्भ में सारणीयन का अर्थ है प्रदत्तों को विभिन्न शीर्षकों स्तम्भों एवं पंक्तियों में प्रस्तुत करना, जिससे प्रदत्तों का स्वरूप सीमित हो तथा वे समझने में सरल हों । सांख्यिकी प्रक्रिया को इस आधारपर ही संचालित किया जाता है ।

प्रदत्त व्याख्या (Interpretation of Data)

प्रदत्त-विश्लेषण के आधार पर शोध उपलब्धियां की व्याख्या की जाती है तथा उनका अर्थापन किया जाता है । विशेष रूप से परिकल्पनाओं के परीक्षण के बाद उपलब्ध हुए शोध परिणाम के आधार पर ।

सामान्यीकरण (Generalization)

प्रदत्त व्याख्या के आधार पर प्राप्त निष्कर्षो का सामान्यकीरण किया जाता हे, जिसे कहीं-कही परिणाम-निरूपण भी कहा जाता है ।

14.5.7.0 शोध परिणाम निरूपण. निष्कर्ष एवं सामान्यीकरण (Research findings, Conclusions and generalization)

प्रदत्त विश्लेषण एवं व्याख्या के आधार पर शोध परिणाम निष्कर्ष रूप में निरूपित किये जाते है, जिसे कही-कही पर विस्तृत अर्थों में "सामान्यीकरण" भी कहा जाता है । यह वर्णनात्मक शोध उपागम का अंतिम, लेकिन महत्वपूर्ण सोपान है, जहाँ अनुसंधानकर्ता अपने शोध कार्य में चयनित न्यादर्श के आधार पर अर्जित किए गए शोध निष्कर्षो को सम्पूर्ण जनसंख्या के लिए तथा समान परिस्थितियों में अन्य घटनाओं के लिए लागू किए जाने का सबल अनुमान लगाता है । इसके निम्न उद्देश्य होते है-

14.5.7.1 घटनाओं की स्थिति को वर्तमान के संदर्भ में निर्धारित करना ।

14.5.7.2 घटना को स्पष्ट करने वाली प्रक्रिया, स्थिति, इतिहास क्रम को स्पष्ट करना ।

14.5.7.3 प्रगति, परिवर्तन एवं विकासात्मक प्रक्रिया, इतिहास क्रम को स्पष्ट करना ।

14.5.7.1 कार्यकरण संबंधो का अध्ययन करना-सामान्यीकरण प्रक्रिया में जबकि शोध निष्कर्षो को सम्पूर्ण जनंसख्या/समष्ठि के संदर्भ में प्रस्तुत किया जाना है, तो तथ्य ज्ञान करने के साथ निम्न जिज्ञासाओं पर भी विचार करना होता है । क्या संकलित, विश्लेषित एवं व्याख्याकृत प्रपत्र (1)ए पूर्ण है? (2) यथार्थ है? (3) निष्कर्षो से मेल खाते है? तथा (4) निष्कर्ष सामान्य आश्य से भी मेल खाते है?

अत: परिणाम-निरूपण, निष्कर्षीकरण तथा सामान्यीकरण परिणाम निरूपण एवं सावधानियाँ करने के दौरान निम्न सावधानियों को ध्यान में रखा जाए-

(अ)सामान्यीकरण प्रक्रिया में प्रथम तथ्यों (Facts) दिया जाए ।

(ब) सिद्धांतों का अनावश्यक विस्तार न किया जाये ।

(स)सादृश्यता analogy को सुझावों का प्रामण न मान कर साधन माना जाये ।

(द) वर्णन की सत्यता के लिए सभी कथनों की वैध जाँच की जाये ।

(य) परिणाम निरूपण में दृढ़ता एवं स्थिरता होनी आवश्यक है ।

(र) संक्षिप्त पदों का प्रयोग किया जाये ।

14.5.8.0 प्रतिवेदन की तैयारी (Report Writing)

वर्णनात्मक अनुसंधान का महत्वपूर्ण अंतिम चरण है (सुखिया मेहरोत्रा 1973-261) प्रतिवेदन का प्रस्तुतीकरण जिससे कि अनुसंधान प्रक्रिया के सभी चरणों को स्थान प्रदान कर निष्कर्षो को बहुत सावधानी से प्रस्तुत किया जाता है तथा भावी अनुसंधान के लिए सुझाव भी दिए जाते है। प्रतिवेदन के प्रस्तुतीकरण के आधार पर किसी क्षेत्र विशेष में ज्ञान कोष की वृद्धि के लिए द्वार भी खोल दिए जाते है । प्रमुख रूप से प्रतिवेदन को निम्न उपचरणों में प्रस्तुत किया जाना उपयुक्त रहता है-

- भूमिका - विषय प्रवेश, शोध अध्ययन की पृष्ठभूमिका, आवश्यकता एवं महत्व, समस्या चुनाव
- अध्ययन के उद्देश्य - मौलिक मान्यताएँ, परिकल्पनाएँ एवं सीमाएँ
- अध्ययन अभिकल्प - उपकरण, न्यादर्श, अध्ययन विधि ।
- प्रदत्त संकलन एवं विधि प्रस्तुतीकरण
- प्रदत्त विश्लेषण एवं व्याख्या - प्रदत्तों का
- परिणाम - निरूपण, निष्कर्ष, सीमाएँ एवं सुझाव
- संदर्भ ग्रंथ सूची - विविधता, अभिसूचक परिशिष्ट आदि

14.6 वर्णनात्मक शोध उपागम - विशेषताएँ एव सीमायें (Descriptive Research Approach-Merits and Demerits)

यद्यपि वर्णनात्मक अनुसंधान उपागम का प्रयोग सभी सामाजिक विज्ञानों जिसमे शिक्षा एवं मनोविज्ञान प्रमुख रूप से रहे है, बहुतायत के साथ किया गया है, लेकिन 'केवल शोध उपागम' की बहुतायत एवं जनप्रियता ही उसकी उत्तमता एवं उपयुक्तता का सूचक नहीं रही है वरन् उनकी 'उपयोगिता एवं मौलिकता' महत्व का एक विशेष आधार रहा है । अत: विद्वानों के अनुसार इस 'जनप्रिय शोध उपागम' की विशेषताओं एवं सीमाओं का अध्ययन किया जाना आवश्यक प्रतीत होता है, जिससे कि इस उपागम विशेष का शैक्षिक शोध दृष्टि से सही वैज्ञानिक मूल्यांकन किया जा सके । सम्बन्धित उप-विभाग को निम्न उप-शीर्षक में प्रस्तुत किया जा रहा है-

वर्णनात्मक उपागम - विशेषताएँ, लाभ

वर्णनात्मक अनुसंधान उपागम - सीमाएँ

14.6.1 वर्णनात्मक अनुसंधान उपागम की विशेषताएँ - लाभ

वर्णनात्मक अनुसन्धान उपागम जिसके अन्तर्गत विद्यालयी सर्वेक्षण कार्य विश्लेषणात्मक एवं सह-सम्बन्धात्मक अध्ययन सम्पादित किये जाते है, में एक ही समय में बहुत से लोगों से विभिन्न प्रकार की सूचनाएँ मत एवं अभिवृतियाँ प्राप्त की जाती है। उदाहरणार्थ 'शिक्षा विभाग एवं प्रशासन द्वारा प्रसारित नकल अध्यादेश' के बारे में विभिन्न पक्षीय अभिमत अध्ययन।

(i) चूँकि, वर्तमान में वर्णनात्मक अनुसन्धान में प्रतिनिधिक समूह अध्ययन (Cross sectional study) वर्तमान के संदर्भ में किये जाते है, अत: अध्ययन में एक ही समय में विभिन्न आयु वर्ग, क्षेत्र, स्तर, स्थितियों का अध्ययन किया जाता है क्या विद्यमान है? का उत्तर सामान्यत: शोध अध्ययन में खोजा जाता है । ऐसे अध्ययन की प्रकृति ही 'प्रतिखण्डात्मक' होती हैं।

(ii) वर्णनात्मक शोध, उपागम के माध्यम से अनेक प्रकार के विकासात्मक अध्ययन (Developmental studies) किये जा सकते है, जिसमें वर्तमान स्थिति एंव निहित पारस्परिक सम्बन्ध का ही अध्ययन नहीं किया जाता है, वरन् यह भी अध्ययन किया

जाता है कि समय के व्यतीत होने के साथ किसी शैक्षिक संस्थान या कार्यक्रम के विकास में क्या-क्या परिवर्तन आये है । उपनीति अध्ययन (Trend studies) के आधार पर शैक्षिक नियोजन करना भी आसान हो जाता है ।

(iii) इस उपागम के माध्यम से अनुदैर्ध्य (Longitudinal) एवं प्रतिनिध्यात्मक (Cross Sectional) दोनों प्रकार के अध्ययन किये जा सकते है । जहाँ अनुदैर्ध्य अध्ययन में एक निश्चित आयु वर्ग के बालकों का दीर्घ समय तक अध्ययन किया जाता है वहाँ दूसरे में श्रम एवं समय की सुविधा होती है । अनुसंधानकर्ता मूल्य समय में अधिक प्रदत्त प्राप्त कर सकता है ।

(iv) वर्णनात्मक शोध उपागम" में किसी भी "वैज्ञानिक नियम" Scientific Law) का विकास नहीं किया जाता है वरन् समस्या के समाधान हेतु उपयोगी सूचनाएँ एकत्रित की जाती है । समस्या स्पष्टत: परिभाषित उद्देश्यपूर्ण, वैज्ञानिक नियोजन का समाहित करती है ।

(v) वर्तमान उपागम में "गुणात्मक एवं संख्यात्मक' (Qualitative and Quantitative) दोनों प्रकार के प्रदत्तों/सूचनाओं का विश्लेषण एवं व्याख्या की जाती है । उदाहरण "अच्छे शिक्षक के गुणों एवं उनमें निहित मात्रा की व्याख्या" ।

(vi) इस उपागम में विश्लेषित प्रदत्तों की व्याख्या के आधार पर "परिणाम निरूपण" या तो शाब्दिक (verbal) होता है या फिर उसे गणितीय सूत्र भाषा (Mathematics) में प्रस्तुत किया जाता है ।

(vii) वर्णनात्मक शोध उपागम में प्रदत्त व्याख्या एवं विश्लेषण अत्यन्त सावधानी पूर्वक किया जाता है क्योंकि कभी-कभी सर्वेक्षणात्मक अध्ययन अधिक जटिल (Complex) हो जायो करते है। कुछ एक में तो केवल घटनाक्रम अध्ययन की बारम्बारता का अध्ययन (Frequency Counts) किया जाता है । जबकि अन्य सर्वेक्षणात्मक अध्ययन में विभिन्न चरों के बीच सह-सम्बन्धात्मक अध्ययन किया जाता है । अर्थात् सर्वेक्षणात्मक अध्ययन विविधतापूर्ण हो जायो करते है ।

(viii) वर्णनात्मक शोध उपागम सम्पूर्ण अनुसंधान की योजना अथवा "अनुसन्धानकर्ता के विस्तृत क्षेत्र की खोजों के सोपानों में उपयुक्त रूप से अनुकूल प्रतीत होता है ।

(अ) प्रारम्भिक सर्वेक्षण में अनुसंधान युक्त परिचत प्राप्त करने की अवस्था के रूप में (Getting acquainted stage of research in entering आ new area)

(ब) अनुसधान योजना के किसी विशिष्ट क्षेत्र में अधिक गहन अध्ययन करने तथा रूचि विकसित करने के लिए (Developing specific interest in current conditions in the field pre-explored)

(ix) वर्णनात्मक शोध अध्ययन में सर्वेक्षण की विषयवस्तु सामान्यत: निम्न विषय बिन्दुओं से सम्बन्धित एवं आधारित होती है-

(अ) अधिगम से सम्बन्धित भौतिक दशाएँ (physical conditions related to learning) यथा, भवन, कक्षा, सज्जा, फर्नीचर, पुस्तकालय आदि ।

(ब) अधिगम से सम्बन्धित व्यावहारिक दशाएँ (Behavioural conditions related to learning) छात्र-शिक्षक, एवं अभिभावक वर्ग के शैक्षिक व्यवहार अभिवृति का अध्ययन ।

(स) शिक्षार्थियों के सीखने की सामर्थ्य-कुशलता (Pupils, ability to learn) उपलब्धियाँ, सामर्थ्य, योग्यताएँ-अभिवृतियाँ एवं रूचियाँ-शिक्षार्थी वर्ग के संदर्भ में ।

(x) "वर्णनात्मक अनुसन्धान उपागम" विभिन्न प्रकार के शैक्षिक कार्यक्रमों की योजना बनाने में हमारी सहायता करता है । उदाहरणार्थ-विद्यालय जनगणना की शैक्षिक-नियोजन में सबसे अधिक आवश्यकता होती है 'विद्यालय सर्वेक्षण' विद्यालय की विभिन्न पक्षीय समस्याओं के समाधान में सहायक होता है तथा विद्यालय भवन की उपयुक्तता, उसका रख-रखाव, शिक्षक वर्ग, पाठ्यक्रम, विलक्षण विधियों तथा अधिगम उद्देश्य सभी कुछ समाहित होते है ।

14.6.2.0 वर्णनात्मक शोध उपागम - सीमाएँ

वर्णनात्मक की सबसे प्रमुख विचारणी सीमा है -

(i) शुद्धता-वैज्ञानिकता का अभाव

अन्य प्राकृतिक विज्ञानों के शोध अध्ययन की भाँति शिक्षा के क्षेत्र में वर्णनात्मक शोध उपागम द्वारा सम्पादित शोध अध्ययन अधिक वैज्ञानिक एवं निश्चित नहीं हुआ करते है । शोध निष्कर्ष एवं परिणाम पूर्णत: शुद्ध भी देखे जाते है । किसी की लम्बाई, मोटाई, रूप रंग एवं आकर के सम्बन्ध जो भी वर्णनात्मक शोध किये जाते हैं उनमें 'सत्यता तथा परीक्षणीयता' निहित होती है, लेकिन शिक्षा-मनोविज्ञान जैसे अनुसन्धान संबन्धी अध्ययन जहाँ रूचियों, अभिवृत्तियों, मूल्यों व्यक्तित्व के गुणों का अध्ययन किया जाता है, में उतनी वस्तु-निष्ठता, वैज्ञानिकता निहित नहीं होती है। अनुकर्तागण कभी-कभी जिनके आधार पर परीक्षण किये जा रहे है, अपनी वास्तविकता को छिपा भी लेते है । अपने बारे में असत्य तथ्यों को लिख एवं बोल सकने में समर्थ भी हो जाते है। ऐसी स्थिति में शोध निष्कर्ष की शुद्धता में प्रश्न-चिन्ह लगाया जा सकना सम्भव हो सकता है।

(ii) निरूत्तरित प्रश्न एवं भ्रामक निष्कर्ष

"वर्णनात्मक अनुसंधान प्रक्रिया" में चूँकि, कभी-कभी त्रुटिपूर्ण कार्य प्रक्रिया को अपनाकर निष्कर्ष निकाले जाते है, अत: सामान्यत:, शोध परिणाम अधिक अस्पष्ट एवं भ्रामक बन जाया करते है । उसका प्रमुख कारण कभी-कभी संकलित प्रदत्तों के मूल साधन की सत्यता का परीक्षण रह जाता है । अत: दोषपूर्ण, असामान्य परिस्थितियों, तनावयुक्त वातारवरण में संकलित किये प्रदत कभी-कभी भ्राकम शोध निष्कर्ष प्रदान करते है जिनका अर्थापन (Interpretation) करना कठिन प्रतीत होता है । कभी-कभी ऐसे निष्कर्ष निरूत्तरित ही रह जाया करते है ।

(iii) शोध परिकल्पना एवं परीक्षण अधिक वैज्ञानिक नहीं

प्राकृतिक विज्ञानों के समान अनुसंधान प्रक्रिया में जहाँ परिकल्पनाओं का निर्माण एवं उनका परीक्षण इतनी वैज्ञानिकता के साथ किया जाता है कि परीक्षणीय शुद्धता शत-प्रतिशत हो, शैक्षिक क्षेत्र में विशेष रूप से 'वर्णनात्मक शोध प्रक्रिया' में अनुसंधान परिकल्पनाएँ केवल यह बाने का प्रयास करती है- कि 'वर्तमान रिथति क्या है? "क्यों" या "किन कारणों से ऐसी स्थिति है?" का शत-प्रतिशत उत्तर नहीं दिया जाता हैं । वरन् प्रबल सम्भावनाएं ही व्यक्त की जाती है। (राय 1985- 128) "सह सम्बन्धात्मक" अध्ययन के दौरान भी हम प्रदत्तों के विश्लेषण में कुछ सीमाओं का ध्यान रखकर ही व्याख्या करते है ।

(iv) परिकल्पनाए भ्रमपूर्ण, अति सामान्य प्रकृति तथा सबल तार्किक दृष्टि से पुष्ट नहीं ।

शिक्षा मनोविज्ञान जैसे क्षेत्र में वर्णनात्मक अनुसन्धान प्रक्रिया की सहायता से निर्मित एवं परीक्षित परिकल्पनाएँ (Hypothesis) अधिकतर अधिक भ्रमपूर्ण, अति सामान्य स्तरीय, तथा तार्किक दृष्टि से कभी-कभी अपुष्ट हो जाया करती है । सामान्य रूप से सम्पादित कार्य प्रक्रिया में उन अवधारणाओं (Assumptions) की भली प्रकार चर्चा नहीं की जाती है जिन पर परिकल्पनाएँ निर्मित की जा रही तथा उनके परीक्षण के लिए प्रदत्त एकत्रित किये जाने की योजना विचाराधीन है । अत: अपुष्ट एवं निर्बल अवधारणाओं पर निर्मित परिकल्पनाओं का परीक्षण भ्रमपूर्ण रह जाता है।

(v) नियंत्रित परीक्षण के दौरान शत-प्रतिशत प्रामाणित परीक्षण सम्मव नहीं ।

यद्यपि, वर्णनात्मक अनुसन्धान में भी परिकल्पनाओं का परीक्षण प्रयोगात्मक विधि के आकार पर यिये जाने का प्रयास किया जाता है लेकिन बहुत सी सामाजिक दशाएँ ऐसी भी जाया करती है जिन पर पर्याप्त नियंत्रण किया जाना सम्भव नहीं होता है । उदाहरणार्थ कक्षा में कैम्प में एवे मनोरंजन केन्द्र मे घटने वाली घटनाओं पर अनेक परिस्थितियों का प्रभाव पडता है उनमें किसी एक तत्व को पूर्ण रूपेण अलग कर उनके द्वारा डाले गये प्रभाव का अध्ययन किया जाना बहुत कठिन हो जाया करता है । कही-कही अनुसंन्धानकर्ता को अन्य व्यक्तियों के निरीक्षण पर ही आधारित होना पडता है । ऐसी स्थिति में उस प्राप्त सामग्री की सत्यता का शत-प्रतिशत परीक्षण करना लगभग असम्भव हो जायो करता है । उदाहरणार्थ अ पर 'ब' के पड़े प्रभाव में अ एवं 'ब' से सम्बन्धित अनेक ऐसे परिस्थितियाँ एवं चर निहित है जिनका प्रभाव अ एवं 'ब' पर अप्रत्यक्ष रूप से पड़ रहा होता है ।

(vi) सर्वकालिक भविष्य कथन असम्भव एवं असंगत

चूंकि, वर्णनात्मक अनुसंधान उपागम में शिक्षा से सम्बन्धित किसी विशेष समय की स्थिाति एवं घटना का वर्णन किया जाता है । अत: किसी समय, परिस्थिति एवं स्थान विशेष के आधार पर सर्वकालिक भविष्य एवं व्याख्या में असंगतता भी दिखलाई पडने लगती है । इसका सीधा सा उत्तर है - "जो आज है वह कल नहीं होगा और न कल वैसा ही था ।"

(vii)छोटे न्यादर्श पर संकलित प्रदत्त सम्पूर्ण जनसंख्या के विषय में सामान्यीकरण करने में अक्षम

सामान्यत: वर्णनात्मक शोध परियोजनाओं में जनंसख्या आधारित अध्ययन बहुत कम ही किये जाते है अन्यथा अधिकतर अध्ययन छोटे-छोटे न्यादर्श पर आधारित होते है जिन्हें सिद्धान्त इस अवधारणा पर स्वीकार किया जाता है कि शोध न्यादर्श प्रतिनिधिकारी है अर्थात् जनसंख्या की सभी विशेषताएँ समाहित की गई हे । लेकिन, वास्तव में छोटे न्यादर्श पर उपलव्य प्रदत्त, उनका

विश्लेषण एवं विवेचना सम्पूर्ण जनसंख्या या समष्टि के विषय में सामान्यीकरण एवं भविष्य कथन करने में तर्क संगत नहीं बैठ पाते है । कहा जाता है कि सामाजिक परिस्थितियों में प्रतिनिधिपूर्ण न्यादर्श का चयन एवं प्रदत्त उपलब्धि एक शोध उपागम की सीमा एवं विकट समस्या भी है । इसीलिए शत-प्रतिशत विश्वास के साथ यह नहीं कहा जा सकता है कि "ऐसा होने पर ऐसा होगा ही" । 60% से लेकर 80% प्रतिशत परिस्थितियों में शोध उपलब्धियाँ एवं निष्कर्ष सत्य प्रतीत होते है ।

14.7 स्वमूल्यांकन (Self-Assessment)

अब तक आपने क्या समझा, इसे आप निम्न प्रश्नपदों के निर्देशानुसार उत्तर खोजकर एवं लिखकर स्वयं प्रकृति का मूल्यांकन कीजिए ।

निर्देश: इकाई के गहन अध्ययन के आधार पर निम्न वाक्यों में रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए । रिक्त स्थान पूर्ति पद ।

1. वर्णनात्मक अनुसन्धान उपागम के माध्यम से अनुदैर्ध्य अध्ययन के साथ..... अध्ययन भी सम्पादित किये जाते है ।

   उत्तर (प्रतिनिध समूह अध्ययन)

2. इस उपागम विशेष के माध्यम से संख्यात्मक प्रदत्तों के साथ-साथ..... प्रदत्तों की प्रस्तुति भी की जाती है ।

   उत्तर (गुणात्मक)

3. विद्यालय की विभिन्न पक्षीय समाधन का अध्ययन के माध्यम से..... किया जाता है ।

   उत्तर (विद्यालय सर्वेक्षण)

4. वर्णनात्मक-अनुसंधानकर्ता की प्रदत्त फलांकन के दौरान सबसे अधिक विचारणी सीमा है..... ।

   उत्तर (शुद्धता एवं वैज्ञानिकता का अभाव)

5. विभिन्न सम्पूर्ण जनंसख्या के विषय में सामान्यीकरण करने में प्रदत्त तभी अक्षर रहा करते है जब वे.....पर एकत्रित किये जाते है ।

   उत्तर (सीमित एवं छोटे न्यादर्श)

लघुस्तरीय प्रश्न

निर्देश: निम्न पदों के उत्तर एक पृष्ठ से अधिक में न लिखिए -

1. अनुसंधान के माध्यम से प्रतिनिधित समूह अध्ययन किया जाना कहीं तक सम्भव हो स्पष्ट करें।
2. अनुसन्धान उपागम में प्रदत्त व्याख्या एवं विश्लेषण के दौरान कौन-कौन सावधानियाँ रखी जानी आवश्यक है?
3. इस उपागम विशेष को अपनाये जाने पर कभी-कभी भ्रामक निष्कर्ष किन कारणों से आ जाया करते हैं?
4. वर्णनात्मक अनुसंधान उपागम में सर्वकालिक भविष्य कथन क्यों सम्भव नहीं हो पाते है?

5. विभिन्न प्रकार के शैक्षिक कार्यक्रमों की योजना निर्माण में वर्णनात्मक अनुसंधान उपागम हमारी किस प्रकार सहायता करता है?

4.8 संदर्भ ग्रंथ (Reference)

1. बैस्ट, जे. डब्लू - "रिसर्च इन एजूकेशन" नयी दिल्ली, प्रैटिंस हाल, 1963 पृष्ठ 102
2. ढौंढियाल, एस. एन एवं पाठक, ए, - "शैक्षिक अनुसन्धान का विधिशास्त्र" जयपुर, राजस्थान ग्रन्ध अकादमी, 1972
3. गुड, सी. वी. एवं स्केट्स, डी.ई-"मैथड्स ऑफ रिसर्च" एप्लीटन सैन्तुरी, क्रापटस न्यूयार्क, 1954 पृष्ठ 548-687
4. करलिंघर एफ. एन. - "फाऊण्डेशन ऑफ बीहेवियर्ल रिसर्च" न्यूयार्क ' हाल्ट, रिनहार्ट एवं विस्ठन, 1969
5. मुले, पी. एन. - "दी साइंस ऑफ एजूकेशन रिसर्च, न्यूयार्क : वान नोस्ट्राइ रिनहार्ट कम्पनी, 1970 पृष्ठ-231-367
6. राय, पी. एन - "अनुसन्धान-परचित" आगरा, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, 1985, पंचम संस्करण, अध्याय 8 पृष्ठ 119-148
7. शर्मा, आर. ए. - "शिक्षा अनुसन्धान" मेरठ, लायल बुक डिपो, 1985-86 अध्याय, सप्तम, पृष्ठ 146-163
8. शर्मा, बी. - "शोध प्रविधि, नयी दिल्ली, नेशलन पब्लिशिंग हाऊस 199०, अध्याय-2, पृष्ठ-11
9. सिद्धू के. एस. - "मैथोडोलोजी ऑफ रिसर्च इन एजूकेशन, नयी दिल्ली, स्टलिंग पब्लिशर्स, 1985, अध्याय 9, पृष्ठ 107-115

इकाई- 15

प्रयोगात्मक उपागम

(EXPERIMENTAL APPROACH)

इकाई की संरचना (Structure of the Unit)

15.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objective)

15.1 प्रयोगात्मक विधि का प्रस्तावना (Introduction of Experimental)

15.2 प्रयोग का अर्थ (Meaning of Experiment)

15.3 प्रयोग के प्रकार (Types of Experiment)

15.4 प्रयोग में आने वाले विशेष शब्दों की परिभाषा और अर्थ (Meaning and Definition of Specification and its use)

15.5 प्रयोगात्मक विधि के चरण-समस्या, संबंधित साहित्य का अध्ययन और उपकल्पना का निर्माण, प्रयोज्य चर और प्रयोगात्मक अभिकल्प, उपकरण अथवा सामग्री. नियंत्रण, निर्देश तथा विधि परिणाम और व्याख्या तथा सामान्यीकरण (Steps of Experimental Method- Problem, Study of Related Literature and Preparation of Sub-Hypothesis, Subject variable, Experimental design, Tools and Material Control, Result, Instruction and Procedure Result, Explanation and Generalization)

15.6 चरों को नियंत्रित करने की तकनीकी-निरसन, स्थैर्य, यादृच्छिकीरण, सम्मलेन. संतुलन प्रति संतुलन (Techniques for the control of variables-eliminating, constancy, ranomisation, matching, balancing, counter balancing)

15.7 प्रयोगात्मक विधि के लाभ (Advantages of experiments)

15.8 प्रयोगात्मक विधि के दोष (Disadvantages of experimental method)

15.9 स्वमूल्यांकन (Self-Assessment)

15.10 संदर्भ ग्रंथ

15.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives) :

इस पाठ के निम्न उद्देश्यों को ध्यान में रखा गया है :

- प्रयोग के अर्थ तथा उसकी मूल अवधारणाओं को समझाना ।
- प्रयोगात्मक विधि का अर्थ समझाते हुए, इसे संबंधित सभी शब्दों (जैसे चर, नियंत्रण, दो प्रकार के अध्ययन समूह आदि) का अर्थ स्पष्ट करना ।
- प्रयोगात्मक विधि के विभिन्न चरणों का वर्णन करना, और उनके महत्व को स्पष्ट करना।
- प्रयोगात्मक अभिकल्प का अर्थ स्पष्ट करते हुए उसके विभिन्न रूप बताना ।

- चरों को नियंत्रित करने की तकनीकी के गुण व दोषों को स्पष्ट करते हुए उनका वर्णन करना । - प्रयोगात्मक विधि की श्रेष्ठता तथा लाभ को बताना ।
- इस विधि के दोषों का वर्णन करना ।

15.1 प्रस्तावना (Introduction)

वैज्ञानिक चिंतन के परिणाम स्वरूप मनोविज्ञान और शिक्षा के क्षेत्र मे प्रयोग को महत्व दिया गया। प्रत्येक तथ्य को वस्तुनिष्ठ तरीके से समझने के लिए प्रयोग विधि का श्रीगणेश किया गया ताकि हम अन्तिम सतह तक पहुंच सके । हिबटने के प्रयोगात्मक विधि को विज्ञान के प्रयोगों के पद चिन्हों पर चलते हुए पाश्चात्य शिक्षा शास्त्री द्वारा 19 वीं शताब्दी से उपयोग बताया है । यूरोप में हरबर्ट पेस्टालाजी तथा अमरीकी में डी वी पार्कर महोदयों ने इस विधि का शिक्षा मे प्रयोग किया । लेकिन यहा यह कहना भी सत्य है कि शिक्षा के क्षेत्र में ज्यादा मनोविज्ञान के क्षेत्र में इस विधि का प्रयोग आज भी निरन्तर बढता जा रहा है । छात्रों के बुद्धिमापन, योग्यता तथा रूचि की जानकारी, अध्ययन-अध्ययन की विधियों का श्रेष्ठता आदि जो मान एवं मूल्यांकन शिक्षा में हुआ है, वह सब मनोविज्ञान की ही देन है ।

प्रयोग के अन्तर्गत चाहे वह विज्ञान विषय का हो या शिक्षा अथवा मनोविज्ञान विषय का, कार्य-कारण संबंध (Cause and effect relation) का अध्ययन वैज्ञानिक ढंग से किया जाता है । यह इस बात का स्पष्टीकरण करता है कि जब संबंधित चरों अथवा परिस्थितियों पर सावधानी पूर्वक नियंत्रण करके प्रयोगात्मक चर में परिवर्तन किया जाए तो क्या परिणाम प्राप्त होंगे सामाजिक विज्ञानों में इस विधि को प्राकृतिक विज्ञानों से लिया है । जिसमें एक चर का नियम (Law of single variable) ठीक तरह से लागू होता है । लेकिन सामाजिक विज्ञानों की प्रकृति की जटिलता के कारण, हम यह निश्चित नहीं कर पाते कि इरा घटना का यही कारण होगा और न हम सभी संबंधित चरों पर नियंत्रित ही कर सकते हैं । प्रयोग की पुनरावृत्ति से यथार्थता का प्रमाण मिल जाता है अतः यह जानना जरूरी है कि प्रयोग का क्या अर्थ है ।

15.2 प्रयोग का अर्थ (Meaning of Experiment)

जहोदा तथा अन्य (Johoda and others) के अनुसार प्रयोग परिकल्पना के परिणाम की विधि है। इसी सन्दर्भ में ग्रीनबुड Greenwood) महोदय ने भी प्रयोग का अर्थ स्पष्ट किया है । उसके अनुसार प्रयोग कार्य-कारण संबंध व्यक्त करने वाली परिकल्पना के परीक्षण की विधि है जिसमें नियंत्रित परिस्थितियों में कार्य कारण संबंध का आकलन करते हैं ।

अन्य मनोवैज्ञानिकों ने प्रयोग को चर (variables) के रूप में व्याख्या की है । आइजनेक और उनके साथियों **H.J. Eysench and others) के अनुसार**, प्रयोग वह है जिसमें चरों की योजनानुसार घटा बढ़ा कर निरीक्षण कर लेते हैं अर्थात् प्रयोग में कम से कम स्वतंत्र या प्रयोगात्मक चर (Experimental variation) का पूर्व निश्चित परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तित कर निरीक्षण कर लेते है । (an experiment is the planed

manipulation of variables for observation purpose: at least one of the variables, the independent or experimental variable is altered under pre-determined conditions during the experiment) इसी तरह फेस्टिनगर (L.Festinger) के अनुसार प्रयोग का मूल आधार स्वतंत्र चर में परिवर्तन करने से परतन्त्र चर पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन है । (The essence of an experiment may be described as observing the effect on a dependent variable of the manipulation of an independent variable) इन परिभाषाओं के आधार पर यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि प्रयोग एक ऐसी विधि है जिसमें दो या दो से अधिक चरों के प्रभावों का अध्ययन किया जाता है।

सरल शब्दों में यह कह सकते हैं कि प्रयोग के अनुसार उन दशाओं को जानना है जिसमें कोई घटना घटित हो सके । इसी संदर्भ में **एफ. एस. चैपिन (F.S. Chapin)** महोदय ने लिखा है कि नियंत्रित दशाओं में किये गये निरीक्षणों में प्रयोग ही होता है । (An experiment is an observation under control conditions)। इस परिभाषा के अनुसार प्रयोग में नियंत्रण आवश्यक है । इसी धारणा को ध्यान में रखते हुए **डब्लू.एस. मुनरो (W.S. Munroe)** ने लिखा है कि प्रयोग वह शैक्षिक अनुसंधान है जिसमे कि अनुसंधानकर्ता उन शैक्षिक घटकों के नियंत्रित करता है, जिनसे जाँच की अवधि में बाल या बालकों को समूह प्रभावित किया जाता है तथा उसके परिणाम स्वरूप प्राप्त निष्पति का अवलोकन किया जाता है। (Experimentation is the name given to the type of educational research in which the investigator controls the educative factors to which a child or group of children is subjected during the period of enquiry and observes the resulting achievement)

प्रयोग किस सीमा तक नियोजित किया जाय, इस दृष्टिकोण से परिभाषित करते हुए **ई. बी. विल्सन (E.B. Wilson)** ने लिखा है कि प्रयोग द्वारा घटना का केवल निरीक्षण ही नहीं होता वरन् उद्देश्यपूर्ण निरीक्षण होता है । (It is not mere observation or collection of materials, it is consciously directed purposeful observation).

अन्त में **ग्रीनबुड (Ernest Green Wood)** की परिभाषा देंगे जिसमें प्रयोग की विभिन्न दृष्टिकोणों से व्याख्या की है । उसके अनुसार कार्य कारण संबंध की विधि है जिसमें नियंत्रित परिस्थितियों में कार्य कारण संबंध का आकलन करते हैं । (Experiment is the proof of a hypothesis which seeks to take up two factors into a causal relationship through the study of contrasting situations which have been controlled on all factors except the one of interest, the latter being either hypothetical cause or the hypothetical effect)

15.3 प्रयोग के प्रकार (Types of Experiments)

प्रयोग को मनोविज्ञानियों ने विभिन्न प्रकार से वर्गीकृत किया है । मैकगुइगन (Magyigan) ने इसे तीन वर्गो में विभाजित किया है जो निम्नलिखित है-

(i) खोज करने का प्रयोग (Exploratory Experiments) जब प्रयोगकर्ता का ज्ञान सीमित होता है और वह समस्या का हल नहीं निकाल पाता तब वे ऐसे प्रयोग करता है। इस जिज्ञासा प्रवृत्ति के कारण वह कुछ प्रदत्त एकत्रित करता है। और प्रयोग के निष्कर्ष निकालने का प्रयास करता है । ऐसे प्रयोग प्रारंभिक अवस्था में किये जाते हैं ।

(ii) सिद्ध करने के प्रयोग (Confirmatory Experiments)इसके अन्तर्गत यह देखा जाता है कि क्या विशिष्ट चर निश्चित रूप से प्रभावकारी है । इसके एक चर का दूसरे चर पर पडने वाले प्रभाव की मात्रा एवं उनके निश्चित रूप को निर्धारण किया जाता है ।

(iii) गंभीर (क्रूशियल) प्रयोग (Crucial Experiments)- इसके अन्तर्गत एक अथवा अधिक परिकल्पनाओं को जांचने का प्रयास करते हैं । इसके निष्कर्ष में परिकल्पना या तो सही सिद्ध (Accept) हो जाती है अथवा खण्डित (reject) सिद्ध होती है ।

अण्डरबुड (Underwood) महोदय ने प्रयोग को निम्न दो भागों में विभाजित किया है मैं आश्चर्य करता हूँ कि क्या होगा प्रकार (I wonder what would happen Type) इस प्रकार के प्रयोग प्राय: अनुसंधान की प्रारंभिक अवस्था में होते है जबकि शोधकर्ता को स्वतंत्र और आश्रित चरो का संबंध पूर्ण रूप से ज्ञान न हो । शोधकर्ता ऐसे समय यह ज्ञान करता है कि एक अमुख तत्व प्रभावशाली उत्तेजक (effective stimulus) है अथवा नहीं और यह विशेष प्रकार की प्रतिक्रिया करा सकने में समर्थ है या नहीं ।

– मैं मानता हू कि यह होगा, प्रकार (I Bet this would Happen Type) इस प्रकार के प्रयोगों का उपयोग परिकल्पना की जांच के लिए होता है । इसमें परिकल्पना बनाकर किसी विशिष्ट उत्तेजक चर के परिवर्तनों के प्रभावों का अध्ययन किया जाता है । प्राय: इसमें शोधकर्ता को अपने स्वतंत्र चर की परिभाषा (Definition of Special Terms used) देनी होती है ।"

उपरोक्त सभी परिभाषाओं के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि प्रयोगात्मक विधि, वह विध्रि है जिसमें चरों को योजनानुसार घटा बढा कर नियंत्रित दशाओं में निरीक्षण करके परिकल्पना को मृत्य या असत्य सिद्ध करते हैं ।

15.4 प्रयोग में आने वाले विशेष शब्दों की परिभाषा और अर्थ चर के प्रकार (Meaning and Definition of Specific Works and its use):

स्वतंत्र चर (Independent Variable)

आश्रित चर (Dependent Variable)

(i) स्वतंत्र चर - उस चर को कहते हैं जिसका प्रयोगकर्ता परिर्वतन करता है । दूसरे शब्दों में यह कहना ठीक होगा कि स्वतंत्र चर वह तथ्य है जिसको प्रयोगकर्ता दस्तप्रयोग (manipulation) करता है और जिसका वह निरीक्षण घटना के साथ संबंध जानने के लिए प्रयत्न करता है । कभी-कभी एक ही अध्ययन में अनेक स्वतंत्र चर हो सकते हैं । अनुसंधानकर्ता सभी का परिवर्तन नहीं कर सकता । ऐसे समय में वही स्वतंत्र चर, व्यवहार चर (Treatment Variable) कहलायेगा जिसको परिवर्तन अनुसंधानकर्ता द्वारा किया जा रहा है ।

(ii) आश्रिम चर अथवा परतंत्र चर - यह वह चर है जो स्वतंत्र चार अथवा व्यवाहर चर के परिवर्तन से प्रभावित होता है । यहां यह ध्यान रखना चाहिये कि परतंत्र चर भी एक या एक से अधिक हो सकते हैं । उदाहरण के लिए यदि हम सीखने तथा विशेष औषधि के प्रयोग में सह संबंध जानना चाहते हैं तो औषधि स्वतंत्र चर अथवा व्यवहार चर कहा जायेगा तथा सीखना (सीखने की परीक्षा के. अंक) परतंत्र चर कहलायेगा । इसी तरह एक प्रयोग में चूहे के बिजली द्वारा या रास्ता बदल लेना परतंत्र या आश्रित चर है ।

प्रयोग विधि का दूसरा महत्वपूर्ण लक्षण नियंत्रण (Control) होता है । प्रयोग में केवल चरों को बदला जाता है और स्वतंत्र चर के अतिरिक्त अन्य कारकों को रोका जाता है । दूसरे शब्दों में प्रयोग में हमें उन चरों अथवा स्थितियों को नियंत्रण में रखना चाहिए जो भ्रामक परिणामों को उत्पन्न करती हैं ।

प्राय: प्रयोगात्मक विधि में कम से कम दो अध्ययन समूह होते हैं । इनमें से एक अध्ययन समुह नियंत्रित समूह (Control Group) तथा दूसरा अध्ययन समूह प्रयोगात्मक समूह (Experiment Group) कहलाता है । प्रयोगात्मक समूह, वह समूह है जिस पर विशेष व्यवहार किया जाता है दूसरी तरफ नियंत्रित समूह, वह समतुल्य समूह हो जो विशेष व्यवहार से मुक्त रखा जाता है। उदारहणार्थ यदि कोई अनुसंधानकर्ता सीखने पर प्रेरणा का प्रभाव देखना चाहता है तो उसे सीखने को प्रभावित करने वाले अन्य तत्वों जैसे आयु बुद्धिलब्धि, विषय में रूचि, अभियोग्यता विषय की प्रकृति, उसकी कठिनाई स्तर, पढाने का ढंग अध्यापक का व्यवहार, पूर्व उपलब्धि तथा अध्ययन वातावरण आदि सभी पर-नियत्रंण करना होगा । इस नियंत्रण के बाद ही वह यह निश्चित रूप से कह सकेगा कि सीखने में यह परिवर्तन प्रेरणा के कारण ही आया है ।

यहां स्वतंत्र चर-प्रेरणा है तथा सीखना आश्रित चर है तथा नियंत्रित करन के लिए संबंधित चर-आयु बुद्धिलब्धि शिक्षण विधि, पूर्व उपलब्धि, शिक्षक, विषय में रूचि, विषय की जटिलता, शिक्षक का व्यवहार तथा वातावरण आदि है ।

यहा यह समझ लेना चाहिए कि नियंत्रित समूह तथा प्रयोगात्मक समूह में अन्तर क्या है । दोनों में यह अन्तर है कि नियंत्रित समूह को यथावत रखा जाता है और प्रयोगात्मक समूह पर प्रयोगात्मक चर का प्रयोग करते हैं । दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि दोनों में परिवर्तन का कारण प्रयोगात्मक चर का ही प्रयोग है । इस प्रकार नियंत्रित समूह उस चर की उपस्थिति के प्रभाव को तथा प्रयोगात्मक समूह उस चर की उपस्थिति के प्रभाव को स्पष्ट करता है । इसी कारण प्रयोगों में प्रभाव डलाने वाली सभी परिस्थितियों पर नियंत्रण कर स्वतंत्र चर के परिवर्तन का प्रभाव परतंत्र चर पर देखते हैं।

15.5 प्रयोगात्मक विधि के चरण
(Steps of Experimental Method)

(i) समस्या (Problem) जब किसी प्रश्न का कोई उत्तर प्राप्त नहीं होता तो समस्या उपस्थित हो जाती है । इसलिए टाउन सेण्ड (John C. Townseed) ने समस्या को परिभाषित करत हुए ठीक कहा है कि 'समस्या तो समाधान के लिए प्रस्तावित एक प्रश्न है ।" (A problem is an interrogative sentence or statement that asks what relations exist between two or more variables)) प्रयोग के लिए समस्या कई स्त्रोतों से जैसे - पूर्व अनुसंधान के आधिकारिक वर्णन, नवीन प्रवृत्तियों का विश्लेषण, क्षेत्र विशेष के आलोचनात्मक निबंध पत्र अथवा टिप्पणियाँ, शिक्षा संबंधी भविष्य वाणी शैक्षिक कार्यक्रम का अनुसारण (Pursuation), विशेष से विचार विमर्श करके, प्रयोगकर्ता स्वयं अनुभव के आधार से प्राप्त कर सकता है । समस्या चुनने के बाद समस्या को परिभाषित करना आवश्यक है । क्योंकि यह कहा गया है उचित रूप से समस्या प्रस्तुत करने पर समस्या का आधा समाधान पहले ही हो जाता है। (A problem well put is half solved)

(ii) संबंधित साहित्य का अध्ययन और उपकल्पना का निर्माण (Study of related literature and formation of Hypothesis)

समस्या सचन के बाद, उस समस्या से संबंधित साहित्य का गहन अध्ययन करना आवश्यक है ताकि इसमें यह मालूम हो सके कि किन-किन अनुसंधान कर्ताओं ने इस समस्या पर कार्य किया है और क्या परिणाम प्राप्त किये हैं । अपने इस संबंधित साहित्य के अध्ययन के आधार पर और विशेषज्ञों की सलाह अनुसार समस्या के संबंध में उपकल्पना निर्माण करनी चाहिए । उपकल्पना, गुड तथा स्केट्स (Good and Scates) के अनुसार, एक अनुमान है जिसे अन्तिम अथवा अस्थायी रूप से किसी निरीक्षण तथ्य अथवा दशाओं की व्याख्या हेतु स्वीकार किया गया हो एवं जिससे अन्वेषण को आगे पथ प्रदर्शन प्राप्त होता हो । (A hypothesis is a shrewed guess or inferences that if formulated and provisionally adopted to explain observed facts or conditions and to guide in further investigation).

(iii) प्रयोज्य (Subject) :- यहाँ प्रयोज्य का अर्थ है जिन पर प्रयोग किया जाना है । इनकी संख्या अनुसंधान की आवश्यकता अनुसार एक भी हो सकती है और अधिक भी । प्राय: इनकी संख्या एक से अधिक ही होती है । प्रयोज्य विभिन्न आयु मानसिक तथा शारिरिक योग्यता के हो सकते है लेकिन हमें इनका चयन हमारी समस्या के अनुसार ही करना होता हैं ।

(iv) चर और प्रयोगात्मक अभिकल्प (Variable and Design of the Experiment) -

चरों के संबंध में हम पहले ही इसके अर्थ को स्पष्ट कर चुके हैं । इन दोनों के संबंध को बताते हुए करलिंगर ने लिखा है कि स्वत्रंत चर किसी आश्रित चर का अनुमानित कारक है तथा आश्रित चर, स्वतंत्र चर का अनुमानित प्रभाव है । लेकिन प्रयोग भी तीसरे प्रकार का चर भी होते हैं, जो दोनों चरों को प्रभावित करते हैं तथा इन चरों के लिए बाधक होते हैं । प्रयोगकर्ता समस्या से संबंधित चरों को परिभाषित करता है और गोचर बाधक है, उनका पूरा ध्यान रखता

है । इसके बाद प्रयोग के लिये एक योजना तैयार करता है और अभिकल्प (Design) का उपयोग करता है। अनुसंधानकर्ता के लिए अभिकल्प का वही महत्व है जो एक भवन निर्माणकर्ता के लिए नीलपत्र (Blue Print) का रहता है । बाहरी तत्वों के प्रभावों को: नियंत्रित करने के लिए आवश्यक है कि उचित प्रायोगिक अभिकल्प (Experimental Design) का प्रयोग किया जाये । लिग्विस्टिक (Lindquist) महोदय ने छ: प्रायोगिक अभिकल्प बताये हैं, वे निम्नलिखित हैं-सामान्य यादृच्छिकृत अभिकल्प (Simple Randomized Design), अभिक्रिया स्तर अभिकल्प (Treatment Level), अभिक्रिया प्रयोज्य अभिकल्प (Treatment subject Design), यादृच्छिक पुनरावृति अभिकल्प (Random Replication Design), कारकी अभिकल्प (Factorial Design) और समूह अन्तर्गत अभिक्रिया अभिकल्प (The Groups with in Treatment Design).

कोई एक अभिकल्प सभी समस्याओं का समाधान नहीं कर सकता । समस्या की प्रकृति ही यह तय करेगी कि कौन सा अभिकल्प उपयुक्त है । एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण घटक है विषयों के सामूहीकरण । इस आधार पर विभेद किये गये प्रयोगात्मक अभिकल्प के प्रमुख तीन निम्न प्रकार हैं -

(अ) एक समूह प्रयोग (One Group Experimentation) इसमें प्रायोगिक घटक या घटकों का प्रभाव एक व्यक्ति या समूह पर इस प्रकार किया जाता है कि परिणाम में कतिपय परिवर्तनों का निर्धारण किया जा सके । इसमें समस्या घटकों को पूर्व स्थिति में रखा जाता है लेकिन इसमें केवल एक प्रायोगिक चर यानि स्वतंत्र चर होता है । प्रायोगिक घटक को समय की निश्चित अवधि के लिए प्रयुक्त किया जाता है । अन्त में प्रायोगिक घटक द्वारा आश्रित चर में उत्पन्न परिवर्तनों का निर्धारण करने के लिए समूह का मापन किया जाता है । इसी प्रकार एक-एक करके अन्य घटकों को भी शामिल किया जाता है । यदि 'क' समूह को 'प' प्रयोगात्मक घटक को तथा च' विचाराधीन विशिष्ट घटक के प्रारंभिक परिणाम के मापन को प्रदर्शित करते हैं तो इसका रेखीय अंकन इस प्रकार होगा -

(ब) समानान्तर अथवा समकक्ष समूह प्रयोग ((Parallel or Equivalent Group experiments)- यह एक समूह प्रयोग की अपेक्षा अधिक जटिल है लेकिन यह अधिग यथार्थ भी है । इसमें सभी दृष्टि से समकक्ष बालकों को दो या दो से अधिक समूहों को बनाया जाता है । इसमें एक नियंत्रित समूह तथा एक या अधिक समूहों को बनाया जाता है । इसमें एक नियंत्रित समूह तथा अन्य एक या अधिक समूहों को प्रयोगात्मक घटक अथवा घटकों के लिए प्रयुक्त करते हैं । यदि 'क' नियंत्रित समूह है और 'ख' प्रयोगात्मक समूह है ओर ग - ग प्रयोगात्मक घटक 'प' का ही परिणाम है तो इसे निम्न रेखीय चित्रण द्वारा प्रस्तुत कर सकते हैं :- यहां (ग,-ग) का परिणाम है ।

सामान्यीकरण की अनेक विधियां हैं जिनका काफी प्रयोग होता है । इनमें से प्रमुख हैं- (i)- संयोग या यादृच्छिक चयन (Chance or Random Selection) (ii) मध्यमान अंक (Mean score) तथा मानक विचलन (S.D.) के आधार पर (iii) अनुरूप युगलों (Matched pairs) तथा सह-यमज (Co-twins) पद्धति द्वारा सामानीकरण करना ।

(स) क्रमावर्तन समूह प्रयोग (Rotation Group Experimentation) इसे एक समूह या समकक्ष समूहों में प्रयुक्त किया जा सकता है । जब समकक्ष समूहों में प्रयुक्त किया जायेगा तो इसके अन्तर्गत विभिन्न समूहों में प्रयुक्त किया जायेगा तो इसके अन्तर्गत विभिन्न समूहों के मध्य घटकों का चक्रानुसार विनियम (Exchanging their factors cycle wise) शामिल किया जायेगा । इस क्रमावर्तन विधि का प्रयोग उसी समय करते हैं जब समूहों को पूर्णत: समानीकृत नहीं कर सकते ।

(v) उपकरण या सामग्री (Apparatus and Material) :- अध्ययनकर्ता संबंधित समस्या के लिए उपकरण या परीक्षण (Tests) निश्चित करता है । यहां संक्षेप में उसका विवरण भी देता है। कभी-कभी वह नये परीक्षण या प्रश्नावली को विकसित करता हैं जिसका भी विवरण देना आवश्यक है ।

(vi) नियंत्रण - समस्या को प्रभावित करने वाले कारक प्रयोज्यों से संबंधित, वातावरण तथा उपकरणों एवं प्रयोगकर्ता से संबंधित हो सकते है । इन सभी प्रकार के कोरको को नियंत्रित करके ही प्रयोगकर्ता संबंधित आकड़ों (data) या प्रदत्तों को एकत्रित करता है। नियंत्रण की आवश्यकता दोनों समूहों (नियंत्रित तथा प्रयोगात्मक) को समान निश्चित करना है । प्रयोग में त्रुटियों को दूर करने के लिए समतुल्यन विधि (Counter balancing method) उपयुक्त है। अभ्यास तथा थकान का प्रयोग पर प्रभाक् न पडे समतुल्यन विधि द्वारा इससे संबंधित त्रुटियों का सरलता से दूर किया जा सकता है । लेकिन पाँच या उससे अधिक परिस्थितियों में समतुल्यन करने में कठिनाई होती है । अत: ऐसी परिस्थिति में क्रमबद्ध यादृच्छीकरण विधि (Method of Systematic Randomization) का उपयोग करना पड़ता है ।

(vii) निर्देश तथा विधि (Instructions and Procedure) - प्रयोज्यों के लिए क्या निर्देश देने हैं, उन्हें निश्चित करता है । इन निर्देशों को प्रयोज्यों को परीक्षण देते समय दिया जाते हैं। प्रयोगकर्ता प्रयोग को केवल पूर्व निश्चित विधि, योजना और अभिकल्प के अनुसार ही करता है, उसमें वह किसी भी प्रकार का परितर्वन नहीं करता है ।

(viii) परिणाम (Results)- आकड़ों को एकत्रित करने के बाद आकड़ों कार वर्गीकरण एवं सारणीयन करते है । इसके बाद अभिकल्प के अनुसार सांख्यिकी विधियों द्वारा आकड़ों का विश्लेषण किया जाता है । सांख्यिकी विश्लेषण के आधार पर परिणाम ज्ञात किये जाते हैं ।

(ix) व्याख्या तथा सामान्यीकरण (Discussion and Generalization) - सर्वप्रथम उपरोक्त परिणामों के आधार पर उपकल्पना की जांच करते है और निष्कर्ष निकालते है । इन निष्कर्षो की व्याख्या विभिन्न सिद्धांतों के आधार पर करते हैं । यहां समस्या से संबंधित कारकों की भी व्याख्या करते है । अन्त में सामान्यीकरण में यह देखा जाता है कि प्राप्त परिणाम कहां तक सामान्य जनसंख्या पर लागू होते हैं ।

15.6 चरों को नियंत्रित करने की तकनीकी (Techniqes of Controlling the Variables)

प्रासंगिक चरों को नियंत्रित करने की निम्न तकनीकियां हैं -

निरसन (Elimination)

स्थैर्य (Constancy)

यादृच्छिकीकरण (Randomization)

समेलन (Matching)

संतुलन (Balancing)

प्रति संतुलन (Counter Balancing)

(i) **निरसन (Elimination)-** यदि हम प्रायोगिक स्थिति में प्रासंगिक चर को निकाल कर अलग कर दें तो वह प्रासंगिक चर प्रभावहीन हो जायेगा । उदाहरणत: शोर (Noise) का निरसन करने के लिये ध्वनि रहित प्रयोगशाला का प्रयोग किया जाता है । प्रयोगशाला में ऐसी कोई वस्तु ऐसी नहीं रखी जाती जो प्रयोज्य की दृष्टि को प्रायोगिक कार्य से हटा सकें । प्रयोज्य की दृष्टि को नियंत्रित करने के लिये कभी-कभी आँखों पर पट्टी बांध दी जाती है । सूक्ष्म में यह निष्कर्ष है कि निरसन का उपयोग परिवेशजन्य चरों को नियंत्रित में रखने के लिये किया जाता है ।

लेकिन व्यवहार व्यवहार में देखा गया है कि अनेक प्राणिगत चरों का नियंत्रण नहीं किया जा सकता जैसे प्रयोज्य की बुद्धि, उनके अनुभव व्यक्तित्व विशेषतायें, लिंग प्रत्याक्षा, अभिप्रेरणा के स्वर आदि । इसके अलावा परिवेशजन्य जैसे (जैसे कमरे का तापक्रमको शून्य करना) प्रायोगिक स्थित में निरसित नहीं किया जा सकता । यदि हम कमरे का तापक्रम शून्य करते हैं तो प्रायोज्य का जीवन खतरे में पड़ सकता है ।

(ii) **दशाओं का स्थैर्य (Constancy)-** यदि प्रासंगिक चरों का निरसन संभव न हो तो ऐसे चरों को पूरे प्रयोग की अवधि में स्थिर रखा जता है । उदाहरणात: रोशनी, तापक्रम, शोर के मूल्य को प्रयोग की सभी दशाओं में स्थिर रखा जा सकता है । इसके लिए यह जरूरी है कि प्रयोग एक ही कक्ष में, एक-एक ही प्रयोगकर्ता द्वारा, निश्चित समय पर, एक ही कक्ष में, एक ही प्रयोगकर्ता द्वारा, निश्चित समय पर, एक ही उपकरण पर तथा एक ही प्रकार की पृष्ठभूमि में किये जाये । दूसरे शब्दों में प्रयोग के समय प्राणिगत चरों को स्थिर बनाकर नियंत्रण में रखने के लिए एक ही प्रकार की आयु शैक्षणिक स्तर सामाजिक तथा आर्थिक पृष्ठभूमि, एक ही बुद्धि स्तर तथा समान लिंग वाले प्रयोज्यों का चयन किया जायेगा । यहां यह भी ध्यान रखना है कि प्रयोज्यों को दिये जाने वाले निर्देश भी एक ही शब्दावली, एक ही ध्वनि स्तर, प्रायोगिक प्रक्रिया के विभिन्न चरणों की प्रस्तुति का क्रम तथा शैली भी एक समान रखा जाता है ।

(iii) **समेलन (Matching)-** इसके अन्तर्गत यह निश्चित कर लिया जाता है कि जो दो समूह बनाये गये हैं वे प्राणिगत प्रासंगिक चरों के आधार पर समतुल्य (यानि कि बराबर) हों । उदाहरण के लिये यदि हम बुद्धि स्तर दो समान समूह बनाना चाहते हों तो सभी संबंधित बालकों पर बुद्धि परीक्षण प्रशासित करके उन्हें कोटि क्रम में (rank Order) यानि अधिकतम अंक से निम्न अंक तक जमा लें । इसका अर्थ यह हुआ कि अधिकतम बुद्धि स्तर वाले को शीर्ष पर तथा सबसे कम बुद्धि वाले का नाम सूची में अन्तिम नाम होगा । इसके बाद शोधकर्ता समानबुद्धि वाले दो प्रयोज्यों को लेकर एक को समूह अ में और दूसरे 'ब' में डाल देते हैं । इस प्रकार समस्या प्रयोज्यों को दो समूह में विभाजित करके बुद्धि स्तर का समेलित किया जाता है ।

(iv) **यादृच्छिकीकरण (Randomization)-** यदि शोधकर्ता यह देखता है कि समूहों को सम्मलित करना कठिन है तो उसे यादृच्छिक समूह विधि का प्रयोग करना चाहिये । यादृच्छिक विधि के पीछे यह धारणा है कि इस विधि द्वारा चयन में प्राप्त दो समूह समेल होंगे । प्रतिनिधित्तव करता है, अत: उसमें प्राप्त दो समूह समेल होंगे । इस विधि के लिण न्यादर्श बड़ा होना आवश्यक है ताकि उसमें से पर्याप्त न्यादर्श का चयन किया जा सके । इस विधि के अन्तर्गत प्रत्येक बाल का नाम छोटे-छोटे कागजों पर लिख कर तथा उसकी गोली बनाकर किसी डिबे में डाल दें और उसे अच्छी तरह हिला दें । उसके बाद उससे एक साथ दो गोली उठाकर एक को प्रथम समूह में और दूसरे को द्वितीय समूह के लिये चुन लिया जाये । कभी-कभी हम इस विधि के लिय यादृच्छिक अंकों की तालिका (Table of random number) का भी प्रयोग करते हैं। यादृब्दिक विधि के अन्तर्गत प्रत्येक प्रयोज्य की किसी समूह में सम्मिलित किये जाने की संभावना एक समान होती है ।

(v) **सन्तुलन (Balancing)-** इसके अन्तर्गत प्रयोग की सभी दशाओं में प्रासंगिक चरों के परिवर्तनीय मूल्यों को संतुलित करते हैं । एक प्रयोग से इसे अच्छी तरह समझा जा सकता है। यदि हम यह देखना चाहते है कि दाहिने हाथ से किसी कार्य को करने का प्रशिक्षण प्राप्त करने के बाद बाँये हाथ से उसी काम को करने की क्षमता में वृद्धि होती है या नहीं । इसका अध्ययन करने के लिए शोधकर्ता निम्न योजना बनायेगा-

प्रशिक्षण पूर्व परीक्षण	प्रशिक्षण अवस्था	प्रशिक्षण बाद परीक्षण
बायें हाथ विशिष्ट कृत्यक को करने की क्षमता का माप करना। 30 मिनट का समय 22 त्रुटियां	विशिष्ट कृत्यक को दाहिने हाथ से करने का निश्चित मात्रा में प्रशिक्षण प्रशिक्षण प्रशिक्षण 25 प्रयास	प्रशिक्षण के बाद पुनः बायें हाथ से ब्विशष्ट कृत्यक को करने की क्षमता का माप करना । 18 मिनट का समय 14 त्रुटियां

इसके आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि किसी विशिष्ट कृत्य पर दाहिने हाथ से प्रशिक्षण प्राप्त करने के बाद, उसी कृत्यक को बायें हाथ से करने की क्षमता में वृद्धि होती है । इसके अलावा प्रशिक्षण के बाद बायें हाथ से कार्य के करने में समय कम लगता है और त्रुटियां भी घट जाती है । यहाँ यदि लिंग भेद के कारण यदि आश्रित चर प्रभावित हो तो प्रत्येक समूह में बालक और बालिकाओं का अनुपात एक रखा जाये ।

(vi) **प्रति संतुलना (Counter Balancing)**अथवा समतुल्य विधि - प्राय: प्रयोगों में अभ्यास और थकान का प्रभाव पड़ता है जिसे नित्यप्रति की त्रुटियां (Counter error) कहते हैं । इन्हें प्रति संतुलन विधि द्वारा दूर किया जा सकता है । अगर इन त्रुटियों पर नियंत्रण नहीं किया गया तो ये प्रयोग के परिणाम को ज्यादा प्रभावित कर सकते है । उदाहरण के लिये किसी प्रयोग में पीली और गुलाबी दो प्रकार की रोशनियाँ प्रस्तुत की जा रही हैं तो उनके प्रतिक्रिया काल का तुलनात्मक अध्ययन करने के सूत्र abba अर्थात पीली, गुलाबी, गुलाबी, पीली क्रम में रोशनी प्रस्तुत करने से त्रुटियों को दूर किया जा सकता है । इस प्रभाव को निम्नलिखित चार्ट के द्वारा भी स्पष्ट कर सकते हैं-

स्थिति (क) अनुक्रमिक अभ्यास $= A\,B\,C\,D$

प्रतिक्रिया का प्रभाव = 1 2 3 4

A पर पड़ने वाला पूर्ण प्रभाव = 1 + 4= 5 भिन्न

B पर पड़ने वाला पूर्ण प्रभाव = 2 + 3 = 5

स्थिति (ख) अनुक्रमिक अभ्यास = $= A\,A\,B\,B$

प्रतिक्रिया का प्रभाव = 1 2 3 4

A पर पड़ने वाला पूर्ण प्रभाव = 1 + 2 = 5 भिन्न

B पर पड़ने वाला पूर्ण प्रभाव = 2 + 3 = 6

इस चार्ट से स्पष्ट होता है $= A\,A\,B\,B$ सूत्र का क्रम की तुलना में A B B A सूत्र का क्रम सर्वश्रेष्ठ इसमें प्रभाव की भिन्नता समाप्त हो जाती है । यदि अनाक्षित यानि स्वतंत्र चर की तीन दशायें अ, ब और

स) हों तो उनके प्रति संतुलन करने के लिये निम्न तरीकें पायेगे-

तीन दशायें होने पर	**चार दशायें होने पर**
अ, ब, स	अ,ब,स,द
ब,स,अ,	ब,अ,द,स
स,अ,ब	द,स,ब,अ

15.7 प्रयोगात्मक विधि के लाभ (Advantage of Experimental Method)

(1) प्रयोगत्मक विधि, अन्य विधियों की अपेक्षा सर्वाधिक मनोवैज्ञानिक विधि हे । ऐतिहासिक तथा वर्णनात्मक अनुसंधान विधियों द्वारा मानव परिस्थितियों में. क्या परिणाम आयेंगे. इनका शत-प्रतिशत विश्वास के रूप में निष्कर्ष निकाल नहीं सकते। वर्णनात्मक अनुसंधान में सामान्यीकरण एवं भविष्य कथन में भी परेशानी आती है ।

(2) यह विधि अन्य विधियों की अपेक्षा शुद्ध और सक्षित है क्योंकि इसमें व्यवहार को प्रभावित करने वाले अनेक कारकों को नियंत्रित कर लिया जाता है ।

(3) इस विधि द्वारा कार्य और कारणों के संबंध (Cause and effect relationship) का अध्ययन, अन्य विधियों की अपेक्षा शुद्धता से किया जा सकता है । इसके अलावा इस विधि से कार्य और कारणों के संबंधो की मात्रा का भी अध्ययन किया जा सकता है ।

(4) प्रायोगिक विधि उपकल्पना (Hypothesis) के परीक्षण के सबसे श्रेष्ठ विधि है क्योंकि इसमें कार्य और कारणों के संबंधो का अध्ययन एक या अधिक नियंत्रित समूह तथा प्रयोगात्मक समूह की मदद से कर सकते हैं ।

(5) इस विधि से निरीक्षण अधिक कुशलता से कर सकते हैं और आवश्यकता पड़ने पर इसे दोहराया जा सकता है क्योंकि प्रयोगकर्ता के नियंत्रण में परिस्थितियां होती हैं ।

(6) इस विधि के अध्ययन के आधार पर प्राप्त परिणाम अधिक विश्वसनीय, वैध तथा सार्वभौमिक होते ।

15.8 प्रयोगात्क विधि के दोष (disadvantages of Experimental Method)

(1) प्रयोज्यों का स्वाभाविक व्यावहार प्रयोग के समय प्राय: बदल जाता । वह सामान्य अवस्था की तरह व्यवहार नहीं करता । कहने का तात्पर्य यह है कि प्रयोज्य प्रायोगिक स्थिति में ऐसा व्यवहार नहीं करते जैसा सामान्य स्थिति में ।

(2) कई बार प्रायोज्य प्रयोगकर्ता के साथ सहयोग नहीं करता । दूसरे शब्दों में इसका अर्थ यह है कि वह प्रयोगशाला की परिस्थितियों के अनुसार जिस प्रकार व्यवहार करना चाहिये, उस प्रकार व्यवहार नहीं करते ।

(3) व्यक्ति के व्यवहार की जटिलता और गतिशीलता के कारण, प्रयोगकर्ता अनेक कारकों की नियंत्रित करने में कठिनाई महसूस करता है ।

(4) कुछ जटिल मानसिक प्रक्रियाओं और सामाजिक परिस्थितियों को प्रयोगशाला में अध्ययन इस विधि द्वारा कठिन है ।

(5) कभी-कभी प्रयोगशाला में कृत्रिम परिस्थितियों द्वारा प्राप्त परिणाम उतने विश्वसनीय और वैध नहीं होते जितने वास्तविक परिस्थितियां पर आधारित परिणाम होते हैं । कृत्रिम एवं परिसीमित प्रयोगों से प्राप्त मिथ्या निष्कर्ष अथवा परिणामों से प्रयोगकर्ता को सावधान रहना चाहिये ।

15.9 प्रगति का स्वमूल्यांकन (Self-Assessment of Progress)

(1) "प्रयोगात्मक अनुसंधान की सही अनुसंधान है ।" इस कथन की समीक्षा कीजिये?

(2) प्रयोगात्मक अनुसंधान से क्या तात्पर्य है? इसके विभिन्न चरणों का वर्णन कीजिये?

(3) प्रयोगात्मक अनुसंधान में नियंत्रण की आवश्यकता तथा उससे संबंधित कठिनाईयों का वर्णन कीजिये?

(4) अनुसंधान की विधि के रूप में प्रयोगात्मक विधि का मूल्यांकन कीजिये ।

(5) चरों को नियंत्रित करने की तकनीकि का विस्तार से वर्णन कीजिये ।

(6) प्रयोगात्मक अभिकल्प का अर्थ स्पष्ट कीजिये ताकि इनमें से कौन सा अभिकल्प शैक्षिक अनुसंधान के लिये ठीक है ।

15.10 संदर्भ ग्रन्थ (References)

1. करलिंघर एफ. एन. - 'फाऊन्ड़ेशन ऑफ बीहेवियर्ल रिसर्च" न्यूयार्क ' हाल्ट, रिनहार्ट एवं विस्तन, 1969
2. मुले, पी. एन. - 'दी सांइस ऑफ एजूकेशन रिसर्च, न्यूयार्क. वान नोस्ट्राइ रिनहार्ट कम्पनी, 1970 पृष्ठ-231-387
3. राय, पी. एन - "अनुसन्धान-परचित आगरा, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, 1985, पंचम संस्करण अध्याय 8 पृष्ठ 119-148
4. शर्मा, आर. ए. - "शिक्षा अनुसन्धान" मेरठ, लायल बुक डिपो, 1985-86 अध्याय, सप्तम, पृष्ठ 146-163

इकाई- 16

क्रियात्मक अनुसन्धान
(ACTION-RESEARCH)

इकाई की संरचना (Structure)

16.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

16.1 क्रियात्मक अनुसन्धान (Action Research)

16.2 क्रियात्मक अनुसंधान के उद्देश्य (Objectives of Action Research)

16.3 क्रियात्मक अनुसंधान के क्षेत्र (Field of Action Research)

16.4 क्रियात्मक अनुसंधानकर्ता की विशेषताएँ (Characteristics of Investigation)

16.5 क्रियात्मक अनुसंधान के सोपान (Steps of Action Research)

16.6 मौलिक एवं क्रियात्मक अनुसंधान में अन्तर (Difference between Basic and Action Research)

16.7 क्रियात्मक अनुसंधान की प्रायोगिक योजना (Experimental Project of Action Research)

16.8 क्रियात्मक अनुसंधान योजनाओ के लिए सुझाव (Suggestions for Action Research Project)

16.9 क्रियात्मक अनुसंधान की समस्याएँ अथवा क्षेत्र (Problems or fields of Action Research)

16.10 सारांश (Summary)

16.11 सन्दर्भ गन्थ (References)

16.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

इस इकाई के अध्ययन की समाप्ति पर विद्यार्थी -

1. क्रियात्मक अनुसन्धान की अवधारणा को समझ सकेगें ।
2. क्रियात्मक अनुसन्धान के सोपान को समझ सकेगे ।
3. मौलिक एवं क्रियात्मक अनुसन्धान में अन्तर कर सकेंगें ।
4. क्रियात्मक अनुसन्धान की प्रायोगिक योजना बना सकेगें ।

16.1 क्रियात्मक अनुसन्धान (Action Research)

विद्यालयों की कार्य प्रणाली मे सुधार एवं परिवर्तन लाने के लिए यह एक महत्वपूर्ण विधि है । इसके अन्तर्गत शिक्षक अपने शिक्षण की समस्याओं एवं प्रधानाचार्य अपने विद्यालयों की समस्याओं के वैज्ञानिक अध्ययन से उनमे सुधार एवं परिवर्तन लाते है । क्रियात्मक अनुसधान की प्रक्रिया समस्या केन्द्रित होती है । इनका उद्देश्य न तो शोध प्रबन्ध लिखना होता

है, और नहीं किसी प्रकार की उपाधि प्राप्त करना होता है। इसका उद्देश्य कार्य क्षेत्र कक्षा-कार्य प्रणाली से सम्बन्धित समस्या का कारण जानकर समाधान करना है ।

क्रियात्मक अनुसन्धान की उत्पत्ति (Origion Action Research):- इस सिद्धान्त की. प्रमुख धारणा यह है कि किसी भी व्यवस्था के कार्यकर्तामें कार्यकुशलता के साथ-साथ समस्या समाधान की क्षमता भी होती है । उस कार्यकर्ता के स्वयं अपने कुछ मूल्य एवं सिद्धान्त होते है । प्रत्येक कार्यकर्ता को उसकी कार्य प्रणाली की समस्याओं के समाधान का अवसर भी देना चाहिए ।

वास्तव मे इस प्रत्यय की उत्पत्ति का स्त्रोत "आधुनिक मानव व्यवस्था सिद्धान्त (Modern Human Organisation Theory) ही है । यह व्यवस्था सिद्धान्त कार्य एवं सम्बन्ध (Task and Relationship) केन्द्रित रहता है ।

किसी भी व्यवस्था का उचित संचालन उसके सदस्यों द्वारा ही किया जाता है । इसीलिए संचालन के समय अनेक प्रकार की समस्याएं भी उनके समझ आती है उन समस्याओं की गहनता एवं बारीकियों की जानकारी भी उन्हें ही होती है । अत: अपने कार्य क्षेत्र की समस्याओं के समाधान की भी उन्हे पूर्ण स्वतंत्रता होनी चाहिए ताकि वे इनका समाधान करते हुए अपने कार्य कौशल का विकास कर सकें ।

इस प्रकार क्रियात्मक अनुसन्धान प्रजातन्त्र युग (Democraft Period) की देन है । यह सम्प्रत्यय सामाजिक-मनोविज्ञान की देन है ।

कर्ट लेविन (Field Theory) में इसका उल्लेख किया है । उनके अनुसार व्यक्ति का अपना लक्ष्य (Goal) होता है और इस लक्ष्य की प्राप्ति में अनेक बाधाएँ होती है । यह उस व्यक्ति की योग्यता पर निर्भर करता है कि उन बाधाओं को कैसे दूर कर अपने लक्ष्य को प्राप्त करें । व्यक्ति की समस्त क्रियाएँ लक्ष्य से ही नियंत्रित होती है। यही स्थिति अभ्यास कर्ता (Practitioner) की होती है ।

शिक्षा के क्षेत्र मे क्रियात्मक-अनुसन्धान का विकास (1926) मे माना जाता है । सर्वप्रथम बंकिघम (Backinghan) ने अपनी पुस्तक रिसर्च फॉर टीचर्स' में इसका उल्लेख किया है । हालांकि शिक्षा के क्षेत्र में सर्वप्रथम इसका उपयोग स्टीफन.एम.कोरी (Stephen। M. Corey) ने किया था ।

क्रियात्मक-अनुसन्धान की परिभाषा (Definition of Action Research) -

स्टीफेन एम. कोरी - "अभ्यासकर्ता अपनी समस्याओं का वैज्ञानिक ढ़ग से अध्ययन करता है जिससे सही कार्य को दिशा मिल सके और निर्णयों का मूल्यांकन कर सके ।"

Stephen M. Corey-"The process by which Practitioners attempt to study their problems scientifically in order to guide, correct and evaluate their decision and action."

स्टीफेन एम. कोरी के अनुसार :- क्रियात्मक अनुसन्धान वह प्रक्रिया है जिसमे समस्याओं का अभ्यास कर्ता द्वारा वैज्ञानिक ढंग से अध्ययन कर उसमें सुधार के लिए निर्णय लेना है ।

Stephen M. Corey- Action Research is a process for studying problems by practitioners scientifically to take decision for improving their Current Practices.

मैक थ्रेट:- क्रियात्मक अनुसन्धान व्यवस्थित खोज की क्रिया है जिसका उद्देश्य व्यक्ति या समूह क्रियाओं मे रचनात्मक सुधार तथा विकास लाना है ।

Mc. Threte: "Action Research is organized investigative activity, aimed toward the study and constructive change of given endeavour by individual or group concerned with change and improvement."

Sara Blackwell: "Research concerned with school problems carried on by school personal to improve schools practice is action research.

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर क्रियात्मक अनुसंधान की निम्न विशेषताएँ उभर रही है-

(1) यह अनुसन्धान शिक्षा की व्यवहारिक समस्याओं का अध्ययन करता है ।
(2) इसमें तत्कालीन समस्याओं का वैज्ञानिक ढंग से व्यवहारिक समाधान निकालने का प्रयास किया जाता है ।
(3) अभ्यासकर्ता को केवल अपनी समस्या का ही अध्ययन करना होता है ।
(4) इस अनुसन्धान का मुख्य उद्देश्य तत्कालीन समस्याओं का समाधान या कार्य प्रणाली मे सुधार है ।
(5) व्यक्तिगत एवं सामूहिक समस्याओं का अध्ययन क्रियात्मक अनुसंधान मे किया जाता है।
(6) क्रियात्मक अनुसन्धान द्वारा ज्ञान के क्षेत्र मे कोई नया योगदान नहीं दिया जाता है ।

16.2 क्रियात्मक अनुसन्धान के उद्देश्य (Objectives of Action Research)

क्रियात्मक अनुसंधान के प्रमुख उद्देश्य इस प्रकार है:-

(1) विद्यालय की कार्य प्रणाली मे सुधार तथा विकास करना ।
(2) विद्यालय के शिक्षक, प्रधानाचार्य, प्रबन्धक मे वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास करना ताकि वे अपनी समस्याओं का समाधान कर सके ।
(3) विद्यालय के कार्यकर्ताओं की कार्य कुशलता मे वृद्धि करना ।
(4) शैक्षिक प्रशासकों तथा प्रबन्धकों को विद्यालय की कार्य प्रणाली के सुधार तथा परिवर्तन के लिये सुझाव देना ।
(5) विद्यालय की कार्य प्रणाली को इस प्रकार प्रभावशाली बनाया जाये ताकि छात्रों को अधिगम के लिए स्वस्थ वातावरण मिल सकें ।
(6) विद्यालय मे व्याप्त परम्परागत रूढ़िवादिता एवं यांत्रिक वातावरण को समाप्त करना ।
(7) छात्रों के आकांक्षा स्तर एवं निष्पति स्तर को ऊँचा उठाना ।

16.3 क्रियात्मक अनुसन्धान के क्षेत्र (Field of Action Research)

क्रियात्मक अनुसन्धान का प्रयोग विद्यालय के निम्न क्षेत्रो मे किया जा सकता है:-

(1) कक्षा शिक्षण मे प्रयोग मे लाई जाने वाली शिक्षण विधियाँ, प्रविधियाँ में सुधार एवं परिवर्तन करना है ।

(2) शिक्षार्थियों मे अध्ययन के प्रति रुचि, अभिवृति एवं मूल्यों का विकास करने के लिए प्रयोग मे लाते हे ।

(3) विद्यालय तथा कक्षा कक्ष मे अनुशासन एवं आचार संहिता के उल्लंघन से सम्बन्धित समस्याओं के समाधान मे प्रयुक्त किया जाता है ।

(4) विभिन्न विषयों मे दिये जाने वाले गृहकार्य को रुचिकर बनाने का प्रयास के लिए प्रयोग मे लाया जाता है । ताकि छात्र गृहकार्य सदैव पूर्ण करके लावे ।

(5) भाषा शिक्षण मे वर्तनी (spelling) तथा उच्चारण (pronunciation) संबन्धित त्रुटियों में सुधार के लिए इसका प्रयोग किया जाता है ।

(6) विद्यालय तथा कक्षा मे अनुपस्थित रहने वाले तथा विद्यालय मे विलम्ब से आने वाले शिक्षार्थियों की समस्या के समाधान के लिए प्रयुक्त किया जाता है ।

(7) कक्षा शिक्षण में छात्रों का सक्रिय योगदान बढाने के लिए इसका प्रयोग किया जाता है ।

(8) परीक्षाओं मे नकल करने की प्रवृत्ति को समाप्त के लिये इसका प्रयोग किया जाता है ।

(9) समायोजित छात्रों की व्यक्तिगत समस्याएँ एवं विद्यालय से सम्बन्धित समस्याओं के समाधान के लिए प्रयोग मे लाया जाता है ।

(10) विद्यालय के संगठन एवं प्रशासन समस्याओं के समाधान में भी प्रयोग मे लाया जाता है ।

16.4 अनुसन्धानकर्ता की विशेषताएं (Characteristics of Investigator)

क्रियात्मक अनुसन्धान का कार्य करने वाले मे निम्न विशेषताओं का होना जरुरी है-

(1) चूंकि अनुसंधान का कर्ता अपने कार्य क्षेत्र का ही अध्ययन करता है अत: उसे अपने कार्यो एवं गतिविधियों के बारे में पूर्ण जानकारी होनी चाहिए ।

(2) अनुसन्धान कर्ता को अपने कार्य क्षेत्र के विभिन्न आयामों के बारे मे चिन्तन स्तर की सोच रखनी चाहिए!

(3) वह अपने कार्य के प्रति संवेदनशील होवे क्योंकि संवेदनशील व्यक्ति ही समस्या को अनुभव कर सकता है । अधिकांश शिक्षक अपने कार्य (शिक्षक) के प्रति संवेदनशील नही है अत: उन्हे समस्या ही दिखाई नहीं पड़ती है ।

(4) अनुसन्धान कर्ता में रचनात्मकता होनी चाहिए ताकि वो अपनी समस्या के समाधान के लिए क्रियात्मक परिकल्पनाओं का निर्माण आसानी से कर सके ।

(5) उसे क्रियात्मक अनुसन्धान की जानकारी एवं क्रियात्मक अनुसन्धान करने का प्रशिक्षण प्राप्त होना चाहिए ।

(6) अनुसन्धान कर्ता में सूझ (Insight) का होना अनिवार्य है । सूझ की सहायता से ही वह अपने शिक्षण कार्य के दौरान वास्तविक समस्याओं की पहचान कर सकेगा ।

(7) अनुसन्धान कर्ता का दृष्टिकोण वैज्ञानिक होना चाहिए तभी वो किसी तथ्य का अवलोकन सही ढंग से कर पायेगा ।

(8) अनुसन्धानकर्ता की सोच मे वस्तुनिष्ठता (Objectivity) होनी चाहिए ।

(9) अनुसन्धानकर्ता में धैर्य एवं लगन होना अनिवार्य है ।

(10) अनुसन्धानकर्ता का व्यवहार लोकतांत्रिक हो तथा उसका कार्य विद्यालय के अन्य शिक्षकों के कार्य मे बाधा नहीं डालें ।

(11) उसे मापन मूल्याँकन एवं प्रारम्भिक सांख्यिकी का ज्ञान भी होना चाहिए ।

(12) वह खुले दिमाग (Open mind) का व्यक्ति का होना चाहिए ताकि अपने साथियों तथा विशेषज्ञों के साथ अपनी समस्याओं की चर्चा कर सके ।

(13) उसे अपने क्रियात्मक अनुसन्धान की योजना ऐसी बनानी आनी चाहिए जो कि समय, श्रम एवं धन की दृष्टि से मितव्ययी है ।

16.5 क्रियात्मक अनुसन्धान के सोपान (Step of Action Research)

क्रियात्मक अनुसन्धान मे निम्नलिखित छः सोपानों का अनुसरण किया जाता है-

(1) समस्या की पहचान करना (Identification of problem)

(2) समस्या को परिभाषित एवं परिसीमित करना (Defining and Delimiting the problem)

(3) समस्या के कारणों का विश्लेषण करना (Analyzing causes of the problem)

(4) समस्याओं को दूर करने के लिए क्रियात्मक परिकल्पनाओं का निर्माण Formulating the Action Hypothesis)

(5) क्रियात्मक परिकल्पनाओं के परीक्षण का प्रारूप (Design for testing the Action Hypothesis)

(6) क्रियात्मक अनुसधान कार्य योजना सम्बन्धी निष्कर्ष (Conclusions of Action Research Project)

(1) **समस्याओं की पहचान करना (Identification of problem):-** एक शिक्षक को अपने कार्यो के प्रतिसंवेदनशील होना चाहिए तभी उसे अपने क्षेत्र की समस्याओं की अनुभूति हो सकती हैं । अधिकांश शिक्षक अपने कार्यो के प्रतिसंवेदनशील नही होते है अतः कोई समस्या ही महसूस नही होती है । जिज्ञासु एवं परिश्रमी शिक्षक संवेदनशील भी होते है । उन्हे समस्या की अनुभूति होती है । शिक्षा के क्षेत्र में संवेदनशील शिक्षक को समस्या व्यापक रूप मे महसूस होती है लेकिन उसमें से एक विशिष्ट क्षेत्र का चयन करना पड़ता है इसके लिए उस विशिष्ट क्षेत्र की समस्या की गम्भीरता की अनुग्रहित होती है ।`

(2) **समस्याओं की परिभाषित एवं परिसीमित करना (Defining and Delimiting the Problem):-** समस्या की पहचान होने के बाद शिक्षक उस को परिभाषित है

। यानि समस्या के तत्वों का विश्लेषण करके उसका रूप निश्चित कर लिया जाता हैं । परिभाषिकरण के पश्चात् ही अनुसधानकर्ता अपने लक्ष्य एवं क्रियाएँ निर्धारित कर सकता हैं । परिसीमन का तात्पर्य है समस्या का स्थानीयकरण (Localize) करना है । जैसे समस्या से सम्बंधित कक्षा स्तर, विषय, विद्यार्थी समूह, कालांश इत्यादि का निर्धारण कर दिया जाता है । इससे समस्या के समाधान के लिये निश्चित दिशा मिलती हैं ।

(3) **समस्या के कारणों का विश्लेषण (Analyzing Causes of the Problem):-** अनुसंधान कर्ता वस्तुनिष्ठ रूप से कारणों का विश्लेषण करता है तथा उन कारणों से सम्बन्धित साक्षियाँ भी एकत्रित करता है । समस्या के कारणों में निम्न बातों को महत्त्व दिया जाता है- तर्क संगत (Logical), परिक्षणीय (Testable), विशिष्टता (Specific) तथा नियंत्रण (Control), समस्या के कारणों की प्रकृति भी देखी जा सकती है । जैसे कि ये कारण अनुसन्धान कर्ता द्वारा नियंत्रित किये जा सकते है या नही । इनके आधार पर ही परिकल्पनाओं का निर्माण किया जाता है ।

(4) **क्रियात्मक परिकल्पनाओं का निर्माण (Formulatiry the action Hypothesis):-** समस्या के सम्भावित समाधान ही परिकल्पनाएं कहलाते है । क्रियात्मक परिकल्पनाओं का स्त्रोत समस्याओं के कारणों का विश्लेषण होता हैं । शोधकर्ता को उन्ही कारणों को महत्त्व देना चाहिए जो उसके नियंत्रण मे हो । क्रियात्मक परिकल्पना के दो पक्ष होते है -

(1) क्रियात्मक पक्ष (Action aspect) (2) लक्ष्य पक्ष (Goal aspect)

एक अच्छी क्रियात्मक परिकल्पना में दोनो पक्षों का समाव्रश होना जरूरी है क्योंकि क्रियात्मक ' पक्ष बताता है कि ये क्रियाएँ इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिये की जायेगी ।

(5) **क्रियात्मक परिकल्पना परीक्षण का प्रारूप (Design for Testing the Action Hypothesis):-** क्रियात्मक परिकल्पना ही समस्या का सम्भावित समाधान होता है इसीलिए इनकी पुष्टि (verification) के लिए रूपरेखा (प्रारूप) तैयार की जाती है । क्रियात्मक अनुसंधान का प्रारूप बहुत लचीला (flexible) होता हैं इसमें एक समय मे एक ही क्रियात्मक परिकल्पना का परीक्षण/पुष्टि की जाती है यदि प्रथम क्रियात्मक परिकल्पना अस्वीकृत हो जाती है तो दूसरा प्रारूप (Second Design) तैयार किया जाता है । जिसके आधार पर दूसरी क्रियात्मक परिकल्पना का परीक्षण किया जाता है । इस प्रकार क्रियात्मक अनुसन्धान में अनुसन्धान कर्ता अपनी सुविधानुसार (Convenience) अनुसन्धान प्रारूप (Design) को बदल सकता है ।

(6) **क्रियात्मक अनुसन्धान सम्बन्धी निष्कर्ष (Conclusion of Action Research Project) :-**अनुसन्धान कर्ता प्राप्त प्रदत्तों का संख्याकी प्रविधियाँ (Statistical techniques) द्वारा विश्लेषण करता हैं। इन प्रदत्तों के विश्लेषण के परिणामों के आधार पर निष्कर्षो का प्रतिपादन किया जाता है। क्रियात्मक परिकल्पनाओं का स्वीकृत करना या अस्वीकृत करना के आधार पर निष्कर्ष निकलाता है ।

इन निष्कर्षो के आधार पर विद्यालय या कक्षा की समस्याओं के सुधार सम्बन्धी उपाय निकलते हैं। ये निष्कर्ष कक्षा तथा विद्यालय की शिक्षण प्रक्रिया में सुधार एवं सकारात्मक परिवर्तन लाने मे सहायक होते है ।

ये निष्कर्ष व्यावहारिक होते है । इनका प्रयोग भी सीमित होता हैं क्योंकि समस्या का स्वरूप भी स्थानीय होता है जिस शिक्षक ने अपनी समस्याओं के समाधान के लिये क्रियात्मक अनुसन्धान का प्रयोग किया है । उसके निष्कर्ष को वह स्वयं ही अपनी समस्याओं के समाधान में काम मे ले सकता है । इसीलिए इन निष्कर्षो से नवीन ज्ञान मे वृद्धि नही होती है बल्कि उन क्रियाओं की ओर संकेत करते हैं जिससे समस्या का समाधान किया जा सकता है ।

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान परिषद (NCERT) ने क्रियात्मक अनुसन्धान को बढावा देने के लिए अनेक प्रयत्न कर रही है । NCERT के अनुसार क्रियात्मक अनुसन्धान का प्रारूप निम्नलिखित है- क्रियात्मक अनुसन्धान की प्रायोगिक योजना का प्रारूप (A Paradigm of Action Research)

(1) योजना का शीर्षक (Title of Project)

(2) योजना का उद्देश्य (Objectives of project)

(3) योजना की प्रणाली (The system of the Project)

(4) योजना का मूल्यांकन (Evaluation of the Project)

(5) योजना में अनुमानित व्यय (Estimation of Expenditure for the Project)

(6) संस्था का नाम तथा छात्रों की संख्या विभाग सहित (Name of Institution & Number of Students)

(7) विभिन्न विषयों के शिक्षकों की संख्या (Number of teachers indifferent subject)

(8) विद्यालयों मे योजना के लिए उपलव्य सुविधाएं-

(अ) योजना की पृष्ठभूमि (Background for the Project Work)

(ब) विद्यालय के लिये योजना का महत्त्व (Importance of the Project for the School)

(स) समस्या को पहिचानना (Identification of problem)

(द) समस्या को परिभाषित व परिसीमित करना (Defining and delimiting the problem)

(य) क्रियात्मक परिकल्पनाओं का निर्माण (Formulation of Action Hypothesis)

(र) क्रियात्मक परिकल्पनाओं की परख (Testing the action hypothesis)

(ल) योजना के बारे मे निष्कर्ष (Conclusion of the Project Work)

(व) अनुसंधान कर्ता की टिप्पणी (Remarks by the investigator)

शिक्षक इन नमूने के आधार पर अपनी क्रियात्मक अनुसन्धान की प्रायोगिक योजना बना सकता है और अन्त मे उसका एक आलेख तैयार कर सकता है ।

16.6 मौलिक एवं क्रियात्मक अनुसन्धान में अंतर (Difference between Basic and Action Research)

मौलिक अनुसन्धान (Basic Research)	क्रियात्मक अनुसन्धान (Action Research)
(1) उद्देश्य (Objectives) - नये तथ्यों, सत्यों की खोज करना तथा नवीन सिद्धान्तों का प्रतिपादन करना ।	(1) विद्यालय तथा कक्षा की कार्य प्रणाली मे सुधार लाना ।
(2) अनुसन्धानकर्ता (Investigator):- शोधकर्ता को विषयों में स्नातकोत्तर की उपाधि लेना आवश्यक होता है । वह समस्या से प्रत्यक्ष रूप से जुड़ा हो यह आवश्यक नही है ।	(2) शोधकर्ता कार्य क्षेत्र से सम्बंधित होना चाहिए । वह विद्यालय का प्राचार्य, शिक्षक, प्रशासक या निरीक्षक हो सकता है ।
(3) समस्या (Problem):- इसमें समस्या का स्वरूप विस्तृत होता है तथा यह शिक्षा के विस्तृत क्षेत्र से सम्बंधित होती है । कई बार समस्या का चयन करते समय विशेषज्ञों (External Expert) की सहमति भी लेनी पड़ती है । इसका स्वरूप सैद्धान्तिक होता है ।	(3)इसमें समस्या का स्वरूप संकुचित । समस्याएँ कक्षा, विषय तथा विद्यालय तक सीमित होती है । इन समस्याओं का स्वरूप व्यावहारिक (Practical) होता है । ये स्थानीय समस्या (Local Problems) होती है । इसका चयन स्वयं अनुसन्धानकर्ता ही करता है किसी की सहमति की आवश्यकता नहीं होती है ।
(4) परिकल्पना (Hypothesis):- परिकल्पनाओं का प्रतिपादन पूर्वशोध के निष्कर्षो पर, सिद्धान्तों पर तथा अनुभवों एवं तर्को पर आधारित होता है । एक अनुसन्धान प्रारूप मे ही अनेक परिकल्पनाओं का सत्यापन (Testing) होता है ।	क्रियात्मक परिकल्पनाओं का प्रतिपादन समस्याओं के कारणों के आधार पर किया जाता हैं । एक क्रियात्मक परिकल्पना के लिए एक अनुसन्धान प्रारूप बनाना पड़ता है तथा एक समय मे एक क्रियात्मक परिकल्पना का ही सत्यापन किया जाता है।
(5) प्रारूप (Design) अनुसन्धान का प्रारूप कठोर (rigid) है इसमें परिवर्तन नही किया जा सकता है । अनुसन्धान कर्ता को अनुसन्धान का सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक दोनों प्रकार का ज्ञान होना आवश्यक है ।	क्रियात्मक अनुसन्धान की रूपरेखा लचीली होती है । शोधकर्ता अपनी सुविधानुसार इसमें परिवर्तन कर सकता है । शोधकर्ता को विषय प्रशिक्षण की आवश्यकता नही होती हैं ।
(6) न्यादर्श (Sample):- अनुसन्धान कर्ता को प्रतिदर्श चयन की प्रविधियों का	प्रतिदर्श के चयन मे कोई समस्या नहीं है । शिक्षक जिस विद्यालय जिस कक्षा को पढ़ाता

ज्ञान होना जरूरी है ।इसमें जनसंख्या से उपयुक्त चयन प्रविधियों की सहायता से शुद्ध प्रतिदर्श का चयन करना जरूरी है अन्यथा शोध के निष्कर्ष प्रभावित होते है ।	है । वही उसका न्यादर्श होता है । उसकी जनसंख्या होती हैं ।
(7) प्रदत्तों का संकलन (Data Collection) प्रदत्तों के संकलन मे अधिकांशतया प्रमापीकृत (Standardize) परीक्षण काम में लिये जाते है । अपेक्षित परीक्षण नही मिलने पर शोधकर्ता परीक्षण का निर्माण करता है तथा उसे प्रमाणिक बनाता है ।	क्रियात्मक अनुसन्धान मे निरीक्षण प्रविधि तथा शिक्षक निर्मित परीक्षणों को काम मे लिया जाता है । प्रामाणिक परीक्षण उपलब्ध होने पर उन्हें भी काम में लिया जा सकता है ।
(8) प्रदत्तों का विश्लेषण (Analysis of Data) इसमें प्राचल (Parametric) सांख्यिकी प्रविधियों का उपयोग अधिकांशतया किया जाता है । प्रदत्तों एवं प्रमाणों के र पर आधार परिकल्पनाओं के बारे में निर्णय लिये जाते है ।	इसमें सरल सांख्यिकी प्रविधियों का उपयोग किया जाता है । जैसे मध्यमान, बहुलांक, प्रतिशत, प्रमाप विचलन एवं आरेखीय प्रदर्शन इत्यादि । समस्या के समाधान के सम्बन्ध में निर्णय लिये जाते है ।
(9) निष्कर्ष (Conclusion)- निष्कर्ष सामान्यी करण के रूप में होते है । इनके द्वारा नये तथ्य नये सत्य एवं नये सिद्धान्त स्थापित होते है । इस निष्कर्षो के द्वारा ज्ञान के क्षेत्र में नया योगदान हो होते है ।	इसके निष्कर्ष समस्या समाधान रूप मे होते है । ये निष्कर्ष वर्तमान कार्य पद्धति में सुधार / उन्नति के लिये सुधारात्मक / उपचारात्मक सुझाव के रूप मे होते है । इन निष्कर्षो से ज्ञान के क्षेत्र मे कोई नया योगदान नही होता है ।
(10) मूल्यांकन (Evaluation) मूल्यांकन के लिये विशेषज्ञो का दल होता है जो कि इस कार्य की अनुमति दे सकता है । या पुन: संशोधन करने की राय देता है । कार्य की समाप्ति पर डिग्री / उपाधि भी प्रदान की जाती है ।	क्रियात्मक अनुसन्धान का मूल्यांकन स्वयं शोधकर्ता ही करता है । वह देखता कि समस्या का समाधान किस सीमा तक हुआ है अथवा नहीं। इसके परिणाम वर्तमान कार्य पद्धति में सुधार के रूप मे परिलक्षित होते है ।
(11) वित्तव्यवस्था (Finance) शोधकर्ता स्वयं शोधकार्य के व्यय का वहन करता है । कई बार UGC तथा NCERT द्वारा भी आर्थिक सहायता शैक्षिक शोध कार्यो कि लिये प्रदान की जाती है ।	क्रियात्मक अनुसन्धान मे शोध कार्य का वहन विद्यालय या शोधकर्ता स्वयं करता है । NCERT द्वारा भी कभी -कभी अनुदान प्रदान किया जाता हैं ।

(12) प्रशिक्षण (Training) शोधकर्ता को विशेष प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है ।	शोधकर्ता जो कि शिक्षक होते हैं, बी.एड. के दौरान क्रियात्मक अनुसन्धान के बारे मे जानकारी हासिल करके आते है । सेवारत शिक्षकों को भी समय-समय पर विभाग द्वारा प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है ।
(13) क्षेत्र (Scope)- इसका क्षेत्र विस्तृत शिक्षा जगत तथा शिक्षण-अधिगम सस्थितयों से जुड़ी समस्याओं का अध्ययन किया जाता है ।	इसका क्षेत्र सीमित हैं । इसका क्षेत्र भी स्थानीय होता है यानि ये विद्यालय विशेष तथा कक्षा शिक्षण से जुड़ी हुई समस्याओ का ही अध्ययन करता है ।
(14) महत्त्व (Importance)- शिक्षा जगत सै जुड़ी मौलिक समस्याओं के समाधान निकालना है । ज्ञान के क्षेत्र में नया योगदान देना हैं ।	इसका महत्त्व विद्यालय एवं कक्षा शिक्षण की समस्याओं का समाधान करना है तथा उनमें सुधार लाना है और शोधकर्ता अपने कार्य को प्रभावशाली बनाता है ।

16.7 क्रियात्मक-अनुसन्धान की प्रायोगिक योजना (Experimental Project of Action Research)

(1) **योजना का शीर्षक (Title of the Research):** विद्यालय की प्रार्थना सभा मे सदैव विलम्ब से उपस्थित होने वाले विद्याथियों की विलम्ब से आने वाली प्रवृत्ति को समाप्त करने के लिए अध्ययन ।

(2) **शोध कर्ता (Investigator)-**प्रार्थनासभा प्रभारी/कक्षा प्रध्यापक

(3) **पृष्ठभूमि (Background)-**विगत काफी दिनों से देखा जा रहा है कि विद्यार्थी गण प्रार्थना सभा में विलम्ब से उपस्थित होते है तथा कई विद्यार्थी प्रार्थना सभा की समाप्ति पर आते है ।

योजना के उद्देश्य (Objectives of Project):-

(1) विद्याथियों को प्रार्थना सभा में समय पर उपस्थित होने के लिए बाध्य करना ।
(2) विद्याथियों को प्रार्थना सभा में समय पर उपस्थित के लिए प्रेरित करना ।
(3) विद्याथियों को प्रार्थना सभा में उपस्थिति के महत्त्व को बताना ।
(4) विद्याथियों को प्रार्थना सभा के कार्यक्रम में सक्रिय भागीदारी के लिए प्रेरित करना ।
(5) विद्याथियों को प्रार्थना सभा के कार्यक्रमों के संचालन मे रूचि विकसित करना ।

विद्यालय के लिए योजना का महत्त्व (Importance of the project for the School)- विद्यालय का प्रारम्भ प्रार्थना सभा से होता है । यह प्रत्येक विद्यालय का अनिवार्य कार्यक्रम है जिसमें सभी विद्याथियों तथा शिक्षकों, प्राचार्य एवं अन्य कर्मचारी गण की उपस्थिति अनिवार्य होती है । कार्य दिवस की शुरुआत प्रार्थना से होती है । विद्याथियों को प्रार्थना सभा में प्रार्थना, प्रयाण गीत, प्रतिज्ञा, समाचार, सुविचार, व्यायाम इत्यादि कार्यक्रम करवाये जाते है । छात्रों की उपस्थिति भी ली जाती है । इसके माध्यम से अनेक प्रकार नैतिक एवं चारित्रिक गुणों

का विकास होता है । इसीलिए प्रत्येक विद्यार्थी का प्रार्थना सभा में उपस्थित होना अनिवार्य होता है ।

समस्या का क्षेत्र (Field of the Problem):- प्रार्थना सभा में विद्याथियों की उपस्थिति को बढ़ाना ।

समस्या का विशिष्ट क्षेत्र (Specification of the Problem):-एस.एस.जी. पारीक विद्यालय के दसवी (x) कक्षा के विद्यार्थियों का प्रार्थना सभा में उपस्थित न होना ।

(A) समस्या के कारणों का विश्लेषण -

कारण (Cause)	साक्षियों (Evidence)	तथ्य तथा (Fact or Conjecture)	शोधकर्ता का नियंत्रण (Control)
1. प्रार्थना सभा में छात्रों को नीरसता महसूस होना।	प्रार्थना सभा में रुचि नहीं लेना।	तथ्य	शिक्षक के नियंत्रण के अन्तर्गत है।
2. प्रार्थना सभा की अहमियत छात्रों द्वारा न जानना।	छात्रों से प्राप्त नकारी	अनुमान	नियंत्रण के अन्तर्गत है ।
3. प्रार्थना सभा का स्थान उचित नहीं होना (जैसे धूप लगना /ठंडी हवा, बारिश में पानी टपकना	शिक्षक एवं छात्रों से प्राप्त जानकारी	तथ्य	नियंत्रण के अन्तर्गत है ।
4. अभिभावकों द्वारा बालकों को सुबह देरी से जगाना।	छात्रों से प्राप्त नकारी	तथ्य	नियंत्रण के अन्तर्गत है ।
5. अभिभावकों द्वारा बालकों को समय पर नाश्ता/ टिफीन या गणवेश उपलब्ध नहीं करना	छात्रों से प्राप्त नकारी	तथ्य	नियंत्रण के अन्तर्गत है ।
6. छात्रों द्वारा देररात तक टी. वी देखना या पढाई करना।	छात्रों से प्राप्त नकारी	तथ्य	नियंत्रण के अन्तर्गत है ।
7. छात्र अपने छोटे भाई बहिनो को लेकर आते है जो सुबह विलम्ब कर देता है।	छात्रों से प्राप्त जानकारी	तथ्य	नियंत्रण के अन्तर्गत एवं बाहर दोनों

कारणों के विश्लेषण के आधार क्रियात्मक परिकल्पनाओं का प्रतिपादन किया जायेगा । छात्रों से प्राप्त जानकारी नियंत्रण के अन्तर्गत है।

छात्रों से प्राप्त जानकारी तथ्य नियंत्रण के अन्तर्गत है ।

शिक्षक एवं छात्रों से प्राप्त जानकारी नियंत्रण के अन्तर्गत है ।

कारणों के आधार क्रियात्मक परिकल्पनाओं का प्रतिपादन किया जायेगा ।

(B) क्रियात्मक परिकल्पना का निर्माण (Formulation of Action Hypothesis) -

दो क्रियात्मक परिकल्पना का निर्माण किया गया है ।

(1) शिक्षक प्रार्थना सभा में रोचकता प्रार्थना सभा का स्थान परिवर्तन, एवं विद्याथियों एवं उनके के अभिभावक को समझायेगे ताकि छात्र समय पर विद्यालय में उपस्थित होगें ।

(2) शिक्षक प्रार्थना सभा मे विलम्ब से आने वाले विद्याथियों को आर्थिकाशारीरिक दण्ड देगा ताकि छात्र समय पर विद्यालय मे उपस्थित होगें ।

(1) क्रियात्मक पक्ष -

(1) प्रार्थना सभा मे रोचकता, प्रार्थना सभा का स्थान परिवर्तन व विद्यार्थियो एवं अभिभावकों को समझाया ।

(2) विद्याथियों का आर्थिक एवं शारीरिक दण्ड देना ।

(2) लक्ष्य पक्ष -

(1) समय पर विद्यार्थी विद्यालय मे उपस्थित होगे ।

(2) समय पर विद्यार्थी प्रार्थना में उपस्थित होगे ।

(C) प्रयोग -

क्रियाएँ (Activities)	**विधि(Teachnique)**	**स्त्रोत (Source)**	**समय (Time)**
1. प्रार्थना सभा में विलम्ब से आने वालों की सूची तैयार करना।	प्रार्थना सभा प्रभारी/ कक्षा अध्यापक से विद्यार्थियों की सूची तैयार करना ।	प्रार्थना सभा के रजिस्टर	एक सप्ताह
2. प्रार्थना सभा को रुचिकर बनाने के लिए अन्य कार्यक्रमों का पता लगाना ।	छात्रों द्वारा भी उनकी रुचि के कार्यक्रमों का पता लगाना।	रुचि जानने के लिए प्रसनवाली का उपयोग	एक सप्ताह
3. प्रार्थना सभा के लिए उचित स्थान निर्धारित करना ।	प्रधानाध्यापक की अनुमति लेना।	विद्यालय के भौतिक संसाधन	एक सप्ताह
4. शिक्षक विलम्ब से आने वाले छात्रों क अभिभावकों की सूची तैयार करेगा ।	विद्यालय की P.T.A तथा M. T. A प्रभारी द्वारा अभिभावकों से सम्पर्क करेगा|	अभिभावकों को पत्र भेजना या स्वयं जाकर मिलना अभिभावकों को पत्र भेजना या स्वयं जाकर मिलना	तीन सप्ताह

5. अभिभावकों से मिलकर उन्हे समझाओं।	प्रथना सभा में उपस्थिति की उपयोगिता बतलाना ।।	प्रार्थना सभा प्रभारी की सहायता लेना ।	दो सप्ताह
6. छात्रों को बुलाकर उनसे सम्पर्क	प्रार्थना सभा के महत्व को समझाना और अनुपस्थिति रहने की हानियाँ बताना	अन्य शिक्षक की मदद लेना ।	दो सप्ताह

अनुमानित साया 2 माह 15 दिन

इस प्रकार 2 माह 15 दिन के समय के पश्चात् जो क्रियाएँ की गई है उनका प्रभाव (Posttest)) में स्पष्ट दिखाई देता है । विद्यार्थी पहले की अपेक्षा प्रार्थना सभा मे उपस्थित होने लगते है तथा उसमें उनकी रुचि विकसित होती नजर आती हैं । अत: दूसरी परिकल्पना का कार्यक्रम बनाना जरुरी नही है ।

प्रभाव = Post Test - Prelest =परिवर्तन

मूल्याँकन (Evaluation):- क्रियात्मक परिकल्पना की पुष्टि के लिए शिक्षक प्रदत्तों का संकलन करता है तथा सरल सांख्यिकी अध्ययन मध्यमान, मध्यांक बहुलांक इत्यादि का प्रयोग करता है। शिक्षक निरीक्षण, सूची, प्रश्नावली इत्यादि का प्रयोग करता है । प्रदत्तों के विश्लेषण से निष्कर्ष निकालने का प्रयास करता है ।

अनुसन्धानकर्ता की टिप्पणी (Comments for Action Research Project):- छात्रों की प्रत्येक कार्य सम्बन्धी क्रियाओं को शोधकर्ता द्वारा लिखित विवरण तैयार किया जायेगा ।

16.8 क्रियात्मक-अनुसन्धान योजनाओं के लिए सुझाव (Suggestions फॉर Action-Research Project)

(1) प्रत्यक्ष रुप समस्या जुड़ा ।
(2) समस्या का स्वरूप वास्तविक होना चाहिए ।
(3) योजना का नियोजन इस प्रकार से करे कि विद्यालय की अन्य गतिविधियाँ प्रभावित नहीं होवे। यानि उनमे अवरोध नही होना चाहिए ।
(4) योजना का प्रत्यक्ष सम्बन्ध विद्यार्थियों के उपलब्धि स्तर, प्रगति, एवं गुणात्मक विकास से होना चाहिए ।
(5) योजना का मूल्यांकन विश्वसनीय एवं वैध उपकरणों से किया जाना चाहिए ।
(6) क्रियात्मक परिकल्पना के प्रतिपादन मे उन कारणों को ध्यान में रखना चाहिये जो कि शिक्षक (शोधकर्ता) के नियन्त्रण में हो ।
(7) योजना कि रूपरेखा मितव्ययी, समय, श्रम एवं धन की दृष्टि से होनी चाहिये ।
(8) समस्या का चयन वस्तुनिष्ठ (Objectively) तरीके से हो तथा इसका अध्ययन वैज्ञानिक (Scientifically) ढंग से होना चाहिए ।
(9) समस्या के कारण का पता वस्तुनिष्ठ तरीके से कुछ साक्षियों (Evidences) के आधार पर किया जाना चाहिये ।

16.9 क्रियात्मक अनुसन्धान की समस्याएँ अथवा क्षेत्र (Problems or Fields of Action Research)

अनुसन्धान को विद्यालय में सुधार एवं उसकी कार्य शैली मे प्रगति लाने हेतु निम्नलिखित क्षेत्रों में सार्थक रूप से प्रयोग किया जा सकता है -

(1) पुरातनकाल व वाचनालय मे सुधार सम्बन्धी समस्या ।

(2) भाषा शिक्षण मे वर्तनी या वाचन सम्बन्धी त्रुटियों की समस्या ।

(3) विविध पाठ्य सहगामी क्रियाओं मे भाग न लेने की समस्या ।

(4) अनुशासनहीनता, देरी से आना, गृहकार्य न करके लाना, स्कूल से भागना, चोरी करना, मारपीट करना, शिक्षण कार्य में रुचि न लेना इत्यादि से सम्बन्धित समस्यायें ।

(5) मानचित्र, एटलस या अन्य प्रायोगिक कार्य में रुचि न लेने से सम्बंधित समस्यायें ।

(6) शिक्षक, प्रबन्धक, प्रशासन व प्राचार्य सम्बन्धी समस्याएं ।

18.10 सारांश (Summary)

क्रियात्मक अनुसन्धान द्वारा विद्यालय की कार्य प्रणाली में सुधार एवं परिवर्तन लाया जाता है । यह शिक्षा की व्यावहारिक समस्या से जुड़ा हुआ होता है । इसके द्वारा ज्ञान के क्षेत्र में सदैव कोई नया योगदान नही दिया जाता है ।इसके अन्तर्गत शोधकर्ता समस्या क्षेत्र से जुड़ा हुआ ही व्यक्ति ही होता है। शोधकर्ता का प्रमुख उद्देश्य अपने ही क्षेत्र की समस्याओं का हल निकालना है तथा शिक्षा के क्षेत्र में सुधार एवं परिवर्तन लाना है । ये शोधकर्ता शिक्षक, प्राचार्य, प्रबन्धक एवं प्रशासक भी हो सकता है ।

स्वमूल्यांकन

1. क्रियात्मक अनुसन्धान किसे कहते है? परिभाषित कीजिये ।
   (What is Action Research Define it?
2. क्रियात्मक अनुसन्धान की क्या आवश्यकता है?
   (What is the need of Action-Research)
3. क्रियात्मक अनुसन्धान एवं मौलिक अनुसन्धान मे क्या अन्तर है?
   (What is the Difference between Basic Research and Action Research)

16.11 सन्दर्भ ग्रन्थ (References)

1. Shama: R.A.-Fundamental of Educational Research, New Agarwal of Set Pniribly Press, Meerut.
2. शर्मा: आर. ए- शैक्षिक तकनीकी
3. वर्मा, जी.एस - शिक्षण तकनीकी लॉयल बुक डिपो मेरठ
4. पाण्डे, के पी. - शिक्षण अधिगम के मूल तत्व आशा प्रकाशन निलयम, मेरठ

इकाई-17

दल की रेखाचित्रीय प्रस्तुति
(GRAPHICAL PRESENTATION OF DATA)

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

17.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

17.1 विकास (Development)

17.2 चित्रों की उपयोगिता (Utility of Diagram).

17.3 अच्छे चित्रों की विशेषतायें (Characteristics of good diagram)

17.4 चित्रों के प्रकार (Types of Diagram)

17.5 रेखीय चित्र की रचना (Construction of Diagram)

17.6 स्तम्भाकृति (Histogram)

17.7 वार बहुलक का परिकलन (Calculation of Mode)

17.8 आवृत्ति बहुभुज (Frequency Polygon)

17.9 ओजाइब वक्र (Ogive Curve)

17.10 रेखाचित्र की सीमायें (Limitation of Line diagram)

17.11 संदर्भ ग्रन्थ (References)

17.0 उद्देश्य एवं लक्ष्य (Aims and Objectives)-

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप

(1) रेखाचित्रों की परिभाषायें, पारस्परिक अन्तर, उपयोगिताओं और सीमाओं को स्पष्ट कर सकेंगे ।

(2) दिये गये दल के लिए स्तम्भाकृति, आवृति बहुभुज ओजाइव चित्रित कर सकेंगें ।

(3) स्तम्भाकृति की सहायता से बहुलक ज्ञान कर सकेंगे ।

17.1 विकास (Development)-

एक चीनी कहावत है कि एक चित्र सहस्त्र शब्दों के बराबर होता है । संख्यायें अधिकांश व्यक्तियों के लिए नीरस होती है । जनसाधारण को अंकों में अधिक रूचि नहीं होती है । यदि हम अपनी बात को संख्याओं में प्रस्तुत करने के बजाय किसी अन्य सरल माध्यम से जनसाधारण तक पहुँचा पाते है तो हमारी बात आम आदमी के लिए सरल, समझने तथा याद करने लायक हो जाती है । प्रो. किंग, के अनुसार 'संख्याओं के अपने सबसे अच्छे रूप से भी तुलना करने के उद्देश्य से मस्तिष्क के लिए समझना और देर तक याद रखना सरल बात नहीं है । अत: समंकों को जनसाधारण की दृष्टि से समझने योग्य बनाने के लिए उन्हें रेखाचित्रों में प्रदर्शित किया जाता है ।

कॉडिंग (Coding)

दैनिक जीवन में टेलीग्राम से किसी को सूचना देनी होती है तो उसमें समाचार रूपान्तर संकेतों में किया जाता है । उदाहरण के तौर पर दुःखद या सुखद समाचार को टेलीग्राम के द्वारा भेजने के द्वारा कुछ कोड नम्बर होते हैं । जो कि टेलीफोन डॉयरेक्ट्री में दिये रहते हैं । उस सूचना के लिए जो कोड भरा जाता है इस क्रिया को Coding कहते हैं और जब टेलीग्राम को जो प्राप्त करता है उसे इस कॉड को भाषा में रूपान्तरित करता है जैसे बधाई पत्र है या शोक समाचार है जिसे हम decoding कहते है। शैक्षिक क्षेत्र में जब प्रमापीकरण उपकरण से हम किसी गुण (trait)) की मात्रा विषयी (Subject) में अध्ययन करना चाहते हैं उनके प्रश्नों के उत्तर भाषा चित्र में प्राप्त होते हैं उनके प्रति उत्तर अंकों में रूपान्तरित करने के लिए सदैव फलांकन कुंजी (Scoring key) का प्रयोग करते हैं ।

जैसे - रात का विलोम (दिन, दोपहर, सुबह, शाम) है । सही उत्तर के लिए (1) अंक तथा गतल उत्तर (0) अंक दिया जाता है । यानि प्रतिउत्तर की कोडिंग की जा रही है ।

इसी प्रकार शैक्षिक अनुसन्धानों में जो प्रमापीकरण परीक्षण इस्तेमाल करते हैं उनके उत्तरों को कॉडस में परिवर्तित किया जाता है लेकिन अप्रमापीकरण परीक्षण लघुत्तरात्मक एवं निबंधात्मक प्रश्नों के अंकन में अस्पष्टता होती है । इसी कारण से वस्तुनिष्ठता की कमी रहती है। सांख्यिकी का सही उपयोग करने के लिए कॉडिंग की आवश्यकता है । इसी प्रकार जब प्राप्तांक हमारे पास आते है तो अनुत्तीर्ण, उत्तीर्ण, प्रथम श्रेणी, द्वितीय श्रेणी में रूपान्तरण करने के लिए अंकों का सही वर्गीकरण चाहिए तभी आकड़े वर्गो में बदले जा 'सकते हैं तथा उनका आलेखीय निरूपण किया जा सकता है ।

17.2 चित्रों की उपयोगिता (Utility of Diagram)

- चित्र समंको को सरल व बोधगम्य बनाते है । उदाहरण के लिए भारतवर्ष की पिछले पाँच दशकों की जनसंख्या को लें । यदि इनको केवल संख्याओं के रूप में प्रस्तुत करें तो यह एक सूचना मात्र होगी इनमें समस्या की गहनता का आभास नहीं होता है । लेकिन जब इन संख्याओं को चित्रों के रूप में प्रस्तुत किया जाए तो चित्रों का बढ़ता हुआ आकार निश्चित रूप से समस्या की गम्भीरता की ओर दर्शकों का ध्यान आकर्षिक करते है ।
- चित्र समंको की नीरसता को समाप्त कर उनको आकर्षक एवम् रोचक बनाते है ।
- चित्र तुलनात्मक अध्ययन को सरल, सुन्दर एवम् सुरूचिपूर्ण बनाते हैं ।
- चित्रों को समझने के लिए विशेष तकनीकी ज्ञान की आवश्यकता नहीं होती ।
- चित्र प्रचार एवं विज्ञापन के सफल साधन है ।
- इस विधि से समय व श्रम की बचत होती है ।
- समंको के निष्कर्ष केवल चित्रों के देखने मात्र से ही निकाले जा सकते है इसमें जटिल परिकलन क्रिया से बचा जा सकता है ।

17.3 अच्छे चित्रों की विशेषताएँ एवं चित्र बनाने के नियम (Characteristics of a good Diagram and Rules of making Diagram)

आकर्षक :-

चित्र देखनें में आकर्षक होने चाहिए जो आम आदमी का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर लें । इसके लिए चित्र बनाने में आकर्षक रंगों का प्रयोग करना चाहिए ।

शुद्धता -

चित्र सदैव ज्यामितीय उपकरणों की सहायता से ही बनाऐं जाने चाहिए जिससे उनमें पूर्ण शुद्धता बनी रहे । मुक्त हस्त चित्र कभी नहीं बनाने चाहिए ।

शीर्षक -

प्रत्येक रेखा चित्र का उचित शीर्षक होना चाहिए । यह शीर्षक अधिक लम्बा नहीं होना चाहिए तथा वह चित्र के नीचे लिखा जाना चाहिए । शीर्षक अपने आप में स्पष्ट होना चाहिए ।

आकार :-

चित्र का आकार उपलब्ध कागज के अनुसार होना चाहिए । वह न तो अधिक बड़ा हो और न ही अधिक छोटा होना चाहिए चित्र की लम्बाई और चौड़ाई में भी उचित अनुपात होना चाहिए, जिससे कि चित्र भद्दा नहीं लगें ।

कागज :-

जहां तक सम्भव हो रेखा चित्र के लिए ग्राफ-पेपर का प्रयोग करना चाहिए ।

पैमाना :-

प्रत्येक रेखा चित्र का एक पैमाना होना चाहिए जो कि रेखा चित्र के ऊपर अथवा दाई तरफ लिखा होना चाहिए पैमाना निश्चित करते समय उपलब्ध कागज तथा उस पर अंकित करने वालीसूचना दोनों को ध्यान रखा चाहिए ।

पैमाना सरल लिया जाना चाहिए जैसे पांच या दस के गुणक के रूप में । पैमाना ऐसा होना चाहिए कि उपलव्य कागज पर बना चित्र न तो बहुत बड़ा बन जाए और न बहुत छोटा रह जाए।

संकेत :-

चित्र में जिन विभिन्न प्रकार की रेखाओं, चिन्हों अथवा रंगों का प्रयोग जिन-जिन तथ्यों को प्रदर्शित करने के लिए किया गया है उनका परिचय चित्र के एक कोने में कर देना चाहिए ।

उपयुक्त चित्र का चुनाव :-

चित्र का चुनाव समंकों की प्रकृति, उद्देश्य, समंकों का विस्तार आदि बातों को ध्यान में रख कर किया जाना चाहिए क्योंकि एक प्रकार के चित्र सभी प्रकार के समंकों के

प्रदर्शन के लिए उपयुक्त नही हो सकते । वैसे चित्र का चुनाव बनाने वाले के विवेक, अभ्यास तथा अनुभव पर निर्भर करता है ।

मितव्ययता :-

यह ध्यान रखना चाहिए कि चित्र बनाते समय उपलब्ध समय, धन व अन्य साधनों का दुरूपयोग नहीं होना चाहिए ।

टिप्पणियाँ (Footnotes) :-

जिन समंकों से चित्र बनाए जा रहे है यदि उनके बनने में कुछ स्पष्टीकरण आवश्यक है तो उसे टिप्पणियों के रूप में चित्र के नीचे दिया जाना चाहिए ।

17.4 चित्रों के प्रकार (Types of Diagrams)

सांख्यिकीय चित्र कई प्रकार के होते है । आपके अध्ययन की दृष्टि से निम्न चित्र महत्वपूर्ण है:-

(i) स्तंभाकृति (Histogram)

(ii) आवृत्ति बहुभुज (Frequency Polygoan)

(iii) संचयी प्रतिशत वक्र (Olive)

उपरोक्त वर्णित सभी चित्र बिन्दु रेखीय चित्र है । जिनकी रचना ग्राफ पेपर पर ही करनी चाहिए ।

17.5 रेखीय चित्र की रखना (Constructions of Diagram)-

इसके लिए ग्राफ-पेपर पर दो रेखाएं खींची जाती है । जो एक दूसरे को समकोण पर काटती हैं । इस मिलान बिन्दु को मूल बिन्दु (0) कहते है । मूल बिन्दु से दाहिनी तरफ वाली क्षैतिज रेखा को भुजाक्ष या x- अक्ष कहते है । जिसको (OX) द्वारा प्रदर्शित करते हैं । तथा मूल बिन्दु से ऊपर वाली उदग्र रेखा को कोटि अक्ष या Y- अक्ष कहते है जिसे (OY) द्वारा प्रदर्शित किया जाता है । समंक श्रेणी के स्वतंत्र चर मूल्य भुजाक्ष पर और आश्रित चर मूल्य कोटि अक्ष पर दिखाए जाते हैं ।

बिन्दु रेखीय चित्र की रचना के लिए काम में लिए जाने वाले ग्राफ-पेपर का प्रारूप निम्न प्रकार होता है।

उपरोक्त चित्र में विभिन्न बिन्दुओं की स्थिति निम्न प्रकार है:

बिन्दु	X- अक्ष	Y- अक्ष
A	+2	+3
B	+3	+2
C	-2	-3
D	+3	-2

इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि रेखा चित्र में X प्र और Y का घनात्मक मूल्य मूल बिन्दु के ऊपर तथा दाहिने चरण अर्थात Quardrant i में अंकित किया जाता है। X के ऋणात्मक व Y के घनात्मक मूल्यों तथा x व Y के ऋणात्मक मूल्यों एवम् x के घनात्मक व x में मूल्यों को क्रमश: Quardrant ii,iii एवम् iv में अंकित किया जाता है । सामान्यत: समंक श्रेणी धनात्मक होती है इसलिए रेखा चित्र बनाने में प्राय Quardrant i का ही प्रयोग होता है । इसलिए रेखा चित्रों में मूलबिन्दु नीचे की तरफ बांई ओर कोने में ही रखा जाता है

17.6 स्तम्भाकृति अथवा आवृति आयत चित्र (Histogram)

सतत् श्रेणी में आवृत्ति वितरण को चित्रित करने का स्तम्भाकृति भी एक तरीका है । इसमें आवृत्तियों को स्तम्भों के द्वारा प्रदर्शित किया जाता है । प्रत्येक स्तम्भ अथवा दण्ड विभिन्न वर्गान्तरों की कुल आवृत्तियों को दर्शाता है इसमें आवृत्तियों को आयत के रूप में अंकित किया जाता है । इसमें आयत का चौड़ा वर्ग अन्तराल को बताता है तथा आयत की लम्बाई उस वर्ग की आवृत्ति को प्रदर्शित करती है ।

स्तम्भाकृति निर्माण की प्रक्रिया

- समंक श्रंखला यदि समावेशी (inclusive) है तो उसे अपवर्जी (exclusive) मे परिवर्तित कीजिए ।
- रेखा चित्र के x - अक्ष पर वर्गान्तरों को तथा Y - अक्ष पर आवृत्तियों को प्रदर्शित कीजिए ।
- पैमाने का निर्धारण।
- ग्राफ-पेपर पर x- अक्ष पर वर्गान्तरों की निम्नतम सीमा से अधिकतम सीमा तक तथा Y - अक्षर पर शून्य से कुल आवृति तक चिन्हित करना ।
- ग्राफ पेपर पर विभिन्न आयतों का निर्माण ।

ध्यान रहे कि सभी वर्गान्तरों के आयत एक दूसरे से सटे होते हैं ।

उदाहरण :

निम्न लिखित वितरण के लिए एक आवृत्ति आयत चित्र बनाइए :

Age Group	14-17	17-18	18-20	20-22	22-26	26-30
No-of Student	50	100	170	60	60	30

17.7 बहुलक का परिकलन (Calculation of Mode)

आवृत्ति आयत चित्र द्वारा बहुलक (z) का परिकलन बहुत आसान है। जैसा कि हम पढ़ चुके हैं कि सर्वाधिक आवृत्तियां वाला वर्ग बहुलक वर्ग कहलाता है। इसलिए बहुलक के परिकलन के लिए सर्वाधिक आवृति वाले आयत में दो तिरछी रेखाऐं एक को सर्वाधिक आवृत्ति वाले आयत से बाई तरफ वाले आयत के मिलान बिन्दु से तथा दूसरी दायीं तरफ वाले आयत के मिलान बिन्दु से खींची जाती है । इन दोनों रेखाओं की कटान बिन्दु से x - अक्ष पर एक लम्ब खींचा जाता है। Y - अक्ष पर जहाँ यह लम्ब काटता है वहं मूल्य बहुलक मूल्य होता है ।

17.8 आवृत्ति बहु भुज (Frequency Polygon) -

- आवृति आयत चित्र बनाने की सम्पूर्ण प्रक्रिया ।
- आवृत्ति आयत चित्र बनाने के बाद चित्र के प्रत्येक आयत के शिरे के मध्य में बिन्दु अंकित किया जाता है ।
- अंकित बिन्दुओं को पैमाने की सहायता से सीधी लकीरों द्वारा क्रमानुसार मिला दिया जाता है । फिर इस वक्र के दोनों छोरों को भुजाक्ष अर्थात् x - अक्ष के दोनों किनारों से मिला देते है । इस तरह आवृत्ति आयत चित्र से आवृत्ति बहुभुज तैयार हो जाता है ।

उदाहरण :

पिछले उदाहरण के समंकों के आधार पर आवृत्ति बहुभुज की रचना कीजिए ।

हल :

जैसा कि आवृति बहुभुज वाले रेखा चित्र से स्पष्ट है कि यह बहुभुज प्राय टेढ़ा-मेंढ़ा होता है इसलिए समंक श्रेणी के स्वरूप के बारे में दूसरा कोई निश्चित निष्कर्ष निकालना बहुत कठिन होता है । इसलिए इस बहुभुज को सरलित रूप में प्रस्तुत करना चाहिए जिससे कि वह एक वक्र बन जाए । तथा यह आवृति बहुभुज की बजाए आवृत्ति वक्र बन जाता हैं।

आवृति बहुभुज को सरसित (smoothed) आवृत्ति बहुभुज जिससे आवृत्ति वक्र भी कहते हैं कि निर्माण प्रक्रिया निम्न प्रकार है:

1. आवृत्ति आयत चित्र बनाइए ।
2. प्रत्येक आवृति आयत के सिरे पर मध्य बिन्दु अंकित कीजिए ।
3. मध्य बिन्दुओं को क्रमश: पैमाने से सीधी रेखा में मिलाने के स्थान पर मुक्त हस्त रीति से बहुभुज के विभिन्न बिन्दुओं से होकर इस तरह एक वक्र बनाइए कि उन बिन्दुओं पर बनने वाले कोण समान हो जाये । वक्र के दोनों सिरे 8- अक्ष में मिला दीजिए इस तरह से आवृत्ति बहुभुज के स्थान पर आवृत्ति वक्र बन जाएगा जिससे सम्बन्धित समंक श्रेणी में विषमता की सीमा ज्ञात की जा सकती है ।

आवृत्ति आयत, आवृत्ति बहुभुज व आवृत्ति वक्र का प्रारूप नीचे दिया जा रहा है :-

Specimen of Histogram Frquency Polygon and Frequency Curve

17.9 ओजाइव वक्र (Ogive Curve)

सतत् समंक माला की आवृत्तियों को संचयी बनाकर यदि उन संचयी आवृत्तियाँ को ग्राफ-पेपर पर अंकित किया जाए तो रेखाचित्र पर जो वक्र बनेगा उसे संचयी आवृत्ति वक्र अथवा ओजाइव वक्र कहते है । निर्माण प्रक्रिया निम्न प्रकार है -

- समंक श्रेणी के वर्ग को समावेशी (inclusive) श्रेणी में परिवर्तित कीजिए ।
- वर्ग वाले कालम को से कम (Less than) अथवा से अधिक (More than) जैसी भी आवश्यकता हो के अनुसार बदलिए । से कम की दशा में वर्ग के कालम में प्रत्येक वर्ग की उपरी सीमा (upper limit) लिखनी होगी तथा से अधिक की दशा कालम में प्रत्येक वर्ग की अधर सीमा (lower limit) लिखनी होगी ।
- आवृत्तियों को जोड़ कर विभिन्न संचयी आवृत्तियाँ ज्ञात करिए ।
- ग्राफ-पेपर पर संचयी आवृत्ति को अंकित कीजिए ।

अभ्यासर्थ प्रश्न

1. निम्न समंको से आवृत्ति चित्र, आवृत्ति बहुभुज तथा आवृत्ति वक्र की रचना कीजिए :

वर्गाकार	आवृत्ति
45-49	2
40-44	3
35-39	3
30-34	9

25-29	12
20-24	7
15-19	3
10-14	1

2. निम्न तालिका में दिए समंकों का संचयी आवृत्ति वक्र की रचना कीजिए :

Waces(Rs)	No. of Workers
0-10	9
10-20	17
20-30	30
30-40	44
40-50	31
50-60	19
60-70	10

17.10 रेखाचित्र की सीमाएँ (Limitation of a diagram)

1. चित्र बनाने के लिए सावधानी व अनुभव को आवश्यकता ।
2. उपयुक्त चित्र के चुनाव में कठिनाई ।
3. चित्रों के निर्माण में अधिक समय व अधिक धन की आवश्यकता होती है ।
4. जहाँ अधिक परिशुद्धता की आवश्यकता होती है वहाँ पर चित्र सहायक नही होते हैं ।
5. चित्र केवल तुलनात्मक अध्ययन के लिए ठीक रहते है ।
6. जहाँ पर तथ्य तुलनीय नहीं होते वहाँ पर चित्रों का दुरूपयोग भी हो सकता है ।
7. भविष्य में चित्रों का विश्लेषण सम्भव नहीं होता ।

तालिका में परिकलित किए गए समंकों के आधार पर निम्न संचयी आवृत्ति चित्र बनेगा ।

उदाहरण :

निम्न समंको के आधार पर से कम' (Less than) तथा से अधिक' (More than) संचयी आवृत्ति वक्र बनाइए:

Variable	10-15	15-20	20-25	25-30	30-35	35-40	40-45
Frequency	5	8	15	20	16	10	6

हल:

Variable Group	**F**	**For Less than ogive**		**For More than ogive**	
		Variable Less than	**C.f.**	**Variable More than**	**C.f.**
10-15	5	15	5	10	80
15-20	8	20	13	15	75
20-25	15	25	28	20	67
25-30	20	30	48	25	52
30-35	16	35	64	30	32
35-40	10	40	74	35	16
40-45	6	45	80	40	6

17.11 संदर्भ गन्थ (Reference)

1. Agarwal,B L-Basic Statistics
2. त्रिपाठी, रघुवंश - अप्रालिक सांख्यिकी
3. कपिल, एच. के. - सांख्यिकी के मूल तत्व

इकाई-18

केन्द्रीय प्रवृत्तियों का मापन

(MEASURE OF CENTRAL TENDENCY)

इकाई की संरचना (Structure)

18.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

18.1 प्रस्तावना (Introduction)

18.2 केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापन की गणना (Calculation of measures of Central Tendency)

18.2.1 मध्यमान (Mean

18.2.2 मध्याँक (Median)

18.2.3 बहु लांक (Mode)

18.3 स्वमूल्यांकन (Self-Assessment)

18.4 संदर्भ ग्रन्थ (References)

18.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives):

- केन्द्रीय प्रवृत्ति माप का अर्थ तथा प्रकार की विवेचना करना ।
- मध्यमान का अर्थ तथा परिभाषायें स्पष्ट करना तथा अव्यवस्थित तथा व्यवस्थित प्रदत्तों से मध्यमान ज्ञात करना ।
- मध्यमान की संक्षिप्त विधि स्पष्ट करना और इसकी गणना करना ।
- मध्यमान की विशेषतायें तथा दोषों का उल्लेख करना ।
- मध्यांक के अर्थ तथा परिभाषायें स्पष्ट करना तथा खण्डित श्रेणी एवं अव्यवस्थित प्रदत्तों से मध्यांक ज्ञान करना ।
- रेखाचित्र द्वारा मध्यांक की गणना करना ।
- बहु लांक का अर्थ तथा परिभाषायें स्पष्ट करना । अव्यवस्थित तथा व्यवस्थित प्रदत्तों से बहु लांक ज्ञात करना ।
- बहु लांक निरीक्षण विधि, व्यक्तिगत श्रेणी का परिवर्तन तथा समूहन विधि को उदाहरणों से स्पष्ट करना ।
- बहु लांक के गुण तथा दोषों का उल्लेख करना ।

18.1 प्रस्तावना (Introduction):

अनुसंधान विकास, विस्तार तथा सिद्धान्तों के शुद्धीकरण के लिये उच्चतम कोटि का कार्य है जिसमें आकड़ों का एकत्र करना, उनका वर्गीकरण एवं सारणीयन करना तथा उसका प्रयोगात्मक स्वरूप ही महत्वपूर्ण होता है । इसके लिए यह भी जरूरी है कि इस कार्य को करने के बाद उसकी केन्द्रीय प्रवृत्तियों (Central Tendencies) अथवा केन्द्रीय स्थिति की गणना

करें । इस केन्द्रीय प्रवृत्तियों के मापन का दो स्पष्ट उपयोग है । पहला, यह एक औसत है जो उस समूह के सभी आकड़ों (प्राप्तांकों) का प्रतिनिधित्व करता है तथा दूसरा यह दो या दो से अधिक समूहों की विशिष्ट निष्पत्तियों की तुलना सम्भव बनाती है । इस प्रकार शिक्षा विज्ञान तथा अन्य शोध क्षेत्रों मे जहां विशाल संख्याओं का प्रयोग होता है केन्द्रीय प्रवृत्ति के मान को अधिक महत्व दिया जाता है । डी बाउले ने तो सांख्यिकी को ही 'मापों का विज्ञान'' कहा है । सांख्यिकी मान एक सरल संख्या होती है जो किसी समूह का प्रतिनिधित्व करती है केन्द्रीय प्रवृत्ति में तीन प्रकार के औसत या मान सामान्यतया प्रस्तुत किये जाते है ।

(i) मध्यमान (Mean)

(ii) मध्यांक (Median)

(iii) बहु लांक (Mode)

उपरोक्त केन्द्रीय प्रवृत्ति के मानों का उपयोग निम्न उद्देश्यों से किया जाता है :-

- इसके द्वारा विशाल आँकड़ो के समूह को छोटे रूप में प्रदर्शित किया जा सकता है ।
- अनुसंधान या लघु शोध कार्य में सभी अंकों का प्रयोग सम्भव नहीं है, इनका अध्ययन केन्द्रीय मान से ही सम्भव है ।
- इसके द्वारा विश्लेषण एवं शोध कार्य का विवेचन संभव है, क्योंकि आकड़े स्वयं में कुछ स्पष्ट नही कर सकते ।
- केन्द्रीय माप से ही दो या दो से अधिक समूहों का तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है । इस सन्दर्भ में किंग महोदय का कथन सही मालूम होता है कि ' समंक बहु उपयोगी नौकर है परन्तु केवल उन व्यक्तियों के लिये जो उनका उचित उपयोग जानते है।

18.2 केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापन की गणना (Calculation of Measures of Central Tendency)

केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापों में सबसे अधिक उपयोग मध्यमान का किया जाता है । इसका अर्थ स्पष्ट करते हुए क्लार्क और शकांडे (Clerk and Schkade) ने लिखा है 'माध्य सम्पूर्ण संस्थाओं का विवरण प्रस्तुत करने के लिये एक मात्र संख्या प्राप्त करने का प्रयास है (Average is an attempt to find one single figure to describe whole group of figures) दूसरे शब्दों में माध्य एक ऐसा सरल व संक्षिप्त मूल्य है जिसका प्रयोग श्रेणी के सभी मूल्यों का प्रतिनिधित्व करने के लिये किया जाता है ।

स्पर, केलांग एवं स्मिथ (Spurr,Kellog and Smith) के अनुसार 'माध्य को कभी-कभी केन्द्रीय प्रवृत्ति का माप इसलिए कहा जाता है क्योंकि व्यक्तिगत चर-मूल्य अधिकतर उसके चारों और जमा होते है । (An average is sometimes called a measure of Central tendency because individual values of the variable usually cluster around it)

मध्यमान को एक अन्य तरीके से परिभाषित किया जाता हैं यह वह मूल्य है जो उस श्रेणी के सभी अंकों के मूल्यों के योग को उसकी संख्या से भाग देने पर प्राप्त होता है । बैस्ट

(Best) एवं विलियम आई ग्रीनवाल्ड (William I. Greenwald), महोदयों ने इसी संदर्भ में मध्यमान की व्याख्या की है । विलियम आई ग्रीनवाल्ड के अनुसार किसी समूह का मध्यमान उस समूह के पदों के मूल्यों के योग को उसके पदों की संख्या से विभाजित करके प्राप्त किया जाता है। मध्यमान दो प्रकार से अर्थात् अव्यवस्थित प्रदत्तों से तथा व्यवस्थित प्रदत्तों से ज्ञात किया जा सकता है ।

(अ) अव्यवस्थित प्रदत्तों से मध्यमान ज्ञान करना - यह एक सरल विधि है जिसमें समूह के सभी अंकों का योग कर इसमें समूह संख्या का भाग देना है । भाग देने पर जो मूल्य आता है, उसे ही मध्यमान कहते है । यदि $x_1, x_2, x_3, x_4 .....x_n$ किसी समूह के N पद संख्या है तो उसका, मध्यमान निम्न सूत्र से ज्ञान किया जा सकता है ।

$$M = \frac{\sum x}{N}$$

यहां M मध्यमान

$\sum x$ मापों का योग है अर्थात $x_1 + x_2 + x_3 + x_4 + ...x_n$

उदाहरण : यदि 5 बच्चों के पास रूपयों की संख्या 5,7,8.9,11

$$M = \frac{5+7+8+9+11}{5} = \frac{40}{5} = 8$$

यदि आवृत्ति वितरण में 18। की आवृत्ति है तो मध्यमान निम्नलिखित सूत्र से ज्ञात करेंगे:- $M = \frac{\sum fx}{\sum f} = \frac{\sum fx}{N} =$

यहां $\sum fx =$ कुल पदमानों और आवृत्तियों के गुणनफलों का योग

एक उदाहरण से यह मध्यमान गणना का सूत्र स्पष्ट किया जा सकता है ।

मध्यमान $\frac{\sum fx}{N} = \frac{109}{16} = 6.81$

प्रदत (x)	आवृत्तियां (f)	प्रदत क्x आवृत्तियां (f x X)
4	3	12
5	6	30
7	4	28
11	1	11
14	2	28
	N=16	$\sum fx = 109$

(ब) व्यबस्थित पदों का मध्यमान ज्ञात करना (Calculation of the mean from date grouped into a frequency distribution - इस विधि के लिये यह आवश्यक है कि पद वर्ग-अन्तराल में व्यवस्थित हों । यदि पर व्यवस्थित है तो उन्हें वर्ग-अन्तरालों में व्यवस्थित करना जरूरी है । यहौ निम्न सूत्र से मध्यमान की गणना की जाती है -

मध्यमान $\frac{\sum fx}{N}$

यहां f = आवृति तथा प्र वर्गान्तर में मध्य बिन्दु हैं ।

उदाहरण - निम्नलिखित आवृति वितरण का मध्यमान ज्ञात कीजिये -

वर्गान्तर - 0-4, 5-9, 10-14, 15-19, 20-24, 25-29

आवृति - 2, 5, 8, 10, 12, 13

हल :

वर्गान्तर	**आवर्ति**	**मध्य या मध्य बिन्दु (x)**	**मध्य आवर्ति (f x X)**
25-29	13	27	351
20-24	12	22	264
15-19	10	17	170
10-14	8	12	96
5-9	5	7	35
0-4	2	2	4
	N=50		$\sum fx = 920$

$$M = \frac{\sum fx}{N}$$

$$= \frac{920}{50}$$

= 18.4

विधि-

(1) श्रेणी के प्रत्येक वर्ग का मध्यबिन्दु (mid-point) ज्ञात करने के लिए उसकी उच्च सीमा तथा निम्न सीमा को जोड़कर दो का भाग देंगे । इस उदाहरण में 25-29 श्रेणी की उच्च व निम्न सीमा $\left(\frac{29+25}{2}\right)$ को जोड़कर दो का भाग देने से 27 आता है ।

(2) प्रत्येक श्रेणी के मध्य बिन्दु का गुणा संबंधित आवृत्ति से कीजिये ।

(3) (3) इस प्रकार मध्य बिन्दु तथा आवृत्तियों को गुणनफल का योग कहलायेगा जो इस उदाहरण $\sum fx$ में 920 आया है ।

(4) गुणनफल के योग $\sum fx$ यानि 920 को आवृत्तियों के योग (N) यानि 50 से विभाजित कीजिये । इस प्रकार प्राप्त उत्तर मध्यमान होगा ।

मध्यमान ज्ञान करने की संक्षिप्त (Calculation of Mean by short method) - इस विधि को कल्पित मध्यमान विधि अथवा लघु विधि भी कहते हैं । जो बड़े समंको का मध्यमान उपरोक्त विधि से गणना करने पर कठिनाई आती है तब हम इस विधि का प्रयोग करते हैं । इस विधि में कल्पित मध्यमान मानकर प्रदत्तों का मध्यमान गणना करना सरल हो जाता है । इसमें निम्न सूत्र का प्रयोग किया जाता है ।

$$M = AM + \frac{\sum fd}{N} x1$$

यहां AM = कल्पित माध्य

$\sum fd$ आवृत्ति एवं विचलन के गुणनफल का योग

N = कुल आवृत्ति

i = वर्ग अन्तराल

उदाहरण - निम्नलिखित आवृति वितरण के मध्यमान लघुविधि द्वारा ज्ञान किजिये -

प्राप्तांक	0-9	10-19	20-29	30-39	40-49	50-59	60-69	70-79	80-89	90-99	100-109
आवृति	6,	8,	10,	15,	25,	30,	21,	19,	14,	9,	5

वर्गान्तर	**आवर्ति (f)**	**कल्पित मध्यमान से बिचलन (d) AM = 54.5**	**आवर्ति तथा विचलन का गुणनफल (fd)**	
100-109	5	5	25	
90-99	9	4	36	
80-89	14	3	42	
70-79	19	2	38	+162
60-69	21	1	21	
50-59	30	0	0	
40-49	25	-1	-25	
30-39	15	-2	-30	
20-29	10	-3	-30	
10-19	8	-4	-32	
0-9	6	-5	-30	
	N=162		$\sum fd = (.162 - 147)$ $=15$	

विधि -

(1) इस उदाहरण मे सर्वाधिक आवृत्तियां (f) 50-59 के वर्गान्तर में हैं । अत: यही वितरण का केन्द्र भी हो सकता है । अत: कल्पित मध्यमान (AM) इस अन्तराल यानि (50-59) का मध्य बिन्दु $\left(\frac{50+59}{2}\right)$ 54.5 होगा ।

(2) कल्पित मध्यमान के लिये (50-59) वर्गान्तर को इसलिये चुना क्योंकि यह मध्य में है तथा उसकी आवृत्ति अधिक यानि 30 है ।

(3) विचलन निकालने के लिये उच्च वर्गान्तर के मध्य-बिन्दु में से कल्पित मध्यमान घटाकर आया उसमें वर्गान्तर के मान का भाग दिया गया । यहां प्रत्येक वर्ग अन्तराल में 10 अंक है, अत: वर्गान्तर का मान 10 है । उदाहरण के लिय 6०-69 वर्ग अन्तराल का

विचलन ज्ञान करने के लिये उसका मध्य बिन्दु 64.5 आया। 64.5 में से कल्पित मध्यमान 54.5 घटाने पर 10 प्राप्त हुआ। इसमें वर्गान्तर के मान 10 का भाग देने पर विचलन का मान $10 \div 10 = 1$ प्राप्त हुआ । इसी प्रकार अन्य विचलन ज्ञात करें ।

(4) आवृत्ति तथा विचलन का गुणनफल ज्ञात करें और प्रत्येक गुणनफल को जोड़ने $\sum fd$ प्राप्त करें । अन्त में सूत्र द्वारा मध्यमान की गणना करें ।

मध्यमान की विशेषतायें और दोष -

(1) मध्यमान में प्रत्येक इकाई को महत्त्व दिया जाता है । अत: इसमें सबसे अधिक स्थिरता रहती

(2) यदि समूह में वितरण बहुत अधिक नही है तब मध्यमान की गणना करना ही सर्वाधिक उपयोगी रहेगा ।

(3) मध्यमान पर प्रतिदर्श के चुनाव का प्रभाव बहुत कम पड़ता है, चाहे यह प्रतिदर्श यादृच्छिक रूप से क्यों ने चुना गया हो ।

(4) सांख्यिकी के सिद्धान्त की दृष्टि से मध्यमान ही ज्यादा उपयोग सिद्ध हुआ है ।

दोष -

(1) इसमें दोष यह है कि यह बहुत अधिक या बहुत कम मानों से प्रभावित हो जाता है । उदाहरण के लिये एक समूह में सभी प्रयोग गरीब है और एक या दो करोड़पति है । यदि इनका मध्यमान ज्ञान करें तो पर्याप्त अन्तर आयेगा ।

(2) मध्यमान का मूल्य केवल अवलोकन से ज्ञात नहीं कर सकते ।

(3) मध्यमान से कभी-कभी गलत निष्कर्ष भी प्राप्त हो जाते है । उदाहरण के लिए दो उद्योगों की आय की प्रगति को निम्न तालिका में दर्शाया गया है -

बर्षा	सूती वस्त्र उद्योग	रेशम वस्त्र उद्योग
1992	35%	65%
1993	45%	45%
1994	55%	25%

उपरोक्त दोनों उद्योगों का यदि तीन वर्ष का औसत (माध्य.) निकालते हैं तो दोनों की समान प्रगति नजर आती है लेकिन वास्तविकता में सूती वस्त्र उद्योग प्रगति कर रहा है । जबकि रेशम वस्त्र उद्योग के स्तर में कमी आ रही है ।

(4) इसका एक दोष यह भी है कि मध्यमान वास्तविक इकाई में प्रदर्शित किया जा रहा है अथवा नहीं, यह निश्चित नहीं है । उदाहरण: यदि किसी समूह के व्यक्तियों की औसत आयु बीस वर्ष है तो यहां यह आवश्यक नहीं है कि उस समूह में बीस वर्ष वाला व्यक्ति हैं या नही ।

18.2.2 मध्यांक (Median)

जब अव्यवस्थित प्राप्तांक मापन आकार के अनुसार व्यवस्थित करते है, तब उस शृंखला का मध्य बिन्दु ही मध्यांक होता है । इससे मध्यांक 'का शाब्दिक अर्थ स्पष्ट होता है

यानि मध्य का अंक। कॉर्न के अनुसार 'मध्यांक समंक श्रेणी का वह चल मूल्य है जो समूहों को दो बराबर भागों में इस प्रकार बांटता है कि एक भाग में सारे मूल्य मध्यांक से अधिक और दूसरे भाग में सारे मूल्य मध्यांक से अधिक और दूसरे भाग में सारे मूल्य उससे कम होते है । (The median is that value of the variable which divides the group all values greater, and the other all values less than the median). उदाहरणत: 7 विद्यार्थियों के प्राप्तांक 11,18.22.29,35, 41 तथा 48 है तो मध्यांक 29 हुआ क्योंकि वह चौथे पद का मूल्य है जो समंक श्रेणी के मध्य में स्थित है और पहले, दूसरे तथा तीसरे विद्यार्थी के अंक इससे अधिक है । इसी प्रकार यूल और केन्डाल (Youl and Kendell) महोदय ने भी मध्यांक को परिभाषित किया है। उनके अनुसार आरोही या अवरोही क्रमों में पदों को रखने पर मध्य पद का मूल्य भी मध्यांक कहलाता है ।

उपरोक्त परिभाषाओं का संक्षिप्त अर्थ यह निकला कि मध्यांक किसी समूह में मध्य के पद का मूल्य है । दूसरे शब्दों में यह वह पद है, ऊपर या नीचे पदों की संख्या बराबर होती है अर्थात् ऊपर तथा नीचे आधे-आधे प्राप्तांक पाये है ।

(In a distribution, median is that middle point when 50% scores and found on above and 50% scores are found on below)

(अ) मध्यांक की गणना (Calculation of medium) -

अवर्गीकृत अंकों से मध्यांक की गणना करते समय सर्वप्रथम अनुविन्यास (Arrangement) जरूरी है । पद किसी मापनीय गुण के आधार पर आरोही (ascending) या अवरोही (descending) क्रमानुसार अनुविन्यसित किये जाते है ।

उदाहरण (1) - निम्नलिखित अंकों से मध्यांक ज्ञान कीजिये ।

27, 14, 22, 39, 26, 24, 22. 24, 19

हल - सर्वप्रथम सब पदों को आरोही क्रम या अवरोही क्रम से लिखेंगे ।

14, 19, 22, 22, 24, 24, 27, 39

इसमें बीच का पद चुनेंगे जो मध्यांक है -

अत: मध्यांक = 4

उदाहरण (2) - 18, 18. 19, 20, 21, 22 अंकों का मध्यांक ज्ञान कीजिये इसमें पदों की संख्या सम है। अत: बीच के दो पदों का साधारण माध्य निकाल कर मध्यांक ज्ञान करेंगे ।

मध्यांक = $\frac{19+20}{2}=\frac{29}{2}=19.5$

(ब) असतत श्रेणी या खण्डित श्रेणी का मध्यांक

उदाहरण - 2, 3, 4, 5, 6, 7 8, 9, 10, 11, 12, 13,14,15

आवृत्ति - 1 2 8 11 13 15 10 8 6 5 8 4 3 2

हल - यहां पर आरोही क्रम में पहले से ही अनुविन्यसित हैं -

पद आकार - 2 3 4 5 6 7 8 9 1०1112१31415

आवृत्ति - 1 2 8 11 13 15 10 8 6 5 8 4 3 2

संचची आवृत्ति - 1,3,11,22,35,50,60,68,74,79,85,89,92,94

मध्यांक $= \frac{N+1}{2}$ - की संख्या का आकार

$= \frac{94+1}{2} = 47.5$

अत: उसके सामने वाला पद आकार 7 मध्यांक है ।

उपरोक्त गणना के आधार पर यह निष्कर्ष निकला कि 47.5 वें पद का मूल्य मध्यांक होगा । इस पद का मूल्य ज्ञात करने के लिये संचयी आवृत्ति को देखेंगे । वह पहली संचयी आवृत्ति जिसमें मध्यांक संख्या मिलती हो, ठीक उसके सामने का मूल्य या आकार मध्यांक होगा इस प्रश्न में देखने से स्पष्ट होता है कि 47.5 पहली बार संचयी आवृत्ति 50 में सम्मिलित है, इसलिये 50 संचयी आवृत्ति के सामने पद का मूल्य 7 हूआ जो मध्यांक है ।

व्यवस्थित (Grouped) प्रदत्तों से मध्यांक ज्ञान करना :-

Calculation of the Median when data are grouped into a frequency distribution:-

व्यवस्थित प्रदत्तों से मध्यांक की गणना करने के लिये निम्नलिखित सूत्र प्रयोग में लाया जाता है ।

सूत्र - मध्यांक $= \text{Im} + \frac{\frac{N}{2} - cf}{fm} x\, C.I.$

यहां Im = उस वर्गान्तर निम्नतम सीमा जिसमें मध्यांक गिरता है ।

N//2 योग आवृत्तियों का आधा या 50%

cf= निम्न सीमा के नीचे के अन्तराल की कुल आवृत्तियां ।

fm = जिस अन्तरातल में मध्यांक है उसकी आवृत्ति ।

CI = अन्तराल का आकार ।

उढहरण:-

वर्गान्तर	आवृत्ति (f)	संजयी आवृत्ति (cf)
0-5	4	4
5-10	6	10
10-15	10	20
15-20	16	36
20-25	12	48
25-30	8	56
30-35	4	60
	N=60	

मध्यांक $= \text{Im} + \frac{N/2 - cf}{fm} x\, C.I.$

$= 15 + \frac{30-20}{16} x5$

= 15+3.12

= 18.12 उत्तर

विधि-

(1) सर्वप्रथम-आवृत्ति वितरण तालिका में संचयी आवृत्ति ज्ञान करना चाहिये । यहां यह ध्यान रखना चाहिये कि यदि आवृत्ति वितरण आरोही क्रम में है तो आवृत्तियों को नीचे से ऊपर की ओर जोड़ जाये । लेकिन यदि अवरोही कम में हैं तो ऊपर से नीचे जोड़ा जाना चाहिये ।

(2) समस्त आवृत्ति का योग का आधा मूल्य N/2 है । इस प्रयोग में यह 30 है ।

(3) अब यह आवृत्ति वितरण में देखें कि समस्त आवृत्तियों के योग का आधा यानि 30 किस वर्गान्तर में आता है । इस प्रश्न में य (15-20) वर्गान्तर में गिरता है ।

(4) जिस वर्गान्तर में यह मध्यांक गिरता है, उसकी निम्न सीमा का पता लगाना । इस प्रश्न में यह 15 है जो Im है ।

(5) जिस वर्गान्तर में यह मध्यांक गिरता है उसके ऊपर वाले वर्गान्तर की संचयी आवृत्ति ज्ञान करना है । इस प्रश्न में यह 20 है जो cf है । यहां आवृत्ति वितरण अवरोही क्रम में है, इसलिये ऊपर वाले वर्गान्तर की संचयी आवृत्ति लेंगे ।

(6) अब जिस वर्गान्तर में मध्यांक गिरता है, उसकी आवृत्ति ज्ञान करना । इस प्रश्न में यह 16 है जो fm, है ।

(7) यहा वर्ग विस्तार 5 है । अत: प्रश्न में C.I. = 5 होगा ।

(8) इन मानों को सूत्र में रखने तथा गणना करने पर मध्यांक आ जायेगा ।

उदाहरण - 2

वर्गान्तर	आवृत्ति (f)	संचयी आवृत्ति (CF)
35-39	1	45
30-34	2	44
25-29	5	42
20-24	9	37
15-19	12	28
10-14	8	16
5-9	5	8
0-4	3	3
	N=45	

विधि

(1) सर्वप्रथम आवृत्तियों को प्रतिशत आवृचियों में बदल कर आवृत्ति वितरण तालिका में लिखते है । जैसे 120-139 वर्गान्तर की 50 आवृत्ति है जो कुल आवृत्ति 1000 में से है अत: 100 में ये कितनी होगीं

$= \frac{50x100}{1000} = 5$ आवृत्ति

इसी तरह अन्य आवृत्तियों को प्रतिशत आवृत्तियों में बदलें ।

(2) बाद में प्रतिशत आवृत्तियों को संचयी प्रतिशत आवृत्तियों में बदलें ।

(3) रेखा चित्र बनाने के लिये x अक्ष पर वर्गान्तर (यदि C.I.) और y अक्ष पर संचयी प्रतिशत आवृत्ति (cf) का रेखाचित्र बना लेते है ।

(4) अब रेखाचित्र के y अक्ष से 50% बिन्दु पर एक पड़ी रेखा खींची जा जो रेखाचित्र को M बिन्दु पर काटती है । तथा इस x बिन्दु से एक लम्ब रेखा y अक्ष पर खींची है । जिस बिन्दु पर यानि (D) बिन्दु पर यह लम्ब रेखा मिलती है - उसी बिन्दु का यानि (०) का मूल्य मध्यांक (Median) होता है । इस प्रश्न में 87.5 मध्यांक हुआ ।

मध्यांक के गुण

(1) मध्यांक मध्य पद का मूल्य है । अत: वितरण के आधे प्राप्तांक इसके ऊपर तथा आधे इसके नीचे होते है ।

(2) मध्यमान, मध्यांक से भिन्न है क्योंकि वितरण में जब चरम अंक (Extreme Scores) हों तो मध्यांक पर इसका प्रभाव नहीं पडता लेकिन चरम अंकों का मध्यमान पर प्रभाव पड़ता है।

(3) मध्यांक का उपयोग ऐसे मानवीय गुणों की जानकारी प्राप्त करने में सहायक है जिनका सही मापन संभव नही जैसे रूचि, बुद्धि, स्वास्थ्य आदि ।

(4) इसको सरलता से अति शुद्ध रूप से ज्ञात किया जा सकता है । यह रेखा चित्र विधि के द्वारा द्वारा भी ज्ञात किया जा सकता है ।

(5) मध्यांक समूह के विशिष्ट गुणों को प्रदर्शित करता है । उदाहरणत: यदि शिक्षकों की मासिक आय 4000 रूपये है तो इसका अर्थ यह हुआ कि आधे शिक्षकों 4000 रू. से अधिक तथा अन्य आधे शिक्षकों की 4000 रू. से कम मासिक वेतन है ।

मध्यांक के दोष -

(1) यदि पदों की संख्या कम हो तो मध्यांक समूह के गुण का पूर्ण प्रतिनिधित्व नहीं करता।

(2) मध्यांक की गुणना करते समय प्राप्ताकों की आरोही या अवरोही क्रम में जमाना पड़ता है।

(3) यदि कई मध्यांक दिये हो तो इनसे संयुक्त मध्यांक ज्ञान नहीं किया जा सकता ।

(4) यदि मध्यपद के वर्गो के बीच में पड़ता हो तो मध्यांक का सही मान ज्ञान करना कठिन है । यहां केवल संभावित मूल्य ही ज्ञात कर सकते है ।

(5) पद के मूल्य अनियमित होने पर मध्यांक से प्राय: भ्रम युक्त निष्कर्ष निकलते है । उदाहरण के लिये एक परीक्षा में 5 छात्रों के प्राप्तांक 3०,25,6,1,1 हो तो मध्यांक 6 भ्रमपूर्ण है ।

परिभाषायें (Definitions)

केनी तथा कीपिंग (Keeny and Keeping) के अनुसार किसी भी वितरण में चल का वह मूल्य जिसकी आवृत्ति सबसे अधिक हो बहुलांक कहलाता है । (The value of the variable which occurs most frequently is distribution is called made).

बॉडिंगटन (Boddington) के अनुसार "बहुलक महत्वपूर्ण प्रकार, रूप या पद या आकार या सबसे अधिक घनत्व की स्थिति के रूप में परिभाषित किया जा सकता है । (Mode may be defined as the predominant kind, step or size item or the position of greatest density).

क्राक्सटन एवं काउडेन (Croxton and Cowden) के अनुसार "किसी वितरण का बहुलांक वह मूल्य है जिसके चारों ओर पद सर्वाधिक केन्द्रित हो । यह मूल्यों की श्रेणी का सर्वाधिक प्रतिरूप माना जा सकता है । (The mode of a distribution is the value at the point around which the items tend to be most heavily concentrated. It may be regarded as the most typical of a series of value).

डॉ. बाउले (Dr.A.L. Bowley) के अनुसार किसी सांख्यिकी समूह में वर्गीकृत मात्रा का वह मूल्य (मजदूरी, ऊँचाई या अन्य किसी मापनीय मात्रा का) जहां पर पंजीकृत संख्यायें सबसे अधिक हो, बहुलांक या अधिक घनत्व का स्थान या सबसे महत्वपूर्ण मूल्य कहलाता है । (The value of the graded quantity in a statistical group (of wages, heights, or some other measurable quantity) at which the numbers registered are most numerous, is called the made or the position of greatest density or the predominant value).

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि बहुलांक वह अंक है जिसकी आवृत्ति सर्वाधिक होती है । इस परिभाषा के आधार अधिकतम आवृत्ति होती है । इस परिभाषा के आधार पर अधिकतम आवृत्ति वाले पद का मूल्य ज्ञात करने सही बहुलांक ज्ञात किया जा सकता है ।

बहुलांक ज्ञान करना (Calculation of mode) -

व्यक्तिगत श्रेणी में बहुलांक ज्ञान करने के लिये तीन निम्नलिखित विधियां है:-

(1) **निरीक्षण विधि :-** यहां निरीक्षण द्वारा यह ज्ञात करना है कि कौन सा मूल्य सबसे अधिक बार आ रहा है । जो मूल्य सबसे अधिक बार मिले, वही बहुलांक है ।

उदाहरण : एक कक्षा में 12 छात्रों के निष्पत्ति के अंक निम्नलिखित है, इनका बहुलांक ज्ञान कीजिये-

5, 6, 4, 7, 8, 5, 3, 2, 1, 6, 5

उपरोक्त प्राप्ताकों में 5 संख्या अधिक बार आई है अत: बहुलांक 5 है ।

(2) **व्यक्तिगत श्रेणी का परिवर्तन** - जब व्यक्तिगत श्रेणी के अनेक पद, दो या दो से अधिक बार आते है तो व्यक्तिगत श्रेणी की खण्डित श्रेणी में बदलकर क्रम में रखकर उसके सामने आवृत्ति लिख दी जाती है । निरीक्षण द्वारा यह देखा जाता है कि अधिक आवृत्ति किस पद की है । अधिक आवृत्ति वाला पद ही बहुलांक होगा ।

उदाहरण - बाटा कम्पनी के बूट के आकार संख्या से बहुलांक आकार ज्ञात कीजिये-

बूट की आकार संख्या - 2, 3, 1, 4, 7, 6, 5, 6, 6, 8, 9, 5, 7, 8 बूटों की आकार संख्या = 1 2 3 4 5 6 7 8 9

आवृत्ति = 1 1 1 1 2 4 2 1 1

यहां अधिकतम आवृत्ति 4 है जिसका पद मूल्य 6 है तो इस प्रश्न का बहुलांक यानि 6 हुआ ।

(3) **मध्यांक तथा मध्यमान की सहायता से बहुलांक ज्ञान करना (Calculation of mode with help of Median and Mean) :-** मध्यमान तथा मध्यांक की सहायता से बहुलांक निम्न सूत्र से ज्ञान किया जा सकता है -

बहुलांक = 3 (मध्यांक) - 2 (मध्यमान)

Mode = 3 Median - 2 (Mean)

व्यवस्थित (Grouped) के प्रदत्तों से बहुलांक ज्ञात करना -

उदाहरण - निम्न समूहीकृत प्रदत्तों से बहुलांक ज्ञात कीजिये -

वर्गान्तर (C.I)	आवृत्ति (f)	
50-54	1	
45-49	4	
40-44	8	Post Model lass
35-39	12	Model Class
30-34	7	Pre Model Class
25-29	5	
20-24	3	
	N=40	

बहुलांक की गणना करने के लिये निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग करेंगे :-

$$\text{mod}\,e = \text{Im} + \frac{fm_1}{fm_1 + fm_2} x\, C.I.$$

यहां IM = अधिकतम आवृत्ति वाले वर्गान्तर अथवा बहुलांक वर्ग (Model class) की निम्नतम सीमा ।

fm_2 = बहुलांक वाले वर्गान्तर की आवृत्ति एवं पश्चात् बहुलांक वाले वर्गान्तर की आवृत्ति एवं पश्चात् बहुलांक वाले (Post mode) वर्गान्तर की आवृत्ति का अन्तर $fm_2 = (12-8) = 4$ है।

इसी सूत्र का प्रयोग सिम्सन एवं कोफका (Simpson and Kofka) महोदय ने निम्न प्रकार से किया है-

$$Mode = 1 + \left[\frac{\Delta_1}{\Delta_1 + \Delta_2}\right] x\, C.I.$$

यहाँ $\Delta_1 =$ Difference between modal and pre modal C.T.

$\Delta_2 =$ Difference between modal and Post modal C.I.

हल :

$$\text{mod}\,e = \text{Im} + \left[\frac{Fm_1}{Fm_1 + Fm_2}\right] \times C.I.$$

$$= 34.5 + \frac{5}{5+4} \times 5$$

$$= 34.5 + \frac{25}{9}$$

$$= 37.27$$

विधि

(1) इस सूत्र का प्रयोग करने से पूर्व, सर्व प्रथम बहुलांकिक वर्गान्तर (Model Class Interval)तय करना पड़ता है । इस प्रश्न में सबसे अधिक आवृत्ति 12 है और इसका वर्गान्तर (35-39) है जिसे बहुलांकिक वर्गान्तर (Model Class) माना जाता है ।

(2) इसके बाद बहुलांकिक के नीये पूर्व बहुलांक (pre model) तथा उसके ऊपर आवृत्ति को पश्चात् बहुलांक (Post Model Class) लिख दें तथा f_1 और f_2 की गणना कर लें ।

(3) अन्त में IM, FM_1, FM_2 और $C.I.$ का प्रयोग सूत्र में करके बहुलक ज्ञात किया जा सकता है।

बहुलांक ज्ञान करने के लिए अन्य दो सूत्र (Calculation of mode by other two formulas)

पहला सूत्र, बहुलांक = $1 + \frac{f_1 - f_0}{2f_1 - f_0 - f_1} x\, C.I.(1)$

दूसरा सूत्र, बहुलांक = $1 + \frac{f_2}{2f_0 + f_2 - f_1} x\, C.I.(2)$

यहाँ l = बहु लांक वर्ग की निम्न सीमा ।

f_1 = बहु लांक वर्ग की आवृत्ति

f_2 = बहु लांक वर्ग के पश्चात् आने वाले वर्ग की आवृत्ति ।

f_0 = बहु लांग वर्ग से पूर्ववर्ती वर्ग की आवृत्ति ।

$C.I.$ =बहु लांक वर्ग का वर्ग विस्तार ।

उदाहरण निम्नलिखित 75 विद्यार्थियों के अंकों का बहु लांक ज्ञात करो :-

प्राप्तांक	आवृत्ति		
10-20	3		
20-30	8		
30-40	12	f_0	बहु लांक वर्ग से पूर्ववर्ती वर्ग की आवृत्ति
40-50	32	f_1	बहु लांक वर्ग
50-60	20	f_2	बहु लांक वर्ग के पश्चात आने वाली आवृत्ति
	N=70		

इस प्रश्न में सबसे अधिक आवृत्ति 32 है । अत: इससे संबंधित वर्ग बहु लांक वर्ग होगा जो f_1 = 32, f_0=12 तथा f_2 = 20 एव $C.I.$= 1० है ।

सूत्र प्रथम के अनुसार बहु लांक $= 30 + \frac{32-12}{64-12-20} x 10$

$= 30 + \frac{20}{32} x 10$

= 36.25 उत्तर

दूसरे सूत्र के अनुसार बहु लांक $= 30 + \frac{20x10}{12+20}$

$= 30 + \frac{200}{32}$

= 38.25 उत्तर

समूहन विधि : कभी-कभी ऐसे भी अवसर आते है कि जब श्रेणी में दी गई आवृत्ति नियमित न हो यानि कभी बढे और घटे अथवा एक से अधिक स्थानों पर अधिकतम आवृत्तियाँ केन्द्रित हों तो मात्र निरीक्षण से बहु लांक ज्ञान करना कठिन है । ऐसी परिस्थिति समूहन विधि का प्रयोग किया जाता है ।

उदाहरण : निम्न सारणी से बहु लांक ज्ञात कीजिये-

पद मूल्य -	8	9	10	11	12	13	14	15
आवृत्ति -	3	6	8	7	9	8	9	6

इस प्रश्न में बहुलक ज्ञान करने के लिये आवृत्तियों के समूहीकरण की आवश्यकता होगी क्योंकि यहीं सबसे अधिक आवृत्ति 9 है जो बार आयी है, इसलिये यह निश्चित करना कठिन है इनमें से किस आवृत्ति का मूल्य बहुलांक होगा ।

समूहीकरण द्वारा बहुलक निर्धारण

पदों का मूल्य	1	2	3	4	5	6
8	5	11				
9	6		14	19		
10	8	15			21	
11	7		16			24
12	9	17		24		
13	8		17		26	23
14	9	15				
15	6					

विधि-

(1) प्रथम खानें (Column) में प्रश्न दी हुई आवृत्तियाँ होती हैं

(2) दूसरे खाने में प्रथम में दी हुई पहली दो आवृत्तियों का योग फिर इसके आगे आनेवाली आवृत्तियों का योग और इसी प्रकार अन्त तक दो आवृत्तियों का योग किया जाता है ।

(3) तीसरे खाने में प्रथम आवृत्ति को छोड़कर दो-दो आवृत्तियों के जोड़े का योग करके लिख दिया जाता है ।

(4) चौथे खाने में प्रश्न में दी गई आवृत्तियों के तीन-तीन के योग करें तथा उसे लिख दें ।

(5) पांचवें खाने में प्रथम आवृत्ति को छोड़कर तीन-तीन आवृत्तियों का योग करके लिख दें ।

(6) छठा खाने में पहली दो आवृत्तियों को छोड़कर शेष आवृत्तियों को तीन-तीन आवृत्तियों का योग करके लिख दें ।

उपरोक्त छः खानों में समूहीकरण की संख्यायें लिखने के बाद प्रत्येक खाने की सबसे बड़ी संख्या के नीचे लाइन खींचिये ताकि यह स्पष्ट नजर आये ।

विश्लेषण सारिणी बनाना (Analysis Table) - यह सारिणी उन अधिकतम आवृत्तियों (Maximum frequencies) के आधार पर बनायी जाती है जिन्हें उपरोक्त समूहीकरण वाली सारिणी मे रेखांकित किया गया है । इस सारिणी का नमूना नीचे दिया गया है-

विश्लेषण सारिणी

		अधिकतम आवृत्ति वाले			
Col. No	(Size of	Containing	Maximum	Frequencies)	
स्तम्भ सं.	items 10	11	12	13	14
1	-	-	12	-	14

2	-	-	12	13	-
3	-	-	-	13	14
4	-	11	12	13	-
5	-	-	12	13	14
6	10	11	12	-	-
पदोंकी संख्या (No. of items)	1	2	5	4	3

विधि

(1) उपरोक्त सारिणी तैयार करने के लिये खाना 1 में अधिकतम आवृत्ति देखने से ज्ञान होता होगा 9 तथा 9 दो आवृत्ति है जिनका आवृत्ति पदों का मूल्य क्रमश: 12 एवं 14 है । अत: इस सारिणी के 12 व 14 खाने में 12 तथा 14 लिख दें ।

(2) इसी तरह खाना 2 को देखने से अधिकतम आवृत्ति 18 है जो 12 तथा 13 पदों का मूल्य है अत: इसे सारिणी में अंकित कर दें ।

(3) खानें 3 के अधिकतम आवृत्ति 18 को 13 व 14 में तथा खाने 4 के अधिकतम आवृत्ति 24 को 1112 तथा 14 में और खाने 6 के अधिकतम आवृत्ति को 1०,11 तथा 12 में अंकित कर दें ।

(4) उपरोक्त सारिणी देखने से यह स्पष्ट होता है कि 12 वह मूल्य है जिसकी आवृत्ति सबसे अधि 5 है इसलिये बहुलांक इस प्रश्न का 12 हुआ ।

बहुलांक के गुण -

(1) बहुलांक से यह स्पष्ट होता हे कि सर्वाधिक व्यक्ति क्या प्राप्त कर रहे है या कैसा गुण रखते हैं।

(2) इसे ज्ञान किया जाना सरल है ।

(3) इसको समझना भी सरल है ।

(4) बहुलांक पर प्रदत्तों के विचलन का कोई प्रभाव नहीं पड़ता ।

(5) किसी न्यादर्श में बहुलांक का मान सदैव एक ही होता है ।

बहुलांक के दोष

(1) कई न्यादर्श के बहुलांको को सयुंक्त कर एक बहुलांक ज्ञान करना संभव नही है ।

(2) बहुलांक ज्ञान करने के लिय आवृत्तियों की संख्या अधिक होनी चाहिए । यदि बहुलांक कम आवृत्तियों से ज्ञान किया गया हे तब यह केन्द्रीय प्रवृत्ति को प्रदर्शित नहीं करता है।

(3) यदि किसी सतत श्रेणी में सभी वर्गान्तरो की आवृत्तियों समान हों तो बहुलांक ज्ञात करना सम्भव नही है ।

18.3 स्वमूल्यांकन (Self-Assessment)

प्र. 1 केन्द्रीय प्रवृत्ति माप का स्वरूप तथा अर्थ स्पष्ट कीजिये ।

प्र. 2 केन्द्रीय प्रवृत्ति के प्रमुख माप कौन से है? सांख्यिकी विश्लेषण में केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापों के महत्व एवं सीमाओं की विवेचना कीजिये ।

प्र. 3 निम्न अव्यवस्थित प्रदत्तों से मध्यमान एवं मध्यांक ज्ञान कीजिये-

(अ') 23, 19, 14, 27, 34, 23, 25, 22, 12, 11

(ब) 19, 15, 18, 11, 12, 13, 15, 13, 14, 18

प्र. 4 निम्न आवृत्ति वितरण से मध्यमान, मध्यांक तथा बहुलांक ज्ञान कीजिये । मध्यमान (Mean) की गणना संक्षिप्त विधि (Short Method) से करें ।

(अ) प्राप्तांक आवृत्ति (f) प्राप्तांक (Scores) आवृत्ति (f)

(अ) प्राप्तांक (Scores)	**आवृत्ति (f)**	**(ब) प्राप्तांक (Scores)**	**आवृत्ति (f)**
90 - 94	2	120-122	2
5 - 89	2	117 - 119	2
80 - 84	4	114 - 116	2
75 - 79	8	111 - 113	4
70 - 74	6	108 - 110	5
65 - 69	11	105 - 107	9
60 - 64	9	102 - 104	6
55 - 59	7	99 - 101	3
50 - 54	5	96 - 98	4
45 - 49	0	93 - 95	2
40 - 44	2	90 - 92	1
	N= 56		N = 40

प्र. 5 दसवीं कक्षा के निम्न छात्रों का विज्ञान उपलब्धि परीक्षण देने पर निम्न प्राप्तांक प्राप्त हुये । (अ) ऐसा बिन्दु ज्ञान कीजिये जिसके नीचे एवं ऊपर समान छात्र पड़े (ब) इस श्रेणी का बहुलांक मान (Mode) भी ज्ञान करें ।

(अ) प्राप्तांक आवृत्ति (0 स) प्राप्तांक (Scores) आवृत्ति (1)

अ) प्राप्तांक (Scores)	**आवृत्ति (f)**	**(ब) प्राप्तांक (Scores)**	**आवृत्ति (f)**
86-90	1	100-109	5
81 - 85	2	9० - 99	9
76 - 8०	3	8० - 89	14
71 - 75	7	7० - 79	19
66 - 7०	13	6० - 69	21
61 - 65	15	5० - 59	30

56 - 6०	11	4० - 49	25
51 - 55	5	3० - 39	15
46 - 5०	1	20 - 29	10
41-45	2	10- 19	8
		0-9	6
	N=60		N=162

(1) मध्यमान का प्रयोग जब करते है कि जब आकड़े क्रमिक रूप से भिन्न हो और कोई भी अंक असाधारण रूप से बड़ा व छोटा नही होना चाहिये ।दूसरा आँकडे गुण की मात्रा को व्यक्त करते हो । तीसरा जब इसको औसत का अन्य का साख्यिंकी में प्रयोग करना हो जैसे प्रमाणिक विचलन, सहसम्बंध मध्यांक का उपयोग उस वक्र सहसम्बंध करते है तो जब आँकड़ो के वितरण में एक या दो अंक असाधारण रूप से बडे या छोटे हो ।

(2) जब अंक केवल स्थिति को बताते हो । बहुलांक शिक्षा में बहुलांक का उपयोग केवल जब करते है कि जब इसको आँकड़ो के प्रक्रति का अध्ययन करने पर होता है । जैसे एक मोड वाले वितरण में इस $C.R.$ परीक्षण या अनुपात लगा सकते है लेकिन इनका उपयोग मोड वाले में नही हो सकता ।

18.4 संदर्भ गन्थ (Reference)

1. Agarwal B.L. - Basic Statistics
2. त्रिपाठी, रघुवंश - अप्रालिक सांख्यिकी

इकाई-19

विचलनशीलता के माप

(measures of dispersion)

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

19.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

19.1 विचलन शीलता के माप (Measures of variability)

19.2 विलचन शीलता के मापन का परिकलन (Calculation of Measure of variability)

19.3 चतुर्थक विचलन (Quartile Deviation)

19.4 औसत विलचन (Average Deviation)

19.5 माध्य विलचन गुणांक (Mean Deviation)

19.6 प्रमाप विलचन (Standard Deviation)

19.7 विचलन गुणांक (Coefficient of correlation)

19.8 स्वमूल्यांकन (Self-Assessment)

19.9 संदर्भ ग्रन्थ (Referances)

19.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप

- विचलन की परिभाषा, प्रकार, महत्व, विस्तार एवं मान विधियों की स्पष्ट कर सकेंगे ।
- दिये गये दक्षों के लिए चतुर्थक, औसत, माध्य, प्रमाप विचलन गुणांकों की गणना कर सकेंगे ।

19.1 विचलन शीलता के माप (Measure of variability)

सांख्यिकी माध्य समंक श्रेणी के केन्द्रीय प्रवृत्ति के रूप में अत्यंत उपयोगी माप है । यद्यपि प्रत्येक माध्य समंक श्रेणी का एक प्रतिनिधि मूल्य अवश्य होता है परन्तु फिर भी वह समंक श्रेणी की अनेक महत्व पूर्ण-विशेषताओं को प्रकट करने में असमर्थ है । मानव जीवन में जिस प्रकार विभिन्न प्रकार की विविधता अथवा विचलनता पाई जाती हैं उसी प्रकार समंकों में भी विचलनता पाई जाती है । साख्यिकी व माध्य से विभिन्न पद मूल्यों की औसत से दूरी अथवा पदों के विखराव या फैलाव अथवा समंक श्रेणी की बनावट के बारे में पता नहीं लगाया जा सकता । उदाहरणार्थ एक विद्यार्थी के चार विषयों में प्राप्तांक क्रमश: 90, 40, 20 व 10 हैं एवं दूसरे विद्यार्थी के इन्ही चार विषयों में प्राप्तांक क्रमश: 42, 39, 35 एवं 36 है । यहीं यद्यपि प्रथम विद्यार्थी के प्रति विषय औसत प्राप्तांक 40 अंक और दूसरे विद्यार्थी के औसत प्राप्तांक 38 अंक प्रति विषय है परन्तु केवल इसी आधार पर हम यह नहीं कह सकते कि प्रथम विद्यार्थी द्वितीय

विद्यार्थी से श्रेष्ठ है इसका कारण यह है कि प्रथम विद्यार्थी के प्राप्तांकों में विचरण शीलता अधिक है ।

यह स्थिति नीचे चित्र द्वारा स्पष्ट की गई है । चित्र में दो समान क्षेत्र (N) वाले, समान मध्यमान (m =40) वाले आवृत्ति वितरणों को दर्शाता है जिनकी विचलन शीलता भिन्न है ।

समूह A का प्रसार क्षेत्र 10 से 70 तक है और समूह B का 30 से 50 तक। इस प्रकार समूह A में विचरण शीलता समूह B की अपेक्षा तीन गुणा है । प्राप्तांको के समूह (set) में विचलन शीलता (variability) या प्रसार (dispersion) को व्यक्त करने के लिये चार प्रकार के माप विकसित किये गये है

(i) प्रसार क्षेत्र (Rage) (ii) चतुर्थक विचलन (Quartile deviation) (iii) औसत विलचन (Average) (iv) प्रमाप विचलन (Standard deviation)

19.2 विचलन शीलता के मापों का परिकलन (Calculation of measures of Variability)

प्रसार क्षेत्र (Range) : प्रसार क्षेत्र समंकों के बिखराव अथवा फैलाव मापन का सबसे सामान्य माप है । इसकी गणना तक की जाती जब हम विचरण शीलता की दृष्टि से दो अथवा समूहों की तुलना की इच्छा रखते है । प्रसार क्षेत्र के मापन के लिये श्रेणी के सबसे बड़े मूल्य एवं सबसे छोटे मूल्य का अन्तर ज्ञात किया जाता है । यह अन्तर जितना अधिक होगा श्रेणी में अनियमितता अथवा विचलनता उतनी नही अधिक होगी ।

प्रसार क्षेत्र - गयना सूत्र : $R = E_2 - E_1$

उदाहरण : 1 निम्न समंकों से विस्तार एवं उसका गुणक ज्ञान कीजिये

प्राप्तांक 10 12 15 19 20

विद्यार्थियों की संख्या 4 9 3 1। 6

हल यहाँ E_2 = 20, E_1 = 10

प्रसार क्षेत्र गुणक $= \frac{E_2 - E_1}{E_2 + E_1} = \frac{20-20}{20+10} = .33$

उदाहरण. 2 निम्न समंको से प्रसार क्षेत्र एवं प्रसार क्षेत्र गुणक का परिकलन कीजिये

प्राप्तांक	15-19	20-24	25-29	30-34
विद्यार्थियों की संख्या	6	25	40	45

हल प्रश्न में दी गई श्रेणी को निम्न प्रकार से लिख सकते है.

प्राप्तांक	14.5-19.5	19.5-24.5	24.5-29.5	29.5-34.5
विद्यार्थियों की संख्या	6	25	40	45

यहाँ E_1 = 4.5, E_2 34.5

अत: प्रसार क्षेत्र = 34.5 - 14.5 = 20

एवं प्रसार क्षेत्र गुणक $= \frac{34.5-14.5}{34.5+14.5} = \frac{20}{49} = .408$

19.3 चतुर्थक विचलन (Quartile Deviation)

चतुर्थक विचलन विचरण शीलता का एक प्रमुख निरपेक्ष मान है इसे अर्द्ध-अन्तचतुर्थक प्रसार (Semi inter quartile range) भी कहते है । यह आवृत्ति वितरण में 75 वें तथा 25 वें प्रतिशतक (Percentile) या तृतीय चतुर्थक (p) एवं प्रथम चतुर्थक (Q_1) की गणना का सूत्र निम्न प्रकार है :-

$$Q_1 = \frac{Q_3 - Q_1}{2}$$

(आवृत्ति वितरण से चतुर्थक विलचन (Q.D.) या Q की गणना) यह स्पष्ट है कि Q ज्ञात करने के लिए Q_1 एवं Q_2 गणना करनी होगी । मध्यांक (Median) की तरह यह सांख्यिकीय माप भी उसी प्रकार से ज्ञात की जा सकती है । केवल एक अन्तर यह है कि Q_1 ज्ञात करने के लिये चर मूल्यों के 1/4 की गणना निचले सिरे से करनी होगी और इसी तरह Q_1 ज्ञात करने के लिए चर मूल्यों के 3/4 की गणना भी इसी प्रकार करनी होगी । सूत्र निम्न प्रकार है ।

$$Q_1 = 1 + \frac{\frac{N}{4} - cum\ f_1}{f_0} x\ i$$

$$Q_3 = 1 + \frac{\frac{3N}{4} - cum\ f_1}{f_0} x\ i$$

1 = चतुर्थक वाले अन्तराल की निम्न सीमा

i = अन्तराल का आकार

cum f = चतुर्थक से वाले पूर्व अन्तराल की संचयी (Cumulative) आवृत्ति

f_0 = चतुर्थक वाले अन्तराल की आवृत्ति

दो समंक श्रेणियों की तुलना के सापेक्ष माप की आवश्यकता होती है । इसके लिये चतुर्थक विचलन गुणांक ज्ञान किया जाता है

चतुर्थक वचलन गुणांक $= \frac{Q_3 - Q_1}{Q_3 + Q_1}$

चतुर्थक विचलन गुणांक के विस्तार का चतुर्थक गुणांक (Quartile coefficient of dispersion) भी कहते है

उदाहरण : 1 निम्न समंकों से चतुर्थक विचलन तथा उसका गुणांक ज्ञान कीजिये

प्राप्तांक	10-20	20-28	28-37	37-50	50-60	60-70
विद्यार्थियों की संख्या	5	11	9	6	3	6

चतुर्थक विचलन एवं चतुर्थक विचलन गुणांक का परिकलन

प्राप्तांक	आवृत्ति	संचयी आवृत्ति
10-20	5	5
20-25	11	16
28-37	9	25
37-50	6	31
50-60	3	34
60-70	6	40

$Q_1 = size\ of = \frac{N}{4} = \frac{40}{4} = 10$ वां पद

संचयी आवृत्ति तालिका के आधार पर 10 वा 20-28 वाले वर्ग में है अत:

$Q_1 = 1+ = \frac{i}{f_0} = \left(\frac{N}{4} - Cum,\ f_1\right)$

$= 20+ = \frac{8}{11} = (10-5) = 23.64 = 24$

$Q_3 = size\ of = \frac{3N}{4} = \frac{3x40}{4} = 30$ वां पद

संचयी आवृति तालिका से 30 वीं पद 37-50 वाले वर्ग में है । मे है

अत: $Q_3 = 1+ = \frac{i}{f_9} = \left(\frac{3N}{4} - Cum,\ f_2\right)$

यहाँ 137.1 = 13, F_9 = 6, Cum F_1 = 25

अत: $Q_3 = 37+ = \frac{13}{6} = (30-25) = 47.83 = 48\ Ans.$

चतुर्थक विचलन $\frac{Q_3 - Q_1}{2} = \frac{48-24}{2} = 12$

चतुर्थक विचलन गुणांक $Q.D. = \frac{Q_3 - Q_1}{Q_3 + Q_1} = \frac{48-24}{48+24} = \frac{1}{3} or 33$

उदाहरण 2. निम्नांकित दो श्रेणियों में अपकिरण की तुलना चतुर्थक मापों द्वारा कीजिये।

(A) Heights	58	56	62	61	63	64	65	59	62	65	55

(In inches)											
(B) Weights (In Kg.)	117	112	127	132	125	130	106	119	121	132	108

हल : चतुर्थक मापों अपकिरण की तुलना करने के लिये दोनों श्रेणियों के चतुर्थक विलचन एवं गुणांक ज्ञात किये जायेंगे । प्रथम और तृतीय चतुर्थक निर्धारित करने के लिये दोनों व्यक्तिगत समंक मालाओं को आरोही क्रम में व्यवस्थित किया जायेगा:

S.No.	A (Heigh)	B (Weights)
1	55	106
2	56	108
3	58	112
4	59	117
5	61	119
6	62	121
7	62	123
8	63	125
9	64	127
10	65	130
11	65	132

A. Height

$$Q_1 = size\ of\ \frac{N+1}{4} th$$

$$= size\ of\ \frac{12^{th}}{4} i.e. 3^{rd}\ item$$

$$\therefore Q_1 = 58$$

$$= size\ of\ 9^{th}\ item$$

चतुर्थक विलचन एवं गुणांक $Q.D. = \frac{Q_3 - Q_1}{Q_3 + Q_1} = \frac{64-58}{64+58} = .049$

B. Weight

$$Q_1 = size\ of\ \frac{N+1}{4}\ item$$

$$size\ of\ 3^{rd}\ item,\ \therefore Q_1 = 12$$

$$Q_3 = size\ of\ 3\frac{(N+1)}{4}^{th}\ item$$

$$size\ of\ 9^{rd}\ item,\ \therefore Q_3 = 127$$

चतुर्थक विचलन गुणांक $= \frac{Q_3 - Q_1}{Q_3 + Q_1} = \frac{127 - 112}{127 + 112} = .063$

निष्कर्ष दो श्रेणियों के विचरण गुणांकों की तुलना करने पर ज्ञात होता है कि भार में विचलन शीलता ऊंचाई की अपेक्षा अधिक है ।

19.4 औसत विचलन (Average Deviation or AD)

किसी समंक श्रेणी के सभी मूल्यों के लिये उस श्रेणी के माध्य (समान्तर माध्य, मध्यक अथवा बहुलक) से ज्ञात किये गये विचलनों (बीजीय चिन्हों (signs) पर विचार किये बिना) के समान्तर माध्य को उस श्रेणी का औसत विचलन कहते हैं । यह वह मूल्य है जो श्रेणी में विद्यमान विचलन के औसत का प्रदर्शित करता है । इसका मान जितना अधिक होगा समंक श्रेणी के विभिन्न मूल्यों का फैलाव उतना ही अधिक होगा । इसे प्रथम परिघात का अपकिरन (First moment dispersion) भी कहते है ।

आधुनिक सांख्यिकी में औसत विचलन का उपयोग बहुत ही कम किया जाता है ।

औसत विचलन का परिकलन औसत विचलन की प्रक्रिया को विभिन्न प्रकार की श्रेणियों के लिये नीचे कुछ उदाहरणों द्वारा स्पष्ट किया गया है.

उदारहरण 1 : निम्न समंकों से औसत विचलन ज्ञात कीजिये :

विद्यार्थी की क्रम संख्या	1	2	3	4	5	6	7	8	9
भार कि. ग्राम में	40	40	45	40	50	51	54	55	57

माध्य से विचलन बहुलक से

क्रम संख्या	भर कि. ग्राम में	मध्यका (mid) 50 से विचलन	मध्य से विचलन idxl	बहुचक से विचलन idzl
1	40	10	10	0
2	40	10	8	0
3	45	5	3	5
4	40	10	8	0
5	50	0	2	10
6	51	1	3	11
7	54	4	6	14
8	55	5	7	15
9	57	7	9	17
N=9	$\sum x = 432$	$\sum \lvert dm \rvert = 52$	$\sum dx$ = 54	$\sum \lvert dz \rvert$ = 72

औसत विचलन मध्यका से $= \sum \frac{|dm|}{N} = \frac{52}{9} = 5.8Kg$

औसत विचलन माध्यमान से $= \sum \frac{|dx|}{N} = \frac{54}{9} = 6Kg$

औसत विचलन बहुलक से $= \sum \frac{|dz|}{N} = \frac{72}{9} = 8Kg$

उदाहरण 2 निम्न श्रेणी में समानान्तर माध्य, मध्यका एवं बहुलक से औसत विचलन का परिकलन कीजिये

प्राप्तांक	विदद्यार्थियों की संख्या
10 से कम	3
20 से कम	8
30 से कम	16
40 से कम	26
50 से कम	37
60 से कम	50
70 से कम	56
80 से कम	60

* विचलन ज्ञात करते समय चिन्हों का ध्यान नहीं रखा गया है ।

हल : दी हुई समंक श्रेणी संचयी आवृत्ति वाली श्रेणी है । अत: सर्व प्रथम इसे साधारण आवृत्ति तौली श्रेणी में बदला जायेगा । तत्पश्चात् समान्तर माध्य, मध्यका एवं बहुलक का परिकलन किया जायेगा ।

मध्य मध्यका एवं बहुलक का परिकलन

प्राप्तांक	श्रेणी	मध्यमान x	आवृति					Tally Bar	योग	सचयी आवृति	fx
10 से कम	0-10	5	3		16			-	-	3	15
20 से कम	10-20	15	5	8	13	23		I	1	16	75
30 से कम	20-30	25	8				29	III	3	26	200
40 से कम	30-40	35	10	18	34			IIII	5	37	350
50 से कम	40-50	45	11		21			IIII	4	50	495
60 से कम	50-60	55	13	24	19	30		I	1	56	715
70 से कम	60-70	65	6				23	I	1	56	390
80 से कम	70-80	75	4	10				-	-	60	300
											$\sum x = 2$

$size\ of\ \frac{N}{2}\ item = 30$ वां पद है 40 से 50 वाले वर्ग मे।

$\therefore$ मध्यका $(md) = 40\frac{10}{11}\left(\frac{62}{2} - 26\right) = 43.64$

बहुलक = $Z = L_1 + \frac{|f_1 - f_0|}{|f_1 - f_0| + \|f_2 - f_1\|} x\, i$

$= 40 \frac{11-10}{10-10+13-11} x10$

$= 40 + \frac{10}{3} = 43.33$

प्राप्तांक	मध्यमान x	आवृत्ति f	चिन्ह रहित विचलन M=43.64 से (dm)	F(dm)	चिन्ह रहित विचलन Z=43.33 से	Fdx	चिन्ह रहित विचलन z=43.33 से (dz)	Fdx
0-10	5	3	38.64	115.92	37.33	111.99	38.33	114.99
10-20	15	5	28.64	143.20	27.33	136.65	28.33	141.65
20-30	25	8	18.64	149.12	17.33	138.64	18.33	146.64
30-40	35	10	8.64	86.40	7.33	73.30	8.33	83.30
40-50	45	11	1.36	14.96	2.67	29.37	1.67	18.37
50-60	55	13	11.36	147.68	12.67	164.71	11.67	151.71
60-70	65	6	21.36	128.16	22.67	136.02	21.67	130.02
70-80	75	4	31.36	125.44	32.67	130.68	31.67	326.68
		60	$\sum f(dm)$ = 910.88		$\sum f(dx)$ = 921.36		$\sum f(dx)$ = 913.36	

औसत विलचन मध्यका से $= \frac{910.88}{60} = 15.18$ अंक

औसत विचलन माध्य से $= \frac{921.36}{60} = 15.36$

औसत विचलन बहुलक से $= \frac{931.36}{60} = 15.22$

19.5 माध्य विचलन गुणांक (Co-efficient of Mean Deviation)

माध्य विचलन एक निरपेक्ष माप है । दो श्रेणियों की तुलना के लिये इसकी सापेक्ष माप को (र्माध्य विचलन गुणांक) ज्ञात किया जाता है । सापेक्ष माप का परिकलन निम्न सूत्र द्वारा किया जाता है ।

माध्य विचलन गुणांक $\frac{Sx}{x}$ या $\frac{Sm}{m}$ या - $\frac{Sz}{z}$

जहाँ sx, sm एवं sz क्रमश 5 समान्तर माध्य, मध्यका एवं बहुलक से माध्य विचलन है ।

उदाहरण : 2 निम्न दो श्रेणियों में विचलन शीलता की तुलना माध्य विचलन के आधार पर कीजिए ।

Marks obtained by Group A 5 9 12 16 31 20 25 34

Marks obtained by Group B 6 7 10 15 23 26 28 29

हल : माध्य विचलन के आधार पर श्रेणियों की तुलना करने के लिये दोनों श्रेणियों के माध्य विचलन गुणांक ज्ञात किये जायेंगे ।

दोनों व्यक्तिगत समंक मालाओं को आरोही क्रम में हयवस्थित किया जायेगा

क्र.सं.	Marks x	Group A M=18 (x-m)=(dm)	(x-x) X=18 (18)	x	Group A M=18 (x-m)=(dm)	X=18 (x-m)=(dm)
1	5	13	14	6	13	12
2	9	9	10	7	12	11
3	12	6	7	10	9	8
4	16	2	3	15	4	3
5	20	2	1	23	4	5
6	25	7	6	26	7	8
7	31	13	12	28	9	10
8	37	16	15	29	10	11
		68	68	144	68	68

Group A $M(median) = size\ of\ \frac{N+1^{th}}{2} item$

$$m = size\ of\ \frac{8+1^{th}}{2} item = \frac{9^{th}}{2} item$$

या $m = 16 + (>5)\ x(20-16) = 19$

माध्य $= \frac{152}{8} = 19$

Mean deviation from Mean $= \frac{|d\bar{x}|}{N}$

माध्य विचलन गुणांक $= \frac{\delta\bar{x}\,(delta\ x\ bar)}{\frac{8.5}{19} = \frac{\bar{x}}{.45}} \delta = \frac{68}{8} = 8.5$

Mean deviation from median δ m $= \sum \frac{(dm)}{N} = \frac{68}{8} = .47$

Group B

$$M = size\ of\ \frac{9^{th}}{2} item = 15 + (.5)(23+5) = 19$$

माध्य $= \frac{144}{8} = 18$

माध्य विचलन $= \frac{\delta \bar{x} \sum (dx)}{N} = \frac{68}{8} = 8.5$

माध्य विचलन गुणांक $= \frac{\delta \bar{x}}{x} = \frac{8.5}{18} = .47$

माध्य विचलन मध्यका से $(delta)\delta m = \frac{\sum |dm|}{N} = \frac{68}{8} = 8.5$

माध्य विचलन गुणांक $= \frac{8.5}{19} = .45$

माध्य विचलन के आधार पर हम देखते हैं कि दोनों श्रेणियों में लगभग समान विचलन शीलता है।

19.6 प्रमाप विचलन (Standard deviation)

प्रमाप विचलन विचलन शीलता के माप की सर्वाधिक लोकप्रिय एवं उपयोगी शीर्ष है । यह विचलन शीलता की अन्य मापों यथा विस्तार, माध्य विचलन आदि की अपेक्षा अधिक शुद्ध एवं वैज्ञानिक है । प्रमाप विचलन को रोमन अक्षर सिगमा (Sigma) संकेत रूप में से) से प्रदर्शित किया जाता है ।

व्यक्तिगत श्रेणी में प्रमाप विचलन का परिकलन.

प्रत्यक्षक रीति (Direct method): यदि किसी समंक श्रेणी का माध्य पूर्णाक में हो तो यह रीति अधिक उपयुक्त रहती है । इसकी क्रिया निम्न प्रकार है.

(i) श्रेणी का समान्तर माध्य ज्ञात करते है ।

(ii) समान्तर माध्य से श्रेणी के विभिन्न पद मूल्यों का विचलन $x - \bar{x} = d$ ज्ञात कर लेते है ।

(iii) इन विचलन वर्गो का $\sum d^2$ योग ज्ञात कर लेते है ।

(iv) विचलन वर्गो के योग में कुल मदों की संख्या (N) का भाग देकर भागफल का वर्गमूल ज्ञात कर लेते है ।

इसके लिए निम्न सूत्र का प्रयोग कर सकते है ।

$$\sigma = \sqrt{\frac{\sum d^2}{N}} = \sqrt{\frac{\sum (x - \bar{x})^2}{N}}$$

द्वितीय विधि मौलिक माप या प्राप्तांकों के आधार पर. इस रीति में सीधे ही पद मूल्यों का वर्ग कर लेते है और फिर निम्न सूत्र के उपयोग से प्रमाप विचलन ज्ञात कर लेते है ।

$$\sqrt{\frac{\sum x^2}{N} - \left(\frac{\sum x^2}{N}\right)} = \sqrt{\frac{\sum x^2}{N} - \left(\bar{x}\right)^2}$$

उदाहरण । एक छात्र द्वारा यह सप्ताह में किये गये व्यय का विवरण निम्न प्रकार है । प्रमाप विचलन ज्ञात कीजिए ।

सप्ताह के दिन	1	2	3	4	5	8	7
व्यय (रूपयों में)	19	15	16	17	16	25	19

प्रत्यक्ष रीति से प्रमाप विचलन का परिकलन

दिन	व्यय	विधि (a) के लिये x-18=d	D^2	x	विधि (b) के लिये
1	18	0	0	18	324
2	15	-3	9	15	225
3	16	-2	4	16	256
4	17	-1	1	17	289
5	16	-2	4	16	256
6	25	7	49	25	625
7	19	1	1	19	361
N=7	$\sum x$ = 126	$\sum d^2$ = 68			$\sum x^2$ = 2336

$$\bar{x} = \sqrt{\frac{\sum x}{N}} = \frac{126}{7} = 18 \qquad \sigma = \sqrt{\frac{\sum d^2}{N}} = \sqrt{\frac{\sum x^2}{N}} - \left(\frac{\sum x}{N}\right)^2$$

$$\sigma = \sqrt{\frac{\sum d^2}{N}} = \sqrt{\frac{68}{7}} = \sqrt{9.7} = 3.11 \quad = \sqrt{\frac{2336}{7}} - \left(\frac{126}{7}\right)^2$$

$$= \sqrt{333.7 - 324}$$

$$\sqrt{9.7} = 3.11$$

अप्रत्यक्ष रीति द्वारा प्रमाप विचलन का परिकलन :

यदि समान्तर माध्य पूर्णाक में नहीं आता है तब माध्य से विचलन एवं उन विचलनों क वर्ग करने में कठिनाइ आती है । अत: ऐसी स्थिति में लघु रीति अधिक उपयोगी रहती है । इसकी परिकलन क्रिया निम्न प्रकार है :

(i) कल्पित माध्य से प्रत्येक पद मूल्य का विचलन $dx = (x - A)$ ज्ञात करके $\sum dx$ ज्ञात कर लिया जाता है ।

(ii) विचलन वर्गो का योग $\sum d^2x$ ज्ञात किया जाता है ।

(iii) फिर निम्नलिखित सूत्र का उपयोग करके प्रमाप विचलन का परिकलन किया जाता है।

$$\sigma = \sqrt{\frac{\sum d^2x}{N}} - \sqrt{\left(\frac{\sum dx}{N}\right)^2} \quad \text{या} \quad \sigma = \sqrt{\frac{\sum d^2x}{N}} - \sqrt{(\bar{x} - A)^2}$$

उदाहरण : 2 पिछले उदाहरण (उदाहरण 1) में दिये गये समंकों से अप्रत्यक्ष या लघु रीति द्वारा प्रमाप विचलन की गणना कीजिये :

हल. लघु रीति द्वारा प्रमाप विचलन का परिकलन

दिन	x	A=16 Dx=x-a	2dx
1	18	2	4
2	15	-1	1
3	16	0	0
4	17	1	1
5	16	0	0
6	25	9	81
7	192	3	9
N=7		$\sum dx$ = 14	$\sum d^2x$ = 96

$$\sigma = \sqrt{\frac{\sum d^2x}{N}} - \sqrt{\left(\frac{\sum dx}{N}\right)^2} = \sqrt{\frac{96}{7}} - \left(\frac{14}{7}\right) = \sqrt{13.71 = 3.11}$$

द्वितीय सूत्र. $\sigma = \sqrt{\frac{\sum d^2x}{N}} - (\bar{x} - A)^2 = \sqrt{\frac{96}{7}} - 4 == 3.11$

खंडित श्रेणी में प्रमाप विलचन का परिकलन (Calculation of Standard deviation in discrete series): खण्डित श्रेणी में प्रामप विचलन का परिकलन निम्न सूत्र की सहायता से किया जाता है ।

सूत्र (1) प्रत्यक्ष रीति द्वारा

$$\sigma = \sqrt{\frac{\sum (x - \bar{x})^2}{N}}$$

या $\sigma = \sqrt{\frac{fi\ \ xi^2}{N}}$ जहाँ $x_1 = x_1 - \bar{x}$

$fi\ \ xi^2$ मूल्य की आवृति

उदाहरण : 3 निम्न समंकों के आधार पर प्रमाप विचलन का परिकलन कीजिये.

Marks obtained	0	1	2	3	4
No. of boys	1	9	7	5	3

हल प्रत्यक्ष रीति द्वारा प्रमाप विचलन का परिकलन

Marks (x) obtained	No. of boys	fx	Deviation from (dx) mean	fdx	Fd^2x
0	1	1	-2	-2	4
1	9	9	-1	-9	9
2	7	14	0	0	0

3	5	15	1	5	5
4	3	12	2	6	12
	N=35	$\sum fx$ = 50		30	

$$\overline{x} = \frac{\sum fx}{N} = \frac{50}{25} = 2$$

$$\sigma = \sqrt{\frac{\sum fd^2x}{N}} = \sqrt{\frac{30}{25}} = \sqrt{1.2 = 1.1}$$

अखण्डित श्रेणी के लिये प्रमाप विचलन का परिकलन ((Calculation of SD for Cotinuous series)

सतत श्रेणी के वर्गो के मध्य बिन्दु ज्ञात कर लेने पर वह खंडित श्रेणी हो जाती' है । फिर मध्य बिन्दुओं को चर मूल्य मानकर खण्डित श्रेणी की भांति ही प्रमाप विचलन का परिकलन किया जाता. है.।

उदाहरण : 4 निम्न समंकों से प्रमाप विचलन ज्ञात कीजिये :

प्राप्तांक	0-9	10-19	20-29	30-39	40-39
विद्यार्थियों की संख्या	12	15	40	22	11

प्राप्तांक	विद्यार्थियों की सांख्य f	मध्यमान x	x-24.5	fdx	fd^2x
0-9	12	405	-20	-240	4800
10-19	15	1405	-10	-150	1500
20-29	40	2405	0	0	0
30-39	22	3405	10	220	2200
40-49	11	44.5	20	220	4400
	$\sum f$ = 100 I.e N = 100			$\sum fdx$ = 50	$\sum fd^2x$ = 12900

$$\sigma = \sqrt{\frac{\sum fd^2x}{N}} = \sqrt{\left(\frac{\sum fdx}{N}\right)^2} = \sqrt{\frac{12900}{100} - \left(\frac{50}{100}\right)^2}$$

या $\sigma = \sqrt{129 - 25} = 11.34$

पद विचलन रीति द्वारा प्रमाप विचलन परिकलन यदि सतत श्रेणी में वर्ग विस्तार समान हों तो कल्पित माध्य से विचलन ज्ञात करते समय समान वर्ग विस्तार के बराबर अभय निष्ठ गुणांक निकल लिया जाता है । इससे गणन कार्य आसान हो जाता है । अन्य गणन प्रक्रिया पूर्व की भांति ही रहती है । प्रमाप विचलन क परिकलन के लिये निम्न सूत्र का प्रयोग किया जाता है ।

$$\sigma = \sqrt{\frac{\sum fd^2x}{N}} = \sqrt{\left(\frac{\sum fdxN}{N}\right)^2} x\ i$$

अर्थात $\sigma = i\sqrt{\frac{\sum fd^2x}{N}} - \frac{\sum fdx^2}{N} x\ i$

जहा i = वर्ग विस्तार

उदाहरण : 5 उदाहरण 4 के समंकों से पद विचलन रीति द्वारा प्रमाप विचलन का परिकलन कीजिये ।

प्राप्तांक संख्या x	विद्यार्थियों की f	मध्यमान	dx $\frac{X-245}{10}$	fdx	fd^2x
0-9	12	405	-2	-24	48
10-19	15	14.5	-1	-15	15
20-29	40	24.5	0	0	0
30-39	22	34.5	1	22	22
40-49	11	44.5	2	22	44
	N= 100		$\sum fdx$ = 5		$\sum fd^2$ = 129

पद विचलन सूत्र द्वारा प्रमाप विचलन का परिकलन यहाँ i = 10

$$\sigma = i\sqrt{\frac{\sum fd^2x}{N}} - \left(\frac{\sum fdx}{N}\right)^2 = \sqrt{\frac{129}{100}\frac{5}{100}}x10 = 11.34$$

प्रमाप विचलन (σ) का समूहन त्रुटि के लिये संशोधन : Correcting for grouping error: जब आवृति विरतण से (σ) गणना की जाती है तब प्रत्येक अन्तराल की आवृत्तियां अन्तराल के मध्य मूल्य की आवृत्तियाँ मानी जाती है । जबकि किसी भी अन्तराल में आवृत्तियों का बंटन मध्य बिन्दु पर सदैव सममित नहीं होता । समूह में समायोजन के लिये संशोधन जिसे शेफर्ड संशोधित कहा जाता है, इस्तेमाल किया जाता है । सूत्र यह है

$$\sqrt{\sigma}\frac{i^2}{12}$$

यहाँ i = वर्ग अन्तराल

19.7 विचलन गुणांक (Coefficient of variation)

दो या दो अधिक श्रेणियाँ के अपकिरण की तुलना करने के लिये विचलन गुणांक का परिकलन किया जाता है । इसका परिकलन निम्न सूत्र से किया जाता है :

विचलन गुणांक $\frac{\sigma}{x}x100$

उदाहरण. यह शिक्षा वाले एक विद्यालय में स्थापना दिवस के अवसर पर प्रत्येक लड़के और लड़की से कुछ शारीरिक श्रम करने के उद्देश्य से उनके अलग-अलग निम्न समूह बना दिये गये । लड़के तथा लड़कियों के लिए अलग-अलग प्रमाप विचलन की गणना कीजिये । विचरण गुणांकों के आधार पर ज्ञात कीजिये कि किस श्रेणी में विचरण अधिक है ।

Minutes of labour given by each individual	no. of girls	no. of boys
60	20	120
55	60	100
50	100	200
45	450	355
40	450	350
35	300	500
30	250	350
25	100	20

हल.

Minutes of labnour given by each individual	$dx=\frac{x-45}{5}$	No. of girl f	fidxi	fid^2x	No. of Boys f	fdx	fd^2x
60	3	20	60	180	120	360	1080
55	2	60	120	240	100	200	400
50	1	100	100	100	200	200	200
45	0	450	0	0	355	0	0
40	-1	450	-450	450	350	-350	350
35	-2	300	-600	1200	500	-1000	2000
30	-3	250	-750	2250	350	-1050	3150
25	-4	100	-400	1600	20	-80	320
योग		1730	-1920	6020	1995	-1720	7500

For girls

$$\sigma\sqrt{\frac{fd^2x}{N}-\left(\frac{\sum fdx}{N}\right)^2}\,i=\sqrt{\frac{6020}{1730}-\left(\frac{-1920}{1730}\right)^2}\,x\,5$$

या $\sigma_1=\sqrt{3.48-1.23}-x5=7.4965$

लड़कों के लिए प्रयोग विचलन का परिकलन

$$\sigma_2 = \sqrt{\frac{\sum f'd^2x}{N} - \left(\frac{\sum fdx}{N}\right)^2} xi = \sqrt{\frac{7500}{1995} - \left(\frac{-1720}{1730}\right)^2} x\,5$$

$$\sigma_2 = \sqrt{(3.7594 - 0.7434)} x5 = 8.6830$$

लडकियों के लिए माध्य $45 + \frac{-920}{1730} = 39.45 = \overline{x}_1$

लड़कों के लिए माध्य $= \frac{-1720}{1995} + 45 = 40.69 x_2$

लड़कियों के लिये विवरण गुणांक $CV_1 = \frac{\sigma_1}{\overline{X}_1} X100 = \frac{8.6830}{40.69} X100 = 21.3$

अत: लडकियों के समूह में समरूपता अधिक है ।

उदाहरण : 2 छात्रों के दो समूहों द्वारा एक परीक्षण में प्राप्त प्राप्तांकों का बंटन निम्न प्रकार है ।

प्राप्तांक	**समूह A**	**समूह B**
0	15	20
1	10	10
2	7	5
3	5	4
4	3	2
5	2	1

विचरण गुणांक के आधार पर ज्ञात कीजिये कि किस समूह में अधिक स्थिरता है ।

विचरण गुणांक का परिकलन

		विद्यार्थियों की संख्या					
प्राप्तांक	A=3 dx=x-A	f	समूह A fdx	fd^2x	f	समूह B fdx	fd^2x
0	-3	16	-45	135	20	-60	180
2	-2	10	-20	40	10	-20	40
3	0	5	0	0	4	0	0
4	1	3	3	9	2	2	2
5	2	2	4	8	1	2	4
		42	-65	193	42	-81	231

समूह A के लिये

माध्य $= + \frac{-65}{42} = 1.45 = \overline{X}_1$

$$\sigma_{1=}\sqrt{\frac{\sum fd^2x}{N}-\left(\frac{\sum fdx}{N}\right)^2}=\sqrt{\frac{193}{42}-\left(\frac{-65}{42}\right)^2}=1.48$$

विचरण गुणांक - $\frac{\sigma_1}{X_1}=\frac{1.48}{1.45}=102.07$

समूह B के लिये

$$\bar{X}=3+\frac{-81}{42}=1.07$$

$$\sigma_{2=}\sqrt{\frac{\sum fd^2x}{N}-\left(\frac{\sum fdx}{N}\right)^2}=\sqrt{\frac{231}{42}-\left(\frac{81}{42}\right)^2}=1.33$$

विचरण गुणांक - $CV=\frac{\sigma_2}{X_2}X100=\frac{1.33}{1.07}X100=124.03$

अत: समूह A में समरूपता अधिक है ।

उदाहरण : 3 दो विद्यार्थियों x एवं y द्वारा एक परीक्षा में विभिन्न विषयों में प्राप्तांक निम्न है बताईये किस विद्यार्थी के प्राप्तांकों में अधिक समरूपता है ।

x	12	85	06	73	∘7	19	99	36	84	29
y	47	12	76	42	4	51	37	48	13	0

हल: यदि ज्ञान करने के लिये कि किस विद्यार्थी के प्राप्तांकों में समरूपता है हमें विचरण गुणांक ज्ञात करके उनकी तुलना करनी होगी ।

x	x-x=d	D^2	y	y-y=d	D^2	--
12	-33	1089	47	14	196	$\bar{x}=\frac{450}{10}45$
85	40	1600	2	-21	441	$\bar{y}=\frac{330}{10}33$
06	-39	1521	76	43	1849	Student A
73	28	784	2	9	81	$\sigma X\frac{\sum d^2}{N}$
07	-38	1444	04	-29	841	$\sqrt{\frac{11888}{10}}=34.5$
19	-26	676	51	18	325	
99	54	2916	37	4	16	$\sigma\sqrt{\frac{11888}{10}}=34.5$
36	-9	81	38	15	225	Cv for x=$\frac{34.5}{45}X$ = 100 = 76.66
84	39	1521	13	-20	400	
29	-16	256	0	-33	1089	

$\sum x$ = 450	1888	330	5462	Cv for y=$\frac{23.4}{33}X$ = 100 = 70.1

विचरण गुणांकों की तुलना करने पर ज्ञात होता है कि Y के प्राप्तांकों में अधिक समरूपता है ।

उदाहरण : 4 एक फुटबॉल मैच में दो विद्यालयों A एवं B की टीमों द्वारा बनाये गये गोलों की संख्या का बंटन निम्न प्रकार है ।

बनाये गये गोलों की संख्या	0	1	2	3	4
मैचों की संख्या टीम A	27	9	8	5	4
टीम B	17	9	6	5	3

बतलाइये किस विद्यालय का खेल अधिक संगत या स्थिर है ।

हल : माध्य एवं प्रमाप विचलन का परिकलन

	टीम A				टीम A			
X	f_1	d_x	fdx	fd^2x	f_2	d_x	fdx	fd^2x
0	27	-2	-54	108	17	-2	-34	68
1	9	-1	-9	9	9	-1	-9	9
2	8	0	0	0	6	0	0	0
3	5	1	5	5	5	1	5	5
4	4	2	8	16	3	2	6	12
N1=35			$\sum fdx = -50$	$\sum fd^2x = -138$	$N_2 = 40$		$\sum fdx = -32$	$\sum fd^2x = 94$

टीम A

औसत गोलों की संख्या

$$= A + \frac{\sum fd^2x}{N_1} = 2 + = \frac{-50}{53} = 1.06$$

अतः $\overline{x}_1 = 1.06$

$$\sigma_1 = \sqrt{\frac{\sum fd^2}{N_1} = \left(\frac{\sum fdx}{N_1}\right)^2} = \sqrt{\frac{138}{53} - \left(\frac{50}{53}\right)^2} = 1.31$$

$$CV = \frac{6}{x} \times 100 = \frac{1.31}{1.06} \times 10\sigma = 123.6$$

टीम B

$$x = A - \frac{\sum fdx}{N} = 2 + \frac{-32}{40} = 1.31$$

$$\sigma = \frac{\sum fdx}{N} - \left(\frac{\sum fdx}{N}\right)^2 = \sqrt{\frac{94}{40} - \left(\frac{-32}{40}\right)^2} = 1.31$$

$$CV = \frac{6 \times 100}{X} = \frac{1.31}{1.20} \times 100 = 109.3$$

अत: विद्यालय B की टीम अधिक स्थिर एवं संगत है ।

19.8 स्वमूल्यांकन (Self-Assessment)

1 एक कक्षा के 10 विद्यार्थियों में प्राप्तांक निम्न प्रकार है । विस्तार एवं गुणांक द्वारा कीजिये।

क्रम सं.	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
प्राप्तांक	34	16	28	26	19	6	19	19	35	40

2. प्र.स. 1 के आँकड़ो से अर्द्ध चतुर्थक विस्तार एवं गुणांक की गणना कीजिये ।
3. निम्न सारणी से चतुर्थक विचलन एवं इसका गुणांक ज्ञात कीजिये ।

ऊँचाई इंचों में	50-53	53-56	56-59	59-62	62-65	65-68
	2	7	24	27	13	3

4. निम्न समंकों से समान्तर माध्य द्वारा निम्न माध्य विचलन एवं प्रमाप विचलन ज्ञात कीजिये प्रमाप विचलन गुणांक भी ज्ञात कीजिये ।

Marks less then 5	No. of students 20
5-10	19
10-15	30
15-20	25
20-25	20
25-30	15

5. निम्न संमको, से चतुर्थक विचलन, औसत या माध्यम विचलन एवं प्रमाप विचलन एवं इनके गुणांक ज्ञात कीजिये ।

X	11-15	16-20	21-25	26-30	31-35	36-40
F	5	19	22	35	12	8

19.9 संदर्भ ग्रन्थ (Reference)

1. Fundamentals of Applied Station by: S.C. Gupta and V.K. Kapoor.
2. सांख्यिकी खण्डेलवाल, गुप्ता, गुप्ता
3. शिक्षा एवं मनोविज्ञान में सांख्यिकी के प्रयोग हेनरी ई. गेरिट

इकाई 20

सापेक्ष स्थानिक माप

(MEASURES OF RELATIVE POSITIONS)

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

20.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aim and Objectives)

20.1 प्रस्तावना (Introduction)

20.2 विभिन्न स्थानिक मानों के गणना सूत्र (Formula for calculation of relative position)

20.3 आवृत्ति वितरण में प्रतिशत क्रम की गणना (Calculation of Percentile ranks on a frequency distribution)

20.4 व्यवस्थित आकड़ों में प्रतिशत क्रम की गणना

20.5 परीक्षण पदों का परिमापन (Sealing of Scores on a Test)

20.6 Z (या σ) प्राप्तांक एवं Z (या σ) परिमापन (Z-Scores and Z Scaling)

20.7 स्वमूल्यांकन (Self-Assessment):

20.8 संदर्भ ग्रन्थ (References)

20.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aim and Objectives)-

- सापेक्ष स्थानिकों एवं उनकी मापन विधियों को स्पष्ट करेंगे।
- दिये गये दत्तों के लिए स्थानिकों की गणना कर सकेंगे ।

20.1 प्रस्तावना (Introduction)

आप यह पूर्व में पढ़ चुके हैं कि मध्यका (median) आवृत्ति वितरण में वह बिन्दु होता है जो समंक श्रेणी को दो बराबर भागों में बाँट देता हैं अर्थात् जिससे कम मूल्य के माप या प्राप्तांक 5०% होते हैं एवं जिससे अधिक मूल्य के माप या प्राप्तांक की 50% होते हैं । इसी प्रकार प्रथम चतुर्थक Q_1, तथा तृतीय चतुर्थक Q_3, समंक श्रेणी के ऐसे बिन्दु हैं जिनके नीचे क्रमश : 25% एवं 75% माप का प्राप्तांक होते है। इसी प्रकार हम उन बिन्दुओं की गणना कर सकते है जिनके नीचे 20%, 45%, 80% अथवा प्राप्तांकों का अन्य कोई प्रतिशत हैं । इन बिन्दुओं को प्रतिशतक (percentile) कहते हैं एवं सामान्य रूप से इन्हें P_1, प्रतीक द्वारा प्रदर्शित करते है P से आशय उस मूल्य के नीचे के प्राप्तांकों के प्रतिशत से हैं, उदाहरणार्थ P_{70} वह बिन्दु है जिसके नीचे 70% प्राप्तांक हैं ।

प्रतिशत मूल्यों की गणना : प्रतिशतक मूल्यों की गणना मध्यका की गणना की तरह ही होती है। इनमें मध्यका ज्ञान करने के शून्यों के संशोधित रूप में लागू किया जाता है । इसके अलावा शेष प्रक्रिया मध्यका की तरह ही है । संशोधित शून्यों को निम्न तालिका में दर्शाया गया है ।

20.2 विभिन्न स्थानिक मूल्यों के सूत्र (Formula for different relative positions):

स्थानिक मूल्य	संकेताक्षार	व्यक्तिगत अंश खण्डित श्रेणी में पदों की संख्या	सतत -या अविछिन्न श्रेणी में पदों की संख्या	सतत श्रेणी के लिये सूत्र
प्रथम चतुर्थक	Q1	$\frac{N+1}{4}$	$Q_1 = \frac{N}{4}$	$I_1 + \frac{i}{f}(Q_1 - c)$
तृतीय चतुर्थक	Q_3	$3\frac{(N+1)}{4}$	$Q_3 = \frac{3N}{4}$	$I_1 + \frac{i}{f}(Q_3 - c)$
दशम प्रतिशतक़	P_{10}	$\frac{10(N+1)}{100}$	$P_{10}\frac{10N}{100}$	$I_1 + \frac{i}{f}(P_{10} - c)$
एकसठवा प्रतिशत	p_{61}	$\frac{61(N+1)}{100}$	$p_{61} = \frac{61(N+1)}{100}$	$I_1 + \frac{i}{f}(P_{61} - c)$
व्यपाक रूप से प्रतिशत	P_P	$\frac{P(N+1)}{100}$	$p_p = \frac{pN}{100}$	$I_1 + \frac{i}{f}(P_p - c)$

25वें प्रतिशतक की गणना

$$Q_1 = 1_1 + \frac{i}{f}\left(P_{25} - C\right)$$

$$= 30 + \frac{10}{12}\left(25 - 20\right)$$

$$= 34.17$$

60 वां प्रतिशतक पदों की संख्या $60x\frac{100}{100} = 60$

प्रतिशतक समूह 40 - 50

60 वें प्रतिशतक बिन्दु की गणना

$$40 + \frac{10}{28} = \left(60 - 32\right) = 50$$

70 वां प्रतिशतक

पदों की संख्या $\frac{75x100}{100} = 70$

प्रतिशतक समूह 50-60

70 वें प्रतिशतक बिन्दु की गणना

$$50 + \frac{10}{20} = \left(70 - 60\right) = 55$$

75 वीं प्रतिशतक पदों की संख्या-

$$\frac{75x100}{100} = 75$$

प्रतिशतक समूह 50-60

75 वें प्रतिशतक बिन्दु की गणना

$$50 + \frac{10}{20} = (75 - 60) = 57.5$$

20.3 आवृत्ति वितरण में प्रतिशत क्रम की गणना (Calculation of percentile ranks on a frequency distribution)

पिछले खण्ड में आप यह देख चुके हे कि प्रतिशतक की गणना जैसे $P_{25,}P_{60}$ या P_{70} की स्थिति का ज्ञान आवृत्ति वितरण से सीधा ज्ञात किया जा सकता है । अब हम किसी व्यक्ति के प्रतिशत क्रम उपरोक्त सूत्र नीचे से ऊपर की ओर आवृत्ति वितरण से विभिन्न प्रतिशतकों की गणना के लिये है ।

उदाहरण. 1 निम्नलिति समंकों से 25 वें, 60 वें 70 वें तथा 75 में प्रतिशतको की गणना कीजिये-

प्राप्तांक	विद्यार्थीयों की संख्या
80 से कम	100
70 से कम	90
60 से कम	80
50 से कम	60
40 से कम	32
30 से कम	20
20 से कम	13
10 से कम	5

हल: समंक श्रेणी को अवरोही क्रम में रखने पर

सारणी : 1

प्राप्तांक Scors	बारंबारता	संचयी बारंबारता
70-80	10	100
60-70	10	90
50-60	20	80
40-50	28	60
30-40	12	32
20-30	-	20
10-20	8	13
0-+10	5	5

25वां प्रतिशतक

पदों की संख्या $\frac{25x100}{100} = 25$, प्रतिशतक समूह 30-40

(60 के नीचे के प्राप्तांक) में जोड़ते हुए हमें 62, के नीचे स्थित प्राप्तांक की संख्या/ N के रूप में प्राप्त होता है । अत: प्राप्तांक 62 का प्रतिशतक्रम 82 है ।

निम्न आरेख गणना को स्पष्ट कर देगा ।

60 के नीचे 80 प्राप्तांक है । अनुमानत. 60-70 पर 10 प्राप्तांक 10 के अन्तराल पर है। हम 1 प्राप्तांक अन्तराल की प्रति इकाई पर रखते हे । प्राप्तांक 82,60 से 2 इकाई प्राप्तांक की दूरी पर है ।

या 82 प्राप्तांक आवृति वितरण में 82 (80+2) या 80% पर स्थित है ।

$$PR = 100 - \frac{(100R - 50)}{n}$$

(Percentile rank-PR) या 100 के पैमाने पर, उस व्यक्ति को प्राप्ता प्राप्तांक की स्थिति को ज्ञात करने की समस्या का अध्ययन करेंगे । प्रतिशतक की गणना का आरम्भ त की निश्चित प्रतिशत से होता है जैसे 10%, 40% इसके लिये पहले वितरण में दिये गये प्रतिशत गणना करते हैं और फिर उस बिन्दु पर पहुँचते है जहाँ पर वांछित प्रतिशत जैसे P_{10} या P_{30} स्थित हैं प्रतिशतक क्रम गणना में इस प्रक्रिया को उल्टे रूप से अपनाया जाता है । यहाँ गणना व्यक्ति के प्राप्तांक से आरम्भ करते है और उसके नीचे स्थित प्राप्तांक का प्रतिशत ज्ञात करते है यदि प्रतिशत 60 है तो इसे यह कह सकते है प्रतिशत या न 100 के पैमाने पर 60 है ।

हम सारणी 1 के समंकों का उपयोग करके उपरोक्त कथन की व्याख्या करेंगें । जेसे यदि हमें 82 अंक प्राप्त करने वाले व्यक्ति का प्रतिशत क्रम (PR) ज्ञात करना है तब हम देखते हैं कि प्राप्तांक 60-70 वाले अन्तराल में स्थित है । इस अन्तराल की निम्न सीमा 60 से 80 प्राप्तांक नीचे हैं और इस अन्तराल में 10 प्राप्तांक फैले हुये है । प्राप्तांकों की संख्या 10 को अन्तराल के आकार 10 से भाग देने पर 1 अन्तराल की प्रति इकाई के रूप में प्राप्त हुआ । प्राप्तांक 821 जिस अन्तराल (60-70) में यह स्थित है उसकी निम्नतम सीमा 60 से 2 इकाई दूरी है। 2 को 1 से भाग देने पर 2 आता है जो 60 से 82 की दूरी बतलाता है और 2 को 80 उसका स्थान 8 वां है तथा उसकी अग्रेंजी की कक्षा में 22 विद्यार्थी है जिनमें उसका स्थान 8 वां है । इन दोनों स्थितियों की तुलना निम्न प्रकार हो सकती है.

हिन्दी में अभिषेक का PR $100 - \frac{100X6 - 50}{11} = 45$ है ।

एवं अंग्रेजी में उसके PR $100 - \frac{100X8 - 50}{22} = 65$ है ।

अत: उपरोक्त तुलना से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि अपनी कक्षा में अभिषेक हिन्दी की अपेक्षा अंग्रेजी में अच्छा है ।

20.5 परीक्षण पदों का परिमापन (Sealing of Scores on a Test)

मान लीजिए कि कुछ विद्यार्थियों का 5 अलग-अलग विषयों मे परीक्षण लिया गया। माना अंग्रेजी, विज्ञान, सांख्यिकी, इतिहास एवं मनोविज्ञान । विद्यार्थियों की योग्यता मापन की प्रचलित विधि के अनुसार किसी विद्यार्थी की योग्यता मापने के लिये हम उसके विभिन्न विषयों में यथा प्राप्तांकों का योग कर इस योग के आधार पर उसके योग्यता क्रम का निर्धारण कर लेते है । जिस विद्यार्थी के प्राप्तांकों का योग सर्वाधिक होगा वह योग्यता क्रम में प्रथम स्थान पर होना इसी प्रकार अन्य छात्रों के योग्यता क्रम का निर्धारण कर लेते है ।

यहाँ प्रश्न यह उठता है कि क्या इस प्रकार प्राप्त प्राप्तांक के आधार पर तुलना करना न्याय संगत है? स्पष्ट रूप से इसका उत्तर होगा 'नही'। क्योंकि विभिन्न विषयों मे वही यथा प्राप्त प्राप्तांक (माना x) प्राप्त करने के लिये अलग-अलग योग्यता स्तर की आवश्यकता होगी ।

(व्यक्ति या वस्तुओं को योग्यता के अनुसार प्रतिशतक क्रम में निर्धारित करना)

इसमें R क्रम की स्थिति है, #1 उच्चतम रूप से गिनते हुये N को निम्नतम (Lowest) मान लेते है । ऊपर उदाहरण में, वह छात्र जिसको न या उच्चतम योग्यता क्रम में रखा गया है, का

$$PR = 100 - \frac{(100-50)}{20}$$ या 97.5 है ।

वह छात्र जिसको 10 वें क्रम में रखा गया है उसका

$$PR = 100 - \frac{(100-50)}{20} = 52.5$$ है ।

शैक्षिक वर्ष के मध्य यदि छात्रों की सामान्य स्तर की प्राप्ति के लिये क्रम बद्ध किया जाये तो प्रत्येक छात्र प्रतिशतक पैमाने पर एक श्रेणी (Division) प्राप्त करेगा । सर्वोत्तम छात्र का PR 99.5 (99-100 अन्तराल का मध्य बिन्दु है) और निकृष्ट छात्र का PR-5 (निम्नतम अन्तराल 0-1 का मध्य बिन्दु) है । इसी प्रकार 60 वें छात्र का

$$PR = 100 - \frac{(100x60-50)}{100} = 40.5$$

है जो अन्तराल 40-41 का मध्य बिन्दु है । इस प्रकार PR अन्तराल का मध्य बिन्दु होता है । इससे यह आशय स्पष्ट होता है कि किसी का भी PR, 0 या 100 नहीं हो सकता । ये दोनों बिंदु प्रतिशतक पैमाने की सीमा रेखाओं या सीमाओं का निर्माण करते है ।

जब किसी व्यक्ति की एक परीक्षण से दूसरे परीक्षण में तुलना करनी हो, तो ऐसी परिस्थिति में PRका उपयोग लाभदायक रहता है । ऐसी तुलना के लिये यह आवश्यक नहीं कि दोनों ही परिस्थिति में PR समान है । उदाहरणार्थ माना एक छात्र अभिषेक की हिन्दी की कक्षा में 11 विद्यार्थी है । और इसमें उसका नाम छठा एवं प्रमाप विचलन 1 है। अत: यह समतुल्य नहीं है एवं इनकी तुलना नहीं की जा सकती । यथा प्राप्त प्राप्तांकों के मध्य तुलना को न्याय संगत बनाने के लिए इन प्राप्तांकों के मध्य तुलना को न्याय संगत बनाने के लिए इन प्राप्तांकों का कुछ निश्चित मान्यताओं के आधार पर प्रतिमान करते हैं ।

20.6 Z (या σ) प्राप्तांक एवं z (या σ) परिमापन (Z-Scones and Z-scaling)

माध्य से लिये गये विचलनों को जब प्रमाप विचलन σ रूप में प्रदर्शित किया जाता है । उन्हें σ या Z में प्राप्तांक कहते है । उदाहरणार्थ माना किसी परीक्षण में प्राप्तांक (x) के बंटन का माध्य रूएवं प्रमाप विलचन उहो तो यथा प्राप्त प्राप्तक x को z प्राप्तांक या z पैमाने पर निम्न प्रकार से व्यक्त किया जा सकता है ।

$$Z = \frac{x-\mu}{\sigma}$$

जैसे यदि किसी परीक्षण में यथा प्राप्त प्राप्तांकों के बंटन का माध्य यदि 30 हो एवं प्रमाप विचलन 15 हो, तो z पैमाने पर उस छात्र के प्राप्तांक जिसके यथा प्राप्त प्राप्तांक 45 है ।

$Z = \frac{45-30}{15} = 1$ होंगे अर्थात् उस छात्र का

Z अथवा σ प्राप्तांक 1 होगा ।

Z का प्रत्याशित मान $E(Z) = E\left(\frac{x-\mu}{\sigma}\right) = 0$

एवं Z का प्रसरण $= \text{var}\left(\frac{x-\mu}{\sigma}\right)$

$$= \frac{1}{\sigma}(\text{var } X) = 1$$

इस प्रकार σ परिणाम वह है जिसका माध्य शून्य एवं प्रमाप विचलन है । यद्यपि सैद्धान्तिक आधार σ परिमापन के आधार पर न्याय संगत रूप से तुलना की जा सकती है । परन्तु व्यावहारिक रूप में निम्न कठिनाइयों के कारण इसका उपयोग सुविधा जनक नहीं रहता ।

(i) लगभग 50% परिमाप माध्य के नीचे होंगे अर्थात् लगभग आधे परिमाप ऋणात्मक होंगे।

(ii) इसकी इकाई एक प्रमाप विचलन (one Standard deviation) बहुत बड़ी है । इससे अधिकांश σ परिमाप दशमलव में आते है ।

उपर्युक्त दोनों कमियों को दूर करने के लिये निम्न प्रक्रिया अपनायी जाती है ।

(i) σ सभी परिमापों को धनात्मक करने के लिये उनमें एक निश्चित संख्या μ^1 जोड़ दी जाती है

(ii) परिमापन की इकाई को छोटा करने के लिए (1) में प्राप्त प्राप्तांकों को एक निश्चित संख्या μ^1 (सामान्यत: 10) से गुणा कर दिया जाता हैं । इस प्रकार σ परिमापों को एक प्रकार के नये परिमापों जिनका माध्य μ^1 एवं प्रमाप विचलन σ है में बदल दिया जाता है ।

प्रामाणिक प्राप्तांक (Standard Score) :

उपरोक्त प्रकार से जब σ प्राप्तांक μ^1 माध्य एवं σ^1 प्रमाप विचलन वाले नये प्राप्तांकों में परिवर्तित किये जाते हैं तो वे प्रमाणित प्राप्तांक कहलाते है । इस प्रकार प्रमाणित प्राप्तांक

X_1 (जिसका माध्य न एवं प्रमाप विचलन σ^1 है) यथा प्राप्तांक Z, जिसका माध्य μ^1 एवं प्रमाप विचलन μ^1 है से निम्न प्रकार सम्बन्धित है.

$$\frac{X_1^1 - \mu^1}{\sigma^1} = \frac{x - \mu}{\sigma^1}$$

या $X^1 = \mu^1 + \sigma^1 \frac{x - \mu}{\sigma^{(1)}}$

या $X^1 = \mu^1 + \sigma^1 z$

जहां $Z = \frac{x - \mu}{\sigma}$

(1) को हम निम्न प्रकार भी व्यक्त कर सकते है.

$$X^1 = \frac{\sigma^1}{\sigma} x - \left[\frac{\sigma^1}{\sigma} \mu - \mu^1 \right] \quad (ii)$$

चूंकि दायें पक्ष की सभी राशियाँ ज्ञात है अत: प्रभावित प्राप्तांक X^1 का मान ज्ञात किया जा सकता है ।

उदाहरण 1 : परीक्षा में छात्रों के प्राप्तांकों के एक आवृत्ति वितरण में मध्यमान 86 एवं प्रमाप विचलन 15 है । राम एवं रहीम के यथा प्राप्त प्राप्तांक क्रमश: 45 एवं 63 है । इन्हें 500 मध्यमान एवं 100 प्रमाप विचलन वाले प्रमाणित प्राप्तांकों में परिवर्तित कीजिये ।

हल:

शून्य (।।) से

$$X^1 = \frac{\sigma^1}{\sigma} x - \left[\frac{\sigma^1}{\sigma} \mu - \mu^1 \right]$$

यहाँ σ^1 = 100, σ =15, μ =86, एवं μ =500

राम के प्रमाणित प्राप्तांक $\frac{100}{15} \times 45 \frac{-100}{15} 86 - 500$

300 + 73.3 = 373

रहीम के प्रमाणित प्राप्तांक $\frac{100}{15} \times 63 \frac{-100}{15} \times 63 - 500$

$= 420 + 80 = 500$

उदाहरण 2 : एक पठन परीक्षण में माध्य 60 एवं प्रमाप विचलन 10 है तथा गणित परीक्षण में माध्य 28 एवं प्रमाप विचलन 4 है । राम के पठन में 55 एवं गणित में 24 अंक है । σ प्राप्तांकों की गणना कीजिये एवं यह दर्शाइये कि राम किस विषय में श्रेष्ठ है । राम के अंकों को प्रमाणित प्राप्तांकों में बदलिये जिसका माध्य 100 एवं प्रमाप विचलन 20 हैं ।

हल:

राम के पठन में σ प्राप्तांक $= \frac{55 - 60}{10} = -5$ माना z^1

एवं राम के गणित में σ प्राप्तांक $\frac{24-25}{4}=.5$ माना z^2

चूंकि राम के दोनों ही विषयों में σ प्राप्तांक समान है अत: उसकी योग्यता दोनों ही विषयों में समान है ।

पठन में राम के प्रमाणित प्राप्तांक

$$x_1=\frac{20}{10}55-\left[\frac{20}{10}x60-100\right]$$

गणित में राम के प्रमाणित प्राप्तांक

$$=\frac{20}{4}x24-\left[\frac{20}{4}x26-100\right]$$

$$=120-30=90$$

उदाहरण 3 : 400 विद्यार्थियों को एक परीक्षण दिया गया । प्राप्तांकों के वितरण का माध्य 60 एवं प्रमाप विचलन 12 है । तुलनीय प्राप्तांकों की निम्न तालिका पूरी कीजिये ।

यथा प्राप्त प्राप्तांक	84	78	72	66	60	54	48	42	36
σप्राप्तांक	-	-	1	-	0	-	-	-	-
प्रमापित प्राप्तांक	-	-	-	-	50	-	40	-	-

हल

माना x यथा प्राप्तांक (raw score)को प्रदर्शित करता है तब हमें दिया हुआ है:

$$E(x)=\mu=60_1\sigma_1=12$$

σ या z प्राप्तांक निम्न सूत्र से प्राप्त होंगे ।

$$Z=\frac{x-\mu}{\sigma}=\frac{x-60}{12}\quad (i)$$

एवं प्रमाणित प्राप्तांक निम्न शून्य से प्राप्त होंगे - $x^1=\mu^1+\sigma^1 z\quad (ii)$

σ या z प्राप्तांक 0 के सम्बन्धित प्रमाणित प्राप्तांक 50है अत :

$50=\mu^1+\sigma^1 x^0$ या $\mu^1=50$

पुन: 48 से सम्बन्धित z प्राप्तांक $\frac{48-60}{12}=-1$

एवं - 1 से सम्बंधित प्रमाणित प्राप्तांक 40 है ।

अत: $40=50+\sigma(-1)$

अत: प्रमाणित प्राप्तांक हमें माध्य 50 एवं प्रमाप विचलन 10 पर प्राप्त करने हैं

अब सूत्र (i) एवं (ii) के उपयोगसे हम तालिका पूरी कर सकते है यह अगले पृष्ठ पर दिये अनुसार होगी :-,

20.7 स्वमूल्यांकन (Self-Assessment)

1. निम्न आवृति वितरण से विभिन्न प्रतिशत बिन्दुओं की गणना कीजिये ।

प्राप्तांक	बारम्बारता
95-99	1

90-94	2
85-89	4
80-84	5
75-79	8
70-74	10
65-69	6
60-74	4
55-59	4
50-54	2
45-54	3
40-44	1

2. 10 माध्य एवं 3 प्रमाप विचलन वाले एक वितरण में रवि एवं शशि के यथा प्राप्त प्राप्तांक (raw source) क्रमश 11 व एवं 9 है । इन प्राप्तांकों को 100 माध्य एवं 20 प्रमाप विचलन वाले प्रमाणित प्राप्तांकों में परिवर्तित कीजिये ।

20.8 संदर्भ ग्रन्थ (Reference)

1. Foundation of Applied Statistics by S. C Gupta and V K Kappor.
2. सांख्यिकी. खण्डेवाल, गुप्ता एवं गुप्ता।
3. शिक्षा एवं मनोविज्ञान में सांख्यिकी : हेनरी ई.

इकाई - 21

द्विपद एवं प्रसामान्य बण्टन

(BINOMIAL AND NORMAL AND DISTRIBUTION)

इकाई की संरचना (Structure of Unit))

21.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Objectives)

21.1 प्रस्तावना (Introduction)

21.2 यादृच्छिक चर एवं प्रायिकता बटन की अवधारणायें (Concept of Random Variable and Probability distribution)

21.3 द्विपद बंटन (Binominal Distribution)

21.4 द्विपद बटन के उपयोग (Use of binomial Distribution)

21.5 सतत् यादृच्छिक चर (Continuous Random Variable)

21.6 प्रसामान्य बंटन (Normal distribution)

21.7 प्रसामान्य बंटन का प्रायिकता घनत्व फलन (Probability density of normal distribution)

21.8 प्रसामान्य वक्र की विशेषताएँ (Characteristics of Normal distribution curve)

21.9 प्रसामान्य वक्र के अन्तर्गत क्षेत्रफल देखने की विधि (Method)

21.10 प्रसामान्य बंटन का महत्व (Importance of Normal Distribution)

21.11 स्वमूल्यांकन (Self-Assessment)

21.12 संदर्भ ग्रन्थ (Reference)

21.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप -

- प्रायिकता बंटन एवं यादृच्छचर की अवधारणा स्पष्ट कर सकेंगे ।
- प्रायिकता बंटन का महत्व असतत् एवं सतत् बटनों का भेद कर सकेंगे ।
- असतन प्रायिकता बंटन कर सकेंगे ।
- सतत् प्राथमिकता बंटन कर सकेंगे ।
- अनिश्चित की विभिन्न परिस्थितियों के लिये विभिन्न प्रकार के प्रायिकता बंटनों का उपयोग ।

21.1 प्रस्तावना (Introduction)

किसी भी सांख्यिकीय अनुसंधान से प्राप्त वास्तविक अथवा अवलोकित समांकों के समांकों के संकलन, वर्गीकरण एवं सारणीयन आदि की विधियों का अध्ययन आप पूर्व में कर चुके है । इन समंकों को जब एक आवृति सारणी या बारम्बारता तालिका (Frequency

Table)) के रूप में व्यक्त किया जाता है तो इस प्रकार की तालिका अवलोकित अथवा- प्रेषित बारम्बारता को प्रदर्शित करती है ।

व्यवहार में प्राय: अनेक बार अवलोकित समंक प्राप्त करना संभव नहीं होता परन्तु कुछ निश्चित गणितीय मान्यताओं एवं पूर्व कल्पनाओं के आधार पर समग्र के बारम्बारता बंटन के बारे में अनुमान लगाए जा सकते है । ऐसे बारम्बारता बंटन जिन्हें वास्तविक अवलोकनों अथवा प्रयोगों द्वारा प्राप्त नहीं किया जाता बल्कि कुछ निश्चित पूर्व कल्पनाओं या मान्यताओं के आधार पर गणितीय विधियों द्वारा प्राप्त किया जाता है सैद्धान्तिक बारम्बारता बंटन (Theoretical frequency Distribution) कहलाते है ।

21.2 यादृच्छिक चर एवं प्रायिकता बंटन की अवधारणायें (Concept of Random Variable and Probability distribution)

एक यादृच्छिक चर ऐसी राशि है जो दिये गयें गानों के समूह में से एक निश्चित प्रायिकता के साथ कोई भी मान ग्रहण कर सकती है । उदाहरणार्थ - दो सिक्कों के उछाल में 'चित्त आने की संख्या (प्र) एक यादृच्छिक चर है जिसके 0, 1 व 2 आदि कुल तीन मान हो सकते है ।

इन मानों की प्रायिकताएँ $\frac{1}{4} - \frac{1}{2}$ एवं $\frac{1}{4}$ होगी ।

असंगत यादृच्छिक चर (Discrete random variable), यदि यादृच्छिक चर द्वारा प्राप्त किये जाने वाले मानो का समूह गणनीय (Countable or denurable) है तो चर असंतत यादृच्छिक चर कहलाता है । जैसे बल्बों के समान आकार के विभिन्न समूहों में दूषित बलों की संख्या अथवा 20 सिक्कों के एक साथ उछाले जाने पर चित्त आने वाले सिक्कों की संख्या आदि ।

संतत यादृच्छिक चर **(Continuous Random variable)** जब यादृच्छिक चर द्वारा प्राप्त किये जाने वाले मानों का समूह अगणनीय **(non dinurable)** हो, तो इस प्रकार के यादृच्छिक चर को सतत यादृच्छिक चर कहते है ।

टिप्पणी - यादृच्छिक चर को सामान्यतया x, y, z आदि से तथा यादृच्छिक चर द्वारा प्राप्त किये जाने वाले मानों को प्र. हा आदि से प्रदर्शित करते है ।

प्रायिकता बंटन (Probability distribution) : एक ऐसी तालिका या सारणी या नियम जो एक सरल अनुप्रयोग (Simple experiment) से सम्बन्धित यादृच्छिक चर के सभी मानों के लिये प्रायिकता प्रदान करती है, उस यादृच्छिक चर का प्रायिकता बंटन या प्रायिकता फलन (Probability distribution or Probability function) कहलाती हैं । उदाहरणार्थ निम्न तालिका की संख्या का प्रायिकता बंटन प्रदर्शित करती है ।

तालिका

	शीर्षो की संख्या	प्रायिकता
परिणाम	x	

HH	2	$\frac{1}{2} X \frac{1}{2} = \frac{1}{4} -$	
HT	1	$\frac{1}{2} X \frac{1}{2} = \frac{1}{4}$	=1/2
TH	1	$\frac{1}{2} X \frac{1}{2} = \frac{1}{4}$	
TT	2	$\frac{1}{2} X \frac{1}{2} = \frac{1}{4}$	

संचयी प्रायिकता फलन (Cumulative Probability Function): यदि x एक यादृच्छिक चर है और x उसका कोई एक अंकात्मक मान है तो संचयी प्रायिकता फलन जिसे x के द्वारा प्रदर्शित किया जाता है, यादृच्छिक चर x द्वारा 'X' से छोटे या x के बराबर मान प्राप्त करने की प्रायिकता व्यक्त करता है । अर्थात $F(x) = P(x5x)$

सांख्यिकी अनुसंधान की प्रकृति के अनुसार विभिन्न प्रकार के बटनों का उपयोग किया जाता है । इनमें से सर्वाधिक प्राचीन एवं महत्व पूर्ण निम्न दो बारम्बारता बटनों का अध्ययन हम इस पाठ में करेंगे।

i द्विपद बंटन (Bionominal distribution)

ii. प्रसामान्य बंटन (Normal distribution)

21.3 द्विपद बंटन (Binomial distribution)

परिभाषा : द्विपद बंटन जिसे स्विस गणितज्ञ जेम्स बर्नोली के नाम पर बर्नोली के बंटन के रूप में भी माना जाता है - एक असतत बारम्बारता बंटन है जो द्वन्दात्मक विकल्पों (dichotomous alternatives)) जिनमें से सुविधानुसार एक को सफलता व दूसरे को असफलता के नाम से जाना जाता है, के एक समूह (सफलता अथवा असफलता) की संख्या की प्रायिकता प्रस्तुत करता है । एक द्विपद बंटन की मुख्य विशेषताएँ निम्न है ।

1. एक सरल परीक्षण (Trial) बार-बार (माना प्र बार-बार) दोहराया जाता है, जबकि प्रत्येक परीक्षण के परिणाम पिछले परीक्षण अथवा परीक्षणों से प्राप्त परिणामों में स्वतंत्र होते है।
2. प्रत्येक परीक्षण से प्राप्त परिणामों को दो सर्वसंभव परस्तपर अपवर्जी घटनाओं (जिन्हें सुविधा के लिये सफलता के नाम से जाना जाता है), मे विभक्त किया जा सकता है । यदि सफलता की प्रायिकता को P तथा असफलता की प्रायिकता को Q से प्रदर्शित किया जाये तो P+Q = 1 या Q =-P
3. असफलता की प्रायिकता 'p' परीक्षणों के प्रत्येक क्रम में प्रत्येक परीक्षण के लिये समान रहती हैं । x परीक्षणों में से $r(=,1,2-n)$ सफलता की प्रायिकता शून्य $P\left(r = c^1, p^r q^{n-r}\right)$ द्वारा प्राप्त की जा सकती हैं । उपरोक्त सूत्र में एक परीक्षण में सफलता की प्रायिकता p ज्ञान होने पर, r के विभिन्न मान रखकर विभिन्न सफलताओं की संख्या की प्रायिकता ज्ञात की जा सकती है ।
4. समस्त परीक्षण समान परिस्थितियों में किये जाते है ।

5. प्रत्येक परीक्षण में हमारा ध्यान केवल इस बात पर रहता है कि सफलता प्राप्त हुई अथवा असफलता ।

द्विपद बंटन का स्वरूप. द्विपद बंटन का रेखा चित्र आवृति बहुभुज के रूप में होता है । बहुभुज का स्वरूप p व q के मान पर निर्भर करता है । यदि p व q के मान समान है । अर्थात् p = q =1/2 तो बंटन पूर्ण सममित होगा, n का मान चाहे कुछ भी हों ।

यदि p व q के मान असमान हैं तो बंटन की असीमितता (asymmetry) n के मान में वृद्धि के साथ कम होती जाती है । अर्थात् जैसे-जैसे n के मान में वृद्धि होती है बंटन सममितता की ओर अग्रसर होता जाता है ।

द्विपद बारम्बारता बंटन: माना n परीक्षणों के एक समूह को (जिसमें द्विपद प्रायिकता नियम संतुष्ट होते है) एक अनुप्रयोग माना जाये तथा इस प्रयोग को N बार दोहराया जाये तो r सफलताओं की प्रत्याशित आवृति, द्विपद नियम के आधार पर n में से r सफलताओं की प्रायिकता को N से गुणा करके प्राप्त की जा सकती हैं अत: n बर्नोली परीक्षणों के किसी एक प्रयोग को N बार दोहराने पर r सफलताओं की प्रत्याशित अथवा द्विपर आवृति

$f_1 = N^n C_r P^r q^{n-r}$ जब कि $r = 0,1,2...n$

द्विपद बंटन के अचर मूल्य :

(i) द्विपद बंटन का माध्य n,, p

(ii) द्विपद बंटन का मानक अथवा प्रमाप विचलन द्विपद बंटन का प्रमाप विचलन $\sqrt{npq}$

टिप्पणी : यहाँ यह बात ध्यान रखनी चाहिए कि. द्विपदी बंटन का माध्य $np \geq$प्रसरण $\left(\sqrt{npq}\right)^2$

द्विपद बंटन के परिघात x = 0 के सापेक्ष द्विपद बंटन के विभिन्न परिघातो के मान निम्न है:

प्रथम परिघात $\mu_{1=0}$

द्वितीय परिघात $\mu_2 = 0^2 = npq$

तृतीय परिघात $\mu_3 = npq\left(q-p\right)$

चतुर्थ परिघात $\mu_4 = 3n^2 p^2 q^2 + npq\left(1-6pq\right)$

पिर्येसन के विषमता गुणांक : $B_1 = \frac{\mu^2{}_3}{\mu^3{}_2} = \frac{n^2 p^2 q^2}{n^3 p^3 q^3} = \frac{\left(q-p\right)^2}{n^2 p^2 q^2}$

$$B_2 = \mu^4{}_4 = \frac{n^2 p^2 q^2 + npq\left(1-p\right)^2}{n^2 p^2 q^2}$$

$$= 3 + \frac{1-6pq}{npq}$$

$$V_2 = B_2 - 3 = \frac{1-6qp}{npq}$$

उदाहरण : 1 एम. कॉम आर्थिक प्रशासक एवं वित्तीय प्रबन्ध विभाग में लेने वाले विद्यार्थी के वाणिज्य का स्नातक हो की प्रायिकता 04 है । प्रवेश के लिये आने वाले 5 विद्यार्थियों में से (1) एक भी नहीं (।।) केवल एक (।।।) क्रम से कम एक विद्यार्थी वाणिज्य का स्नातक होने की प्रायिकता ज्ञात कीजिये । (विद्यार्थी के वाणिज्य का स्नातक होने की प्रायिकता)

हल:

यहाँ सफलता की प्रायिकता $p = 0.4, q = 1 - 0.4 - 0.6 n = 5$

(i) 5 विद्यार्थियों मे से एक भी विद्यार्थी के वाणिज्य का स्नातक न होने की प्रायिकता p (r = o) हमें ज्ञात करनी है

हम जानते है कि $p\left(r = n_{\alpha} p^{1} 9^{n-r}\right)$

(1) में $r = 0, n = 5, p = o.4$ व $q = 0.6$ रखने पर

$9(0) = {}^{5}C_{0}(0.4)^{0}(0.6)^{6} = 0.08$ लगभग ।

(ii) केवल एक विद्यार्थी के वाणिज्य का स्नातक होने की प्रायिकता $p(r = 1)$ सूत्र (1) में रखने पर ।

${}^{5}C_{0}(0.4)1(0.6)^{5-1} = 5x0.04x(0.6) = 0.26$ लगभग

(iii) कम से कम एक विद्यार्थी के वाणिज्य का स्नातक होने की प्रायिकता

= 1-एक भी विद्यार्थी के वाणिज्य का

स्नातक होने की प्रायिकता

$= 1 - p(0) = 1 - .08 = 92$

उदाहरण 2 : यह जानते हुए कि एक कॉलेज के आधे छात्र शाकाहारी हैं अत: यादृच्छिक रूप से चुने हुए किसी एक छात्र के शाकाहारी होने की प्रायिकता 1/2 हैं और यह भी मानते है कि 100 अन्वेषकों में से प्रत्येक 10 छात्रों का प्रतिदर्श लेकर उनसे यह पूछता है कि वे शाकाहारी हैं या नही, तो कितने अन्वेषक यह रिपोर्ट करेंगें कि तीन या उससे कम छात्र शाकाहारी हैं ।

हल.

यदि सफलता की प्रायिकता को p व असफलता की प्रायिकता को q से प्रदर्शित करें तो q = q = 1/2 यहाँ n = 10

एवं N = 100

10 में से तीन या कम छात्रों के शाकाहारी होने की प्रायिकता

$$p(r \le 53) = p(0) + p(1) + p(2) + p(3)$$

$${}^{10}C_{0}(1/2)^{2}(1/2)^{10} + {}^{10}C_{1}(1/2)^{1}(G)^{9} + {}^{10}C_{0}(1/2)^{2}(1/2)^{18} + {}^{10}C_{0}(1/2)^{3}(1/2)^{9}$$

$$\frac{1}{2^{10}}[1 + 10 + 45 + 120] = \frac{176}{1024}$$

अत: व 10 अन्वेषकों में ऐसे अन्वेषकों की संख्या जो 3 या उससे कम छात्रों के शाकाहारी होने सम्बन्धित रिपोर्ट देनी होगी ।

$$100x\frac{176}{1024}=17.19=17$$ लगभग

उदाहरण 3 : एक कक्षा में 100 विद्यार्थी है इनमें से 20 विद्यार्थी क्रिकेट के खिलाड़ी है । यादृच्छिक रूप से चुने गये 4 विद्यार्थियों में से (i) सभी के (ii) कम से कम एक के (iii) एक भी नहीं के क्रिकेट के खिलाड़ी होने की प्रायिकता ज्ञात कीजिये ।

हल: यहाँ सफलता की प्रायिकता (विद्यार्थी के क्रिकेट का खिलाड़ी होने की प्रायिकता)

$$=\frac{20}{100}=.2=p$$

विद्यार्थी के क्रिकेट का खिलाडी न होने की प्रायकिता

$$q=1-p=1-2.2=.8, n=4$$

(i) सभी 4 क्रिकेट का खिलाड़ी होने की प्रायकिता

$$={}^4C_4(.2)^4(8)^{6-0}=.0016$$

(ii) कम से कम एक विद्यार्थी के क्रिकेट का खिलाड़ी होने की प्रायिकता = 1 - एक भी विद्यार्थी के क्रिकेट का खिलाड़ी न होने की प्रायिकता = 1 - p_0

$$1-{}^4C_0(.2)(.8)^4$$

(iii) एक भी विद्यार्थी के क्रिकेट का खिलाडी न होने की प्रायिकता

$$P(0)={}^4C_0(.2)^0(.8)^4=.096$$

21.4 द्विपद बंटन का उपयोग (Use of Bionominal distribution)

ऐसे सभी क्षेत्रों में जहाँ घटनाओं का सफलता तथा असफलता के आधार पर द्वंद विभाजन किया जा सकता है, द्विपद बंटन का प्रयोग उपयुक्त रहता है । व्यावहारिक जगत में निर्णयन से सम्बन्धित अनेक समस्याओं में विभिन्न प्रायिकताएँ निकलवाने के लिये द्विपद बंटन का उपयोग किया जा सकता है ।

उदाहरणार्थ : किसी गुण की उपस्थिति अथवा अनुपस्थिति के आधार पर छात्रों के वर्गीकरण के समय किसी चुने हुये छात्र में उस गुण विशेष की उपस्थिति की प्रायिकता ज्ञात करने के लिये भी द्विपद बंटन का प्रयोग किया जा सकता है ।

21.5 सतत यादृच्छिकता चर (Continuous Random Variable)

सतत यादृच्छिक चर एक ऐसा चर है जो कि एक दी गई सीमा में स्थित कोई भी मान प्राप्त कर सकता है । उदाहरणार्थ यदि हमें छात्रों के एक समूह की ऊंचाई से सम्बन्धित अध्ययन करना है तो यहाँ प्रयुक्त चर (छात्रों की ऊंचाई प्रदर्शित करने वाला चर) एक संतत चर होगा । क्योंकि यह एक दी हुई सीमा में स्थित कोई भी मान प्राप्त कर सकता हैं संतत चर का प्रायिकता बंटन फलन प्रायिकता घनत्व फलन (Probability density function) कहलाता है । किसी चर

सतत चर x के अन्तराल $[a,b]$ में प्रायिकता घनत्व फलन को $F(x)$ से प्रदर्शित किया जाता है और इसकी निम्न विशेषताएँ होती हैं

$$(i)\quad F(X_1)=P(x\le x)=P(-\infty\le x\le x_1)$$

$$PF(x)\ge 0$$

$$F(b)-F(a)=(a\le x\le b)=1$$

टिप्पणी : यहाँ यह ज्ञात ध्यान में रखनी चाहिये कि सतत चर द्वारा किसी एक मान के प्राप्त करने की प्रायिकता शून्य होती है । अत: संतत चर के संदर्भ मे हम प्रायिकताओं का परिकलन सदैव अन्तराल (Interval) के लिये करते हैं और प्रायिकता को सदैव क्षेत्रफल के रूप में व्यक्त करते है ।

21.6 प्रसामान्य बटन (Normal Distribution)

सतत बंटनों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण बंटन प्रसामान्य बंटन हैं यह एक शूण्डाकार आकृति वाला (Bell shapped) बंटन है जो प्रकृति में अधिकांश रूप में पाया जाता है ।

प्रसामान्य बंटन की खोज इंग्लैंड के गणितज्ञ डी. मॉवर (De Movier) ने सन् 1733 ई. में की थी । परन्तु बाद में प्रसिद्ध गणितज्ञ गॉस (Gauss) ने इसे मापन त्रुटियों के बंटन (distribution of measurement errors) के रूप में प्राप्त किया था । अत: प्रसामान्य बंटन को गॉस का बंटन (Gaussian distribution) या त्रुटियों का प्रसामान्य सिद्धान्त (Normal Law of error) भी कहते हैं ।

21.7 प्रसामान्य बंटन का प्रायिकता घनत्व फलन (Probability Density function of Normal Distribution)

यदि x एक संतत चर है जो प्रसामान्य बंटन नियम का पालन करता है तो प्र का प्रायिकता घनत्व फलन निम्न रूप से प्रदर्शित होता है

$$Y=F(x)=\frac{1}{\sqrt{2II}}e-\left(\frac{x-m}{\sigma}\right)^2\ \infty<x<\infty$$

या $Y_0=e^{-1/2x2}$

जबकि $Y=$ समानान्तर माध्य से x दूरी पर स्थित कोटि (ordinate) की ऊंचाई :

$Y_0=$ माध्य पर कोटि की ऊंचाई

m = माध्य

σ = प्रमाप विचलन

e एक स्थिरांक है जिसका मान 2.7183 के लगभग होता है ।

II = एक स्थिरांक हे जिसका मान $\frac{22}{7}$ अथवा 3.14 होता है ।

टिप्पणी 1. m (माध्य) एवं σ (प्रमाप विचलन) के मानों के आधार पर भिन्न-भिन्न मानों के लिये भिन्न-भिन्न प्रसामान्य वक्र प्राप्त किये जा सकते है ।

टिप्पणी 2 : यदि किसी प्रसामान्य वक्र का मध्य m एवं प्रमाप σ^2, हो, तो इसे हैं $N\left(m,\sigma^2\right)$ से प्रदर्शित करते है ।

टिप्पणी 3: 3 प्रसामान्य बंटन द्विपद बंटन तथा अन्य अनेक बंटनों की सीमांत स्थिति है ।

21.9 प्रसामान्य बंटन एवं प्रसामान्य प्रायिकता वक्र की विशेषताएँ (Normal Distribution and characteristics of Normal Probability Curve)

(i) सामान्य बंटन का प्रायिकता वक्र माध्य से गुजरने वाली रेखा x = m के प्रति सीमा सीमित होता है । तथा इसी आकृति शूण्डा या घण्टी जैसे होती है ।

(ii) बंटन के माध्य, मध्यिका, तथा बहुलक संपाती होते है । अर्थात् माध्य = मध्यिका = बहुलक

(iii) वक्र की कोटि, माध्य से दोनों ओर घटती जाती है और आगे चलकर x - अक्ष के उपगामी (Asymtotic) होती है ।

(iv) सैद्धान्तिक दृष्टि से चर x का विस्तार $-\infty$ से $+\infty$ तक होता है । परन्तु व्यावहारिक दृष्टि से चर का विस्तार केवल $m-3\sigma$ से $m+3\sigma$ तक होता है । चूंकि इन सीमाओं के अन्तर्गत कुल आवृति के लगभग 99.73% आवृत्तियाँ आ जाती है ।

$x=a, x=b, x-$अक्ष तथा वक्र के मध्य का क्षेत्रफल फल x के मान पराक्ष या अन्तराल (a, b) की प्रायिकता व्यक्त करता है ।

मानक प्रसामान्य चर (Standard Normal Variate)

चर $z=\dfrac{x-m}{1}$ जिसका प्रायिकता घनत्व फलन

$$f\left(z\right)=\frac{1}{\sqrt{2II}}e^{-1/2}z^2 \quad -\infty<z<\infty$$

है, मानक प्रसामान्य चर कहलाता है । इस मानक प्रसामान्य चर का माध्य शून्य एवं मानक विचलन व के बराबर होता है ।

मानक प्रसामान्य वक्र $y=f\left(z\right)$ की कोटियों $z=0$ से $z=z$ के बीच स्थित क्षेत्रफल के लिय सारणियाँ उपलव्य है ।

जब मौलिक चर x का मान x_1, तथा x_2 के मध्य रहता है तो मानक चर z का संगत मान

$\frac{z_1 - m}{\sigma}$ तथा $z_2 = \frac{z_2 - m}{\sigma}$ के मध्य रहेगा ।

21.9 प्रसामान्य वक्र के अन्तर्गत क्षेत्रफल देखने की विधि (Method of finding area under Normal Probability curve)

सांख्यकी की प्रत्येक पुस्तक के अंत मे (Area under Normal Curve)नाम की सारणी दी हुई होती है जिससे क्षेत्रफल निम्न प्रकार ज्ञात किया जाता है ।

(a) सारणी के प्रथम स्तम्भ $z(= x/\sigma)$ के 0.0 से 3.0 के मान प्रदर्शित होते हैं ।

(b) आगामी दस स्तम्भों में 0.000 से लेकर 0.09 तक लिखे होते हैं और सारणी के मुख्य भाग में क्षेत्रफल के अनुपात दिये होते है ।

(i) सर्वप्रथम पहले स्तम्भ में ऊपर से नीचे की ओर देखते जाते हैं जब तक कि दी हुयी संख्या के प्रथम दो अंक अ आ जायें ।

(ii) अब 1.2 को क्षैतिज पंक्ति तथा संख्या के तीसरे अंक यहाँ 5 हेतु 0.05 वाले स्तम्भ के प्रतिच्छेद बिन्दु पर अंकित संख्या .3944 लिख लें ।

(z = a)

अर्थात् सर्वोच्च कोटि से z = 1.25 तक का क्षेत्रफल कुल क्षेत्रफल (1) का 0.3944 है।

z के धन अथवा ऋण मान के अनुसार क्षेत्रफल सर्वोच्च कोटि के क्रमश : दाहिनी अथवा बाई ओर स्थित होता है ।

(iii) प्रारम्भ से z के ऋणात्मक मान तक का क्षेत्रफल ज्ञात करने के लिये सर्वोच्च कोटि एवं z के तस्सम्बन्धित धनात्मक मान के माध्य क्षेत्रफल ज्ञात करके उसे 0.5 में से घटा देते है । जैसे यदि हमें प्रारम्भ से z = 1.25 के मध्य का क्षेत्रफल ज्ञात करना है तो यह क्षेत्रफल होगा 0.500 - 0.3944 = 0.1056

(iv) z के दो मानों (विपरीत चिन्ह) के माध्य का क्षेत्रफल ज्ञात करने के लिये सर्वोच्च कोटि एवं z के दोनों मानों के लिये क्षेत्रफल ज्ञात कर उन्हें जोड़ दिया जाता है ।

(v) z के दो मानों (समान चिन्ह) के मध्य का क्षेत्रफल ज्ञात करने के लिये z के दोनों मानों के लिये क्षेत्रफल ज्ञात करके उनका अन्तर ज्ञात कर लिया जाता है ।

उदाहरण : 1 यह मानते हुए कि एक कक्षा के विद्यार्थियों की ऊँचाइयों का बंटन प्रसामान्य बंटन है जिसका माध्य 68.22 इंच एवं प्रसरण 10.8 इंच है । एक कॉलेज के 1000 विद्यार्थियों में से कितने विद्यार्थियों के 6 फीट (72 इंच) से अधिक लम्बे होने की आप आशा रखते है? (z = 1.15 के लिये प्रसामान्य वक्र के अन्तर्गत क्षेत्रफल 0.3749 है)

हल : प्रमाणित प्रसामान्य चर $z = \frac{x - m}{\sigma}$

यहाँ z = 72 इंच एवं $\sigma = \sqrt{10.8}$ इंच = 3.286

72 इंच से अधिक लम्बाई वाले विद्यार्थियों का अनुपात

$=(z=1.15$ के दायीं ओर का क्षेत्रफल)

= 0.5 - (सर्वोच्च कोटि z = 0 एवं z =1.15 के बीच का क्षेत्रफल)

= .5 - 3749 = .1251

अत: किसी चुने हुये विद्यार्थी के 72 इंच से अधिक

अत: 1000 विद्यार्थियों में से ऐसे विद्यार्थियों की संख्या जिनकी लम्बाई 72 इंच से अधिक है = 1000 x .125 लगभग = 125

उदाहरण : 2 दो विद्यार्थियों के प्राप्तांक क्रमश : 88 व 64 हैं यदि उन्हें प्रमाणित चर के रूप में प्रदर्शित किया जाये तो इनके प्राप्तांक क्रमश: 0.8 व -0.4 है । प्रसामान्य बंटन के माध्य व प्रमाप विचलन ज्ञात कीजिये ।

हल.

हम जानते हैं कि प्रमाणित प्रसामान्य चर $z=\frac{x-m}{\sigma}$

प्राप्तांक 88 के लिये प्रमाणित प्रसामान्य चर का मान 0.8 दिया हुआ है ।

अत: $.8=\frac{88-m(1)}{\sigma}$

इसी प्रकार प्राप्तांक 64 के लिये प्रमाणित प्रसामान्य चर का मान - 0.4 दिया हुआ है ।

अत: $-0.4=\frac{64-m}{\sigma}$

या $-0.4\sigma=64-m.....$

अत: (ii) को 2 से गुणा कर के (1) में जोड़ने पर

$-.8\sigma=128-2m$

$.8\sigma=88-m$

$0=216-3m$

या $m=72$

अब m का मान (1) में रखने पर

$.8\sigma=88-72$

या $\sigma=72$

अत: प्रसामान्य बंटन का माध्य 72 एवं मान विचलन = 20.

उदाहरण 3 : एक परीक्षा में पास होने वाले व विशेष योग्यता प्राप्त करने वाले छात्रों का प्रतिशत क्रमश: 45 व 9 हैं । यदि परीक्षा में प्राप्तांकों का बंटन प्रसामान्य बंटन हो, तो बंटन का माध्य एव प्रमाप विचलन ज्ञात कीजिये । यदि पास होने के लिये 40 एवं विशेष योग्यता प्राप्त करने के लिए कम से कम 75 अंक लाना आवश्यक हो । यदि परीक्षा में कुल 1000 छात्र बैठे तो सबरने अधिक अंक पाने वाले विद्यार्थियों में सबसे कम अंक कितने होंगे?

हल : (a) माना बंटन का माध्य. तथा मानक विचलन σ है

चूंकि पास होने वाले विद्यार्थियों की संख्या (40 से अधिक अंक पाने वाले विद्यार्थियों की संख्या) 45% प्रतिशत है ।

अत: x = 4० की कोटि के दायीं और का क्षेत्रफल कुल क्षेत्रफल का 45% होगा । माध्य कोटि एवं x = 40 की कोटि के मध्य का क्षेत्रफल कुल क्षेत्रफल का 5%प्रतिशत या .05 (वक्र के अन्तर्गत कुल क्षेत्रफल का = 1) होगा ।

माध्य कोटि व x = 40 की कोटि के मध्य .05 क्षेत्रफल के लिये प्रमाणित प्रसामान्य चर का मान 0.125 है ।

अत $0.125 = \frac{40-m}{\sigma}$

या $0.125\sigma = 40 - m(1)$

चूंकि 75 से अधिक अंक पाने वाले विद्यार्थी 9% है । अत: माध्य अंक एवं 75 अंक के मध्य अंक पाने वाले विद्यार्थी कुल विद्यार्थियों का 50-9 = 41 या प्रतिशत है।

माध्य कोटि एवं x = 75 की कोटि के मध्य 41% या .41 क्षेत्रफल होने के लिये प्रमाणित प्रसामान्य चर z का मान 1.34 है ।

अत: $1.34 = \frac{75-m}{\sigma}$

या $1.34 = 40 - m$

या $\sigma = 28.8$

या σ का मान (1) में रखने पर $.128 \times 28.8 = 40 - m$

या m = 36 लगभग

(b) 100 छात्र कुल 1000 छात्र का 10 प्रतिशत हैं । अत: z कोटि के दायीं ओर का क्षेत्रफल 10% ने की लिए प्रमाणित चर z का मान 1.28 है ।

अत: $1.28 = \frac{x-36}{288}$

या $x = 1.28x28.8 + 36 = 72.864 = 73$

अत: सर्वाधिक 100 अंक पाने वाले विद्यार्थियों में से सबसे कम अंक 73 है ।

21.10 प्रसामान्य बंटन का महत्त्व (Importance of Normal Distribution)

सांख्यिकीय अनुसंधान में प्रसामान्य बंटन का बहुत अधिक महत्व हैं । मेरिल एवं फक्स के अनुसार "आधुनिक सांख्यिक व अर्थशास्त्री शायद संगणकों के बिना काम चला लें । परन्तु उनका अनुसंधान कार्य प्रसामान्य बंटन के बिना आगे नहीं बढ़ सकता"।

प्रसामान्य बंटन का महत्त्व एवं उपयोग को निम्न प्रकार से स्पष्ट किया जा सकता है।

(i) सभी प्राकृतिक तथ्यों में प्रसामान्य बंटन की विशेषताएँ पायी जाती हैं, जैसे जन्म एवं मृत्यु दो, पत्तियों की मोटाई, छात्रों की लम्बाई आदि पर प्रसामान्य बंटन लागू होता है । अब अवलोकनों की विभागों का बंटन भी लगभग प्रसामान्य बंटन होता है ।

(ii) प्रतिचलन सिद्धांत में प्रसामान्य बंटन का अत्यधिक महत्व है क्योंकि यदि n बड़ा है $(n \geq 30)$ तो न्यादर्श की सांख्यिकीय मापों का बंटन प्रसामान्य बंटन होता है ।

(iii) प्रसामान्य बंटन ऐसे अनेक सैद्धांतिक बंटनों की सीमा का काम करता है जिनमें प्रायिकताओं का परिकलन काफी श्रम साध्य होता है ।

(iv) सांख्यिकीय किस्म नियन्त्रण में भी प्रसामान्य बंटन अधिक उपयोग है ।

21.11 स्वमूल्यांकन (Self-Assessment)

1. एक बहु विकल्प परीक्षा में 8 प्रश्न है । प्रत्येक प्रश्न के 3 समांकित उत्तर दिये गये है । एक विद्यार्थी एक सुडौल पासे के फैंके जाने पर प्राप्त परिणामों के आधार पर विभिन्न विकल्पों में से एक चुनाव करता है । यदि पासे पर व अथवा 2 का अंक आता है, तो वह प्रश्न के प्रथम विकल्प का 5 अथवा 6 का अंक आने पर तृतीय विकल्प का चुनाव करता है तो उसके द्वारा 75४० से अधिक अंक प्राप्त करने की प्रायिकता ज्ञात कीजिये जबकि उत्तर गलत होने पर ऋणात्मक अंक नहीं प्रदान किये जाते है ।

   $(An. .019)$

2. एक छात्रावास में रहने वाले 1000 छात्रों द्वारा किये जाने वाले मासिक व्यय का बंटन प्रसामान्य बंटन है । जिसका माध्य 750 रू. प्रतिमाह व मानक विचलन 50 रू. है । 688 रू. से अधिक व्यय करने वाले विद्यार्थियों की संख्या ज्ञात कीजिये । (11) 832 से अधिक व्यय करने वाले विद्यार्थियों की संख्या ज्ञात कीजिये । 10 सबसे अधिक व्यय करने वाले छात्रों में से सबसे कम व्यय कितना था?

   (Ans 95%, 5%, 865.5)

21.12 संदर्भ ग्रन्थ (Reference)

1. Agarwal, B.L.- Basic Statistics.
2. त्रिपाठी, रघुवंश - अप्रालिक सांख्यिकी
3. कपिल, एच. के. - सांख्यिकी के मूल तत्व

इकाई-22

प्राचलिक सांख्यिकी

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

22.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims ad Objectives)
22.1 प्राचलिक सांख्यिकी का अर्थ (Meaning of Parametric Statistics)
22.2 प्राचलिक सांख्यिकी के उद्देश्य (Objectives of Parametric Statistics)
22.3 सामान्य वितरण की शर्ते न होने पर अन्य सांख्यिकी का उपयोग (Use of other Statistics when condition of normal probability distribution are not fulfiled)
22.4 t- बंटन की परिभाषा (Definition of t-Test)
22.5 t- बंटन की विशेषताएं (Characteristics of t-Test)
22.6 t- बंटन पर आधारित परीक्षणों की मान्यताएँ (Assumption for using t-Distribution)
22.7 एक प्रतिदर्श पर आधारित t- परीक्षण की विधि (Method of t-Test based on one Sample)
22.8 दो स्वतंत्र प्रतिदर्शो के लिए t- परीक्षण (t-Test for two independent samples)
22.9 दो सम्बन्धित प्रतिदर्शो के मध्यमानों के अंतर की जांच के लिए t - परीक्षण (Use of t-Test to examine the significance of the difference between two means)
22.10 स्वमूल्यांकन (Self-Assessment)
22.11 संदर्भ ग्रन्थ (References)

22.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप-

- 't' बंटन की परिभाषा, उसकी स्वतंत्रता एवं कोटियों की अवधारणा स्पष्ट कर सकेंगे ।
- 't' बंटन की विशेषताओं एवं उनकी विभिन्न परीक्षण परिस्थितियों में उपयोग को स्पष्ट कर 't' का उपयोग कर सकेंगे ।
- 't' पर आधारित प्रश्नों को हल कर सकेंगे ।

22.1 प्राचलिक सांख्यिकी का अर्थ (Meaning of Parametric Statistics):

साधारणतया शैक्षिक अनुसन्धान का क्षेत्र जनसंख्या में कार्य कर रही औपचारिक शिक्षा की संस्थाएँ तथा विद्यार्थियों पर उनके पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करते हैं चूंकि शिक्षा राज्य का विषय है जनसंख्या साधारणतया बहुत बड़ी होती है और यदि केन्द्र सरकार शिक्षण

संस्थाओं को नियंत्रित करती है जैसे कि नवोदय विद्यालय या केन्द्रीय शिक्षक संस्थायें जो जनसंख्या और भी बड़ी हो सकती है । अर्जित गुण जैसे शैक्षिक उपलब्धि, बुद्धिलब्धि, अभिक्षमता, जनसंख्या को सामान्य रूप से वितरित होती है यदि हम जनसंख्या में शिक्षा का प्रभाव का अध्ययन करना चाहे तो सम्पूर्ण जनसंख्या को आधार बना नहीं पाते हैं । श्रम, धन व समय की दृष्टि से हम न्यादर्श के आधार पर जनसंख्या में उस गुण के प्रभाव का अध्ययन करते हैं यह गुण इस प्रकार के है जिनका कि हम अनुपात मापनी था । समान अन्तराल मापनी के माध्यम से अध्ययन करते हैं। न्यादर्श के आधार पर गुण को जो मूल्य प्रतिदर्श में होता है उसे न्यादर्श सांख्यिकी कहते हैं पर जनसंख्या में जो उसका मूल्य होता है उसे प्राचल (Parametric) कहते हैं । इसी कारण से यह सांख्यिकीय विधियां तथा सांख्यिकीय दोनों ही प्राचलिक कहलाती हैं । इस अध्याय में प्राचलिक सांख्यिकी दोनों ही प्राचलिक कहलाती है । इस अध्याय में प्राचलिक सांख्यिकी के ऊपर विचार किया जा रहा है ।

22.2 प्राचलिक सांख्यिकी के उद्देश्य (Objectives of Parametric Statistics)

अगर जनसंख्या लाखों में है और जनसंख्या गुण की दृष्टि से समान (Homogenous) है और उसमें से हम 1000 के सौ न्यादर्श चुने और प्रत्येक न्यादर्श में मध्यमान की गणना करें तो ये मध्यमान न्यादर्श मध्यमान कहलाती है और इन मध्यमानों का वितरण सामान्य होगा । इन माध्यमानों के मध्यमान का जो मूल्य आयेगा वही प्राचल (Parametric) होगा । चूंकि वितरक सामान्य है इसलिए इसका प्रामाणिक विचलन भी वास्तव में इतने ज्यादा (100 प्रतिदर्श) प्रतिदर्श नहीं लेते हैं । इस कारण से वास्तविक प्राचल का मूल्य ज्ञात नहीं हो सकता है । मध्यमान के सामान्य वितरण का जो मध्यमान होता है तो उसे μ (म्यू) से दर्शाया जाये तो मध्यमान की त्रुटि (Standard Deviation of Mean) μ से दर्शाया जाये तो SE μ Standard Error of Mean) कहते हैं । इस मानक त्रुटि के आधार पर जनसंख्या प्राचल की सीमाएँ ज्ञात कर सकते हैं । हेनरी गेरेट के पाठ संख्या 9 में भी सभी सांख्यिकी मध्यमान, मध्यांक, सहसम्बन्ध प्रतिशत, प्रमाप विचलन इनकी मानक त्रुटियां दे रखी हैं । जिनका उपयोग कर हम 99% इस विश्वास के साथ प्राचल की सीमाएँ ज्ञात कर सकते हैं कि जनसंख्या का मध्यमान उन सीमाओं के अन्तर्गत रहेगी । अगर सांख्यिकीय त्रुटिमान कम तो प्राचल की सीमाओं का अन्तराल ज्यादा नहीं होता है। जिसका अर्थ है कि हम लगभग वास्तविक प्राचल के समीप पहुँच जाता है जैसे मध्यमान की मानक त्रुटि है -

$$SE_M = \frac{\sigma}{\sqrt{N}}$$

जबकि σ = प्रमाप विचलन (न्यादर्श का)

N न्यादर्श का आकार

95% एवं 99% विश्वास स्तर पर प्राचल की सीमाएँ हैं $M \pm 1.96SE_m$ एवं $M \pm 2.58SE_m$ यदि प्राकल्पना के आधार पर हम किन्हीं दो समूहों की तुलना करना चाहे जैसे

बुद्धिलब्धि लिंग भेद से प्रभावित नहीं होती है तो जनसंख्या में दोनों वर्ग की छात्र अलग-अलग दिखाई देते हैं लेकिन फिर भी यदि किसी को प्रमाण चाहिए कि बुद्धिस्तर लिंगभेद से प्रभावित नहीं होता है तब हम इस प्राकल्पना को नकारात्मक रूप में बनाते हैं तथा दोनों उपजनसंख्या (लकड़ियों एवं लड़कों की संख्या) से हम न्यादर्श ले तो इस प्राकल्पना का परीक्षण करते हैं ।

एक पारी (First Trial) अगर 500 लड़कियाँ तथा 500 लड़कों का प्रतिदर्श लेकर इनके मध्यमान एवं प्रमाप विचलन का अध्ययन किया जावे तथा मध्यमानों के अन्तर को D_1 से व्यक्त किया जाये और इसी मरीके से द्वितीय पारी (II Trial) में उसी जनसंख्या में प्रतिदर्श लिया जाये तथा उनके मध्यमानों के अन्तर को D_2 से व्यक्त किया जाये, इसी प्रकार हम 100 न्यादर्श के जोड़े निकाले तो हमकों 100 अन्तर मध्यमानों के प्राप्त होंगे जिन्हें हम $D_1, D_2, D_3, ... D_1$,..... $D100$ से व्यक्त करते हैं। सांख्यिकी के अनुसार प्राप्तांक मानकर इन अन्तरों का आवृत्ति वितरण की गणना कर ग्राफ बनाये तो यह एक प्रसामान्य वितरण के रूप में प्राप्त होता है जिसमें चर को D_1 और अन्तर को मध्यमान को D से प्रमाणिक विचलन $SE_M = \frac{\sigma}{\sqrt{N}}$ से व्यक्त करते है ।

D=O , $SE_M = \frac{\sigma}{\sqrt{N}}$

यदि अब हम किसी दो प्रतिदर्श के मध्यमानों की तुलना करना चाहे (उपरोक्त परिकल्पना के आधार पर) तब निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग करते हैं:-

$$C.R. = \frac{D_1 - D}{S^E M}$$

जिसमें कि

$$\bar{D} = 0$$

$$D_1 = \bar{X}_1 - \bar{X}_2$$

$$SE = \sqrt{\frac{\sigma 1^2}{n1} + \frac{\sigma 2^2}{n2}}$$

यदि उपरोक्त सूत्र में इन मूल्यों को स्थापित करे तो कान्तिक अनुपात का सूत्र बनता है ।

22.3 सामान्य वितरण की शर्ते न होने पर अन्य सांख्यिकी का उपयोग: (Use of other Statistics when condition of normal probability distribution are not fulfilled)

पाया गया है की कम न्यादर्श छोटा होने के कारण वितरण Symmetrical तो होता है लेकिन हुक्क से लेपटोकर्टिक प्लेटिकटिक तो हो सकता है लेकिन मिजोकर्टिक नही हो सकता है जिससे हम निष्कर्ष निकालते हैं कि वितरण न्यादर्श के आकार पर निर्भर करता है इस कारण से इस वितरण के न्यादर्श के आधार पर सामान्यत: जनसंख्या प्राचल का अनुमान नहीं लगाते हैं । केवल दो न्यादर्श के सांख्यिकी की तुलना की जा सकती है और उसके लिए भी नकारात्मक परिकल्पना मानी जाती है जैसे कि क्रान्तिक अनुपात मे मानते हैं ।

इस वितरण का नाम स्टूडेन्ट वितरण (t-distribution) कहा गया है । जिसमें $C.R.$ के स्थान पर निम्न फार्मूला हो जाता है ।

$$C.R. = \frac{\bar{X}_1 - \bar{X}_2}{\sqrt{\frac{\sigma 1^2}{n1} + \frac{\sigma 2^2}{n2}}}$$

त्रुटि के .05 स्तर पर यह अनुपात 1.96 से कम ही रहता है जिससे यह अर्थ निकलता है कि मध्यमानों में अन्तर सार्थक नहीं है लेकिन 2.58 से नीचे रहे तो त्रुटि के .05 स्तर पर हम यह मान लेते हैं कि मध्यमानों में सार्थक अन्तर नहीं है और यदि इस अनुपात का मूल्य 2.58 हो या इससे अधिक हो तब नकारात्मक परिकल्पना को अस्वीकृत करते हैं तब यह कहते हैं कि मध्यमानों में अन्तर सार्थक है ।

दो पुंछीय परीक्षण (Two Tailed Test)- त्रुटि के दोनों स्तर पर ($05-.01$ पर) हमेशा क्रमिक अनुपात मूल्य 1.96 तथा 2.58 ही होगी । क्योंकि प्रसामान्य वितरण स्थिर (Stable) है और यदि दोनों समूहों की संख्या (N) कम से कम 1000 हो तो सदैव यही मूल्य आते हैं । इसमें $d.f.$ की आवश्यकता नहीं होती है ।

जब NPC वितरण के शर्तो में कुछ कमी रह जाती है उदाहरण के तौर पर गुण तो सतत ही चर है और जनसंख्या में चर का वितरण प्रसामान्य है और यदि उससे कोई न्यादर्श चयन किया जाये जिसमें विषयी की संख्या कम हो गेरिट के अनुसार तीस (30) और गिलफर्ड के अनुसार ढाई सौ (250) है तो गुण का वितरण सामान्य नहीं होगा । सैण्डस्मन ने ऐसे चरों के वितरणों का अध्ययन किया तथा जिसके आधार पर यह :

$$t = \frac{\left(\bar{X}_1 - \bar{X}\right)_2 - 0}{S.E._M}$$

$$t = \frac{\left(\bar{X}_1 - \bar{X}\right)_2 - 0}{\sqrt{\frac{\sum x_1^2 + \sum x_2^2}{n_1 + n_2 - 2}\left(\frac{1}{n_1} + \frac{1}{n_2}\right)}}$$

$$t = \frac{\left(\bar{X}_1 - \bar{X}_2\right) - 0}{\sqrt{\frac{\left(N_1 - 1\right)^2_1 + \sigma_1^2\left(N_2 - 1\right)\sigma_2^2}{N_1 + N_2 - 2}\left(\frac{1}{N_1} + \frac{1}{N_2}\right)}}$$

22.4 t- बंटन की परिभाषा (Definition of t-Test)

t परीक्षण सार्थकता परीक्षण की एक परिष्कृत प्रविधि है। इसका विकास सन 1908 मे विलियम गोसेट (W.S.Gosset) उपनाम से किया था । उसी नाम से यह स्टूडेण्ट के t- परीक्षण के नाम से जाना जाता है ।

t बंटन में t प्रतिदर्शन का मान समग्र के माध्य व प्रतिदर्श माध्य के अंतर का माध्य के प्रतिचयन बंटन (sampling distribution of mean) की प्रमाण त्रुटि से अनुपात ज्ञात करके निकाला जाता है ।

सूत्र के रूप में

$$t = \frac{\left|\bar{X} - \mu\right|}{SEX} = \frac{\left|\bar{X} - \mu\right|}{\sigma / \sqrt{n}}$$

x - प्रतिदर्श गाध्य (Sample mean)

μ - समग्र माध्य (Population means)

σ - समग्र प्रमाप विचलन (Population standard deviation)

टिप्पणी 1 सामान्यता समग्र का प्रभाव विचलन σ शांत नहीं होता है अत पर उसके अनुमानित आकलन

$$\check{S} = \sqrt{\frac{\sum_1^{n_1}\left(x_{1_1} - \bar{x}\right)^2}{n-1}}$$

का प्रयोग किया जाता है ।

अत: $t = \frac{\left|x - \mu\right|}{\check{S} / \sqrt{n}}$

टिप्पणी 2. यदि समग्र प्रमाप विचलन के अनमिनत आकल पु के स्थान पर प्रतिदर्श प्रमाप विचलन (S) का प्रयोग किया जाता है तो सूत्र निम्न प्रकार होगा.

$$t = \frac{\left|x - M\right|}{\check{S} / \sqrt{n} - 1}$$

22.5 t-बंटन की विशेषताएं (Characteristics of t-Test)

(i) t बंटन एक सतत बंटन है जिसमें t का मान $-\infty$ से $+\infty$ तक हो सकता है । यह बंटन समग्र के प्राचल M (माध्य) व प्रसरण (σ^2) स्वतंत्र होता है । अत: १ बंटन के उपयोग के लिए समग्र के प्रसरण (σ^2)एका ज्ञान होना आवश्यक नहीं है ।

(ii) प्रमाणित प्रसामान्य बंटन (Standard normal distribution) की भांति ही t बंटन भी एक सममित बंटन है, जिसमें माध्य मध्यक व बहुलक का मान शून्य होता है । तथा माध्य पर आधारित सभी विषय धूर्णो का मान शून्य होता है ।

(iii) 4 या उससे अधिक स्वातन्त्रय कोटियों के लिए t बैटन का वक्र समान माध्य व प्रमाप विचलन प्रसामान्य वक्र की तुलना में अधिक ऊँची शीर्ष वाला (Lepto Kurtic) होता है ।

(iv) t बंटन में विचरण प्रमाणित प्रसामान्य बंटन की अपेक्षा अधिक होता है । जैसे - जैसे प्रतिदर्श आकार (n) का मान बढ़ता है, t का बंटन प्रमाणित प्रसामान्य बंटन जैसा होता जाता है एवं n = 30 या उससे अधिक के लिए दोनों बंटनों में अंतर बहुत कम होता है ।

t के क्रान्तिक मूल्यों की सारणी (Table for critical value of t): द्वि पुच्छ परीक्षणों (two tailed tests) के लिए विभिन्न स्वतन्त्रता अंशों (d.f.Degree of Freedom) और कुछ विशिष्ट सार्थकता स्तरों (α) पर t प्रतिदर्शन $(t-Statistics)$ के क्रान्तिक मूल्यों की सारणियां तैयार की गयी है । यदि किसी सार्थकता स्तर पर t का परिकलित मूल्य (Calculated value of t) दिये हुए सार्थकता स्तर पर उसके सारणी मूल्य से अधिक होता है तो अन्तर सार्थक माना जाता है अन्यथा नहीं ।

स्वतंत्रता के अंश या स्वतन्त्रय कोटियां (Digrees of freedom) जब सांख्यिकी का उपयोग प्राचलों के अनुमान के लिये किया जाता है तो प्राप्य स्वतन्त्रता के अंश Digrees of freedom या संक्षेप मे $(d.f.)$ उन नियन्त्रण पर निर्भर करते है जो निरीक्षण के दौरान प्रकट होते है । प्रत्येक आने वाले नियन्त्रण के लिए स्वतंत्रता का एक अंश कम हो जाता है । उदहारण के लिये यदि 10 संख्याओं का योग 150 है और उनमें से 9 संख्याएं क्रमश: 14,16.17,15,12,11,10,13 एवं 21 है । मैंने स्वतंत्र रूप से चुन ली है । अब दसवीं संख्या का मान रखने के लिए हम स्वतन्त्र नही है । योग 150 रखने के लिए दसवीं संख्या का मान पूर्व में चुनी गयी व संख्याओं पर ही निर्भर होगा ।

22.6 t-बटन पर आधारित परिक्षणों की मान्यताएँ (Assumption for using t-distribution)

(i) पितृ समग्र (वह समग्र जिससे प्रतिदर्श का चुनाव किया गया है)का बंटन प्रसामान्य अथवा

लगभग प्रसामान्य है ।

(ii) समग्र का प्रसरण (σ^2) अज्ञात है ।

(iii) प्रतिदर्श सरल एवं यादृच्छिक है और यदि एक से अधिक प्रतिदर्श हैं तो वे परस्पर स्वतन्त्र हैं।

(iv) प्रतिदर्श का आकार छोटा है (n < 30) यदि प्रतिदर्श है जिनमें क्रमश: n_1 एवं n_2 इकाइयां हैं तो $n_1 + n_2 < 30$

(v) दो प्रतिदर्शो पर आधारित t परीक्षण के लिये एक अतिरिक्त मान्यता यह भी है कि दोनों के अज्ञात प्रसरण समान है एवं दोनों स्वतन्त्र है ।

22.7 एक प्रतिदर्श पर आधारित t - परीक्षण की विधि (Metod of t-Test based on one Sample)

समस्या : किसी प्रसामान्य अथवा लगभग प्रसामान्य समग्र से एक छोटे आकार (n < 30) का प्रतिदर्श चुना गया है । समग्र का प्रसरण अज्ञात है । हमें यह जांच करनी है कि क्या समग्र के माध्य (M) एवं प्रतिदर्श माध्य (x) के मध्य अन्तर सार्थक है अथवा नहीं ।

शून्य परिकल्पना एवं वैकल्पिक परिकल्पनाओं का निर्धारण :

शून्य परिकल्पना $H_0 : \mu = \bar{x}$

वैकल्पिक परिकल्पना $H_1 : \mu \neq \bar{x}$

परीक्षण प्रतिदर्शन (Test statistics)-

$t = \frac{|\bar{x} - \mu|}{\check{S}\sqrt{n}}$ जहां $\check{S} = \frac{\sum x - \bar{x}}{n-1}$ या $t = \frac{|\bar{x} - x|}{S/\sqrt{n-1}}$

जबकि $S = \sqrt{\sum t = \frac{|x - \bar{x}|}{n}}$

स्वतंत्रता अंश का निर्धारण. उपरोक्त प्रतिदर्शन के लिये स्वतन्त्रता अंशों की संख्या n-1 होगी । अत: v = n -1

t का क्रान्तिक मूल्य n -1 स्वतंत्रता अंशों के लिए दिये हुये सार्थकता स्तर पर (सामान्यतया 5% अथवा 1%) t का क्रान्तिक मूल्य होता है ।

निष्कर्ष : यदि t का परिकलित मान t के क्रान्तिक मान से बड़ा है तो चुने हुये सार्थकता स्तर पर शून्य परिकल्पना अस्वीकृत कर दी जाती है । अन्यथा स्वीकार कर ली जाती है ।

उदाहरण 1 : एक कॉलेज में यादृच्छया 10 विद्यार्थियों का चुनाव किया गया । उनके अंग्रेजी में प्राप्तांक निम्न प्रकार है-

63, 63, 64, 65. 66, 69, 69, 70, 70 एवं 71

इन प्राप्तांकों के आधार पर क्या यह मानना उचित होगा कि कॉलेज के विद्यार्थियों के अंग्रेजी में औसत प्राप्तांक 65 है । 5% सार्थकता स्तर का उपयोग कीजिये । 5% सार्थकता स्तर एवं 9 स्वतंत्रता अंशों के लिए t का सारणी मूल्य 2.262 है ।

शून्य परिकल्पना H_0 : कॉलेज के विद्यार्थियों का औसत प्राप्तांक 65 है ।

वैकल्पिक परिकल्पना H_1 कॉलेज के विद्यार्थियों का औसत प्राप्तांक 65 नहीं है ।

प्रतिदर्श माध्य x एवं समग्र के प्रमाप विचलन के आकल S का परिकलन

x	$x - \bar{x}$	$(x - \bar{x})^2$
63	-4	16
63	-4	16
64	-3	9

$\check{S} = \frac{(x - \bar{x})^2}{n-1}$

यहां $\sum (x - \bar{x})^2) = 48$

65	-2	4	n-1 = 10-1-9
66	-1	1	$\hat{S} = \frac{88}{9} = 3-17$
69	2	4	
69	2	4	
70	3	9	
70	3	9	
71	3	16	
		$\sum x^2 = 88$	

$\sum x = 670$ अत: x = 670 ÷ 10 67

परीक्षण प्रतिदर्शन $|t| = \frac{|x-M|}{S\sqrt{n}} = \frac{67-65}{\frac{3.17}{\sqrt{10}}} 2.02$

5% सा69र्थकता स्तर एवं 9 स्वतन्त्रता अंशों के लिए t का सारणी मान = 2.262

निष्कर्ष : चूंकि ।t। का परिकलित मान 2.02, t के क्रान्तिक मान 2.262 से छोटा है । अत: अन्तर सार्थक नहीं है । इसलिये शून्य परिकल्पना स्वीकार की जाती है एवं हम यह मान सकते हैं कि कॉलेज के छात्रों के अंग्रेजी में औसत प्राप्तांक 65 है ।

उदाहरण 2 : एक कक्षा से यादृच्छिक रूप से चुने गये 16 विद्यार्थियों का औसत I.Q. 107 है एवं प्रमाप विचलन 10 है । क्या यह मानने के लिए पर्याप्त आधार है कि कक्षा के समस्त विद्यार्थियों का औसत I.Q. 112 है । 15 स्वतन्त्रता अंश पर $t_{05} = 2.731$

हल : शून्य परिकल्पना $H_0 = \overline{x} = \mu$ अर्थात् कक्षा के विद्यार्थियों का औसत I.Q. = 112

वैकल्पिक परिकल्पना $H_1 = \overline{x} \neq \mu$ कक्षा के विद्यार्थियों का औसत I.Q. 112 नहीं है ।

परीक्षण प्रतिदर्शन $t = \frac{|\overline{x}-\mu|}{S/\sqrt{n-1}} = \frac{112-107}{10/\sqrt{15}} = \frac{\sqrt{15}}{2} = 1.94$

t का क्रान्तिक मान 5% सार्थकता स्तर एवं 15 स्वतन्त्रता अंशों के लिए t का सारणी मान 2.731 है ।

निष्कर्ष चूंकि (t) का परिकलित मान 1.94 t के क्रान्तिक मान (2.731) से छोटा है। अत: अन्तर सार्थक नहीं है । इसलिये हम यह मान सकते हैं कि कक्षा के विद्यार्थियों का औसत I.Q. 112 है।

22.8 दो स्वतंत्र प्रतिदर्शो के लिए t- परीक्षण (t-Test for two independent Samples)

समस्या (Problem): समान प्रसरण वाले दो प्रसामान्य समग्रों जिनके माध्य क्रमश μ_1 एवं μ_2 तथा प्रसरण σ^2 में से दो स्वतन्त्र प्रतिदर्श चुने गये है । जांच करनी है कि क्या दोनों

समग्रों के मध्यमान समान है । दूसरे शब्दों में हमें यह जांच करनी है कि क्या दोनों प्रतिदर्शो के मध्य अन्तर सार्थक नहीं है ।

परीक्षण विधि.

शून्य परिकल्पना H_0 : दोनों समग्रों के मध्यमान समान है अर्थात् $\mu_1 = \mu_2$ वैकल्पिक परिकल्पना H_1 समग्रों के मध्यमान समान नहीं है । अर्थात् $\mu_1 \neq \mu_2$

परीक्षण प्रतिदर्शन $|t| = \dfrac{(x_1 - \overline{x}_2)}{S\sqrt{\dfrac{1}{n_1} + \dfrac{1}{n_2}}}$

जहां x_1 एवं x_2 क्रमश प्रथम व द्वितीय प्रतिदर्शो के माध्य हैं तथा n_1 एवं n_2 उनमें चयनित इकाइयों की संख्या है । तथा

$$S^2 = \frac{\sum (x_1 - \overline{x}_1)^2 + (x_2 + \overline{x}2)^2}{n_1 + n_2 - 2}$$

जब कि $\sum (x_1 - \overline{x}_1)^2$ = प्रथम प्रतिदर्श की इकाईयों का उनके मध्यमान x_1 से लिये गये विचलनों के वर्गों का होगा । तथा $\sum (x_1 - \overline{x}_1)^2$ द्वितीय प्रतिदर्श की इकाईयों का उनके मध्यमान से लिये गये विचलनों के वर्गो का योग ।

स्वतन्त्रता अंशों की संख्या $n_1 + n_2 - 2$

क्रान्तिक मूल्य: वैकल्पिक परिकल्पना से स्पष्ट है कि यह एक द्वि-पुच्छ परीक्षण है अत: उपयुक्त सार्थकता स्तर ∞ एवं $n_1 + n_2 - 2$ स्वतन्त्रता अंशों के लिए t का सारणी मूल्य ही t का क्रान्तिक मान होगा ।

निष्कर्ष: यदि 5 का परिकलित मान t के क्रान्तिक मान से बड़ा है तो शून्य परिकल्पना अस्वीकार कर दी जाती है और हम इस निर्णय पर पहुंचते हैं कि दोनों समग्रों के मध्यमान असमान है ।

उदाहरण : विज्ञान के 6 एवं वाणिज्य के 10 छात्रों पर अभिरूचि परीक्षण सम्पादित किया गया ।

पप्त आंकड़े निम्न प्रकार है

विज्ञान	वाणिज्य
28	20
35	16
32	25
24	34
26	20
35	28
	31

			24		
			27		
			15		

क्या 5% सार्थक स्तर पर दोनों वर्गो के छात्रों के मध्यमान मे अंतर सार्थक है।

हल :दोनों वर्गो के छात्रों की अभिरुचि से संबन्धित समांकों के मध्यमान एवं मानक विचलनों का परिकलन निम्न सारणी के अनुसार होगा।

X_1	विज्ञान मध्य 30 से विचलन	विचलन भुवर्ग	X^2 विचलन	वाणिज्य मध्य से	विचलन वर्ग
28	-2	4	20	-4	16
35	5	25	16	-8	64
32	2	4	25	1	1
24	-6	36	34	10	100
26	-6	16	20	-4	16
35	5	25	28	4	16
			31	7	49
			24	0	0
			27	3	9
			15	-9	81
$\sum x_1 = 100$		110	$\sum x_1 = 240$		352

$$x2 = \frac{\sum x_2 = \bar{x}_2}{n} = \frac{240}{10} = 24$$

विज्ञान के छात्रों का माध्य $= \frac{180}{6} = 30$

शून्य परिकल्पना : $H_0 : \mu_1 = \mu_2$ अर्थात विज्ञान एवं वाणिज्य के छात्रों की अभिरुचि समान है ।

वैकल्पिक परिकल्पना :

परीक्षण प्रतिदर्शन $H_0 : \mu_1 \neq \mu_2$

$$\breve{S} = \sqrt{\frac{\sum (x_1 - \bar{x}_x)^2 + \sum (x_2 - \bar{x}_2)^2}{n_1 + n_2 - 2}}$$

$$= \sqrt{\frac{110 + 352}{6 + 10 - 2}}$$

$$= \sqrt{\frac{462}{14}} = \sqrt{33} = 5.74$$

परीक्षण प्रतिदर्शन $|t| = \frac{\bar{x}_1 - \bar{x}_2}{S/\sqrt{n_1 + 1/n_2}} = \frac{30-24}{5.751/6+1/10} = \frac{6}{5.74x.266}$

स्वतन्त्रता अंशों की संख्या $= 6+10-2+14$

5% सार्थकता स्तर एवं 14 स्वतंत्रता अंशों के लिए t का सारणी मान 1.761 है ।

निष्कर्ष : चूंकि(1) का परिकलित मान 3.98, 5% सार्थकता स्तर एवं 14 स्वतंत्रता अंशों के लिए t के सारणी मान 1.761 की तुलना में बड़ा है । अत: दोनों मध्यमानों में अन्तर सार्थक है। इसलिये हम यह नहीं मान सकते कि अभिरूचि के सम्बन्ध में दोनों वर्ग एक जैसे है। अर्थात् शून्य परिकल्पना 5% सार्थकता स्तर पर निरस्त की जाती है ।

उदाहरण 2 : एक शहर में यादृच्छिक रूप से चुने गये 16 विद्यार्थियों का औसत I.Q. 107 तथा प्रमाप विचलन 10 पाया गया । जबकि दूसरे शहर से चुने गये 14 विद्यार्थियों का औसत I.Q. प्रमाप विचलन क्रमश: 112 एवं 8 पाया गया । 5% सार्थकता स्तर पर जांच कीजिये कि क्या दोनों शहर के विद्यार्थियों I.Q. में अन्तर सार्थक है ।

हल. शून्य परिकल्पना $H_0 : \mu_1 = \mu_2$

वैकल्पिक परिकल्पना $H_1 : \mu_1 \neq \mu_2$

चूंकि दोनों न्यादर्श छोटे हैं अत: हम अर्थात् सार्थकता परीक्षण के लिये १ प्रतिदर्शन का परिकलन करेंगे । यह मानते हुए कि दोनों प्रतिदर्श समान प्रसरण वाले समग्र से लिये गये है । दोनों समग्रों के सामूहिक प्रसरण के अकल (Estimator) S_2 का परिकलन निम्न प्रकार होगा

$$S^2 = \frac{\sum(x_1 - \bar{x}_2)^{20} + \sum(x_2 - \bar{x}_2)^{20}}{n_1 + n_2 - 2} = \frac{(n_1 - 1)S^2{}_1 + (n_2 - 1)S^2{}_2}{n_1 + n_2 - 2}$$

जबकि $S^2{}_1$, पहले प्रतिदर्श का एवं $S^2{}_2$ दूसरे प्रतिदर्श का प्रसरण है तथा n_1 एवं n_2 क्रमश: प्रथम एवं द्वितीय प्रतिदर्श में इकाईयों की संख्या है ।

अत: $S^2 = \frac{15x10^2 + 13x8^2}{16+14-2} = 83.28$

अत: S^2 = 9.12 लगभग

परीक्षण प्रतिदर्शन $|t| = \frac{(\bar{x}_1 - \bar{x}_2)}{\hat{S}\sqrt{\frac{1}{n_1} + \frac{1}{n_2}}} = \frac{112-107}{9.4\sqrt{\frac{1}{16} + \frac{1}{14}}}$

या $|t| = \frac{5}{9.12x.359} = 1.53$

5% सार्थकता स्तर एवं 16+14-2 = 28 स्वतन्यता अंशों के लिए (t) का सारणी मान 2.048 है।

निष्कर्ष - चूंकि 5% सार्थकता स्तर एवं 14 स्वतन्यता अंशों के लिये t का सारणी मान 2.0488 (t) के परिकलित मान 1.53 से बडा हैं । अत: अन्तर सार्थक नहीं है एवं शून्य परिकल्पना स्वीकार की जाती है । इससे हम इस निर्णय पर पहुंचते है कि दोनो शहरों के छात्रों के I.Q. समान है ।

उदाहरण 3 निम्न आकड़े 1989 - 1993 तक बने हुये यादृच्छिक रूप से चुने गये 6 स्कूल व 5 ऑफिस ब्लॉक के प्रतिवर्ग फुट धरातलीय क्षेत्रफल से सम्बन्धित लागत को प्रदर्शित करते हैं । भवन के प्रकार

	प्रतिवर्ग फुट लागत रूपयों में						
रकूल	28	31	26	27	33	38	37
ऑफिस लॉक	37	42	34	37	35		

क्या स्कूल व ऑफिस ब्लॉक की प्रतिवर्ग फुट लागतों के माध्य एवं प्रमाण विचलनों का परिकलन निम्न सारणी के अनुसार होगा ।

स्कूल			ऑफिस		
प्रतिवर्ग फुट लागत	माध्य से	विचलन वर्ग विचलन	प्रतिवर्ग फुट	माध्य से लागत	विचलन वर्ग विचलन
X_1		X_2			
28	-2	4	37	0	0
31	1	1	42	5	25
26	-4	16	34	-3	9
27	-3	9	37	0	0
28	8	64	35	-2	4
37	7	49			
$\sum x_1 = 210$		$\sum (x_1 - \bar{x}_1)^2 = \sum x_2 = 185$			$\sum (x_1 - \bar{x}_1)^2 = 38$

$$\bar{x}_1 = \frac{243}{6} = 30 \qquad \bar{x}_2 = \frac{185}{5} = 38$$

शून्य परिकल्पना $H_0 : \mu_1 = \mu_2$

वैकल्पिक परिकल्पना $H_1 : \mu_1 \neq \mu_2$

चूंकि यहां दोनों प्रतिदर्श छोटे हैं अत: हम सार्थकता परीक्षण के लिए t प्रतिदर्शन का परिकलन करेंगे । यह मानते हुये कि दोनों प्रतिदर्श समान प्रसरण वाली समग्रों से लिये गये है । दोनों समग्रों के सामूहिक प्रसरण के आकलन

$\check{S}^2$ का परिकलन निम्न प्रकार होगा.

$$\check{S}^2 = \frac{\sum (x_1 - \bar{x}_1)^2 + \sum (x_2 - \bar{x}_2)^2}{n_1 + n_2 - 2}$$

$$= \frac{192 + 38230}{7 + 5 - 210}$$

अतः $\check{S} = \sqrt{23} = 4.79$

परीक्षण प्रतिदर्शन

$$t = \frac{(\bar{x}_1 - \bar{x}_2)}{S\sqrt{\frac{1}{n_1} + \frac{1}{n_2}}}$$

$$= \frac{37 - 30}{4.79\sqrt{\frac{1}{7} + \frac{1}{5}} = \frac{7}{1.642}} = 4.26$$

t का क्रान्तिक मान: 5% सार्थकता स्तर 7+5-2 = 10 स्वतन्त्रता अंशों के लिए १ का सारणी मूल्य 2.228 है ।

निष्कर्ष चूंकि (t) का परिकलित मान (4.26) 5% सार्थकता स्तर पर t के सारणी मूल्य 2.228 से बडा है । अत: अन्तर सार्थक है । इसलिये 5०7० सार्थकता स्तर पर शून्य परिकल्पना निरस्त की जाती है । अर्थात् स्कूल भवन व ऑफिस ब्लॉक की प्रतिवर्ग फुट लागत में अंतर सार्थक है ।

22.9 दो सम्बन्धित प्रतिदर्शो के मध्यमानों के अंतर की जांच के लिए t - परीक्षण (Use of t-test examine the significance between two means)

यदि दो लिये गये प्रतिदर्श सम्बन्धित है । अर्थात् उन्हें एक ही इकाइयों पर अवलोकित किया गया है (जैसे प्रशिक्षण से पूर्व एवं उसके बाद छात्रों के एक समूह के प्राप्तांकों से सम्बन्धित समक) तो ऐसी परिस्थिति में हम उपर्युक्त वर्णित १ प्रतिदर्शन का उपयोग नहीं कर सकते । ऐसी दशा में अंतर की सार्थकता की जांच के लिए युग्मित । परीक्षण उपयुक्त होगा ।

परीक्षण विधि.

शून्य परिकल्पना $H_0 : \mu_1 = \mu_2$

वैकल्पिक परिकल्पना $H_1 : \mu_1 \neq \mu_2$

सभी युग्मों के दोनों प्रेक्षणों के अंतर $(x - y) = d$ ज्ञात कीजिये ।

परीक्षण प्रतिदर्शन t का परिकलन निम्न सूत्र में किया जाता है

$$|t| = \frac{|\bar{d}| - 0}{S\sqrt{n}}$$

जबकि $\bar{d}$ युग्मों के अंतरों का माध्य है.

n = प्रेक्षणों की संख्या

स्वतन्त्रता अंशों की संख्या = n-1

t का क्रान्तिक मान दिये हुए सार्थकता स्तर व n-। स्वतन्त्रता अंशों के लिए १ का सारणी मान ही १ का क्रान्तिक मान होगा ।

निष्कर्ष. यदि (t) का परिकलित मान उसके क्रान्तिक मान से बड़ा है तो अंतर सार्थक होगा तथा शून्य परिकल्पना निरस्त कर दी जाती है अन्यथा शून्य परिकल्पना स्वीकार कर ली जाती है ।

उदाहरण 1. यह जांच करने के लिए कि बच्चे एक बार सुनने के बाद कितने अंकों की स्मरण कर फिर दुहरा सकते है, 10 बच्चों के एक समूह की परीक्षा ली गयी । उसके पश्चात् अगले सप्ताह उन्हीं बच्चों कों इस परीक्षा का अभ्यास कराया गया और फिर परीक्षा ली गयी । क्या इन बच्चों के दोनों परीक्षा परिणामों में अंतर सार्थक हैं? दोनों परिक्षाओं के परिणाम नीचे दिये गये है.

बच्चे	A	B	C	D	E	F	G	H	I	J
परीक्षण ।	6	5	4	7	8	6	7	5	6	8
परीक्षण ।।	7	7	6	7	9	6	8	6	6	10

हल:

शून्य परिकल्पना H_0 माना दोनों परीक्षणों से प्राप्त परिणामों में अंतर सार्थक नहीं है ।

वैकल्पिक परिकल्पना H_1 दोनों परीक्षणों में अंतर सार्थक है ।

अंतर के माध्य एवं प्रमाप विचलन का परिकलन निम्न सारणी के आधार पर किया गया है ।

बच्चे	A	B	C	D	E	F	G	H	I	J	योग
परीक्षण से पूर्व प्राप्तांक x	6	5	4	7	8	6	7	5	6	8	
परीक्षण के पूर्व प्राप्तांक y	7	7	6	7	9	6	8	6	6	10	
D=y-x	1	2	2	0	1	0	1	1	0	2	10
D^2	1	4	4	0	1	0	1	1	0	4	16

$$d = \frac{10}{10} = I.S = \frac{1}{N-1}\left[\sum d^2 \frac{\left(d^2\right)}{n}\right] = \frac{1}{9}\left[16 - \frac{100}{100} = \frac{6}{9}\right]$$

परीक्षण प्रतिदर्शन $|t| = \frac{|\bar{d}| - 0}{\check{S}\sqrt{n}} = \frac{1}{.82\sqrt{10}} \frac{3.16}{.82}$

या $|t| = 3.87$

।t। का क्रान्तिक मान 5 प्रतिशत सार्थकता स्तर एवं 9 स्वतन्त्रता अंशों के लिए t का सारणी मूल्य 226

निष्कर्ष : 9 स्वतन्त्रता अंश एवं 5 प्रतिशत सार्थकता स्तर पर (१) का क्रान्तिक मान 226 है जो परिकलित मान । t । = 3.67 से छोटा है अत: अंतर सार्थक है । इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि अभ्यास के बाद बच्चों की दुहराने की क्षमता में वृद्धि हुई है ।

उदाहरण 2 : एक स्कूल के 11 विद्यार्थियों को एक परीक्षण (Test) देना पडा । उन्हें एक माह तक पढ़ाया गया और उतना ही कठिन परीक्षण उनका माह के अंत में हुआ । क्या प्राप्तांकों से ऐसा प्रमाणित होता है कि पढाने से विद्यार्थियों को लाभ हुआ है? आकड़े निम्न प्रकार है

छात्र	1	2	3	4	5	6	7	8	9	1०	11
प्रथम परीक्षण	23	20	19	21	18	20	18	17	23	16	19

प्रथम परीक्षण 24 19 22 18 2० 22 20 2० 23 20 17

हल : शून्य परिकल्पना H_0 माना पढ़ाने से विद्यार्थियों को लाभ नहीं हुआ है ।

वैकल्पिक परिकल्पना H_1 पढाने से विद्यार्थियों को लाभ हुआ है

अंतर का माध्य एवं विचलन का परिकलन निम्न सारणी में किया गया है ।

बच्चे	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	योग
परीक्षण से पूर्व प्राप्तांक x_1	23	20	19	21	18	20	18	14	23	16	19	
परीक्षण के पूर्व प्राप्तांक y_2	24	19	22	18	20	22	20	20	23	20	17	
$D=X_2-X_1$	1	-1	3	-3	2	2	2	3	0	4	2	$\sum d = 11$
D^2	0	1	9	9	4	4	4	9	0	16	4	$\sum d^2 = 16$

$$d = \frac{\sum d}{n} = \frac{11}{11} = 1$$

$$\check{S} = \sqrt{\frac{1}{n-1}\left[\sum d^2 - \frac{\left(\sum d\right)^2}{n}\right]} = \sqrt{\frac{1}{10}\left[61 - \frac{121}{11}\right]}$$

या $\check{S} = \sqrt{\frac{1}{10}(50)} = \sqrt{5} = 2.24$

परीक्षण प्रतिदर्शन $[t] = \frac{|\bar{d}|}{\check{S}/\sqrt{n}} = \frac{1}{2.24/\sqrt{11}} 1.482$

स्वतन्त्रता अंशों की संख्या = 11 - 1 = 10

t का क्रान्तिक मान सारणी से 5%सार्थकता स्तर एवं 1० स्वतन्त्रता अंशों के लिए t मान 2.228

निष्कर्ष : चूंकि (t) का परिकलित मान (1.482) उसके क्रान्तिक मान (2.228) से छोटा है । अत: 5% सार्थकता स्तर पर अंतर सार्थक नहीं है । अर्थात शून्य परिकल्पना स्वीकार की जाती है । इससे हम इस निर्णय पर पहुँचते हैं कि पढ़ाने से छात्रों को लाभ नहीं हुआ है ।

22.10 स्वमूल्यांकन (Self-Assessment)

1. एक कॉलेज से यादृच्छया चुने गये 10 विद्यार्थियों के I.Q. क्रमश: 100,104,108, 118, 120, 122,124,126 एवं 128 थे । इन समंकों से क्या इस निष्कर्ष पर पहुंचा जा सकता हैं कि कॉलेज के विद्यार्थियों का औसत I.Q. 110 है । 5% सार्थकता स्तर का उपयोग कीजिये

$Ans.(t) = 1.437 < t.50,9$

अत: अन्तर सार्थक नहीं है)

2. दो प्रकार की खाद्य सामग्रियां रखे गये छात्रों के दो समूहों की भार वृद्धि निम्न प्रकार है ।

खाद्य सामग्री	A	2	3	1	2	1	2	0	2	2	3

खाद्य सामग्री	B	1	2	3	1	0	1	2	2		

5% सार्थकता पर जांच कीजिये कि क्या भार वृद्धि की दृष्टि से दोनों खाद्य सामग्रियों में अंतर सार्थक है ।

(Ans. (t) =0.68 <t.50(16)2.12 अत: अन्तर सार्थक नहीं है)

22.11 संदर्भ ग्रंथ (Reference)

1. Agarwal,B.L.-Basic Statistics
2. त्रिपाठी, रघुवंश - अप्रालिक सांख्यिकी
3. कपिल, एच. के. - सांख्यिकी के मूल तत्व

इकाई-23

प्रसरण विश्लेषण

(Analysis of Variance)

इकाई की संरचना

23.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objective)
23.1 प्रस्तावना (Introduction)
23.2 प्रसरण विश्लेषण का अर्थ (Meaning of Analysis of Variance)
23.3 विश्लेषण की उपयोगिता (Utility of Analysis of Variance)
23.4 प्रसरण विश्लेषण के उपयोग में कुछ मूलभूत उपधारणा में (Som e Basic Assumptions in the use of Analysis of Variance)
23.5 प्रसरण विश्लेषण विधि (Analysis of Variance Technique)
23.6 प्रसरण विश्लेषण विधि द्वारा गणना (Calculation by the Method of Analysis of Variance)
23.7 सारांश (Summary)
23.8 स्वमूल्यांकन (Self-Assessment)
23.9 सन्दर्भ ग्रन्थ (Reference Books)

23.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objective)

- इस की समाप्ति पर विद्यार्थी -
- प्रसरण विश्लेषण के अर्थ को समझ सकेंगे ।
- प्रसरण विश्लेषण के उपयोग को समझ सकेगे ।
- प्रसरण विश्लेषण एवं 'टी' परीक्षण में समानता एवं अन्तर कर सकेगे ।
- प्रसरण विश्लेषण विधि द्वारा एफ' अनुपात की गणना करना सीख सकेगें ।

23.1 प्रस्तावना (Introduction)

प्रसरण विश्लेषण विभिन्न मध्यमानों के अन्तर की सार्थकता की जांच करने की एक महत्वपूर्ण विधि है । इस विधि के प्रतिपादक आर.ए. फिशर है, जिन्होंने इस विधि का प्रयोग, कृषि सम्बन्धी अनुसन्धानों में किया था । । अनुपात का नाम फिशर के प्रथम अक्षर 'I' पर आधारित है । धीरे-धीरे इसका प्रयोग मनोविज्ञान के क्षेत्र में भी होने लगा क्योंकि मनोवैज्ञानिक अध्ययनों में भी इसी प्रकार की अभिक्रियाओं (Treatments) का अध्ययन किया जाता है, जैसे समान रूप से तुल्यात्मक समूहों में विभिन्न स्वतंत्र चर में विभिन्न परिवर्तन के प्रभावों का अध्ययन किया जाता है ।

इस प्रकार प्रसरण विश्लेषण की विधि का प्रयोग उस स्थिति में किया जाता है जबकि प्राय: तुलनात्मक समूहों में हम विभिन्न अभिक्रियाओं (Treating) का अध्ययन करते है, तथा

यह पता लगाना चाहते है कि क्या विभिन्न अभिक्रियाओं के प्रभावों के कारण मध्यमानों में सार्थक अन्तर है?

इस प्रकार प्रसरण विश्लेषण टी-परीक्षण का ही एक विकसित रूप है.

प्रसरण विश्लेषण के मान (Value) की अभिव्यक्ति F अनुपात (F-Ratio) द्वारा की जाती है । अनुपात सम्बन्धित समूहो के मध्यमानो की विचलनशीलता (Variability between Groups) तथा समूहो के अन्तर्गत विभिन्न इकाईयों की विचलन शीलता (Variability within group) के अनुपात को व्यक्त करता है ।

23.2 प्रसरण विश्लेषण का अर्थ (Meaning of Analysis of Variance)

प्रसरण की गणन। का विस्तृत अध्ययन हम विचलन के माप वाले अध्याय में कर चुके है । एक अंक वितरण का प्रसरण अपने मध्यमान से विचलनों के वर्गो का योग होता है।

जब दो समूहों में हम प्रसरण का अध्ययन करते है तब समस्त विचलनशीलता (Total variability) दो तथ्यों से मिलकर बनती है।

(i) विचलनशीलता जो कि प्रतिदर्श की इकाइयों के अन्तरों से उत्पन्न होती है ।

(ii) विचलनशीलता जो कि विभिन्न समूहों के मध्यमानों के अन्तर के कारण उत्पन्न होती है ।

संक्षेप में -

समस्त विचलनशीलता -	प्रत्येक समूह की इकाइयों की विचलनशीलता t समूहों के मध्यमानों के अन्तरों सै उत्पन्न विचलनशीलता
Total Variability-	Variability of subjects within each groups +variability between different groups
प्रसरण विश्लेषण विधि में	
F का मान =	समूहों के मध्य में विचलनों के वर्गो का योग / स्वयं समूहों के अन्तर्गत विचलनों के वर्गो का योग
F-Ratio =	$\frac{\text{Sum of square between groups}}{\text{Sum of Square within group}}$

इस प्रकार प्रसरण विश्लेषण एक ऐसी परीक्षण विधि है, जिससे वस्तुनिष्ठ आधार पर एक ऐसा मापदण्ड उपलव्य हो जाता है, जिसके द्वारा यह ज्ञात हो सकता है, कि क्या विभिन्न समूहों में व्याप्त विचलनशीलता समूहों के अन्तर्गत व्याप्त विचलनशीलता से इतनी अधिक मात्रा में है कि जिससे यह न्यायोचित अनुमान (Inference) लगाया जा सके कि विभिन्न समूहों के मध्यमान एक समान नहीं है, और वे अलग-अलग जनसंख्याओं से लिए गये है

(The analysis of variance technique is simply a method which provides an objectives criteria for deciding whether the variability between

groups is large enough in comparison with the variability within groups to justify the inference that the MS of the population from which the different group were drawn are not all the same.)

23.3 प्रसरण विश्लेषण की उपयोगिता (Utility of Analysis of Variance)

प्रसरण विश्लेषण विधि द्वारा विभिन्न मध्यमानों के अन्तर की सार्थकता की परख एक ही परीक्षण द्वारा एक ही साथ हो जाती है, परन्तु 't' परीक्षण द्वारा ऐसा करना कठिन ही नही असम्भव सा हो जाता है । क्योंकि 't' परीक्षण के लिए हमे उन विभिन्न मध्यमानों को दो-दो के युग्म (Pair) बनाकर परीक्षण करना होगा जो कि कठिन है तथा उसमें त्रुटि की सम्भावना भी रहती है ।

वैसे 'टी' परीक्षण का ही विस्तृतरूप 'एफ' परीक्षण है दोनों में प्राय अंश (Degree) का अन्तर है, प्रकार (Kind) का अन्तर नहीं है ।

(1) 'टी परीक्षण दो परीक्षणों के मध्यमान के अन्तर की सार्थकता देखी जाती है । 'F" परीक्षण में समूहों के मध्यमानों के अन्तर की सार्थकता देखी जाती है ।

(2) दोनों परीक्षण में प्रतिदर्श के सम्बन्ध में कल्पना (Assumption) रहती है कि उनका वितरण प्रसामान्य (Normal) है और वे एक ही जनंसख्या (Population) से लिये गये है ।

(3) दोनों परीक्षणों में अन्तरों की सार्थकता की जांच के लिए स्वतंत्रता के अंशों (Degree of Freedom) को देखना पडता है ।

दोनों से एक ही अनुमान (Inference) निकाला जाता है क्योंकि $t^2 = F$ t, अर्थात् $\sqrt{F = t} = 1$ होता है।

23.4 प्रसरण विश्लेषण के उपयोग में कुछ मूलभूत उपधारणायें (Some Basic Assumptions in the use of analysis of variance)

प्रसरण विश्लेषण का उपयोग हम उन परिस्थितियों मे करते है जबकि एक चर में विचलन करने वाले कितने ही कारक है ।

अनुसन्धान में हमारा यह लक्ष्य होता है कि इन कारको में कौनसा अधिक महत्वपूर्ण है और कौनसा कम । इसलिए अलग-अलग कारकों के प्रभावों को विभाजित किया जाता है । चूंकि हम सम्पूर्ण विचलनशीलता को कारकों के मध्य विभाजित कर रहे है इसलिए इसका नाम है - प्रसरण को विभाजित (विश्लेषित) करना ।

चूंकि अलग-अलग कारकों का प्रभाव अलग-अलग होगा तो शोधकर्ता को यह देखना है कि किस कारक के कारण अधिक विचलनशीलता है और किसके कारण कम ।

जब हमारे पास तीन से अधिक कारक हो और हमको एक वर्गी प्रसरण विश्लेषण (one-way classification) को ही लाग करना होता है तब उन कारकों के आधार पर हम अपने स्वतंत्र चर को तीन अलग-अलग समूह पर लागू करेगें । चूंकि प्रत्येक समूह सापेक्ष रूप से सजातीय (Homogenous) होगा इसीलिए उस समूह में अंकों की विचलनता होगी लेकिन कम होगी । इसी तरह से दूसरे समूह में आन्तरिक विचलन होगी । लेकिन पहले से कम या अधिक हो सकती है । यही तर्क तीसरे समूह पर भी लागू होता है ।

चूंकि प्रसरण की गणना करने में अंकों के विचलन का वर्ग किया जाता है और प्रसरण निकालने के लिए ता से भाग करके ही प्रसरण की गणना होती है ।

एक वर्गीय प्रसरण विश्लेषण में सम्पूर्ण विचलनशीलता के प्रसरण के दो भागों में विभाजित करते है ।

1. समूह के मध्य - जिसमें कि प्रत्येक समूह के मध्यमान को सम्पूर्ण मध्यमान से विचलनता का अध्ययन करते है जिसको हम समूह के मध्य विचलनशीलता कहते है ।
2. समूह के अन्तर्गत (अन्दर) - और चूंकि वर्गो का जोड़ किया जा सकता है । इसलिए सारे समूह के अन्तर्गत व्याप्त प्रसरण को जोड करके सम्पूर्ण समूहों के अन्तर्गत व्याप्त प्रसरण निकाला जाता है । जिसको हम त्रुटि प्रसरण (Error Variance) कहते है । चूंकि 'F' Test में दो variance की तुलना करनी है । अगर अपेक्षित मूल्य से यह अनुपात कम रहती है तब तो यह समझा जाता है कि कारक का कोई सार्थक प्रभाव नही है और अगर अधिक है तो तीनो कारकों का चरों पर प्रभाव अलग अलग है ।

23.5 प्रसरण विश्लेषण विधि (Analysis of variance technique)

(A) वर्गो का योग (Sum of Squares) - किसी एक अंक समूह की इकाइयों का अपने समूह के मध्यमान से विचलनों के वर्गो के योग को ही वर्गो का योग (Sum of Squares) कहते है । इसका मान जितना अधिक होगा, समूह की सम्बन्धित इकाइयों में भी उतनी अधिक विचलनशीलता होगी ।

(B) वर्गो के योग के प्रकार (Types of Sum of Square) - ये तीन प्रकार के होते हैं.

(1) समस्त वर्गो का योग (Total of Sum of Square)

(2) समूहों के मध्यमानो में व्याप्त वर्गो का योग (Sum of Squares between means of groups or between conditions)

(3) समूहों के अन्तर्गत इकाइयों में व्याप्त वर्गो का योग (Sum of Squares within groups)

(C) स्वतंत्रता के अंश (Degree of freedom) - F के मान की सार्थकता की जाँच के लिए सम्बन्धित सारणी में दो प्रकार के स्वतंत्रता के अंशों को देखना पड़ता है -

(1) समूह के मध्य में (Between groups) के स्वतंत्रता के अंश

इसका पता लगाने के लिए सूत्र है -

$[k-1]$

K यानि समूहों कुल की संख्या

(2) समूहों के वैयक्तिक इकाइयों (Individual Units) अथवा समूहों के अन्तर्गत (Within groups) स्वतंत्रता के अंश ।

इसका सूत्र है - N -K

N = समूहों के समस्त इकाइयों की संख्या, K =समूहों की कुल संख्या

(D) सारणी मूल्य (Table Value) - इसके आधार पर सार्थकता की जांच की जाती है।

23.6 प्रसरण विश्लेषण विधि द्वारा गणना (Calculating by the method of Analysis of Variance)

(1) प्रतिदर्श मूल्यों के योग और मूल्य वर्गो का योग (Total of sample items and sum of square of item)

$$T = \sum x_1 + \sum x_2 + \sum x_3 + ... \sum x_K$$

(2) संशोधन कारक (Correction Factor)C .F.

$$CF. \frac{T^2}{N}$$

$$T^2 = \left[\sum x_1 + \sum x_2 + \sum x_3 ..... \sum x_K \right]$$

N =कुल इकाइयों की संख्या (Total Number of Units)

(3) वर्गो का कुल जोड़ (The total sum of square) SST

$$Total\ SS = \left[\sum x_1^{\ 2} + \sum x_2^{\ 2} + \sum x_3^{\ 2} ..... \sum x_K^{\ 2} \right] C.F.$$

(4) प्रतिदर्श के बीच वर्गो का जोड़ (Between Sample Sum of Square)SSC

$$Between\ S.S. = \left[\frac{\sum x_1^{\ 2}}{n_1} + \frac{\sum x_2^{\ 2}}{n_2} + \frac{\sum x_3^{\ 2}}{n_3} ..... \frac{\sum x_K^{\ 2}}{n_K} \right] - C.F.$$

(5) प्रतिदर्शों के अंतर्गत वर्गों का जोड़ (within sample sum of square)SSR

SSR =SST -SSC

(6) विश्लेषण सारणी (Analysis Table)

प्रसारण स्त्रोत (sourceof Variance)	वर्गो का जोड़ (Sum of Square))	स्वतंत्रय कोटियों (Degrees of Freedom)d.f.)	प्रसरण (Variance)	एक अनुपात (F- Ratio)
प्रतिदर्शो के बीच(Between groups) प्रतिदर्शो के अन्तर्गत (Within Group)	SSC SSR	K-1 K-2	$\frac{SSC}{K-1} = V_1$ $\frac{SSR}{K-K} = V_2$	$F = \frac{V_1}{V_2}$

कुल (Total)		N-1		

उदाहरण - चार समूह के प्राप्तांक दिये गये है उनके मध्यमानों के अन्तर की सार्थकता की जाँच करनी है ।

A	B	C	D
6	8	5	9
7	8	6	11
6	8	4	10
8	6	6	7
3	5	4	13
30	35	25	50

हल:

A		B		C		D	
X_1	X_1^2	X_2	X_2^2	X3	X^2_3	X_4	X_4^2
6	36	8	64	5	25	9	81
7	49	8	64	6	36	11	121
6	36	8	64	4	16	10	100
8	64	6	36	6	36	7	49
3	09	5	25	4	16	13	169
30	149	35	253	25	129	50	520

H_0 = चारों समूह एक ही जनसंख्या से लिये गये है ।

(1) प्रतिदर्श मूल्यों के योग और मूल्य वर्गो का योग -

$$T = \sum x_1 + \sum x_2 + \sum x_3 + \sum x_4$$

$$T = 30 + 35 + 25 + 50$$

$$T = 140$$

(2) संशोधन कारक -

$$C.F. = \frac{T^2}{N}$$

$$C.F. = \frac{140x140}{20} = 980$$

(3) वर्गो का कुल जोड़ (SST)

$$Total\ S.S. = \left[\sum x_1^2 + \sum x_2^2 + \sum x_3^2 + \sum x_4^2\right] - C.F.$$
$$= [194 + 253 + 129 + 520] - 980$$
$$= 1096 - 980$$
$$= 116$$

(4) प्रतिदर्श के बीच वर्गो का जोड़ (SST)

$$Between\ S.S. = \left[\frac{\left(\sum x_1\right)^2}{n_1} + \frac{\left(\sum x_2\right)^2}{n_2} + \frac{\left(\sum x_3\right)^2}{n_3} ..... \frac{\left(\sum x_4\right)^2}{n_K}\right] - C.F.$$
$$= \left[\frac{(30)^2}{5} + \frac{(35)^2}{5} + \frac{(25)^2}{5} + \frac{(50)^2}{5}\right] - 980$$
$$= 180 + 245 + 125 + 500 + 180 + 245 + 125 + 500 = 980$$
$$= 1050 - 980$$
$$= 70$$

(5) प्रतिदर्श के अन्तर्गत वर्गो का जोड़ (SSR)

$$Within\ SSR = SST - SSR$$
$$= 116 - 70$$
$$= 46$$

(6) विश्लेषण सारणी

प्रसारण स्त्रोत	वर्गो का जोड़ा	d.f	प्रसरण	एक अनुपात
प्रतिदर्शो के बीच	SSC 70	(K-1) 4-1 =3	$\frac{SSC}{K-1} = V_1$ $\frac{70}{3} = 23.3$	$F = \frac{V_1}{V_2}$
प्रतिदर्शो के अन्तर्गत	SSR 46	(N-K) 20-4 =16	$\frac{SSR}{N-K} = V_2$ $\frac{46}{16} = 2.87$	$F = \frac{23.3}{2.87}$ =8.12
		19		

F की सारणी का मूल्य देखने पर -

.05 स्तर पर =324 सारणी मूल्य है

F का मान

.01 स्तर पर = 529 सारणी मूल्य है ।

चूंकि F का परिकलित मूल्य (Calculated value) F के सारणी मूल्य से ज्यादा है । यानि 8.12 > 3.24 तथा 8.12 > 5.29 है । अत: हम 95% तथा 99% विश्वास के साथ कह

सकते है कि यह जो अन्तर आया वो दैव कारणों (Chance factors) से नही आया है बल्कि ये चारों समूह अलग-अलग जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करते है । यह अन्तर प्रतिचयन के उच्चावनों के कारण नही आया है ।

अत: हमारी शून्य परिकल्पना अस्वीकृत की जाती है ।

23.7 सारांश (Summary)

प्रसरण विश्लेषण विभिन्न मध्यमानों के अंतर की सार्थकता जांच करने की महत्वपूर्ण विधि है जिसके प्रतिपादक आर.ए. फिशर है । इस विधि का प्रयोग उस स्थिति में किया जाता है जब तुलनात्मक समूहों में हम विभिन्न अभिक्रियाओं का अध्ययन करते है । इसका उपयोग तभी किया जाता है जबकि जनसंख्या का वितरण प्रसामान्य हो ।

23.8 स्वमूल्यांकन (Self Assessment)

1. प्रसरण विश्लेषण से क्या अभिप्राय है?

   What do you mean by Analysis of Variance?

2. F- अनुपात की गणना के विभिन्न चरण कौन-कौन से है? बताइये ।

   What are the steps of calculating F-Ratio? Explain it.

3. निम्न आकड़ों के आधार पर तीनों समूहों के प्राप्तांको के विषय में निराकरणीय परिकल्पना की रचना की गई है, बताइये तथा अध्ययनकर्ता की परिकल्पना यहां स्वीकार किये जाने योग्य है? समूह समूह समूह

समूह 'A'	समूह 'B'	समूह 'C'
3	6	7
2	4	10
2	9	10
6	7	10
7	9	12

23.9 सन्दर्भ ग्रन्थ (References)

1. Best John W. and Kahn James.
2. त्रिपाठी, रघुवंश - अप्राचल सांख्यिकी
3. कपिल, एच. के. - सांख्यिकी के मूल तत्व
4. Agrawal B.L. - Basic Statistics

इकाई-24

सह-संबंध

(CORRELATION)

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

24.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)
24.1 परिभाषा (Definition)
24.2 सह-संबंध के प्रकार (Type of Correlation)
24.3 सह-संबंध का परिमाप (Measurement Correlation)
24.4 मापन की विधियां (Method of Measurement)
24.5 कार्लपियर्सन का सह-संबंध गुणांक (Correlation Cofficient of Carl Pearson)
24.6 सह-संबंध गुणांक की व्याख्या (Interpretation of Correlation Co-efficient)
24.7 सह-संबंध गुणांक के उपुग्रोग्र (Uses of Correlation)
24.8 सीमायें (Limitations)
24.9 स्वमूल्यांकन (Self-Assessment)
24.10 संदर्भ ग्रन्थ (References)

24.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

- इस इकाई के अध्ययन के बाद आप-
- सह-संबंध, सह-संबंध गुणांक, सह-संबंध के प्रकार, सह-संबंध ज्ञात करने की विधियां, सह-संबंध गुणांक ज्ञात करने की पियर्सन की विधियां, इनके उपयोग, सीमाओं को स्पष्ट करेंगे ।
- दिये गये दत्त के लिए विभिन्न विधियों द्वारा सूत्रों के उपयोग से सह-संबंध गुणांक की गणना कर सकेंगे ।

24.1 परिभाषा (Definition)

सह-संबंध दो चरों का पारस्परिक संबंध है । सामान्यतया अनेक उदाहरण ऐसे मिलते है जबकि दो चरों में आपस में सह-संबंध पाया जाता है । उदाहरणार्थ प्रकाश के साथ-साथ वातावरण के तापमान में वृद्धि होती है । एक वस्तु की मांग बढने के साथ-साथ प्राय: उसके मूल्य में वृद्धि होती है । इस तरह से हम देखते हैं कि यह परिवर्तन कारण व प्रभाव पर आधारित है ।

इस तरह जब दो चर इस प्रकार परिवर्तित होते हैं कि एक में वृद्धि या कमी हो अथवा इसके विपरीत परिवर्तन हो तो ये चर आपस में सह-संबंधित कहलाते हैं । लेकिन यह ध्यान रहे कि सह-संबंध के लिए दोनों चरों के कारण तथा प्रभाव का संबंध होना आवश्यक है ।

24.2 सह-संबंध के प्रकार (Types of Correlation):

1. **धनात्मक तथा ऋणात्मक :** जब दोनों चरों में परिवर्तन एक ही दिशा में होता है तो इसे धनात्मक सह-संबंध कहते हैं तथा जब दोनों चरों में परिवर्तन एक-दूसरे के विपरीत दिशा में होता है तो सह-संबंध ऋणात्मक होता है । उदाहरणार्थ यदि किसी वस्तु की मांग में वृद्धि होने के कारण उसका मूल्य बढता है तथा मांग में कमी होने के कारण मूल्य घटता है तो मांग व मूल्य के बीच सह-संबंध धनात्मक होगा । जबकि वस्तु की उत्पादन वृद्धि के साथ प्रतिवस्तु लागत मूल्य घटता है तो उत्पादन मात्रा व प्रति वस्तु लागत मूल्य के बीच सह-संबंध ऋणात्मक होगा ।

2. **रेखीय तथा वक्ररेखीय :** जब दोनों चरों के मान में एक निश्चित अनुपात में परिवर्तन होता है तो सह-संबंध रेखीय कहलाता है । अर्थात् यदि हम दोनों चरों के मानों को यदि ग्राफ पेपर पर अंकित करें तो संबंधित बिन्दुओं को मिलाने पर एक सीधी रेखा बनेगी जब दोनों चरों के मान में परिवर्तन की मात्रा निश्चित नहीं होती अर्थात् अनिश्चित होती है तो सह-संबंध वक्र रेखीय होगा । इन मूल्यों को जब हम ग्राफ पेपर पर अंकित बिन्दुओं को मिलाने पर एक सीधी रेखा के स्थान पर वक्र रेखा बनेगी ।

24.3 सह-संबंध का परिमाप (Measurement of Correlation)

सह-संबंध को मापने के लिए सह-संबंध गुणांक ज्ञात किया जाता है । सह-संबंध की विभिन्न माप निम्न तालिका में दी गई हैं।

परिमाप	घनात्मक	ऋणात्मक
Perfect (पूर्ण)	+1	-1
High (उच्च)	+.75 व 1 के बीच	-2 व -.75 के बीच
Low (निम्न)	+.25 व .75 के बीच	-.75 व -.75 के बीच
	0 व +.25 के बीच	-.25 व 0 के बीच

24.4 मापन की विधियां (Methods of Measurement)

1. प्रकीर्ण चित्र (Scatter Diagram)
2. **रेखा चित्र (Graphic)**
3. कार्ल पियर्सन का सह-संबंध गुणांक (Karl Pearson's)
4. न्यूनतम वर्ग रीति (Least Square Method)
5. संगामी विचलन (Conncurrent Deviation)
6. क्रम-अन्तर विधि (Rank Difference Method)

इस अध्याय में आप केवल कार्ल पियर्सन के सह-संबंध गुणांक विधि तथा क्रम अन्तर विधि का ही अध्ययन करेंगे ।

24.5 कार्लपियर्सन का सह-संबंध गुणांक (Correlation Coefficient of Karl Pearson)

जिसे प्रोडक्ट मोमेन्ट सह-संबंध के नाम से भी जाना जाता है । इस विधि का प्रतिपादन उन्नसवी शताब्दी में कार्ल पियर्सन नाम के प्रणाली शास्त्री ने किया था इसलिए यह विधि उसी के नाम से ज्यादा जानी जाती है । इस विधि से सह-संबंध की मात्रा व दिशा दोनों का अकात्मक माप ज्ञात हो जाता है । परिकल्पन विधि. व्यक्तिगत सांख्यिकी श्रेणी में:

(A) प्रत्यक्ष रीति-

(i) दोनों चरों (x एवम् y मान कर) ज्ञात कीजिए ।

(ii) दोनों चरों के मूल्य के उनसे संबंधित माध्यों से विचलन dx, dy ज्ञात कीजिए ।

(iii) दोनों चरों के प्रत्येक संबंधित विचलनों को आपस मे गुणा कर प्रोडेक्ट (dx, dy) ज्ञात कीजिए

(iv) दोनों चरों के प्रत्येक विचलन का वर्ग ज्ञात कीजिए तथा उनका योग $\sum dx^2$ एवं $\sum dy^2$ ज्ञात कीजिए ।

(v) निम्न सूत्र का प्रयोग कर सह-संबंध गुणांक (Ω) ज्ञात कीजिए

$$r = \frac{\sum dxdy}{\sqrt{\sum dx^2 \sqrt{dy^2}}}$$

अथवा

$$r = \frac{\sum dxdy}{\sqrt{N\sigma x\sigma y}}$$

उपरोक्त में से कौन सा सूत्र प्रयोग में लिया जाय यह प्रश्न में दी गई सूचनाओं पर निर्भर करेगा।

उदाहरण दस विद्यार्थियों को x एवम् y दो परीक्षण दिए गए वास्तविक माध्य विधि इन दोनों परीक्षणों की बीच सह-संबंध गुणांक ज्ञात कीजिए :

	परीक्षार्थी x	परीक्षण y
1	23	18
2	27	20
3	28	22
4	38	27
5	29	21
6	30	29
7	31	27
8	33	29
9	35	28
10	36	29

हल:

Calculation of 'coefficient of Corrrelation

X	Y	dx	Dx^2	dy	Dy^2	dxdy
23	18	-7	49	-7	49	+49
27	20	-3	9	-5	25	+15
28	22	-2	4	3	9	+6
28	27	-2	4	+2	4	-4
29	21	-1	1	-4	16	+4
30	29	0	0	+4	16	0
31	27	+1	1	+2	4	+2
33	29	+3	9	+4	16	+12
35	28	+5	25	+3	9	+15
36	29	+6	36	+4	16	+24
?X=300	?Y=250	?X=0	$?X^2$=138	?Y=0	$?Y^2$=164	?XY=123

$$\overline{x} = \frac{\sum X}{N} = \frac{300}{10} = 30 \qquad \overline{y} = \frac{\sum Y}{N} = \frac{250}{10} = 25$$

$$r = \frac{\sum dxdy}{\sqrt{\sum dx^2 x \sum dy^2}} = \frac{123}{\sqrt{138x\sqrt{164}}}$$

$$r = \frac{123}{\sqrt{1504}} = +818\ or + 82$$

दोनो परीक्षणों मे माध्यम स्तर का धनात्मक सह संबंध है।

(B) **काल्पनिक माध्यम स्तर** जब दोनों श्रेणियों के वास्तविक माध्यम पूर्णाक में नही हो तो गणन क्रिया को सरल बनाने के लिए वास्तविक माध्य के स्थान पर काल्पनिक माध्य का प्रयोग करना चाहिए । इस विधि को लघु रीति कहते हैं ।

परिकलन प्रक्रिया

1. दोनों चरों में उपयुक्त मूल्यों का काल्पनिक माध्य (A) मानिए ।
2. काल्पनिक माध्यों से दोनों चरों का विचलन ज्ञात कीजिए ।
3. इन विचलनों के वर्ग ज्ञात करिए ।
4. दोनों चरों के प्रत्येक विचलन को अलग-अलग आपस में गुणा कीजिए ।
5. अब कोलोम 2, 3 एवं 4 के अलग-अलग योग ज्ञात कीजिए ।
6. निम्न सूत्र का प्रयोग कर सह-संबंध गुणांक ज्ञात करिए ।

$$r = \frac{\sum dxdy \times N - \left(\sum dx \times dy\right)}{\sqrt{\sum dx^2 \times N - \left(\sum dxy^2 \times N - \sum dy\right)^2}}$$

उदाहरण :

प्रथम वर्ष के आठ विद्यार्थियों ने लेखाक्रम एवं सांख्यिकी विषयों में निम्न प्रकार से अंक प्राप्त किए ।

छात्र सं.	-	व	2	3	4	5	6	7	8
लेखा कार्य	-	65	66	67	67	88	69	71	73
सांख्यिकी	-	67	68	64	68	72	7०	69	70

दोनों विषय के प्राप्तांकों में कार्ल पियर्सन का सह-संबंध गुणांक ज्ञात कीजिए ।

हल :

इस प्रश्न में वास्तविक माध्य पूर्णाक में नहीं आता है । इसलिए इनमें लेखाकार्य विषय में काल्पनिक माध्यम 68 तथा सांख्यिकी विषय में काल्पनिक माध्य 69 लिया है ।

X	Y	Ax=68 dx	A= 69 dy	d^2x	D^2y	dxdy
65	67	-3	-2	9	4	6
66	68	-2	1	4	1	2
67	64	-1	-5	1	25	5
67	68	-1	-1	1	1	1
68	72	0	3	0	9	0
69	70	1	1	1	1	1
71	69	3	0	9	0	0
73	70	5	1	25	1	5
		2	-4	50	42	20

$$= \frac{8 \times 20 - (2 \times -4)}{\sqrt{8 \times 50 - (2)^2 8 \times 42 - (-4)^2}}$$

$$= \frac{460 \div 8}{\sqrt{(400-4)(336-16)}} = \frac{168}{\sqrt{396 \times 320}} = .472$$

प्रोडक्ट मोमेन्ट विधि:

यदि दोनों चरों के वास्तविक मान छोटे हो तो निम्न सूत्र के दूसरा भी सह-संबंध गुणांक ज्ञात किया जा सकता है ।

$$x = \frac{\sum xy - \frac{\sum x - \sum y}{N}}{\sqrt{\sum x^2 - \frac{\left(\sum x\right)^2}{N}} \sqrt{\sum y^2 - \frac{(\sum y)^2}{N}}}$$

परिकलन प्रक्रिया

1. दोनों चरों की वास्तविक संख्याओं को कुल योग $\left(\sum x\right), \left(\sum y\right)$ ज्ञात करिए ।

2. दोनों चरों की संबंधित वास्तविक संख्याओं को आपस में गुणा कर प्रोडक्ट $\left(\sum xy\right)$ ज्ञात करिए तथा प्रोडक्टों का कुल योग $\left(\sum xy\right)$ ज्ञात करिए ।
3. दोनों चरों की प्रत्येक संख्या का वर्ग ज्ञात कीजिए तथा उन वर्गो का योग $\left(\sum x\right)^2$ तथा $\left(\sum y\right)^2$ ज्ञात करिए
4. सूत्र का प्रयोग कर सह-संबंध गुणांक ज्ञात करिए ।

उदाहरण

एक कक्षा के छः छात्रों की अंग्रेजी एवं गणित विषय में एक टैस्ट में निम्न अंक प्राप्त हुए । दोनो विषयों में सह-संबंध गुणांक प्रोडक्ट मोमेन्ट विधि से ज्ञात करिए ।

छात्र सं.	-	1	2	3	4	5	6
अंग्रेजी	-	2	4	6	6	8	11
गणित	-	18	12	10	8	7	5

छात्र सं.	Marks in English (x)	Marks in Maths (y)	X^2	Y^2	xy
1	2	18	4	324	36
2	4	12	16	144	48
3	5	10	25	100	50
4	6	8	36	64	48
5	8	7	64	49	56
6	11	5	121	25	55
N=6	?x=36	?y=60	?x^2=266	?y^2=706	?xy=293

$$r = \frac{\sum xy - \frac{(\sum x)(\sum y)}{n}}{\sqrt{\sum x^2 - \frac{(\sum x)^2}{N}}\sqrt{\sum y^2 - \frac{(\sum x)^2}{N}}}$$

$$r = \frac{293 - \frac{(36)\times(60)}{6}}{\sqrt{266 - \frac{(36)^2}{6}}\sqrt{706\frac{(60)^2}{6}}}$$

$$r = \frac{-67}{\sqrt{50\times100}} = -.92$$

कोटी अन्तर विधि : कभी-कभी इस तरह के होते है कि उनकी संख्यात्मक माप संभव नही होती जबकि उनका संख्यात्मक क्रम निर्धारित किया जा सकता है । उदाहरण के लिए छात्रों

में बुद्धिमता का माप। यह हम जानते है कि बुद्धिमता का संख्यात्मक माप संभव नहीं है हालांकि बुद्धिमता के अनुसार छात्रों का क्रम निर्धारित किया जा सकता है । ऐसी स्थिति में कार्ल पियर्सन विधि द्वारा सह-संबंध गुणांक निकालना संभव नहीं होता । ऐसी विधि चाहिए जो क्रमों के आधार पर सह-संबंध गुणाक का परिकलन किया जा सके । प्रोफेसर स्पीयरमैन ने एक ऐसी विधि का प्रतिपादन किया । इसलिए इस विधि को स्पीयरमैन की कोटि अन्तर रीति के नाम से जाना जाता है ।

गणना विधि-

1. दोनों चरों के पद मूल्यों को अलग-अलग क्रम (Rank) प्रदान किए जाते हैं ।
2. चरों के यदि कुल मूल्य समान हों तो समान क्रम देने के लिए उन्हें क्रमश: मिलने वाले क्रमों का औसत ज्ञात कर उन पद मूल्यों के सामने लिख दिया जाता है ।
3. 3. दोनों चरों के क्रमों के क्रमान्तर ज्ञात किये जाते हैं । क्रमान्तर ज्ञात करने के लिए प्रथम चर के मूल्य के सामने दिए गए क्रम में से ठीक उसके सामने दूसरे चर को प्रदान किए क्रम को घटाया जाता है ।
4. क्रमान्तरों का वर्ग ज्ञात कर उनका योग प्राप्त. किया जाता है ।
5. निम्न सूत्र द्वारा सह-संबंध गुणांक ज्ञात करिए ।

$$F = 1 - \frac{6\sum D^2}{N^2 - N}$$

$\sum D^2$ = समान्तर क्रमान्तरों के वर्गो का योग

N = मदों की संख्या

उदाहरण.

एक परीक्षा में जिन 15 विद्यार्थियों को अर्थशास्त्र विषय में क्रमश: 1 से 15 छात्रों को गणित विषय में क्रमश: 1०,7,2,6,4,8.3,1,11.15,9,5,14,12 एवं 13 से क्रमांकित किया गया । सह-संबंध गुणाक की गणना कीजिए।

Roll No.	Rnk in Economics (R_1)	Rank in Maths (R_2)	(R_1-R_2) Difference (D)	D^2
1	1	10	-9	81
2	2	7	-5	25
3	3	2	1	1
4	4	6	-2	4
5	5	4	1	1
6	6	8	-2	4
7	7	3	4	16
8	8	1	7	49
9	9	11	-2	4

10	10	15	-5	25
11	11	9	2	4
12	12	5	7	49
13	13	14	-2	1
14	14	12	2	4
15	15	13	2	4
N=15				$\sum D^2 = 272$

$$P = 1 - \frac{6\sum D^2}{N^2 - N} = 1 - \frac{6 \times 272}{(15)^{-3} - 15}$$

$$P = 1\frac{1632}{3360} = 0.51$$

उदाहरण :

एक सुन्दर प्रतियोगिता में भाग लेने वाले 10 प्रतियोगियों को दो निर्णायकों ने निम्न प्रकार से क्रम प्रदान किए ।

प्रथम निर्णायक (R_1)	1	6	5	10	3	2	4	9	7	8
द्वितीय निर्णायक (R_2)	2	8	4	1	6	9	5	3	7	10

कोटि अन्तर सह-संबंध ज्ञात कीजिए ।

R_1	R_2	R_1-R_2	D^2
1	2	-1	1
6	8	-2	4
5	4	+1	1
10	1	+9	81
3	6	-3	9
2	9	-7	49
4	5	-1	1
9	3	6	36
7	7	0	0
8	10	-2	4
			?D^2=186

$$P = 1 - \frac{6\sum D2}{N^2 - N} = 1 - \frac{6 \times 186}{(10)^2 - 10}$$

$$P = 1\frac{1116}{990} = \frac{126}{900} = 0.13$$

इरा तरह दोनों निर्णायकों द्वारा दिए गए क्रमों में बहुत कम मात्रा का ऋणात्मक सह-संबंध है ।

उदाहरण :

नीचे दिये गए प्राप्तांकों के बीच सह-संबंध कोटि अन्तर विधि से ज्ञात कीजिए

विषय	x	y
A	21	41
B	16	41
C	20	46
D	19	43
E	17	45
F	22	50
G	18	42
H	15	40

हल :

विषय	प्राप्तांक	y	R_1 x	R_2 y	(R_1-R_2) d	D_2
A	21	41	2	6.5	-4.5	20.25
B	16	41	7	6.5	.5	.25
C	20	46	3	2	1	1
D	19	43	4	4	0	0
E	17	45	6	3	3	9
F	22	50	1	1	0	0
G	18	42	5	5	0	0
H	15	40	8	8	0	0
N=18						$\sum D = 30.5$

$$P = 1 - \frac{6\sum D^2 + 1/12\left(m^3 - m\right)}{N^2 - N}$$

$$P = 1\frac{6 \times 30.5 + 1/12\left(2^3 - 2\right)}{8^3 - 8}$$

$$P = 1\frac{183 + .5}{504} = 1 - \frac{183 + .5}{504} = 0.64$$

24.6 सह-संबंध गुणांक की व्याख्या (Interpretation of Correlation Co-efficient)

'r' अर्थात् सह-संबंध गुणांक की व्याख्या इसके साथ लगे चिन्ह (+ अथवा -) पर तथा इसके मान पर आधारित होती है । गणितीय चिन्ह से संबंध की दिशा का पता चलता है । अर्थात् यदि (+) का चिन्ह है तो संबंध धनात्मक है और अगर चिन्ह (-) है तो संबंध ऋणात्मक है । यह संबंध के मान से संबंध की घनिष्ठता का पता लगता है । मान 1 के जितना करीब होगा संबंध उतना ही अधिक घनिष्ठ होगा ।

अर्थात् सह-संबंध से हम दो समंक श्रेणियों में आपस में किरन दिशा (धनात्मक अथवा ऋणात्मक) तथा संबंध की घनिष्ठता के बारे में ही जान सकते हैं । इससे अधिक कुछ नहीं ।

24.7 सह-संबंध गुणांक के उपयोग (Uses of Correlation)

1. इससे दो चरों जिनमे कि एक स्वतंत्र चर व दूसरा आश्रित चर होता है के बीच सह-संबंध की दिशा तथा घनिष्ठता का पता लगाने में सहायक होता है ।
2. सह-संबंध गुणांक का वर्ग करने पर हम उस निश्चित प्रतिशता परिवर्तन का पता लगा सकते है जो कि स्वतंत्र चर की वजह से आश्रित चर में होता है । इस प्रकार का अध्ययन व्यावसायिक पूर्वानुमान में बहुत सहायक होता है । इसकी सहायता से स्वतंत्र चर के अनुमानित मूल्यों के आधार पर आश्रित चर के वर्तमानों को जाना जा सकता है ।
3. इस विधि पर आधारित पूर्वानुमान अपेक्षाकृत अधिक विश्वसनीय और निश्चित होते हैं ।
4. प्रतीप गमन (Regression) व विचरण अनुपात की धारणाएं सह-संबंध सिद्धान्त पर ही आधारित है ।
5. इसकी सहायता से दो संबंधित समंक श्रेणियों में से एक के दिए हुए निश्चित मूल्य के आधार पर दूसरी श्रेणी के संभावित मूल्य का विश्वसनीय अनुमान लगाया जा सकता है ।

24.8 सीमायें (Limitations)

यह दो संबंधित समंक श्रेणियों के संबंध को ही व्यक्त करता है । संबंध के कारण को व्यक्त नहीं करता है ।

24.9 स्वमूल्यांकन (Self-Assessment)

1. निम्न सारणी में विद्यार्थियों और उनमें नियमित खिलाड़ियों का विवरण प्रस्तुत किया गया है। क्या आयु और खलने की आदत में कोई सह संबंध हैं?

आयुवर्ग	15-16	16-17	17-18	18-19	19-20	20-21
विद्द्यार्थियों की संख्या	200	270	340	360	400	300
नियमित खिलाडियों की संख्या	150	162	170	180	180	120

2. निम्न समंकों से कोटि सह-संबंध गुणांक निकालिए-

X श्रेणी	85	91	56	72	95	76	89	51	59	90
Y श्रेणी	18.3	20.3	16.9	15.7	19.2	18.1	17.5	14.9	18.6	15.4

24.10 संदर्भ ग्रन्थ (References)

1. सांख्यिकी के सिद्धान्त - डी. शुक्ल एवं सहाय
2. सांख्यिकीय विधियां - डी. खंडेलवाल गुप्ता, गुप्ता
3. सांख्यिकीय विधियां - यादव, जैन, मित्तल
4. सांख्यिकीय के सिद्धान्त - नागर
5. मनोविज्ञान तथा शिक्षा में सांख्यिकी के मूल आधार - सिंह, प्रसाद, भार्गव

इकाई-25

प्रतीपगमन विश्लेषण एवं पूर्वानुमान
(Regression Analysis and Prediction)

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

25.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

25.1 प्रतीपगमन विश्लेषण का अर्थ एवं उपयोगिता (Meaning and Uses of Regression Analysis)

25.2 प्रतीपगमन रेखायें (Regression Line)

25.3 प्रतीपगमन समीकरण (Regression Equations)

25.4 प्रतीपगमन गुणाकों का परिकलन (Calculation of Regression Co-efficient)

25.5 न्यूनतम वर्ग विधि से प्रतीपगमन समीकरण (Regression equation by Least Square Method)

25.6 अनुमान की प्रमाप त्रुटि (Standard Error of Estimate)

25.7 पूर्वानुमान का अर्थ एवं उद्देश्य (Meaning and Objective of Prediction)

25.8 पूर्वानुमान की प्रविधियाँ (Techniques of Prediction)

25.9 स्वमूल्यांकन (Self-Assessment)

25.10 संदर्भ ग्रन्थ (Reference)

25.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप-

- प्रतीपगमन रेखाओं, समीकरणों की अवधारणायें स्पष्ट कर सकेंगे ।
- प्रतीपगमन गुणांकों का परिकलन कर सकेंगे ।
- पूर्वानुमान के अर्थ एवं उद्देश्य स्पष्ट कर सकेंगे ।
- पूर्वानुमान प्रविधियों को स्पष्ट कर पूर्वानुमान प्रस्तुत कर सकेंगे ।

25.1 प्रतीपगमन विश्लेषण का अर्थ एवं उपयोगिता (Meaning and Uses of Regression Analysis)

सांख्यिकी में प्रतीपगमन का शाब्दिक अर्थ वापस आने या पीछे लौटने से है । इस शब्द का प्रथम प्रयोग सर फ्रांसिस गाल्टन (Sir Francis Galton) द्वारा वंशानुगत विशेषताओं का अध्ययन करते समय किया गया था । गाल्टन ने यह पता लगाया था कि मानव जाति की माध्य ऊँचाई से पिताओं की ऊँचाई का विचलन, पुत्रों की ऊँचाई के विचलन से अधिक होता है । पुत्रों की ऊँचाई के माध्य की और लौटने की इस प्रवृत्ति को उन्होनें प्रतीपगमन (Regression) शब्द से सम्बोधित किया ।

आर्थिक एवं व्यावसायिक क्षेत्रों में दो या अधिक सम्बन्धित श्रेणियों के विभिन्न पद मूल्यों की सामान्य माध्य की ओर वापस लौटने की प्रवृत्ति पायी जाती है । प्रतीपगमन विश्लेषण एक ऐसी विधि है जिससे एक स्वतंत्र चर मूल्य के आधार पर दूसरे अस्तित्व चर मूल्य का पूर्वानुमान लगाया जा सकता है । सह सम्बन्ध दो या अधिक चरों में सम्बन्ध की मात्रा व दिशा का अध्ययन है । जबकि, प्रतीपगमन विश्लेषण सम्बन्ध की प्रवृत्ति व मात्रा के आधार पर भावी अनुमान लगाने की विधि है । प्रतीपगमन विश्लेषण की सहायता से यथार्थ अनुमान लगाया जाना तभी सम्भव होता है जब श्रेणियों में आपस में सह सम्बन्ध हो ।

25.2 प्रतीपगमन रेखायें (Regression Lines):

दो चरों के मध्य सम्बन्ध को प्रगट करने वाली श्रेष्ठतम आसंगत रेखा (use of best fit) को समाश्रयण रेखा कहते है । दो सम्बन्धित श्रेणियो के लिए दो रेखायें होती हैं जिसमें एक स्वतंत्र चर के मान के आधार पर आश्रित चर का श्रेष्ट आकलित मान ज्ञात किया जा सकता है । ये रेखायें सर्वोपयुक्त रेखायें होती हैं जो न्यूनतम वर्ग विधि द्वारा प्राप्त की जाती हैं । इस विधि के आधार पर खींची गयी रेखा से विभिन्न बिन्दुओं के विचलनों के वर्गो का गान न्यूनतम होता है। क्षैतिज रूप से (Horizontally) तथा लम्बवत रूप में (Vertically) विचलन प्राप्त करने के लिये दो रेखाओं का होना आवश्यक है ।

25.3 प्रतीपगमन समीकरण (Regression Equations)

(1) x का y पर प्रतीपगमन समीकरण (Regression equation of x on y)

इस समीकरण की सहायता से y स्वतंत्र मूल्य के आधार पर x आश्रित का सर्वोत्तम अनुमान ज्ञात किया जा सकता है । समीकरण रूप में यह रेखा होगी ।

$$x = a + b\,y$$

(2) y का x पर प्रतीपगमन समीकरण (Regression equation of y on x)

इस समीकरण के आधार पर प्र के प्रदत्त मान के लिए? का श्रेष्ठतम मूल्य आकलित किया जा सकता है । समीकरण के रूप में यह रेखा निम्न होगी :

$$y = a + b\,x$$

उपरोक्त समीकरणों में 'a' व 'b' दो अचर मूल्य हैं । प्रथम अचर मूल्य 'a' वह बिन्दु है । जहाँ रेखा y अक्ष को स्पर्श करती है । दूसरे अचर 'b' प्रतीपगमन रेखा की ढाल (slope) को प्रदर्शित करता है । दोनों प्रतीपगमन समीकरण निम्न प्रकार प्राप्त किये जा सकते है ।

x on y	*y on x*
$x = a + by$	$y = a + bx$
$x = (\bar{x} - by) + by$	$y = (\bar{y} - bx) + by$
$x = x - b(y - y)$	$y = y - b(x - y)$
$x - \bar{x} = \frac{\sigma_x}{\sigma_y}(y - \bar{y})$	$y - \bar{y} = \frac{\sigma_y}{\sigma_x}(x - \bar{x})$

यहां पर

$a = x - b\bar{y}$

$b = r\dfrac{\sigma_X}{\sigma_y}$

यहां पर.

$a = y = b\bar{x}$

$b = r\dfrac{\sigma_y}{\sigma_X^2}$

उदाहरण 1 निम्न समको की सहायता से दो प्रतीपगमन रेखायें ज्ञात कीजिये तथा ऐसे पिता की अधिकतम उपर्युक्त ऊंचाई की गणना कीजिये जिसका पुत्र 70 इंच का है:

पिताओं की माध्य ऊँचाई = 67 इंच

पुत्रों की माध्य ऊँचाई - 65 इंच

पिताओं की ऊँचाई का प्रमाप विचलन = 3.5 इंच

पुत्रों की ऊँचाई का प्रमाप विचलन = 2.5 इंच

दोनों के मध्य राह- सम्बन्ध गुणांक = + 0.8

हल: दिया गया है :

$x = 67 \quad \bar{y} = 65 \quad \sigma_X = 2.5 \quad \sigma_y = 2.5 \quad r_{xy} = +0.8$

Regression equation x on y

$$x - \bar{x} = \frac{{}^{r}\sigma_X}{{}^{\wedge}\sigma_y}(y - \bar{y})$$

$$x - 67 = .8\frac{3.5}{2.5}(y - 65)$$

$$x = 1.12 \;\; y - 58$$

Regression equation x on y

$$y - \bar{y} = r\frac{\sigma_y}{\sigma_x}(x - \bar{x})$$

$$y - 65 = .8\frac{2.5}{3.5}(y - 67)$$

$$x = .57 \quad y + 26.71$$

पिता की ऊँचाई का अनुमान जिसके पुत्र की ऊचाई 70 इंच है.

$$x = 1.12y - 5.8$$

$$x = 1.12(70) - 5.8$$

$$x = 72.6$$

अत : पिता की ऊँचाई का सर्वोतम अनुमान 72.6 इंच होगा ।

25.4 प्रतीपगमन गुणांकों का परिकलन (Calculation Regression Co-efficient)

(a) जब विचलन ज्ञात करने के लिये समानान्तर माध्य का प्रयोग किया जाये :

$$b_{xy} r \frac{\sigma x}{\sigma y}$$

$$= \frac{\sum^{dxdy}}{N^{oxoy}} \times \frac{\sigma x}{\sigma y} = \frac{\sum \frac{dxdy}{}}{\frac{\sqrt{d^2 y}}{N}} x \frac{\sigma x}{\sigma y}$$

$$= \frac{\sum^{dxdy}}{N\sqrt{\frac{d^2 y}{N}}}$$

$$= \frac{\sum^{dxdy}}{\sum d^2 y}$$

$$b_{xy} r \frac{\sigma x}{\sigma y}$$

$$= \frac{\sum^{dxdy}}{Noxoy} \times \frac{\sigma y}{\sigma x}$$

$$= \frac{\sum^{dxdy}}{N\sqrt{\frac{d^2 x d^2 y}{N}}}$$

$$= \frac{\sum^{dxdy}}{\sum d^2 x}$$

(b) जब विचलन कल्पित माध्य से लिये जायें ।

$$bxy = \frac{N.\sum dxdy - \sum dx.\sum dy}{N.\sum d^2 y - \left(\sum dy\right)^2}$$

$$byx = \frac{N.\sum dxdy - \sum dx.\sum dy}{N.\sum d^2 x - \left(\sum dx\right)^2}$$

महत्वपूर्ण बिन्दु

(i) प्रतीपगमन गुणांकों b_{xy} व b_{yx} के गुणांकों का मान 1 से अधिक नहीं हो सकता क्योंकि सह-सम्बन्ध गुणांक का मान व से अधिक नहीं हो सकता । सूत्रानुसार :

$$b_{xy} x b_{yx} r \neq \frac{\sigma_X}{\sigma_y} \times r \frac{\sigma_y}{\sigma_x}$$

$$r = \sqrt{b_{xy}} \times b_{yx}$$

(ii) दोनों प्रतीपगमन गुणांक b_{xy} व b_{yx} घनात्मक या ऋणात्मक होंगे । यदि दोनों घनात्मक हैं तो सह-सम्बन्ध गुणांक घनात्मक होगा । यदि दोनों ऋणात्मक हैं तो सह-सम्बन्ध गुणांक ऋणात्मक होगा ।

उदाहरण 2 : यदि b_{xy} = 1.6 व b_{yx} = 0.4 हो तो सह-सम्बन्ध गुणांक का मान ज्ञात कीजिये।

हल :

प्रतीपगमन गुणांकों की सहायता से सह सम्बन्ध गुणांक का परिकलन निम्न सूत्र द्वारा किया जायेगा ।

$$r = \sqrt{b_{xy} \times b_{yx}}$$

$$r = \sqrt{1.6 \times .4}$$

$$r = +0.8$$

अत: सह-सम्बन्ध गुणांक का मान $+0.8$ होगा ।

25.5 न्यूनतम वर्ग विधि से प्रतीपगमन समीकरण (Regression equation by Least Square Method)

इस विधि द्वारा प्रतीपगमन समीकरण निम्न प्रकार ज्ञात किये जायेंगे :

x on y	y on y
X=a=by	Y=a=bx
सामान्य समीकरण	सामान्य समीकरण.
$\sum x = Na = b\sum y$	$\sum y = Na = b\sum x$
$\sum xy + a\sum y + b\sum y^2$	$\sum xy = a\sum x + b\sum x^2$

उदाहरण 3 : निम्न समंकों की सहायता से न्यूनतम वर्ग विधि द्वारा प्रतीपगमन समीकरणों का परिकलन कीजिये।

x	1	3	4	6	8	9	11	14
y	1	2	4	4	5	7	8	9

हल:

प्रतीपगमन समीकरण.

x on y	y on y
X=a=by	Y=a=bx
सामान्य समीकरण	सामान्य समीकरण.
$\sum x = Na = b\sum y$	$\sum y = Na = b\sum x$
$\sum xy + a\sum y + b\sum y^2$	$\sum xy = a\sum x + b\sum x^2$

उपरोक्त समीकरणों के लिये निम्न नामो की गणना की गायेगी।

x	y	X^2	Y^2	xy
1	1	1	1	1
3	2	9	4	6
4	4	16	16	16
6	4	36	16	24
8	5	64	2540	
9	7	81	19	63
11	8	121	64	88
14	9	196	81	126
N=8	$\sum x = 56$	$\sum y = 40$	$\sum x^2 = 256$	$\sum xy = 364$

Regression equation x

56=8a+40 B -------- (i)

364=40a + 256 B ------ (ii)

समीकरण संख्या (i) को 5 से गुणा कर उसे समीकरण संख्या (ii) से घटाने पर

$280 - 40a + 200b$

$264 = 40a + 256b$

$-84 = -56b$

$b = 1.5$

B का मान समीकरण में 0 प्रतिस्थापित करने पर

$280 = 40a + 200 \times 1.5$

$9 = -.5$

प्रतीपगमन समीकरण $\times on\ y : \times 0.5 + 1.5y$

Regression Equation y on x:

$40 = 8a + 56b$

$364 - 56a + 524b$

समीकरण संख्या (iii) को 7 से गुणा कर उसे समीकरण संख्या (iv) से घटाने पर

$280 = 56a + 392b$

$264 = 56a + 524b$

$-84 = -132b$

$b = 0.636$

b का मान समीकरण में प्रतिस्थापित करने पर

$280 = 56a + 392b \times .626$

$a = 0.548$

अत: प्रतीपगमन समीकरण y on x: y = 0.548 + 0.636 ×

25.6 अनुमान की प्रमाप त्रुटि (Standard Error of Estimate)

प्रतीपगमन समीकरण की सहायता से एक स्वतंत्र चर मूल्य के आधार पर दूसरे आश्रित चर मूल्य का सर्वोतम अनुमान ज्ञात किया जाता है । इस तथ्य का पता लगाने के लिये कि हमारे अनुमान सत्य के कितने निकट हैं, अनुमान की प्रभाव त्रुटि ज्ञात की जाती है ।

अनुमान की प्रभाव त्रुटि वास्तविक तथा संगठित (computed) मूल्य के विचलनों के वर्गो के औसत का वर्गमूल है । सुत्रानुसार अनुमान की प्रमाप त्रुटि का प्रतीपगमन रेखा से वही सम्बन्ध होता है जो प्रमाप विचलन का समानान्तर माध्य से होता है ।

25.7 पूर्वानुमान का अर्थ एवं उद्देश्य (Meaning and Objective of Prediction)

पूर्वानुमान का अर्थ पिछले अनुभव, वर्तमान परिस्थितियों तथा भावी प्रवृत्तियों के समावेश के साथ भविष्य की घटनाओं का पूर्व आकलन है । पूर्वानुमान का उद्देश्य उपलब्ध समंकों के आधार पर किसी क्रिया के सम्भाव्य व्यवहार को यथासम्भव परिशुद्धता के साथ प्रतिस्थित करना तथा उन सम्भावनाओं के आधार पर नीतियाँ निर्धारित करना है ।

सभी घटनायें भूतकालिन प्रभाव लिये होती है जिनकी भविष्य में घटने की सम्भावना रहती है । भावी परिस्थितियों का ज्ञान कर वर्तमान को नियमित एवं नियंत्रित करना पुर्वानुमान से ही सम्भव है ।

25.8 पूर्वानुमान की प्राधिया (Techniques of Prediction)

पूर्वानुमान ज्ञात करने के लिये अनेकों वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग किया जाता है । कुछ पूर्वानुमान वैज्ञानिक रीतियों के प्रयोग के बिना अटकल या अन्दाज के आधार पर भी लगायें जाते हैं ।

पूर्वानुमान की प्रमुख वैज्ञानिक विधियाँ निम्न है :

(i) काल श्रेणी विश्लेषण (Analysis of Time Series)

किसी भी काल श्रेणी पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन तथा काल श्रेणी के संघटकों (Components) का विश्लेषण कर पूर्वानुमान किया जा सकता है । एक काल श्रेणी के चार प्रमुख संघटक होते हैं - दीर्घकालीन उपनीतिण मौसमी उच्चावचन । इन संगठकों का पृथक्करण कर दीर्घकालीन प्रवृत्ति या अल्पकालीन उच्चावचनों के आधार पर पूर्वानुमान किये जा सकते है ।

(ii) प्रतीपगमन विश्लेषण (Regression Analysis):

प्रतीपगमन विश्लेषण भी पूर्वानुमान ज्ञात करने की एक प्रमुख विधि है । विभिन्न चर मूल्यों की प्रकृति एवं सम्बन्ध का माप करके प्रतीपगमन समीकरणों की सहायता से पूर्वानुमान किये जा सकते है । x स्वतंत्र मूल्य के आधार पर y का तत्संवादी सर्वोत्तम मूल्य तथा y स्वतंत्र मूल्य के आधार पर x का सर्वोतम मूल्य प्रतीपगमन समीकरणों की सहायता से ज्ञात किया जा सकता है ।

(iii) बाह्य गणन (Extrapolation)

पूर्वानुमान के लिये सांख्यिकीय बाह्मगमन तकनीकों का भी प्रयोग किया जाता है । यदि उपलब्ध समंक बाह्य गणन की शर्तों को पूरा करते हैं तो पूर्वानुमान ज्ञात करने के लिये बाह्म गणन उपयुक्त तकनीक है ।

(iv) अन्य विधियाँ (Other techniques)

पूर्वानुमान ज्ञात करने के लिये कुछ अन्य विधियों का भी प्रयोग किया जाता है । इनमें से प्रमुख निम्न है :

(A) सूचकांक (Index Numbers)

(B) चर घातांकी विधि (Exponential smoothing)

(C) अर्थमित्तीय विधियाँ (Econometric Method)

पूर्वानुमान ज्ञात करने की उपरोक्त सभी विधियों में एक अन्तनिर्हित मान्यता यह होती है कि समंको में नियमितता होती है तथा उनमें तीव्र परिवर्तन नहीं होते । पूर्वानुमान, वास्तविक समंक नहीं होते हैं तथा पूर्ण रूप से शुद्ध नहीं होते है । भावी अनुमानों में सदा अनिश्चितता का तत्व बना रहता है । पूर्वानुमान अल्पकालिक भी होते हैं तथा उसमें अशुद्धि की मात्रा निश्चित रूप से विद्यमान रहती है । परिवर्तनों की दिशा व गति सर्वदा समान नहीं होती है ।

उपरोक्त कमियों के बावजूद यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि वैज्ञानिक आधार पर किया गया पूर्वानुमान अटकल या अन्दाज से निश्चित रूप से सही (Sufficiently accurate) होता है । पूर्वानुमान में त्रुटि निर्णय कर्ता की आवश्यकता एवं समंकों की उपलब्धता पर निर्भर करती है।

25.0 स्वमूल्यांकन (Self-Assessment)

1. प्रतीपगमन अवधारणा की व्याख्या कीजिये यह सह-सम्बन्ध से किस प्रकार भिन्न है ।
2. प्रतीपगमन की परिभाषा कीजिये । प्रतीपगमन रेखायें दो क्यों होती हैं । किन परिस्थितियों में केवल एक ही प्रतीपगमन रेखा एक ही है ।
3. निम्नलिखित समंक किसी परीक्षा में विषय A तथा B में प्राप्तांकों से सम्बन्धित है ।

	A	B
औसत अंक	39.5	47.6
प्रमाणित विचलन	10.8	16.9

A तथा B का सह-सम्बन्ध गुणांक $= +0.42$

दोनो प्रतीपगमन समीकरण ज्ञात कीजिये । A मे 50 अंक पाने वाले के B में अंक अनुमानित कीजिये ।

25.10 संदर्भ ग्रन्थ (References)

1. Agarwal, B.L. -Basic Statistics
2. त्रिपाठी, रघुवंश - अप्रालिक सांख्यिकी
3. कपिल, एच. के. - सांख्यिकी के मूल तत्व

इकाई-26

अप्राचलिक सांख्यिकी

(Non-Parametric Statistics)

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

26.1 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

26.2 प्रस्तावना (Introduction)

26.3 अप्राचल सांख्यिकी (Non-Parametric Statistics)

26.4 अप्राचलिक सांख्यिकीय परीक्षण के लाभ
(Advantages of Non-Parametric statistical test)

26.5 अप्राचलिक सांख्यिकीय परीक्षण के दोष
(Demerits of Non Parametric statistical test)

26.6 अप्राचलिक सांख्यिकीय परीक्षण Non Parametrical Statistical Test)
(1) मैन हिवटने यू परीक्षण (Mann-Whitney U Test)
(2) कोटि अन्तर (Rank difference method)
(3) आसंग गुणांक (Contigency co-efficient)

26.7 सारांश (Summery)

26.8 स्वमूल्यांकन (Self-Assessment)

28.9 सन्दर्भ ग्रन्थ (Reference)

26.1 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

इस इकाई की समाप्ति पर विद्यार्थी

1. अप्राचलिक सांख्यिकीय के सम्प्रत्यय को समझ सकेगें ।
2. प्राचलिक सांख्यिकी एवं अप्राचलिक सांख्यिकी में अन्तर कर सकेगें ।
3. अप्राचलिक सांख्यिकी के उपयोग को समझ सकेगें ।
4. अप्रचलित सांख्यिकीय विधियों के प्रकार को जानकारी हासिल कर सकेगें ।
5. अप्रचलित विधियों जैसे - मान हिटन यू परीक्षण, कोटिक्रम अन्तरविधि इत्यादि की जानकारी प्राप्त करेगें ।

26.2 प्रस्तावना (Introduction)

शैक्षिक अनुसन्धान में सामान्यत: हम शिक्षण संस्थाओं के विद्यार्थियों का अध्ययन करके शिक्षा के प्रभाव का अध्ययन करते है । साधारणतया शिक्षा जगत की जनसंख्या बहुत बड़ी (लाखों में) होती है जिसका पूर्ण रूप से अध्ययन करना समय, श्रम एवं धन की दृष्टि से कठिन/असम्भव होता है । इस कारण से जनसंख्या (Population) को प्रतिदर्श (Sample) के आधार पर ही अध्ययन किया जाता है ।

प्राचल सांख्यिकी के लिए निम्न शर्तें आवश्यक होती है -

(1) जनसंख्या (Population) में चर/शीलगुण का वितरण प्रसामान्य (Normal distribution) हो या F वितरण (Fishers F distribution) हो या इसी प्रकार अन्य प्रसरण ।

(2) प्रतिदर्श (Sample) का चयन दैवन्यादर्श विधि (Random Sampling) के आधार पर किया गया हो तथा प्रतिदर्श का आकार बड़ा हो ।

(3) जनसंख्या के शीलगुणो (Traits) का मापन (measurement) समान अन्तराल मापनी (Equal interval scale) या अनुपात मापनी (Ratio-scale) के द्वारा किया गया हो व आँकड़ो का एकत्रित इनके आधार पर किया गया हो ।

प्राचल आँकड़ो (parametric statistics) का सम्बन्ध प्राय: एक समष्टि के किसी एक प्राचल (Parameter) से होता हैं । ऐसे आकड़ों के आधार पर प्राचल के विषय में आकलन (estimate) किया जाता है । इसी कारण ऐसे आँकड़ो से प्राचलों का अध्ययन किया जाता है ।

26.3 अप्राचल सांख्यिकी (Non-Parametric Statistics)

आधुनिक काल में कतिपय सांख्यिकी अनुमानिक परीक्षण विकसित किये गये है जिनमें प्राचल के सम्बन्ध में कठोर अभिग्रह (Assumption) नही होते है । ऐसे आकड़ों का सम्बन्ध प्राय: एक समष्टि के प्राचल (Parameter) से भी नही होता । प्रसामान्य वितरण के अभिग्रह भी इस विधि द्वारा प्राप्त निष्कर्षो पर लाग नही होते । इन तकनीकों को वितरण मुक्त (Distribution free) या अप्रचलित तकनीक (Non-Parametric Techniques) कहते है ।

अप्राचल आँकड़ो की एक विशेषता यह होती है कि ऐसे आँकड़ो की संख्या अपेक्षाकृत बहुत कम होती है अथवा प्राय: तीस से कम ही रहती है । कभी-कभी इनकी संख्या दस से भी कम हो जाती है । कुछ अप्राचल तकनीकों को बहुधा कोटिक्रम परीक्षण (Ranking Test) कहते है या अनुक्रम परीक्षण (Order Test) कहते है । ये शीर्षक यह व्यक्त करते है कि प्रचालित परीक्षण से ये परीक्षण किस प्रकार भिन्न है । प्रचालित परीक्षणों में प्रतिदर्श आकड़ों का जोड़, घटाना तथा गुणा की अंकीय गणितीय क्रिया की जाती है । जब आकड़े स्पष्ट रूप से अंकीय नही होते है तो ये अंकीय प्रक्रियाएँ आँकड़ो को विकृत कर देती है । फलत: परीक्षण से प्राप्त निष्कर्ष संदेहास्पद हो जाता है । अत: प्रचालित परीक्षण का उपयोग सही अर्थों में अंकीय आकड़ों मे ही करना चाहिए ।

अप्रचलित परीक्षण कोटि या नामिक आकड़ों के लिए उपयुक्त है । प्रचालित परीक्षण दो मध्यांकों (Median) के अन्तर की सार्थकता के लिए उपयोगी है । जबकि अप्रचलित परीक्षण दो मध्यांकों (Median) के अन्तर की सार्थकता में उपयोगी है । चूंकि मध्यांक की गणना में केवल गिनना (counting) अपेक्षित है ।

अप्रचलित सांख्यिकीय परीक्षण के निर्देश (Model) में जनसंख्या के प्रचालित होने की दशाएँ विशिष्टकृत नही की जाती है । अधिकांश अप्रचलित परीक्षणों में कुछ अभिग्रह होते है - अर्थात् प्रेक्षण स्वतंत्र है तथा अध्ययन किया जाने वाले चर (variable) सतत् है । किन्तु ये

अभिग्रह (Assumption) प्रचालित परीक्षणों की तुलना में काफी दुर्बल तथा कम होते है । अप्रचलित परीक्षणों में माप उतने दृढ़ नही होते है जितने कि प्रचालित के लिए अपेक्षित है ।

व्यावहारिक विज्ञानों (Applied Sciences) में प्रचालित परीक्षण की दशाएं (अभिग्रह) कम ही पूरी होती है । अत: हमे अप्रचलित परीक्षणों का उपयोग ही अधिक करना पड़ता है । इन परीक्षणों की शक्ति (Power) बढ़ाने के लिए 1९ का आकार बढ़ा देना चाहिए । हिटने (Whitney, 1948) के अनुसार कुछ जनसंख्या वितरण के लिए अप्रचलित परीक्षण स्पष्ट रूप से प्रचालित से श्रेष्ठ है ।

(1) जनसंख्या का शीलगुण/चर (traits/variable) के आधार पर वितरण प्रसामान्य नही है । ये या तो वर्गीकृत (categorised) होते है । जैसे - अध्यापकों का वर्ग, (1) प्रोफेसर (2) रीडर (3) वरिष्ठ व्याख्याता (4) प्रवक्ता

इसी प्रकार आर्थिक आधार पर (1) उच्च वर्ग (2) मध्यम वर्ग (3) निम्न वर्ग ।

(2) ये शील गुण सतत् (continuous) नही है तथा अविच्छिन (discrete) होते है ।

(3) शील गुण का मापन क्रमनिर्धारण मापनी (ordinal scale) या नामिक मापनी (Normal scale) पर होता है ।

नीचे दी गई सारणी संख्या 1 में परिमाणात्मक विवरण और सांख्यिकीय विश्लेषण से सम्बन्धित जानकारी प्रस्तुत की गई है:-

सारणी सं. 1– Levels of Quantaties Discription

स्तर Levels	**मापनी Scale**	**प्रक्रिया Process**	**प्रदतों का विश्लेषण Data treatment**	**कुछ परीक्षण Some Appropriate test**
4.	अनुपात (Ratio)	माप समान अन्तराल मूल बिन्दू शून्य अनुपात सम्बन्ध (Measured equal intervals true zero ratio relationship)		टी- परीक्षण (T- test) प्रसरण विश्लेषण (Analysis ऑफ variance)
3.	अन्तराल (Interval)	माप समान अन्तराल मूल बिन्दू शून्य नहीं (Measured equal interval no true zero))	प्रचलिक (Parametric)	कारक विश्लेषण (Factor Analysis) पीयर्सन सहसम्बन्ध (pearson's r)
2	क्रमिक (Ordinal)	क्रम का निर्धारण (Ranked in order)		स्पीयमैन "रो" (Spearman's rho) मानविटने परीक्षण

				(Mann whitney) विलकोसन (Wilcoxon)
1.	नामिक (Nominal)	वर्गीकृत और गिनना (Classified and Counted)	अप्रचलिक (Non-Parametric)	कार्ड परीक्षण (chi-square) मध्यांक परीक्षण (Median Test) चिन्ह परीक्षण (Sign) Test

26.4 अप्रचलित सांख्यिकीय परीक्षण के लाभ (Advantages of Non-Parametric Statistical Test)

(1) अधिकांश अप्रचलित सांख्यिकीय परीक्षण से प्राप्त सम्भाव्यता कथन (Probability Statement) सटीक होते है । चाहे जनसंख्या के विवरण का स्वरूप कैसा भी क्यों न हो । वितरण के स्वरूप पर सम्भाव्यता कथन की शुद्धता निर्भर नहीं करती । फिर भी कुछ अप्रचलित परीक्षण यह अभिग्रह रखते है कि दोनों वितरण समन्वित या समरूप (Symmetrical or indentical) होते है । कुछ अप्रचलित परीक्षण वितरण के सततता का अभिग्रह रखते हैं । ये अभिग्रह प्रचालित सांख्यिकीय के समान है ।

(2) यदि प्रतिदर्श का आकार लघु है जैसे N = 6 तो अप्रचलित परीक्षण के अतिरिक्त और कोई विकल्प नही है बशर्ते कि जनसंख्या का विवरण सही-सही ज्ञात न हो ।

(3) कतिपय जनसंख्या से प्राप्त प्रतिदर्शो के विश्लेषण के लिए अप्रचलित परीक्षण उचित है । क्योंकि बिना अभिग्रहो के प्रचालित सांख्यिकीय परीक्षण उनमें प्रयुक्त नही हो सकते है ।

(4) यदि आँकडे मूलरूप में कोटि में है या कोटि के समान है तो आकड़ों के विश्लेषण के लिए अप्रचलित सांख्यिकीय परीक्षण अपरिहार्य है ।

(5) नामिक (Nominal) या वर्गीकरण (Classified) माप के आकड़े का विश्लेषण केवल अप्रचलित परीक्षण द्वारा सम्भव है ।

(6) प्रचालित परीक्षणों की अपेक्षा अप्रचलित परीक्षण सीखने में और गणना करने में सरल हैं।

26.5 अप्रचलित सांख्यिकीय परीक्षण के दोष (Demerits of Non-Parametric Statical Test)

(1) यदि प्रचालित सांख्यिकीय निदेश के अभिग्रह पूरे है तथा माप अपेक्षित क्षमता का है (अंतराल मापनी द्वारा) तो अप्रचलित परीक्षण प्रयुक्त नही करना चाहिए ।

(2) कोई भी अप्रचलित विधि प्रसरण विश्लेषण में अन्तःक्रिया (Interaction) का परीक्षण नहीं कर पाती है जब तक कि उन्हे जोडने की क्रिया का अभिग्रह न प्राप्त हो सकें ।

26.6 अप्रचलित सांख्यिकीय परीक्षण (Non-Parametrical Statistical Test) -

प्रचालित सांख्यिकी के लिए अनेक प्रकार के परीक्षण है जिसमे से कुछ निम्नलिखित है :

(1) मान हिटने यू परीक्षण (Mann-Whitney U Test)

(2) क्रम निर्धारण सहसम्बन्ध (Rank Correlation)

(3) काई वर्ग परीक्षण (Chi-square Test)

(4) मध्यांक परीक्षण (Median Test)

(5) चिन्ह परीक्षण (Sign Test)

(6) आसंग परीक्षण (Contigency Test)

(7) फाई गुणांक

(1) मान हटने यू परीक्षण (Mann-Whitney U Test)

मैन हिवटने यू परीक्षण का उपयोग यह ज्ञात करने के लिए किया जा सकता है कि क्या दो स्वतंत्र समूह एक ही जनसंख्या से चुने गये है । इसमें माप कम से कम क्रम सूचक मापनी (Ordinal Scale) द्वारा किया जाना चाहिए । यू परीक्षण एक सशक्त अप्रचलित तकनीक है । प्रचालित तकनीक 't' का भी एक अच्छा विकल्प 'यू परीक्षण है । विशेष रूप से यदि वितरण की परिकल्पना सामान्य (Normal) नहीं मानी जा सकती है और न मापन अन्तराल (Interval) मापनी द्वारा किया गया है ।

अगर दो प्रतिदर्श चुने गये है । एक प्रतिदर्श 'A' जनसंख्या तथा दूसरा प्रतिदर्श B जनसंख्या से चुना गया है । इसमें H_0 होगी कि दोनों वितरण A तथा B एक समान है । वैकल्पिक परिकल्पना (H_1) होगी कि A तथा B जनसंख्या असमान है । दिशागत परिकल्पना (Directional Hypothesis) में किसी एक जनसंख्या को दूसरी जनसंख्या से श्रेष्ठ या निम्न होने का पूर्व कथन किया जाता है । ऐसी दशा में हम H_1, को स्वीकार कर लेते है यदि $p(a>b)<1/2$ हो । अर्थात् पहले कथन कर दिया गया था कि a मूल्य जनसंख्या A से b मूल्य जनसंख्या B से बडा है । इसके विपरीत हम B को A से श्रेष्ठ मान सकते है । तब H_1, होगी $p(a>b)<1/2$. यह तभी सम्भव है जब B वास्तव में A से श्रेष्ठ हो ।

द्वि-पुच्छीय परीक्षण में किसी एक को श्रेष्ठ होने का कथन नहीं किया जाता है । तब H_1 होगी $p(a>b)\neq 1/2$

उदाहरण - दो समूहों के प्राप्तांक निम्नलिखित है

समूह अ -	74, 78, 80, 36	(प्रशिक्षण प्राप्त समूह)
समूह 'ब' -	35, 115 ,40, 60	(अप्रशिक्षित समूह)

क्या दोनों समूहों के प्राप्तांक में सार्थक अन्तर है ? यानि प्रशिक्षण का प्रभाव प्राप्तांकों पर आया है या नही?

शून्य परिकल्पना $[H_0 Null\ Hypothesis]$

H_0 = दोनों समूहों के प्राप्तांको का वितरणो पर प्रशिक्षण के प्रभाव की दृष्टि से अन्तर नहीं है । H_1 = प्रशिक्षित समूह के प्राप्तांक अप्रशिक्षित समूह के प्राप्तांक से ज्यादा होगें ।

सार्थकता स्तर (Significance level)

$\alpha = .05$

$n_1 =$ 4 (नियमित समूह)

$n_2 = 5$ (प्रायोगिक समूह)

यू मूल्य की गणना (Computing the value of U

दोनों समूहों के प्राप्तांकों को मिश्रित करके उन्हें कोटिक्रम (Rank) में बदलते है । न्यूनतम प्राप्तांक की कोटि (Rank) 1, इससे बड़े प्राप्तांक को 2... आदि देते है ।

सारणी सं. 2

सूत्र (Formula)

समूह 'अ' तथा समूह 'ब' के प्राप्तांक

प्राप्तांक समूह 'अ' (Score Group 'A')	कोटि (Rank)	प्राप्तांक समूह 'ब' (Score Group'B'	कोटि (Rank))
74	6	38	2
78	7	115	9
80	8	40	4
36	1	60	5
39	3		
	R_2=25		R_1=20

R_1=20 n_1=4

R_2=25 n_2=5

सूत्र (Formula)

(1) $U = n_1 n_2 + \frac{n_1(n_1+1)}{2} R_1$

(2) $U = n_1 n_2 + \frac{n_2(n_2+1)}{2} R_2$

(1) $U = (4)(5) + \frac{4(4+1)}{2} - 20$

$= 20 + 10 + -20 = 10$

(1) $U = (4)(5) + \frac{5(5+1)}{2} - 25$

$= 20 + 15 - 25 = 10$

सारणी के अवलोकन से ज्ञात होता है कि H_0 के घटित होने की $P = .548$ है ।

चूंकि हमारे परिकलित U का मूल्य $[.548 > .05].548$ है जो कि .05 से बड़ा है । इसलिए हम H_0 शून्य परिकल्पना को स्वीकृत कर देते है । यानि प्रशिक्षण का समूह पर कोई अधिक नही देखा गया है।

जब कभी $n_2 > 20$ होता है यानि समूह बड़ा होने लगता है तब U मूल्य की सार्थकता Z के आधार पर ज्ञात कर सकते है ।

2. कोटि अन्तर विधि (Rank difference method) -

कभी-कभी इस तरह के परीक्षण होते है जिसकी कि संख्यात्मक माप संभव नही होती जबकि उनका संख्यात्मक क्रम निर्धारित किया जा सकता है ।,उदाहरण के लिये छात्रों की बुद्धिमता का माप बिना बुद्धि परीक्षण के सम्भव नही है । यदि बुद्धि परीक्षण उपलब्ध भी हो तो न्यादर्श छोटा होने के कारण 'r' का प्रयोग नहीं किया जा सकता है । इस हालत में हम क्रम प्रदान करते है । हालांकि बुद्धिमता के अनुसार छात्रों का क्रम निर्धारित किया जा सकता है । ऐसी स्थिति में कार्ल पियर्सन विधि द्वारा सह-सम्बन्ध गुणांक निकालना संभव नही होता । ऐसी विधि चाहिये जो क्रमों के आधार पर सह-सम्बन्ध गुणांक का परिकलन किया जा सके । प्रोफेसर स्पीयरमैन ने एक ऐसी विधि का प्रतिपादन किया । इसलिए इस विधि को स्पीयरमैन की कोटि अन्तर विधि के नाम से जाना जाता है ।

$(P)'Rho'$ का कभी भी 'r' के स्थान पर प्रयोग नही किया जाना चाहिये, क्योंकि $'Rho(P)'$ अप्रचलित है जबकि 'r' प्रचालित है ।

गणना विधि

1. दोनों चरों के पद मूल्यों को अलग-अलग क्रम (Rank) प्रदान किये जाते है ।
2. चरों में यदि कुल मूल्य समान हो तो समान क्रम देने के लिये उन्हे क्रमश: मिलने वाले क्रमों का औसत ज्ञात कर उन पद मूल्यों के सामने लिख दिया जाता है ।
3. दोनो चरों के क्रमों के क्रमान्तर ज्ञात किये जाते है । क्रमान्तर ज्ञात करने के लिये प्रथम चर के मूल्य के सामने दिये गये क्रम में से ठीक उसके सामने दूसरे चर को प्रदान किये गये क्रम को घटाया जाता है ।
4. क्रमान्तरों का वर्ग ज्ञात कर उनका योग प्राप्त किया जाता है ।
5. निम्न सूत्र द्वारा सह-सम्बन्ध गुणांक ज्ञात करिये :

$$P = 1\frac{6\sum D^2}{N^3 - N}$$

$\sum D^2$ = समान्तर क्रमान्तरों के वर्गो का योग

$N =$ मदों की संख्या

उदाहरण :

एक परीक्षा मे जिन 15 विद्यार्थियो को अर्थशास्त्र विषय में क्रमश: 1 से 15 छात्रों को गणित विषय में क्रमश: 10, 7, 2, 6, 4, 8. 3 .1, 11, 15, 9, 5, 14, 12 एवं 13 से क्रमांकित किया गया है । सह-सम्बन्ध गुणांक की गणना कीजिए ।

हल ' :

	Rank in Economics (R_1)	Rank in Maths (R_2)	(R_1-R_2) Difference (D)	D^2
1	1	10	(-) 9	81
2	2	7	-5	25
3	3	2	1	1
4	4	6	-2	4
5	5	4	1	1
6	6	8	-2	4
7	7	3	4	16
8	8	1	7	49
9	9	11	-2	4
10	10	15	-5	25
11	11	9	2	4
12	12	5	7	49
13	13	14	-2	1
14	14	12	2	4
15	15	13	2	4
N=15				$\sum D^2 = 272$

$$P = 1\frac{6\sum D^2}{N^3 - N} = 1 - \frac{6 \times 272}{(15)^3 - 15}$$

$$P = 1\frac{1632}{3360} = 0.51$$

उदाहरण:

एक सौंदर्य प्रतियोगिता मे भाग लेने वाले 10 प्रतियोगियों को दो निर्णायकों ने निम्न प्रकार से क्रम (Rank) (ये अंक केवल कोटि को दर्शाते है) प्रदान किये ।

प्रथम निर्णायक (R_1) 1,6,5,10,3,2,4,9,7,8

द्वितीय निर्णायक (R_2) 2,8,4,1,6,9,5,3,7,1०

कोटि अन्तर सह सम्बन्ध ज्ञात कीजिये -

R_1	R_2	R_1-R_2	D2
1	2	-1	1
6	8	-2	4
5	4	+1	1

10	1	+9	81
3	6	-3	9
2	9	-7	49
4	5	-1	1
9	3	6	36
7	7	0	0
8	10	-2	4
			$\sum D^2 = 186$

$$P = 1 - \frac{6\sum D^2}{N^3 - N} = 1 - \frac{6 \times 186}{(10)^3 16}$$

$$P = 1 - \frac{1116}{990} = \frac{126}{990} = 0.13$$

इस तरह दोनों निर्णायकों द्वारा दिये गए बहुत क्रमभाग का ऋणात्मक संबंध है।

उदाहरण :

नीचे दिये प्रापतांकों के बीच सह संबंध कोटी अंतर विधि से ज्ञात कीजिये ।

विषयी	x	y
A	21	41
B	16	41
C	20	46
D	19	43
E	17	45
F	22	50
G	18	42
H	15	40

हल:

विषय	प्राप्तांक		R1	R2	(R1-R2)	D^2
	X	Y	X	Y		
A	21	41	2	6.5	-4.5	20.25
B	16	41	7	6.5	.5	25
C	20	46	3	2	1	1
D	19	43	4	4	0	0
E	17	45	6	3	3	0
F	22	50	1	1	0	0
G	18	42	5	5	0	0

H	15	50	8	8	0	0
N=18						$\sum d = 30.5$

$$P = 1\frac{6\sum D^2 + 1/12 - \left(m^3 - m\right)}{N^3 - N}$$

$$P = 1 - \frac{6 \times 30.5 + 1/2\left(2\right)^3 - 2}{8^3 - 8}$$

$$P = \frac{1 - 183 + .05}{504} = 1\frac{183.5}{504} = .064$$

आसंग गुणांक (Co-efficient of Contingency)

प्रोफेसर पीयरसन के अनुसार x^2 से आसंग गुणांक ज्ञात करने के लिए निम्न सूत्र काम में लिया जा सकता है -

$$C = \sqrt{\frac{x^2}{x^2 + N}}$$

उदाहरण - x^2 का मान 89.253

$$N = 180$$

$$C = \sqrt{\frac{89.52}{89.52 + 180}}$$

$$= \sqrt{\frac{89.52}{269.52}} = .58$$

26.7 सारांश (Summary)

शैक्षिक अनुसंधान के क्षेत्र मे जब जनसंख्या की शीलगुन/चर के आधार पर वितरण प्रसामान्य नही होता है तथा शील गुणों का मापन क्रम निर्धारण या नामिक मापनी पर होता है तथा प्रतिदर्श का

आकार छोटा हो तो ऐसी परिस्थिति में अप्रचलित विधियों का प्रयोग किया जाता है ।

अप्रचलित आँकड़ो के आधार पर हम समष्टि के बारे में आकंलन (Estimate) नही कर सकते है ।

अप्रचलित सांख्यिकीय विधियों अनेक प्रकार की होती है । जैसे मेन हिवट्ने यू परीक्षण, कोटिक्रम अन्तरविधि काई वर्गपरीक्षण इत्यादि ।

26.8 स्वमूल्यांकन (Self-Assessment)

1. अप्रचलित सांख्यिकीय से आप क्या समझते है?

   What do you mean by Non-Parametric statistics?

2. अप्रचलित विधियों का उपयोग क्यों किया जाता है?

   Why are Non-Parametric Methods used?

3. निम्न आकड़ों के आधार पर कोटि अन्तर विधि से सहसम्बन्ध निकालिये :

Calculate the rank difference correlation with the help of given data:

Group A- 40, 36, 37, 30, 36, 25, 32, 31

Group B- 22, 25, 28, 26, 31, 30, 32, 35

28.9 संदर्भ ग्रन्थ (References)

1. Agarwal,B.L.-Basic Statistics
2. त्रिपाठी, रघुवंश - अप्रालिक सांख्यिकी
3. कपिल, एच. के. - सांख्यिकी के मूल तत्व
4. नागर, कैलाशनाथ - सांख्यिकी के तत्व
5. Best,J.W. & Kahn, James-Research in Education.

इकाई 27

काई वर्ग मध्यांक तथा चिन्ह परीक्षण
(Chi Square, Median and Sign Tests)

इकाई की संरचना (structure of Unit)

27.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

27.1 काई वर्ग परीक्षण अर्थ एवं महत्व (Meaning and importance of CHI Square Test)

27.2 काई वर्ग परीक्षण विधि (Method of CHI Square Test)

27.3 येट (Yate) का संशोधन (Yate's Correction)

27.4 अन्वायोजन के उत्कृष्टता की जांच (Test of Fitness)

27.5 आवृत्तियों का समूहन (Pooling of Frequencies)

27.6 काई वर्ग परीक्षण की आवश्यक शर्तें (Conditions for CHI Square Test)

27.7 मध्यांक 'परीक्षण का अर्थ एवं प्रयोग (Meaning and use of Median Test)

27.8 मध्यांक परीक्षण प्राविधि (Techniques of Median Test)

27.9 चिन्ह परीक्षण (Sign Test)

27.10 स्वमूल्यांकन (Self-Assessment)

27.11 संदर्भ ग्रन्थ (Reference)

27.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप:-

- काई वर्ग, मध्यांक परीक्षण चिन्ह इन परीक्षणों की विधियों को स्पष्ट कर सकेंगे ।
- χ^2 के लिये येट संशोधन कर सकेंगे ।
- χ^2 मध्यांक चिन्ह परीक्षण सम्बन्धी समस्याओं को हल कर सकेंगे-। काई वर्ग परीक्षण अर्थ एवं महत्व

27.1 काई वर्ग परीक्षण अर्थ एवं महत्व (Meaning and importance of CHI Square)

काई वर्ग परीक्षण का प्रयोग दो गुणों के मध्य स्वतंत्रता का परीक्षण (Test of independence) के लिये किया जाता है । काई वर्ग परीक्षण अवलोकित आवृतियों तथा प्रत्याशित आवृतियों (Observed frequencies and expected frequencies) के मध्य अन्तर की सार्थकता का परीक्षण है । सांख्यिकीय निदर्शन में सैद्धान्तिक आवृतियों तथा प्रत्याशित आवृतियों में पूर्ण अनुरूपता का पाया जाना सम्भव नहीं होता है कार्ड वर्ग परीक्षण इस

परिकल्पना कर जांच है कि इन आवृतियों में अन्तर निदर्शन उच्चावचन के कारण है या परिकल्पना के गलत होने के कारण है ।

काई वर्ग परीक्षण का प्रथम प्रयोग प्रा. हेलमर्ट (Helmert) ने किया था परन्तु इसका विधिवत प्रतिपादन कार्ल षियरसन (Karl Pearson) ने 199० ई. में किया । काई वर्ग परीक्षण इस तथ्य की भी जांच है कि अवलोकित आवृति बंटन कहाँ तक सैद्धांतिक आवृति बंटन के अनुरूप है। काई वर्ग परीक्षण से यह भी जांच की जा सकती है कि विभिन्न प्रतिदर्श एक ही समग्र से लिये गये हैं या नहीं ।

काई वर्ग परीक्षण इस परिकल्पना पर. आधारित है कि यदि अवलोकित तथा प्रत्याशित आवृतियों के मध्य अंतर नहीं होता तो काई वर्ग का मान शून्य के बराबर होता । काई वर्ग परीक्षण की विस्तृत विधि निम्न प्रकार है-

27.2 काई वर्ग परीक्षण विधि (Method of CHI Square Test)

काई वर्ग परीक्षण द्वारा दो गुणों में स्वतत्रता की जाच निम्न विधि द्वारा की जाती है।

1. शून्य परिकल्पना (Null Hypothesis)

काई वर्ग परीक्षण में सर्वप्रथम यह परिकल्पना की जाती है कि दोनों गुण स्वतन्त्र हैं अर्थात् वास्तविक तथा प्रत्याशित आवृतियों में अतर शून्य है ।

2. प्रत्याशित आवृतियों का परिकलन :

दो गुणों की स्वतंत्रता की जांच के लिये प्रत्याशित आवृतियों का परिकलन, इस मान्यता के आधार पर कि दोनों गुण स्वतंत्र हैं, निम्न प्रकार की जाती है :

गुण A					योग
	A1	A2	A3----Am		
B_1	$(A_1\ B_1)$	$(A_2\ B_1)$	$(A_3\ B_1)$	---(AmB_1)	(B_1)
B_2	$(A_1\ B_2)$	$(A_2\ B_2)$	$(A_3\ B_2)$	---(AmB_2)	(B_2)
B_3	$(A_1\ B_3)$	$(A_2\ B_3)$	$(A_3\ B_3)$	---(AmB_3)	(B_3)
1	1	1	1	---	1
1	1	1	1	---	1
1	1	1	1	---	1
Bx	(A_1)	(A_2)	(A_3)	---$(AmxB_x)$	B_X
योग	(A_1)	(A_2)	(A_3)	---(Am)	N

$(A_1 B_1)$ की प्रत्याशित आवृति $= \dfrac{(A_1)\times(B_1)}{N}$

$(A_2 B_1)$ की प्रत्याशित. आवृति - $= \dfrac{(A_2)\times(B_1)}{N}$

इस प्रकार किसी भी वर्ग $Ai\ Bj$ की

प्रत्याशित आवृति $E_{ij} = \frac{(Ai)\times(Bj)}{N}$ सूत्र द्वारा ज्ञात की जा सकती है ।

3. χ^2 का परिकलन.

χ^2 का परिकलन करने के लिए अवलोकित तथा प्रत्याशित आवृतियों में अंतर ज्ञात कर निम्न सूत्र द्वारा किया जाता है ।

$$\chi^2 = \sum \frac{(F_0 - F_e)^2}{F_e}$$

यहाँ F_0 अवलोकित आवृतियाँ

F_e = प्रत्याशित आवृतियाँ

4. स्वतंत्रता संख्या (Degree of freedom) :

गुणों की आसंग-सारणी में कुछ कोष्ठकों की आवृतियाँ ऐसी होती हैं जिन्हें ज्ञात करने की स्वतंत्रता ऐसी होती है । दो गुणों के मध्य सार्थकता परीक्षण के लिए स्वतंत्रता संख्या की गणना निम्न प्रकार की जाती है

$d.f.\ (c-l)(a-l)$

यहा C = कॉलम की संख्या

r = पंक्तियों की संख्या

5. काई वर्ग तालिका मूल्य.

काई वर्ग तालिका से निश्चित सार्थकता स्तर पर तथा स्वतंत्रता संख्या से सम्बन्धित सारणी मूल्य देखा जा सकता है । सारणी में विभिन्न सार्थकता स्तर पर मूल्य दिये रहते हैं पर व्यवहार में सामान्यतया 5%' मूल्य ही देखे जाते हैं ।

6. परिकल्पना का परीक्षण (Test Hypothesis) :

परिकल्पना परीक्षण के लिये काई वर्ग के परिगणित मान की तुलना सारणी मान से की जाती है। यदि परिगणित मान सारणी मान से अधिक है तो शून्य परिकल्पना गलत सिद्ध हो जाती है अर्थात् दोनों गुण स्वतंत्र नहीं होते । इसके विपरीत यदि परिगणित मान सारणी मान से कम होता है तो शून्य परिकल्पना सही मानी जाती है अर्थात् दोनों गुण स्वतंत्र होते हैं, दोनों में कोई सम्बन्ध नहीं होता ।

उपर्युक्त परीक्षण विधि को निम्न उदाहरणों द्वारा समझा जा सकता है :

उदाहरण 1 पशुओं में क्षयरोग (T B) से मुक्ति से सम्बन्धित एक प्रयोग में निम्न परिणाम प्राप्त हुये ;

	मृत अथवा प्रभवित (Died of Affected)	अप्रभावित (Unaffected)	योग
टीका लगा (inoculated)	12	24	36
टीका नहीं लगा (Not inoculated)	16	8	24

योग	28	32	60

क्षय रोग की ग्रहणशीलता पर नियन्त्रण के लिए टीके के प्रभाव का परीक्षण कीजिये ।

हल

शून्य परिकल्पना : यह परिकल्पना की जाती है कि दोनों गुण स्वतंत्र हैं । टीका क्षय रोग की ग्रहणशीलता पर नियंत्रण के लिए प्रभावी नहीं है ।

प्रत्याशित आवृतियाँ :

	मृत अथवा प्रभवित	अप्रभावित	योग
टीका लगा	$\frac{28\times36}{60}$ =16.8	$\frac{32\times36}{60}$ =19.2	36
टीका नहीं लगा	$\frac{28\times24}{60}$ =11.2	$\frac{32\times24}{60}$ 12.8	24
योग	28	32	60

Fo	Fe	Fo-Fe	$(Fe-Ee)^2$	$(Fe-Ee)^{2/Fe}$
12	16.8	-4.8	23.04	1.37
16	11.2	4.8	23.04	2.06
24	19.2	4.8	23.04	1.20
8	12.8	-4.8	23.04	1.80

χ^2 का परिगणित मान 6.43

स्वतंत्रता संख्या = (c - 1) (r - 1)

= (2 - 1)(2 - 1)

= 1

काई वर्ग का 5% सार्थकता स्तर पर 1 स्वतंत्रता संख्या के लिये सारणी मान = 3.841 निष्कर्ष: परिकलित मान (6.42) 5% सार्थकता स्तर पर 1 स्वतंत्रता संख्या के लिए कोई वर्ग के सारणी मान (3.841) से अधिक है अत: अन्तर सार्थक है । हमारी शून्य परिकल्पना असत्य सिद्ध हो गयी है अर्थात् टीका क्षय रोग की ग्रहणशीलता पर नियन्त्रण के लिए प्रभावशाली है ।

27.3 येट (Yate) का संसोधन (Yate's Correction):

काई वर्ग परीक्षण की एक आवश्यक शर्त है कि कोई भी अन्तस्थ वर्ग आवृति (Ultimate class frequency) 5 से कम नहीं होनी चाहिए । यदि कोई सारणी 2 x 2 की है तथा उसमें कोई वर्ग आवृति 5 से कम है तो येट का संशोधन किया जाता है । येट के संशोधन के लिए सबसे छोटी आवृति में .5 जोड़ दिया जाता है और शेष आवृतियों को समायोजित कर दिया जाता है ।

इन संशोधनों का परिणाम यह होता है कि वास्तविक तथा प्रत्याशित आवृतियों का अन्तर .5 से कम हो जाती है जिससे? का मूल्य सही आता है ।

उदाहरण 2. निम्न सारणी पिताओं व पुत्रों की ओंखों के रंग से सम्बन्ध आकड़े प्रस्तुत करती है।

पिताओं की आँखों का रंग	पुत्रों के आँखों का रंग नीला नहीं	नीला	योग
नीला नहीं	17	16	35
नीला	3	12	15
योग	20	30	50

यह ज्ञात कीजिये कि पुत्रों की आँखों का रंग तथा पिताओं की आँखों के रंग से सम्बन्धित हैं येट के संशोधन का प्रयोग कीजिये ।

हल :

शून्य परिकल्पना : यह परिकल्पना की जाती है कि पिताओं तथा पुत्रों की आँखों के रंग में कोई गुण सम्बन्ध नहीं है ।

येट के संशोधन के बाद अवलोकित तथा प्रत्याशित आवृतियाँ निम्न होंगी ।

अवलोकित प्रत्याशित

पिताओं की आँखों का रंग	पुत्रों के आँखों का रंग नीला नहीं	नीला	योग
नीला नहीं	16.5	18.5	35
नीला	3.5	11.5	15
योग	20	30	50

पिताओं की आँखों का रंग	पुत्रों के आँखों का रंग नीला नहीं	नीला	योग
नीला नहीं	14	21	35
नीला	6	9	15
योग	20	30	50

χ^2 का परिगणित मान 6.43

Fo	**Fe**	**Fo-Fe**	**(Fe-Ee)^2**	**(Fe-Ee)$^{2/Fe}$**
16.5	14.0	2.5	6.25	0.446
3.5	6.0	-2.5	6.25	1.042
18.5	21.0	-2.5	6.25	0.298
11.5	9.0	2.5	6.25	0.694
				X^2=2.480

$d.f. = (c-1)(r-1) = (2-1)(2-1) - 1$

N^2 का सारणी मान (1 स्वतंत्रता संख्या पर) = 3.84

निष्कर्ष: N^2 का परिगणित मान (2.48)

1 स्वतंत्रता संख्या पर सारणी मान (3.84) से कम है अत. शून्य परिकल्पना सही है पिताओं के पुत्रों की आंखो के रंगों में कोई गुण सम्बन्ध नहीं है ।

27.4 अन्वायोजन के उत्कृष्टता की जांच (Test of Fitness)

काई वर्ग परीक्षण का प्रयोग इस तथ्य की जांच के लिये भी किया जाता है कि सैद्धान्तिक आवृतियाँ किस प्रकार वास्तविक आवृतियों के अनुरूप हैं । यदि x^2 का परिगणित मान सम्बन्धित सारणी मान से कम होता है तो उान्वायोजन उत्तम माना जाता है अर्थात् अवलोकित व प्रत्याशित आवृतियों के वक्र एक दूसरे के अनुरूप होते हैं यदि परिगणित मान सारणी मान से अधिक होता है तो अन्वायोजन उत्तम नही होता । अवलोकित आवृतियों व प्रत्याशित आवृतियों में अंतर अर्थपूर्ण होता है तथा प्रत्याशित आवृतियों का वक्र अवलोकित आवृतियों से सार्थक रूप से दूर होता है ।

27.5 आवृत्तियों का समूहन (Pooling of frequencies)

काई वर्ग के परिकलन मे यदि कोई प्रत्याशित आवृति 5 से कम हो तो इस आवृति को निकटवर्ती आवृति में जोड़ दिया जाता है ।

इस प्रकार आवृति को जोड़ने के बाद पुनर्व्यवस्थित वर्गो की संख्या ज्ञात की जाती है तथा स्वतंत्रता संख्या की गणना पुनर्व्यवस्थित वर्गो के आधार पर की जाती है ।

27.6 काई वर्ग परीक्षण की आवश्यक शर्तें (Conditions for CHI Square Test)

(i) कुल आवृतियों की संख्या यथोचित रूप से अधिक होनी चाहिए। सामान्य रूप से $N > 50$ होना चाहिए ।

(ii) प्रतिदर्श का चुनाव दैव आधार पर किया जाना चाहिए ।

(iii) (iii) कोई भी वर्ग आवृति 5 से कम नहीं होना चाहिए । यदि कोई आवृति 5 से कम है तो उसे अन्य आवृति में समूहन के बाद ही का परिकलन किया जाना चाहिए ।

27.7 मध्यांक परीक्षण का अर्थ एवं प्रयोग (Meaning and use Median Test)

का अर्थ एवं प्रयोग मध्यांक परीक्षण एक अप्रचलित परीक्षण है जो दो समीष्टिओ के तत्सम होने की परिकल्पना के परीक्षण हेतु प्रयोग में लाया जाता है । मध्यांक परीक्षण माध्यिका का (Median) पर आधारित अप्रचालिक (कोटिक्रम) परीक्षण है जो दो स्वतंत्र समूहों की निष्पति की तुलना करने के लिये किया जाता है ।

मध्यांक परीक्षण इस परिकल्पना की जांच है कि प्रतिदर्शो का चुनाव एक ही समष्टि से किया गया है या एक ही मध्यिका वाली विभिन्न समष्टियों से किया गया है । यदि प्रतिदर्शो का चुनाव याद्रच्छिक रूप से किया जाय तो प्रत्येक प्रतिदर्श के ½ मान का मध्यांक से ऊपर तथा ½ मान मध्यांक से नीचे होने चाहिए । इस परिकल्पना की जांच के लिए 2 x 2 सारणी बनाकर x^2 परीक्षण की सहायता से निष्कर्ष प्राप्त किया जाता है ।

27.8 मध्यांक परीक्षण प्राविधि (Techniques of Median Test)

माना m_1 व m_2 दो प्रतिदर्शो से लिए गए वह मान है जो मध्यांक से ऊपर है तो कुल अवलोकन को निम्न सारणी? में रख?ा जा सकता है:

	प्रथम प्रतिदर्श	द्वितीय प्रतिदर्श	योग
मध्यनक से अधिक मान	m_1	m_2	$m1 + m_2$
मध्यनक से कम मान	$m_{1-} m_2$	$m_{2-} m_2$	$n_1 + n_2 - m1 + m_2$
योग	n_1	n_2	$n_1 + n_2 = N$

इस प्रकार प्राप्त सारणी पर काई वर्ग परीक्षण का प्रयोग कर परिकल्पना परीक्षण किया जा सकता है ।

उदाहरण 3 दो प्रतिदर्शो जिनमें क्रमश : 25,25 इकाईयाँ हैं का मध्यांक 50 पाया गया । प्रथम प्रतिदर्श में 10 मान मध्यांक से ऊपर व द्वितीय प्रतिदर्श में 15 मान मध्यांक से ऊपर पाये गये । इस परिकल्पना का परीक्षण कीजिये कि दोनों प्रतिदर्श एक ही समष्टि से लिये गये हैं।

हल : दोनों प्रतिदर्शो से प्राप्त मानों को निम्न सारणी में रखा जा सकता है.

	प्रथम प्रतिदर्श	द्वितीय प्रतिदर्श	योग
मध्यनक से अधिक मान	10	15	25
मध्यनक से कम मान	15	10	25
योग	25	25	30

काई वर्ग परीक्षण विधियों का प्रयोग कर इस परिकल्पना की जांच की जा सकती है कि दोनों प्रतिदर्श एक ही समष्टि से चुने गये हैं ।

स्वतंत्रता संख्या 1 पर x^2 का परिगणित मान सारणी मान से कम है अत: अन्तर सार्थक नही है । दोनों प्रतिदर्श एक ही समष्टि से लिये गये माने जा सकते हैं ।

27.9 चिन्ह परीक्षण (Sign Test):

चिन्ह परीक्षण भी एक अप्रचालिक है क्योंकि प्रतिदर्श मानों के अन्तर को धन या ऋण चिन्हों में व्यक्त किया जा सकता है । यदि प्रेक्षणों में 1 बड़े हैं जो घन चिन्ह द्वारा व्यक्त किये गये हों व 5 छोटे हों जिन्हें ऋण चिन्ह द्वारा व्यक्त किया गया हो तो निश्चित सार्थकता स्तर पर परिकल्पना तब अस्वीकृत होगी । जब r व s में अंतर काफी बड़ा होगा ।

एक युग्मित प्रतिदर्श (Period Sample) में माना 10 युग्मों में से 6 घन व 4 ऋण के मान हैं द्विपद बंटन के आधार पर यह ज्ञात किया जा सकता है कि कुल 10 पदों में 6 से अधिक घन प्राप्त होने की प्राथमिकता क्या है । द्विपद बंटन का प्रयोग यहां इसलिए किया जाता है कि युग्मों में अंतर के 92 मान ऋण होने चाहिए । यदि प्रेक्षणों की संख्या 30 से अधिक (n> 3०) हो तो सामान्य वक्र का भी प्रयोग किया जा सकता है । द्विपद बंटन से प्राप्त प्रायिकता की तुलना अवलोकित मान से की जाती है तथा इस परिकल्पना का परीक्षण किया जाता है कि घन व ऋण समान रूप से वितरित है या नहीं । द्विपद बंटन में 'प्र' के विभिन्न मानों के लिये अनिवार्य चिन्हों की संख्या ज्ञात करने के लिये उपलव्य विभिन्न सारणियों का प्रयोग भी इस परीक्षण में किया जाता है ।

उदाहरण 4 : 32 मरीजों को एक दवा दी गयी तथा उनके रक्तचाप को दवा से पहले व बाद में जांचा गया । 20 मरीजों के रक्त चाप में वृद्धि हुई 10 में गिरावट आयी व 2 के रक्तचाप मे कोई परिवर्तन नहीं हुआ । इस तथ्य की जांच कीजिये कि रक्तचाप में वृद्धि व कमी समान रूप से वितरित है ।

हल. शून्य परिकल्पना : यह माना कि घन व ऋण उच्चावचन समान रूप से वितरित है।

$$n = 30 \qquad p = \frac{1}{2} \qquad x = 20$$

$$n = Total\ Number\ of\ signs\ of\ difference$$

P= Probability of Positive signs

X= Number of positive signs

$$Z = \frac{x - nP}{\sqrt{nP(1-P)}} = \frac{20-15}{\sqrt{30 \times \frac{1}{2} \times \frac{1}{2}}}$$

z का परिगणित मान 5% सार्थकता स्तर पर सारणी मान 1.96 से कम है अत: परिकल्पना सही है । घन व ऋण उच्चावचन रूप से वितरित है ।

27.10 स्वमूल्यांकन (Self-Assessment)

1. काई वर्ग परीक्षण का अर्थ तथा शोध में इसके महत्व को प्रतिपादित कीजिये ।
2. मध्यांक परीक्षण क्या होता है, इसकी परीक्षण प्रविधि का वर्णन कीजिये ।
3. चिन्ह परीक्षण क्या है तथा इसकी क्या उपयोगिता है?
4. काई वर्ग परीक्षण विधि की सही व्याख्या कीजिये ।
5. कार्ल पियर्सन द्वारा लिखे गये वृतान्त में निम्न सारणी प्रकाशित है?

		पुत्रों के आँखों का रंग	
		हल्का नहीं	हल्का
पिताओं की आँखों का रंग	हल्का नहीं	233	148
	हल्का	151	471

परीक्षण कीजिये कि क्या पुत्र की आँखों का रंग पिता की आँखों के रंग से सम्बन्ध है? 5% सार्थकता स्तर पर f का मान भी ज्ञात कीजिये ।

27.11 संदर्भ ग्रंथ (References)

1. Agarwal, B.L. - Basic Statistics
2. त्रिपाठी, रघुवंश - अप्रालिक सांख्यिकी
3. कपिल, एच. के. - सांख्यिकी के मूल तत्व

इकाई-28

कम्प्यूटर. उसका महत्व व प्रयोग, आकड़ों के विश्लेषण में कम्प्यूटर का स्थान

(Computer, its importance and use, the role of computer in Data Analysis)

इकाई की संरचना (structure of Unit)

28.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

28.1 कम्प्यूटर क्या है (What is Computer)

28.2 कम्प्यूटर के प्रकार (Type of Computer)

28.3 कम्प्यूटर व्यवस्था (computer System)

28.4 कम्प्यूटर में प्रयोग की जाने वाली शब्दावलियां (Terms used in Computer)

28.5 कम्प्यूटर का महत्व व उपयोग (Importance and Uses of Computer)

28.6 कम्प्यूटर प्रयोग के क्षेत्र (Areas of Computer Application)

28.7 कम्प्यूटर का शिक्षा शोध में प्रयोग (Use of Computer in Educational Research)

28.8 स्वमूल्यांकन (Self-Assessment)

289 संदर्भ ग्रंथ (References)

28.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

शोध प्रक्रिया के अन्तर्गत शोधकर्ता किसी भी समस्या का समाधान करने हेतु विभिन्न प्रकार की क्रियाएँ करता है । वह आकड़ों का संकलन करता है तत्पश्चात् उन आकड़ों का विश्लेषण करता है । आज के वैज्ञानिक व तकनीकी युग में आकड़ों के विश्लेषण हेतु विभिन्न तकनीकियों व विधियों का प्रयोग किया जाता है उन्हीं में से एक है - कम्प्यूटर । आज जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में हम कम्प्यूटर का प्रयोग करते हैं कभी कभी तो ऐसा प्रतीत होता है कि कम्प्यूटर मानव जीवन के लिए एक अद्भूत देन है ।

आज कम्प्यूटर के प्रयोग ने शोधकार्य में समस्या समाधान को एक नया आयाम दिया है जिसके फलस्वरूप आकड़ों की गणना बहुत ही शीघ्र व सही की जा सकती है । आज कम्प्यूटर प्रणाली में सापटवेयर (software) का जितना विकास हो रहा है उसे देखकर तो ऐसा प्रतीत होने लगता है कि थोड़े समय बाद हमारे लिए यह मुश्किल हो जायेगा कि हम मानव से बात कर रहे हैं या मानव निर्मित मशीन वर्तमान युग में शोध कार्यो में कम्प्यूटर का प्रयोग शोध कार्य के अभिन्न अंग के रूप में हो रहा है इसी कारण आज जटिल से जटिल आकड़ों की गणना हम शीघ्रता एवं शुद्धता के साथ कर पा रहे हैं । यही कारण है कि आज हम जटिल से जटिल शोध

योजना को व्यवहारिक बना पा रहे हैं । कम्प्यूटर का क्या महत्व है व इसके क्या प्रयोग हैं इसे जानने से पूर्व हम यह जानने का प्रयास करेंगे कि कम्प्यूटर है क्या ।

28.1 कम्प्यूटर क्या है (What is Computer)

"कम्प्यूटर वह माध्यम या साधन है जिसके द्वारा हम आकड़ों की गणना करते हैं" इस अर्थ मेंहम कह सकते हैं कि कोई भी वह साधन जो चाहे क्रूड सोफिसटिकेटेड (Crude or Sophisticated) हो और गणितीय गणना करता हो कम्प्यूटर कहा जा सकता है ।

(A computer, as the name indicates in nothing but a device that computes. In this sense, any device, however crude or sophisticated, that enable one to carry out mathematical manipulating becomes a computer).

वास्तव में कम्प्यूटर इलैक्ट्रॉनिक चालक मशीन है जो आकड़ों को ग्रहण करती है उसे संग्रहित करती है उसे अपने अनुसार व्यवस्थित व नियंत्रित करती है व उसके सम्बंध में सूचना देती है । कम्प्यूटर में प्रयुक्त किए जाने वाले आँकडे संख्या, शब्दों या चित्रों में हो सकते हैं ।

(Computer is a machine capable of receiving, storing, manipulating and yielding information such as number, words and pictures).

28.2 कम्प्यूटर के प्रकार (Types of Computer)

कम्प्यूटर दो प्रकार के होते हैं ।

1. डिजिटल कम्प्यूटर : (Digital Computer)

यह कम्पयूटर गणना संबंधी कार्य करता है । (It is one which operates essentially by counting)। इसके अंतर्गत हम बाइनरी नम्बर (Binary Number) का प्रयोग करते हैं ।

बाइनरी नम्बर :

इसमें हम दो संकेतों का प्रयोग करते हैं जो 0 व 1(20 (Zero and one) है इसका (Binary Number) 2 होता है हमें यदि 545 का Binary Number ज्ञात करना है तो वह इस प्रकार होगा ।

$$\begin{array}{r|l} 2 & 545 \\ & \underline{544} \\ & 1 \end{array} \qquad 1$$

$$\begin{array}{r|l} 2 & 272 \\ & \underline{272} \\ & 0 \end{array} \qquad 0$$

$$2\overline{)136}\ \ 68$$
$$\frac{136}{0}$$ 0

$$2\overline{)68}\ \ 34$$
$$\frac{68}{0}$$ 0

$$2\overline{)34}\ \ 17$$ 0
$$\frac{34}{0}$$

$$2\overline{)17}\ \ 8$$
$$\frac{16}{1}$$ 1

$$2\overline{)8}\ \ 4$$
$$\frac{8}{0}$$ 0

$$2\overline{)4}\ \ 2$$
$$\frac{4}{0}$$ 0

$$2\overline{)2}\ \ 1$$
$$\frac{2}{0}$$ 1

$$54.5 = \frac{1000100001}{9_2 8_2 7_2 6_2 5_2 4_2 3_2 2_2 1_2}$$

$$512 + 0 + 0 + 0 + 32 + 0 + 0 + 0 + 1$$

$$= 512 + 32 + 1 = 545$$

एनालॉग कम्प्यूटर : (Analog Computer)

यह कम्प्युटर गणना की अपेक्षाकृत मापन का कार्य करता है । (It operates by measuring rather than counting) इसके द्वारा तापमान, मौसम आदि का ज्ञान होता है साथ ही ये इन्जीनियरिंग व वैज्ञानिक क्षेत्रों में भी प्रयोग किए जाते हैं ।

कम्प्यूटर तकनीकी में समय समय पर बहुत परिवर्तन आ गए हैं और आज हमारे समक्ष कम्प्यूटर कई रूपों में होता हुआ आगे बढ़ रहा है । विश्व में पहला इलैक्ट्रोनिक कम्प्यूटर ENIAC में (Electronic numerical integrator and calculator) नाम से उत्पादित किया गया और आज हमारे पास जो कम्प्यूटर उपलव्य है वह निम्न है.

फर्स्ट जनरेशन कम्प्यूटर (First generation computer)

जो 1945 - 60 के बीच में आया IMB 650, IBM 701

सैकिंड जनरेशन कम्प्यूटर (Second generation computer)

जो 1960 - 65 के बीच में आया IBM 1401, Honeywell 40

थर्ड जनरेशन कम्प्यूटर (Third generation computer)

जो 1965 - 70 के बीच में आया IBM System 360,370

फोर्थ जनरेशन कम्प्यूटर (Fourth generation computer)

जो 1971 के बाद आया IBM3033, HP3000, Burvoughts B7200

माइक्रो कम्प्यूटर (Microcomputer)

जो व 1980 के आस पास आया इसमें Micro processer chips का प्रयोग किया INTEL 8085, 8088, 80816,80286, MOTOROLA68000,68020,68030

सुपर कम्प्यूटर (Super computer)

28.3 कम्प्यूटर व्यवस्था (Computer System)

कम्प्यूटर में प्रयोग की जाने वाली तकनीकियां : (Devices used in the computer)

i कार्ड या टेप (Card or tap base data entry system)

ii प्रत्यक्ष प्रणाली (Direct entry devices such as visual display unit)(VDU)

सामान्य रूप से कम्प्यूटर के अंतर्गत कुछ होती है व कुछ Input device इन दोनों के भागों व अंतर्सम्बन्ध द्वारा हम सम्पूर्ण कम्प्यूटर व्यवस्था को समझ सकते हैं जिसे हम नीचे प्रदर्शित कर रहे हैं :

कम्प्यूटर की Output-input रीति का कार्य है सूचनाओं को प्राप्त करना व उन्हें बाहर निकालना कम्प्यूटर प्रोसेसिंग इकाई (CPU) के तीन भाग (Segment) होते हैं ।

i आंतरिक संग्रह (Internal Storage) - इसके माध्यम से हम प्रदत्तों को कम्प्यूटर में फीड (feed) करते हैं ।

ii नियंत्रण इकाई - इसके द्वारा हम कम्प्यूटर को दिशा प्रदान करते हैं अर्थात् इसके द्वारा कम्प्यूटर को कार्य करने के क्रम का ज्ञान होता है ।

iii सांख्यिकीय तार्किक इकाई - इसमें गणितीय कार्य होते हैं व कम्प्यूटर कार्यक्रम की तार्किक आधार पर तुलना की जाती है ।

28.4 कम्प्यूटर में प्रयोग की जाने वाली शब्दावलियां (Terms used in Computer)

कम्प्यूटर के अंतर्गत हम निम्नलिखित शब्दावलियों का प्रयोग करते हैं -

हार्डवेयर : इसका संबंध कम्प्यूटर की संरचना से होता है ।

सोपटवेयर : जो व्यक्ति कम्प्यूटर पर कार्य कर रहा है उसने प्रयोग हेतु तकनीकी अपनाई व जो प्रोग्राम (Programme) बनाए हैं जिसके आधार पर वह कम्प्यूटर को दिशा निर्देश देगा ।

फर्म बेयर : कम्प्यूटर निर्माता ने जो इलेक्ट्रोनिक रीति पहले से ही कम्प्यूटर में कार्य करने हेतु निर्धारित की है ।

सिस्टम सोफ्टवेयर : यह वह कार्यक्रम है जो कम्प्यूटर को यह बताता है कि उसे क्या करना है और इन्हें भी कम्प्यूटर निर्माताओं द्वारा तैयार किया जाता है ।

एप्लिकेशन सोफ्ट वेयर : यह वह कार्यक्रम है जो कम्प्यूटर को यह बताता है कि कोई भी विशिष्ट कार्यक्रम कैसे तैयार किया जाए जैसे कर्मचारियों की तनख्वाह बनाना, रेलवे आरक्षण करना, बैंक के चैक का भुगतान करना आदि ।

इंटीग्रेटेड सर्किट

मेमोरी चिप्स

दू स्टेड डिवाइस

28.5 कम्प्यूटर का महत्व व उपयोग (Importance and Uses of Computer)

कम्प्यूटर वर्तमान वैज्ञानिक व तकनीकी युग मे कार्य करने की एक मुख्य प्रणाली बनती जा रही हैं और शायद वह दिन दूर नहीं कि मनुष्य कम्प्यूटर पर पूर्णतया: आश्रित हो जायेगा । कम्प्यूटर के उपयोग व महत्व निम्न है -

- यह व्यवस्था को बुद्धिपूर्ण बनाता है ।
- इसके द्वारा सभी कार्य तार्किक चिंतन के आधार पर किया जाता है ।
- कार्य अधिक तीव्रगति से किया जा सकता है ।
- यह एकाग्रचित्त (Diligence) होकर कार्य कर सकता है इसको ना तो थकान होती है और ना ही ध्यान भंग होने की समस्या ।
- इसमें बहुत अधिक आकड़ों को संकलित किया जा सकता है ।
- कम्प्यूटर द्वारा शुद्धता के साथ कार्य किया जा सकता है कम्प्यूटर स्वयं कोई गलती नहीं करता । जो गलती होती भी हो तो वह गलत प्रोग्राम के कारण होती है ।
- यह स्वचालित यंत्र होता है इसमें प्रारंभ में कार्य शुरू करने का संकेत देते हैं (Begin programme) व अंत में कार्य रोकने के लिए (Stop programme execution) संकेत देते हैं और अपने आप यह तब तक -कार्य करता है जब तक अंत का संकेत प्राप्त न कर ले।
- कम्प्यूटर में बाइनरी संख्याओं (Binary digits) का प्रयोग होता है जो 0 व 1 तथा इनका आधार (base) 2 होता है ।
- कम्प्यूटर का हम निर्देशन व परामर्श देने हेतु भी प्रयोग करते हैं इसमें बालक की विशेषताओं को फीड (feed) कर दिया जाता है उन्हीं के आधार पर कम्प्यूटर दिशा निर्देश देता है ।
- वर्तमान युग गे शिक्षा विभिन्न आयामों मे शोध हेतु भी हम कम्प्यूटर का प्रयोग करते है।
- मूल्याँकन के क्षेत्र में भी हम कम्प्यूटर का प्रयोग करते हैं ।
- वर्तमान युग में भविष्यवाणी. जन्मपत्री आदि के क्षेत्रों में भी कम्प्यूटर का प्रयोग किया जाता है।

28.6 कम्प्यूटर प्रयोग के क्षेत्र Areas of Computer Application)

प्रयोग के क्षेत्र	प्रयोग
(अ) शिक्षा	1. सूचनाओं को संकलित करना ।

(Education)	2. समय तालिका बनाने में सहयोग । 3. लंबे व जटिल सवालों का समाधान । 4. छात्रों की प्रगति का लेखा जोखा रखना । 5. भविष्य के निर्णय हेतु निर्देशन देना । 6. छात्रों की उपलब्धि का मूल्यांकन करना । 7. शोध कार्य में प्रयोग ।
(ब) कामर्स (Commerce)	1. रिपोर्ट, पत्र व सरक्यूलर तैयार करने में मदद करना। 2. कार्यकताओं की तनख्वाह आफिस के वित्तीय खर्चे व सामान आदि की क्रमबद्ध जानकारी रखना । 3. वित्तीय गणना करना ।
(स) बैंक व वित्तीय संस्थाएं (Bank & Financial Institutions	1. चैक संबंधी ब्यौरा रखना । 2. वित्तीय लेखा जोखा रखना । 3. जमाकर्ताओं के खाते पर ब्याज की गणना करना ।
(द) व्यवस्था (Management)	1. नवीन व्यवस्था की योजना बनाना । 2. विभिन्न मतों में सबसे अच्छे मत का चयन करना। 3. सेल के बारे में भविष्यवाणी करना । 4. योजनाओं को क्रियान्वित करना ।
(य) उद्योग (Industry)	1. उत्पादन पर नियंत्रण रखना । 2. नवीन उत्पादनों की रूपरेखा तैयार करना ।
(र) संचार व आवागमन (Communication & Transportation)	1. डाक व्यवस्था में सहयोग देना । 2. हवाई जहाज में चलने वाले चालकों के प्रशिक्षण, जहाज मे आरक्षण, चालकों को मौसम का ज्ञान देने में सहायक । 3. आवागमन के साधनों की पूर्व रूपरेखा तैयार करना व उनमें सुरक्षा व्यवस्था बनाना । 4. रेलवे के चालक यंत्रों के नियंत्रण में सहयोग। 5. रेलवे समय तालिका व आरक्षण में सहयोग। 6. टेलीफोन व्यवस्था का कम्प्यूटरीकरण करना। 7. दूरदर्शन कार्यक्रमों के संचालन में उपयोग ।
(ल) वैज्ञानिक शोध (Scientific Research)	1. ऑकडों की गणना करना । 2. ऑकडों का विश्लेषण करना ।
(व) घर (The Homes)	1 खेलने में सहयोग - वीडियोगेम । 2. शिक्षा के साधन के रूप में । 3. घर की व्यवस्था को सुचारू रूप देने में ।

28.7 कम्प्यूटर का शिक्षा शोध में प्रयोग
(Use of Computer in Educational Research)

वर्तमान युग कम्प्यूटर युग के नाम से जाना जाता है और आज के युग में कम्प्यूटर शोध कार्य हेतु एक आवश्यक विधि के रूप में प्रयोग किए जा रहे हैं । बड़ी-बड़ी शोध योजनाओं में हम कम्प्यूटर को आकड़ों की गणना व विश्लेषण हेतु प्रयोग कर रहे हैं । कम्प्यूटर के सहयोग से शोधकर्ता बहुत सारे प्रदत्तों को उसमें संग्रहित कर देता है और आवश्यकतानुसार विभिन्न तकनीकियों के द्वारा उसका शीघ्रता से विश्लेषण करता है । शिक्षा शोध में कम्प्यूटर के प्रयोग से ना केवल मानव शक्ति की बचत हुई है वरन् शेष कार्यों में -गुणात्मक सुधार भी आया है । सामाजिक विज्ञान में कम्प्यूटर का प्रयोग शोध कार्य के एक अभिन्न अंग के रूप में हो रहा है । कम्प्यूटर के द्वारा हम प्रदत्तों का विश्लेषण शुद्धता व शीघ्रता के साथ कर सकते हैं । आज कम्प्यूटर पर हम मध्यमान, मध्यांक, बहुलक, प्रमाणिक विचलन, सहसंबंध, "टी" परीक्षण मल्टीपिल - आर फैक्टर एनालिसिस आदि का प्रयोग बहुत ही सहज रूप में कर सकते हैं चूंकि इसके लिए हमारे पास सोपटवेयर उपलव्य है । शोधकर्ता का कार्य सिर्फ इतना है कि वह प्रदत्तों को एकत्रित करके उन्हें कम्प्यूटर में फीड कर दे । कुछ ही सैकण्ड पश्चात् उसे परिणाम प्राप्त हो जाते हैं । परंतु प्रदत्तों को कम्प्यूटर में विश्लेषण हेतु डालने से पूर्व निम्न बातों के ऊपर ध्यान देना आवश्यक है

i आकड़ों का संगठन व उसे कोड देना ।
(Data Organization and coding)

ii कम्प्यूटर में प्रदत्तों को संग्रहित करना ।
(Storing the data in the computer)

इस संबंध में William का कथन ठीक है

All the fancy computer manipulations known to man will not produce meaningful results out of bad data. Unfortunately too many investigators to not consider data processing until after data collection."

iii उचित सांख्यिकीय तकनीकी का चयन करना ।
(Selection of appropriate statistical measures & Techniques)

iv उचित सोपटवेयर का चयन करना ।
(Selection of appropriate software package)

v कम्प्यूटर कार्यक्रम को क्रियान्वित करना ।
(Execution of the Computer Programme)

कम्प्यूटर का प्रयोग शिक्षा जगत से संबंधित संज्ञानात्मक प्रक्रिया (Cognitive Process) अथवा समस्या निवारण (Problem solving) के लिए भी किया जा सकता है ।

आकड़ों के वितरण के प्रारूप को ज्ञात करने हेतु भी कम्प्यूटर का प्रयोग कर सकते हैं जो आकड़े हमने एकत्रित किए हैं वह सामान्य वितरण से क्या अंतर लिए हैं अर्थात् आकड़े कितने स्कयूड (Skewed) है ।

कम्प्यूटर का प्रयोग इस दृष्टि से भी बहुत लाभप्रद है कि इसमें हम आकड़ों को लंबे समय के लिए संग्रहित कर सकते हैं और जब भी हमें आवश्यकता पड़े हम उसका प्रयोग कर सकते हैं ।

कम्प्यूटर के माध्यम से हम ग्राफ, चित्र आदि भी तैयार कर सकते हैं जिनका शोध की दृष्टि से बहुत ही महत्व होता है ।

कम्प्यूटर टाइपिंग के द्वारा हम शोध प्रबंध को तैयार कर सकते हैं ।

परंतु हमें यह कदापि नहीं भूलना चाहिए कि कम्प्यूटर एक यंत्र है जो गणना करता है । वह मानव मस्तिष्क की तरह चिंतन नहीं कर सकता - मानव मस्तिष्क चिंतन करता है व कम्प्यूटर को कार्य करने हेतु निर्देश देता है ।

28.8 स्वमूल्यांकन (Self Assessment)

1. कम्प्यूटर क्या है? डिजिटल कम्प्यूटर व एनालॉग कम्प्यूटर में अंतर बताइये ।
2. शैक्षिक शोध में कम्प्यूटर के प्रयोग पर एक निबंध लिखिये ।
3. कम्प्यूटर व्यवस्था पर एक संक्षिप्त लेख लिखिये ।
4. आज कम्प्यूटर की प्रगति आश्चर्यजनक ढंग से हो रही है आप इस संबंध में अपनी राय अभिव्यक्त कीजिये ।
5. कम्प्यूटर में प्रयोग की जाने वाली शब्दावलियों को संक्षेप में समझायें ।

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. बाइनरी व्यवस्था में हम किन अंकों का प्रयोग करते हैं?
2. कम्प्यूटर के दोनों प्रकारों के नाम लिखिये ।
3. सैकिण्ड जनरेशन कम्प्यूटर कब से कब तक आया?
4. माइक्रो कम्प्यूटर में किसका प्रयोग किया जाता है?
5. कम्प्यूटर में प्रयोग की जाने वाली तकनीकियों के नाम बताइये ।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

सही/गलत का निशान लगाइये

1. बाइनरी नंबर का आधार -1 होता है ।
2. डिजिटल कम्प्यूटर गणना संबंधी कार्य करता है ।
3. फोर्थ जनरेशन कम्प्यूटर 1970 के बाद आया ।
4. कम्प्यूटर प्रोसेसिंग इकाई के चार भाग होते हैं ।
5. हार्ड वेयर का संबंध कम्प्यूटर की संरचना से होता है ।

प्रस्तुत ब्लॉक में शैक्षिक शोध के सामान्यीकरण से संबंधी पहलुओं का वर्णन किया है तथा शोध प्रबंध संबंधित विभिन्न पहलुओं का विश्लेषण किया गया है । इस ब्लॉक में दो अध्याय हैं.

पहला अध्याय (इकाई 28) शोध के सामान्यीकरण अर्थ, आधार औचित्य तथा निहितार्थ का वर्णन करता है जबकि दूसरा अध्याय (इकाई 27) शोध प्रस्ताव के प्रारंभ, समापन तथा उसके विभिन्न लिखित स्वरूपों से संबंधित है ।

28.9 संदर्भ ग्रन्थ (References)

1. Fundamentals of Computers (Fourth Edition) : V.Rajaraman
2. An Introduction to Operating System Concept and Practice : pramod Chandra and P.Bhatt

इकाई-29

सामान्यीकरण - अर्थ, आधार औचित्य और निहितार्थ (GENERALIZATION - MEANING, BASES, JUSTIFICATION AND IMPLICATIONS)

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

29.0 लक्ष्य और उद्देश्य (Aims and Objectives)
29.1 अर्थ (Meaning)
29.2 आधार (Base)
29.3 औचित्य (Justification)
29.4 निहितार्थ (Implications)
29.5 स्वमूल्यांकन (Self Assessment)
29.8 संदर्भ ग्रन्थ (References)

29.0 लक्ष्य और उद्देश्य (Aims and Objectives)

अब तक शिक्षा-शास्त्र में अनुसंधान प्रक्रिया के विभिन्न पक्षों का क्रमबद्व विशद अध्ययन कर चुके है । प्रस्तुत इकाई में अनुसंधान प्रायोजना से प्राप्त परिणामों के सामान्यीकरण पर प्रकाश डाला जा रहा है । यह अपेक्षित है कि इसके अध्ययन के बाद आप-

- सामान्यीकरण के अर्थ, आधार, औचित्य और निहितार्थो को स्पष्ट कर सकेंगे ।
- अपनी अनुसंधान प्रायोजना से प्राप्त परिणामों के आधार पर सही सामान्यीकरण के सूत्रबद्ध कर सकेंगें ।
- अनुसंधान में सामान्यीकरण के महत्व को स्पष्ट कर सकेंगें ।
- अपने अनुसंधान परिणामों के सामान्यीकरण को सूत्रबद्ध करने में आवश्यक पूर्वावधान (Precautions) रखेंगे ।
- सामान्यीकरण के लिए उपयुक्त आधारों एवं कसौटियों (Criteria) का चयन करेंगे ।

29.1 अर्थ (Meaning)

व्यापक परिप्रेक्ष्य में सामान्यीकरण किसी भी वैज्ञानिक पद्धति द्वारा प्राप्त निष्कर्षो का सार है । यह सिद्धांतीकरण (Theorizing) और सम्प्रत्ययीकरण (Conceptualization) का समानार्थी है । हम जानते हैं कि शैक्षिक अनुसंधान प्रक्रिया वैज्ञानिक पद्धति पर आधारित है । अत: सामान्यीकरण इसका अंतिम उत्पाद (End Product) है । किसी भी वैज्ञानिक पद्धति में सिद्धांत निर्माण की प्रक्रिया ही सामान्यीकरण है । वैज्ञानिकों की रूचि विलग संवृतियों अथवा घटनाओं (Isolated phenomena or events) में नही होती है । न ही वे इनमें से किसी भी एक वर्ग के समुच्चय से अपना सरोकार रखतें हैं ।वे तो अव्यवस्थित अनुभवों और संस्थियों

से अभिज्ञान व्युत्पन्न करने की दिशा में प्रयत्नशील रहते हैं । अर्नेस्ट ग्रीनबुड (Emest Greenwood) के अनुसार वैज्ञानिकों के अन्वेषण का लक्ष्य, "सतही अनेकता में एकता के ताने बाने ढूँढना है । इस खोज से प्राप्त एकरूपता के आधार पर एक तार्किक वर्ग निर्मित किया जाता है । इस वर्ग और इसके प्रेक्षित ढांचे के बारे में विवरणात्मक सामान्यीकरण सूत्रबद्ध किया जाता है । वैज्ञानिक इन विविक्त सामान्यीकरणों (Discrete generalizations) को अधिक व्यापक और विशद बनाने के लिए आतुर रहतें हैं । इसके लिए वे सदैव तुलनीय वर्गो के संयोजन के अवसरों को ढूँढ़ते रहते है । जिससे कि एक व्यापक वर्ग निर्मित हो जाता है तथा इसके संबंध में अधिक सूक्ष्म और प्रयोजनीय सामान्यीकरण सूत्रबद्ध किया जा सकता है ।"

विज्ञान में सिद्धांत प्राक्कल्पनाओं (Hypotheses) का समनुगत समुच्चय (Coherent set) है । आर. बी. ब्रैथवैट के कथनानुसार, "इनके द्वारा एक निगमनात्मक व्यवस्था निर्मित होती है । जिसका व्यवस्थापन इस प्रकार किया जाता है कि कुछ प्राक्कल्पनायें आश्रय (Premise) तथा दूसरी उनकी अनुगामी बन जाती हैं । निगमनात्मक व्यवस्था में तर्कवाक्यों को क्रमिक स्तरों में व्यवस्थापित किया जाता हैं । इस व्यवस्था के उच्चतम और निष्कर्षो (Conclusions) की ग्रमइकायें निभाती हैं । मध्यवर्ती प्राक्कल्पनायें वास्तव में आश्रयों के निगमनात्मक निष्कर्ष होते है तथा वे निम्नतम स्तर की प्राक्कल्पनाओं के संदर्भ में उनके लिए आश्रय की ग्रमइका निभाती हैं ।"

विज्ञान में सिद्धांत मात्र अटकलों का परिणामों नहीं होता है । यह छँटनी से प्राप्त संचित तथ्यों के रचनात्मक अध्ययन के फलस्वरूप क्रमिक रूप से विकसित होता है । इसकों समय समय पर आनुभविक रूप से सत्यापित किया जाता है तथा प्रत्यक्ष समीचीन साक्ष्यों और निर्देशित संबंधों के आधार पर संगत सामान्यीकरण और तार्किक सिद्धांतों के रूप में सूत्रबद्ध किया जाता है । सिद्धांतों के रूप में सूत्रबद्ध किया जाता है । सिद्धांत हमेशा तर्कवाक्य (Propositions) के ही रूप में प्रस्तुत किया जाता है । दत्त का एकत्रीकरण, संगठन, विश्लेषण, निष्कर्षण एवं तत्संबंधी सामान्यीकरण स्पष्ट रूप से सम्प्रत्यय निर्माण (Concept formulation) की ही प्रक्रिया है । यह वैज्ञानिक तार्किक दृष्टियों से समान है । वास्तव में सम्प्रत्ययीकरण प्रक्रिया मनोवैज्ञानिक है । इसका निरूपण चार चरणों में होता है । जिनका क्रम इस प्रकार है- तुलना (Comparision), पृथक्करण (Abstraction),सामान्यीकरण (Generalisation) और नामकरण (Naming) इसका अर्थ यह हुआ कि सामान्यीकरण से प्राप्त गुण-समूह को एक नाम दिया जाता है । यह नाम ही एक सम्प्रत्यय है । अत: कहा जा सकता है कि सामान्यीकरण सम्प्रत्यय निर्माण का अंतिम चरण है । सम्प्रत्ययीकरण उच्चस्तरीय सूक्ष्म चित्रण (High level abstraction) है । सम्प्रत्यय द्वारा वस्तुओं (Objects) के किसी विशिष्ट वर्ग की विशेषताओं की जानकारी प्राप्त होती है । इस प्रक्रिया को मनुष्य सम्प्रत्यय निर्माण के उदाहरण से समझाया जा रहा है ।

तुलना के अन्तर्गत यह पता चलता है कि भिन्न -भिन्न व्यक्तियों में कौन से अनिवार्य गुण (Essential attributes) सामान्य हैं और किन गुणों में वे भिन्न हैं । यथा-मित्र भिन्न व्यक्तियों की परस्पर तुलना करने से पता चलता है कि वे सजीवता (Animality) और विचारशीलता (Rationality) के गुणों की दृष्टि से समान हैं । जबकि रंगरूप, उँचाई, ईमानदारी,

बुद्धि, रूचि, अभिवृत्ति आदि गुणों की दृष्टि से भिन्न हैं । अगले चरण पृथक्करण में समान गुणों सजीवता और विचारशीलता को स्वीकार कर लिया जाता है । यहां व्यक्तियों के समान गुणों पर ही ध्यान केंद्रित किया जाता है । तृतीय चरण सामान्यीकरण में यह प्रदर्शित किया जाता है कि समान अनिवार्य गुण केवल उन्हीं व्यक्तियों में नही पाए जाते जिनका कि अध्ययन किया गया है, यहाँ हम वस्तुओं के उस वर्ग को 'व्यक्ति' कह रहे है । इस वस्तु-वर्ग के अनिवार्य समान गुण सजीवता और विचारशीलता हैं । अब सामान्यीकरण में प्राप्त गुण-समूह को एक नाम दिया जाता है । इस प्रकार प्रस्तुत उदाहरण में इन सामान्य, समान तथा अनिवार्य गुणों के समूह का नाम "मनुष्य" रखा गया है । मनुष्य एक सम्प्रत्यय है । इससे "मनुष्य" की परिभाषा दी जा सकती है तथा कहा जाता है कि मनुष्य एक विचारशील प्राणी है ।

उपरोक्त उदाहरण में हमने धरती के सभी मनुष्यों को न तो देखा है न ही उन्हें परखा हैं । किंतु जिन- जिन व्यक्तियों को देखा-परखा उनमें सामान्य गुण सजीवता और विचारशीलता पाया । हमारा यह प्रेक्षण समय सीमा या किसी काल-खंड का ही नहीं है । न ही यह स्थान सीमा द्वारा बँधा हुआ है । यानी कि किसी भी देश, काल व परिस्थिति में मनुष्य नाम के प्राणी में विचारशीलता अवश्य होती है । अतः यह समष्टिज (Universal) है ।

प्रस्तुत उदाहरण में हमने ' 'मनुष्य' ' नाम के समष्टि (Universe) से एक छोटे भाग का ही अध्ययन किया । अपने प्रेक्षणों को तार्किक चिंतन की कसौटी पर जाँचा । तदानुसार सम्पूर्ण मानव-जनसंख्या (Population) अथवा समष्ठि पर मनुष्यों के इस छोटे से समूह के अध्ययन से प्राप्त निष्कर्षो को अनुप्रयुक्त (Apply) किया । यही सामान्यीकरण है ।

अपने अनुसंधान कार्यो में हम कभी भी सम्पूर्ण गुण-समूह का अध्ययन नहीं करते हैं । यह व्यवहारिक दृष्टि से संभव भी नहीं है । किसी जनसंख्या या समष्टि से संगत प्रतिदर्श (Sample) का चयन करते हैं । अपनी समस्या के संदर्भ में इस प्रतिदर्श से आधार सामग्री (दत्त -Data) एकत्रित करते हैं । प्राप्त दत्त के विश्लेषण से समस्या-समाधान के संबंध में संगत निष्कर्षो पर पहुंचते हैं तथा इन निष्कर्षो को संपूर्ण जनसंख्या के लिए सामान्यीकरण के रूप में सूत्रबद्ध करते हैं ।

अतः किसी प्रतिदर्श के अध्ययन से प्राप्त निष्कर्षो और परिणामों को संबंधित जनसंख्या के लिए अनुप्रयुक्त करना ही सामान्यीकरण है ।

शिक्षा-शास्त्र सहित सभी व्यवहार विज्ञानों (Behavioural sciences) और शुद्ध विज्ञानों (Pure Sciences) में हम अनुसंधान में समस्या से संबंधित चरों (Variable) के पारस्परिक संबंधों का अध्ययन करते हैं । ये संबंध साहचर्यामक (Associative), सह-सबंधात्मक (Correlational), कार्य-कारण संबंधात्मक आदि हो सकते हैं । इस अध्ययन के लिए उचित प्रतिदर्श के लिए संगत संबंधात्मक ढंग से जाँच-परख के बाद सत्यापन (Verification) किया जाता है । फिर इन चर-संबंधों को सम्पूर्ण जनसंख्या के लिए स्थापित कर दिया जाता है । इस प्रकार प्रतिदर्श के लिए चर-संबंधों के निष्कर्षो को समष्टि के लिए स्थापित करना ही सामान्यीकरण है ।

चरों के पारस्परिक संबंधों को ज्ञात करने के लिए सांख्यिकीय प्रविधियों का प्रचलन अधिक लोकप्रिय है । इसके प्रतिदर्श से चरों के लिए संख्यात्मक दत्त प्राप्त किए जाते हैं । इन

चर-मानों के आधार पर प्रतिदर्श के लिए आवश्यक सांख्यिकीय मानों (Statistics) के गणना की जाती है । इन मानों की सार्थकता इसमें है कि इनके आधार पर जनसंख्या के लिए संवादी मानों (Corresponding Values) का आकलन किया जाय । इस दृष्टि से प्रतिदर्श के स्टैटिस्टिक्स (माध्य, विचलन, सह संबंध आदि) का आकलन ही सामान्यीकरण है ।

सामान्यीकरण के अभिलाक्षणिक गुण (Characterstics) : एक अच्छे स्तरीय सामान्यीकरण में निम्नलिखित गुण अपेक्षित हैं -

- सामान्यीकरण सहज समझने योग्य भाषा में सूत्रबद्ध हों ।
- प्रेक्षित तथ्यों के आधार पर सामान्यीकण किए जाँच ।
- स्थापित नियमों के साथ इनका विरोधाभास अपेक्षित नहीं है । ऐसी स्थिति में या तो यह दर्शाया जाय कि मूल रूप में ऐसा कोई विरोधाभास नहीं है अथवा स्वीकार किया जाय कि सामान्यीकरण सही नहीं है ।
- निगमनात्मक तार्किक विधि में उपयोगिता की दृष्टि से सामान्यीकरण खरा उतरना चाहिएं
- सामान्यीकरण सहज तरीकों से सत्यापित होने में सक्ष्म हों ।
- सामान्यीकरण के द्वारा ज्ञान के क्षेत्र में निश्चित वृद्धि होनी चाहिएं । इस क्षेत्र में यह स्वाभाविक रूप में आत्मसात हो जाय ।

सामान्यीकरण के प्रकार (Types of Generalization) : मुख्य रूप से सामान्यीकरण के दो प्रकार होते हैं - 1. क्षैतिज या पार्शिवक (Horizontal or Lateral) सामान्यीकरण मूलभूत अर्थात् मौलिक (Fundamental-Original) अनुसंधानों मे होता है । इसका प्रयोजन, सिद्धांत (Theory and Principle) और नवीन तथ्यों के रूप में ज्ञान के क्षेत्र में नवीन तत्वों का योगदान है । इसको अन्वेषण के अंतर्गत ली गई परिकल्पनाओं के सत्यापन से प्राप्त किया जाता है । परिकल्पनायें परीक्षात्मक (Tentative) सिद्धांत होती है । प्रतिदर्श के अध्ययन सेप्राप्त प्रेक्षणों के आधार पर प्राप्त स्टैटिरिटकन से जनसंख्या के पैरामीटरों का प्राक्कलन जाता है । इन्हीं प्राक्कलनों के आधार पर अनुमान (Inference) निकाले जाते हैं । जनसंख्या के गुणों के प्राक्कलन ही अध्ययन के क्षैतिज सामान्यीकरण हैं । 2. उर्ध्वाधर अर्थात् अनुदैर्ध्य (Vertical of Longilindinal) सामान्यीकरण क्रियानिष्ठ (Action) अथवा स्थानीय अनुसधान प्रायोजनाओं में होता है । इसका प्रयोजन ज्ञान-कोश में योगदान न होकर प्रचलित पद्धतियों एवं प्रथाओं में सुधार और आशोधन (Modification)होता है । इस प्रकार की प्रायोजनाओं के निष्कर्षो के कालानुक्रमिक अभिलेख (Chronological Records) क्षैतिज और उर्ध्वाधर दोनों ही प्रकार के सामान्यीकरण के लिए उपयुक्त हैं । इस प्रकार का सामान्यीकरण केवल उन स्थानीय समस्याओं की प्रवृत्ति की ओर संकेत करते हैं, जो कि वर्तमान शैक्षिक पद्धतियों में बाधक होती हैं । इन सामान्यीकरणों में नान-पैरामीट्रिक स्टैटिस्टिक्स (Non-Parametric) के ही आधार पर निष्कर्ष निकाले जाते हैं ।

सामान्यीकरण के स्तर (Levels of Generalization) : शैक्षिक अनुसंधानों के दो सर्व विदित स्तर हैं - आनुभविक (Emperical)और वैज्ञानिक (Scientific) प्रथम स्तर के

सामान्यीकरण में परिस्थितिवश स्वाभाविक घटना का उल्लेख तोता है । किंतु, इसके वास्तविक कारण की कोई जानकारी नहीं होती है । जैसे कि आकाशीय पिण्डों की गति और गुरत्वाकर्षण के सिद्धांतों की जानकारी न होने की स्थिति में विभिन्न स्थानों में प्रेक्षणों के आधार पर कहा जाय, "सूर्योदय पूरब में तथा सूर्यास्त पश्चिम में होता है ।" इसी प्रकार विकास सिद्धांतों की अनभिज्ञता में कहा जाय, "माध्यमिक स्तर पर ही प्राय: बालक-बालिकायें असामाजिक कार्य करते हैं ।" यहाँ केवल तथ्यात्मक सामान्यीकरण होता है । बाहा परिस्थिति में घटना का कथन होता है । द्वितीय अर्थात वैज्ञानिक स्तर के सामान्यीकरणों में कार्य-कारण संबंध की स्पष्ट व्याख्या होती है । इसमें प्रेक्षित तथ्यों के लिए आंतरिक कारणों की भूमिका स्पष्ट की जाती है ।

वर्तमान में शैक्षिक अनुसंधानों में आनुभविक स्तर के अन्वेषणों की अधिकता है । अन्वेषण में प्रेक्षण विधि चाहे सामान्य सर्वेक्षण हो या वैज्ञानिक, प्रश्न यह है कि अंतिम निष्कर्षो का स्वरूप तथ्यात्मक है या कार्य-कारण संबंधात्मक । कहने का तात्पर्य यह है कि सामान्यीकरण का स्तर प्रेक्षण विधि पर नहीं अपितु उसकी विषय-वस्तु पर आश्रित है । वैज्ञानिक अनुसंधान का लक्ष्य प्रेक्षण तथ्यों के प्रस्तुतीकरण तक ही सीमित नहीं है । इसका प्रयास, प्रेक्षित तथ्यों के अलावा अन्य तथ्यों से भी अध्ययन विषय को जोडकर उन्हे. सुव्यवस्थित अभिज्ञान का अंग, बनाना है । कोई भी व्यक्ति मात्र इस बात से संतुष्ट नहीं हो जाता कि सूर्य पूरब से निकलता है अथवा माध्यमिक स्तर पर बालक-बालिकायें असामाजिक कार्यो की ओर मुड़ते हैं । यह भी जानना, नितांत आवश्यक है कि ये घटनायें क्यों होती हैं' इसके लिए प्रेक्षित तथ्यों और पूर्वनिर्धारित तत्संबंधी सिद्धांतों और संगत पूर्वप्रेक्षित तथ्यों में परस्पर संबंध स्थापित करना आवश्यक है । आधारभूत सिद्धांत के संदर्भ में ही घटना क्रम को समझा जा सकता है । अनुसंधान निष्कर्ष वैज्ञानिक स्तर का ही होना चाहिए ।

29.2 आधार (Base)

शैक्षिक अनुसंधानों में सामान्यीकरण के आधारों का अध्ययन मूलभूत अंतर्क्रियाओं (Fundamental), अनुमानों की परिशुद्धता, पद्धतियों एवं कसौटियों शीर्षकों के अंतर्गत किया गया है । ये ही तत्व सामान्यीकरण को सूत्रबद्ध करने में सहायक हैं । साथ ही उसकी सत्यता, वैधता, स्पष्टता और उपयोगिता में भी इन्हीं का योगदान है । सामान्यीकरण इन्हीं तत्वों पर आधारित हैं।

मूलभूत अंतर्क्रियाये अपने अन्वेषण क्षेत्र में स्थापित सिद्धांतों के आधार पर अनुसंधानकर्ता, सर्वप्रथम अपने अध्ययन के लिए कार्यकारी प्राक्कल्पना निर्धारित करता है । जो कि उसको अध्ययन के लिए समस्या को स्पष्ट करने में सहायक होती है । इससे एकत्रित दत्त समूहों के पारस्परिक संबंधों का ज्ञान होता है । प्राक्कल्पना के सत्यापन के लिए आवश्यक दत्त क चयन तथा संबंधों के निर्वचन (Interpretation) में भी इसकी प्रमुख भूमिका हैं । दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि अंतरिम प्राक्कल्पना अध्ययन को दिशा प्रदान करती है । इससे दत्त के वर्गीकरण तथा दत्त को एक दूसरे के पार्श्व में रखने में सहायता मिलती है ।

किंतु अनुसंधानकर्ता का लक्ष्य मात्र संगत घटनाओं का प्रेक्षण और उनका वर्गीकरण ही नहीं है । वह विश्लेषण की दृष्टि से यह भी स्पष्ट करता है कि उसके प्रेक्षण उन अंतर्निहित संबंधों और प्रक्रियाओं की ओर भी इंगित करते हैं जो कि अध्ययन से पूर्व दृष्टिगोचर नहीं थे ।

अन्वेषक का कृत्य इन कारकों और प्रक्रियाओं को पहचानना और अलग करना है । इस कार्य की सफलता से सिद्धात केंद्रीय महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त करता है । अध्ययन के प्रारंभ में स्थापित प्रतिज्ञाप्ति (Proposition) को सिद्ध करने में भी यह सामान्यीकरण सहायक है ।

सामान्यीकरण को सूत्रबद्ध करने में अनुसंधानकर्ता के लिए पूर्व स्थापित सिद्धात की महत्वपूर्ण जानकारी प्रमुख सहायक की भूमिका निभाती है । साथ ही उसकों अनुसंधान क्षेत्र की सैद्धातिक अवधारणाओं की अपनी जानकारी भी अध्ययन में सहायता देती है । इस प्रकार हम कह सकते हैं कि प्रारंभिक प्राक्कल्पना, आनुभविक प्रेक्षण और सैद्धांतिक संकल्पनाओं में निरंतर अंतर्क्रियायें अनुसंधान अध्ययन की प्रक्रिया को दर्शाती हैं । सैद्धातिक अभिविन्यास और आनुभविक प्रेक्षणों की अंतक्रिया के क्षेत्र में ही अनुसंधान प्रक्रिया की मौलिकता (Originality) और सृजनशीलता (Creativity) निहित है । इस अंतर्क्रिया को डा. ब्लूमर (Dr. Blumer) के निम्नलिखित कथन में और अधिक स्पष्ट किया गया है-

"The aim of theory in empirical science is to develop analytical schemes of the empirical that is in terms of classes of objects and of relations between such classes.....Thus, theory exercises compelling influence on research setting problems, stating out objects and leading enquiry into asserted relations. In turn, findings of fact test theories, and in suggesting new problems invite the formulation of new proposals. Theory, enquiry and empirical fact are interwoven in a texture of operations with theory guiding inquiry, seeking and isolating facts affecting theory."

अनुमानों की परिशुद्धता (Inference Precision) : शिक्षा शास्त्र सहित सभी व्यवहार विज्ञानों में अनुसंधान के स्तरों-प्रतिदर्श चयन (Sampling), प्रेक्षण (Observation) अरि विश्लेषण (Analysis) में अनुमान (Inference) प्रमुख कारक है । सामान्यीकरण इन अनुमानों की परिशुद्धता पर आधारित है । जैसा कि पूर्व में प्रतिदर्श चयन के अध्ययन से प्राप्त निष्कर्षो को वैधता प्रतिदर्श चयन की यादृच्छता पर ही मूल में आश्रित है । अत: इस यादृच्छता (Randomness) के संबंध में सही अनुमान अनुसंधान के परिणामों के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण आधार है ।

प्रेक्षण व्यवस्था (Observation system) व्यवहार विज्ञानों में दत्त समीकरण के लिए एक प्रमुख तकनीक है । प्रेक्षक अध्ययन के अंतर्गत लिए गए दो व्यक्तियों के मध्य अंतर्क्रिया को नोट करता है । अंतर्क्रिया के वास्तविक स्वरूप का निर्धारण प्रेक्षक की दक्षता और अनुभव पर निर्भर करता है । यहां प्रेक्षक के अनुमान की निश्चितता ही प्राप्त दत्त की परिशुद्धता और वैद्यता तय करता है । जो आगे विश्लेषण, निर्णय और सामान्यीकरण को स्पष्ट रूप में प्रभावित करता है ।

अनुसंधान प्रक्रिया में सांख्यिकी के उपयोग का उद्देश्य प्रेक्षित दत्त के आधार पर सही अनुमान सूत्रबद्ध करने में सहायक होना हैं । जो कि प्राक्कल्पना परीक्षण के लिए आवश्यक है ।

अनुमान वास्तव में तर्क वाक्यों और साक्ष्यों के आधार पर निकाला गया निष्कर्ष है । यह स्वयं भी तर्क वाक्य के ही रूप में होता है । सांख्यिकी में प्राक्कल्पना-परीक्षण से अनुमान निकाला जाता है । सांख्यिकी अनुमान प्रतिदर्श के आधार पर जनसंख्या के लिए लगाए जाते है । जो कि सामान्यीकरण के लिए आश्रित वाक्य बनते है । अत: स्पष्ट है कि इन अनुमानों की परिशुद्धता पर ही सामान्यीकरण आश्रित है ।

पद्धतियाँ सामान्यीकरण के लिए उसकी पद्धतियाँ सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं । इन पद्धतियों के दो संवर्ग - तर्कशात्रिया और सांख्यिकीय हैं । तर्क का तात्पर्य ज्ञात से अज्ञात की ओर अग्रसर होना है । ज्ञात तथ्य तर्क की सामग्री अथवा आश्रय (Data) है । अज्ञात तथ्य वह होता है । जिस पर हम तर्क के द्वारा पहुंचते हैं । हम विशेष गणवेशधारी विद्यार्थी को देखकर कहते हैं कि फलाँ विद्यार्थी अमुक विद्यालय का है । इस निष्कर्ष पर हम वास्तव में इस तर्क पद्धति से पहुंचे

अ विद्यालय का गणवेश ग है ।

'ब' विद्यार्थी ग गणवेश में है ।

अत: 'ब' विद्यार्थी अ विद्यालय का है ।

हमारा अनुमान शुद्ध भी हो सकता है और अशुद्ध भी । उपर्युक्त उदाहरण में ऐसा भी हो सकता है 'ब' विद्यार्थी अपने भाई के गणवेश में है । ऐसी स्थिति में हमारा निष्कर्ष अयथार्थ (False) हो जावेगा । अत: सही अनुमान एवं उसके आधार पर किए गए सामान्यीकरण की यथार्थता विभिन्न तर्क पद्धतियों के द्वारा अनुमान सूत्रबद्ध करने के नियमों की अनुपालना पर आधारित है । सही तार्किक पद्धति का सही उपयोग ही सामान्यीकरण की यथार्थता का आधार है । अंतरानुमान (Immediate inference) न्याय युक्ति (Syllogism), मिश्र न्याय युक्ति (Mixed syllogism), संक्षिप्त न्याय युक्ति (Enthymeme) और संयुक्त न्याय युक्ति (Compound Syllogism) तार्किक अनुमान की प्रमुख पद्धतियाँ हैं । इन पद्धतियों की प्रयुक्ति में पारंगतता अनुसंधानकर्ता द्वारा किये गये सामान्यीकरण की यथार्थता के लिए आवश्यक है ।

सांख्यिकीय पद्धति में यथार्थ अनुमान के लिए समुचित सार्थकता स्तर (Level of Significance) का चयन करना आवश्यक है । शैक्षिक अनुसंधानों में प्राय: .01 और .05 सार्थकता स्तर पर अनुमान प्रस्तुत किए जाते हैं ।

कसौटियाँ (Criteria) : पूर्व मे उल्लिखित अमिलाक्षणिक गुणों की कसौटी में अनुसंधान-सामान्यीकरण का सही उतरना मुख्य प्राथमिकता है । सर्वाधिक महत्वपूर्ण यह है कि सामान्यीकरण के लिए आधारभूत अनुमान पर्याप्त (Adequate) अनुसंधान डिजाइन पर आधारित हों । इसमें प्राकल्पनाओं के परीक्षण के लिए पर्याप्त अवसर हों । अर्थात अवसर हों । अर्थात डिजाइन अनुसंधान में उठाए गए सभी प्रश्नों के उत्तर देने में समर्थ हों । इसमें सभी बहिरंग स्वतंत्र चरों (Extraneous Independent Variables) को नियंत्रित करने की व्यवस्था सुलभ होनी चाहिए । इस हेतु.

1. सभी संभव यादृच्छिकरण क्रियान्वित हों । प्रतिदर्श में सम्मिलित व्यक्तियों का यादृच्छ चयन । विभिन्न समूहों मे इन व्यक्तियों का आबन्टन भी यादृच्छिक होना चाहिए । प्रत्येक समूह के लिए प्रयोग के ट्रीटमेण्ट (Experimental Treatment)का चयन भी यादृच्छ होना चाहिए ।

2. स्वतंत्र चरों को इस प्रकार नियंत्रित किया जाय कि व्यवस्थित प्रसारण (Systematic Variance) के बहिरंग और अवांछनीय स्रोतों को संक्रियाशील होने के लिए न्यूनतम अवसर उपलव्य हों ।
3. डिजाईन मे सामान्यीकरण योग्यता (Generalizability) का होना आवश्यक है जिसका अर्थ यह है कि अध्ययन से प्राप्त परिणामों को दूसरे विषय (Subjects), दूसरे समूहों (Groups)और अन्य स्थितियों (Conditions) पर समान रूप से लागू किया जाना संभव है अथवा नहीं । इसका स्वयं डिजाइन में प्रतिबिम्बित होना चाहिए । कैम्पबेल तथा स्टैनली ने इस दिशा में गहन. अध्ययन किया है । उन्होनें इसके लिए डिजाइन की आंतरिक वैधता (Internal Validity) और बाहा वैध (External Validity) के गुणों की विवेचना की है । आंतरिक वैधता का संबंध इस बात से है कि प्रयोग में लिए गए स्वतंत्र और परतंत्र चरों के कार्य-कारण अथवा अन्य अध्ययान्तर्गत संबंध कों कोई भी बहिरंग चर प्रभावित न कर सके तथा परतंत्र चर पर प्रभाव वास्तव में स्वतंत्र चर का ही हो । दूसरी ओर बाहा वैधता डिजाइन से प्राप्त अनुमानों का वह गुण है जिससे इन्हें अध्ययन के लिए चयनित विषयी, समूहों, दशाओं के अलावा अन्यथा भी लागू कर सकते हैं । समाज विज्ञानों और व्यवहार विज्ञानों मे सामान्यीकरण सिद्धांत निरूपण में समर्थ होना चाहिए ।

आर्नोल्ड रोज के अनुसार सिद्धांत (Theory), "दी गई विषयवस्तु से आवृत्त परिभाषाओं (Definitions) अभिग्रहों (Assumptions) और सामान्य तर्क वाक्यों का एकीकृत कलेवर (Body) है, जिससे विशिष्ट, परीक्षणीय व्यापक एवं समान (Comprehensive and Consistent) सिद्धांतों (Principles) के समुच्चय को निगमात्मक ढंग से सूत्रबद्ध किया जा सके ।" इस परिभाषा की कसौटी पर सही उतरने के साथ साथ इसमें निम्नलिखित गुण होने चाहिए:

(i) परिभाषाओं, अभिग्रहों एवं सामान्य तर्क वाक्य पूर्व अनुसंधान निष्कर्षो एवं प्रेक्षणों के अनुरूप हों ।
(ii) कम से कम परिभाषायें एवं तर्क वाक्य विकसित हों ।
(iii) निगमनित प्राकल्पनायें परीक्षणीय स्वरूप में हों ।

29.3 औचित्य (Justification)

अनुसंधान में सामान्यकरण सिद्धांतों को सूत्रबद्ध करने व सम्प्रत्यय-निर्धारण के लिए आवश्यक है । हम इन्हें समानार्थी भी कहते हैं । ये सामान्यीकरण सामान्यरूप में ज्ञान किसी भी क्षेत्र में तथा विशिष्ट रूप में शिक्षा-शास्त्र में अनेक प्रकार से महत्वपूर्ण भूमिकायें निभाता है । प्रमुख रूप में यह नियम-निर्धारण (law-making), शिक्षा के व्यवहारिक क्षेत्र, अन्य स्थितियों में विश्लेषणार्थ ज्ञान के भण्डार में वृद्धि तथा भावी अनुसंधानों के लिए पर्याप्त और महत्वपूर्ण संकेत (Clues) तथा सामग्री (Matter) प्रदान करता है ।

जैसा कि हम जानते हैं कि प्राकल्पना (Hypothesis) सामान्यत: तथ्यों के सत्यापन से पहले सूत्रबद्ध की जाती है । इसमें तथ्यों की व्यापकता का अभाव रहता है । प्राकल्पना

सरसरी तौर पर प्रेक्षित तथ्यों के पारस्परिक संबंध की व्याख्या प्रस्तुत करती हैं सिद्धांत तथ्यों के पारस्परिक संबंधों का सत्यापित कथन होता है । इसमें तथ्यों की व्यापकता निहित है । यह भी कहा जाता है । कि, ' 'सिद्धान्त विस्तृत और जांची गई प्राकल्पना है । " अन्वेषक द्वारा एकत्रित तथ्यों को स्थापित अथवा नवीन रचनाओं (कन्दाट्रक्ट्स -Constructs) के रूप में प्रस्तुत किया जाता है । इन रचनाओं को पुन: संश्लेषण के द्वारा सिद्धांत रूप प्रदान किया जाता है यही सामान्यीकरण की अवस्था है । कठोर परीक्षणों की कसौटी मे सत्य उतरने के बाद सामान्यीकरण सिद्धांत का स्वरूप प्राप्त करता है । जब सिद्वांत को सार रूप में गणितीय सूत्र या संबंध मे प्रस्तुत किया जाता है तो यह नियम कहलाता है । जैसे कि अधिगम के सिद्धांत संबंधनबाद (Connectionism) से थार्नडाइक ने अधिगम के नियमों को प्रतिपादित किया ।

सामान्यीकरण की प्रक्रिया में ' 'कंस्ट्रक्ट' ' का निर्माण होता है, इसमें नवीन संप्रत्ययों की उत्पति होती है । नवीन सिद्धांतों का प्रतिपादन होता है तथा नए नियमों का निर्धारण होता है । विभिन्न स्तरों पर सत्यापन, संबंध आदि संक्रियाओं की स्थापना होती है । इनमें नवीन विषयों और तकनीकों का विकास स्वभाविक रूप में होता है । इस प्रकार सामान्यीकरण की प्रक्रिया के द्वारा ज्ञान के संबंधित क्षेत्र में नवीन अवधारणाओं, परिभाषाओ, सक्रियाओ सिद्धातों, तकनीकों और विधियों का अतिरिक्त योग होता है । फलस्वरूप सामान्यीकरण ज्ञान के भंडार में वृद्धि के लिए पर्याप्त विषय-सामग्री प्रदान करती है । जैसा कि S-R अनुबंधन अधिगम सिद्धांत के प्रतिपादन की प्रक्रिया के परिणाम स्वरूप उद्वीपन, अनुक्रिया, पुनर्बलन आदि के सत्यापन की विधियां, अधिगम की विभिन्न तकनीकें आदि का अतिरिक्त योगदान शिक्षा-मनोविज्ञान और मनोविज्ञान के ज्ञान-कोश में हुआ ।

अनुसंधानकर्ता अपने अनुसंधान परिणामों की स्थूल सामान्यीकृत सिद्धांत के रूप में प्रस्तुति से शिक्षा के क्षेत्र में कार्यरत अभ्यासकर्ता (Practitioner) के लिए महत्वपूर्ण सामग्री और संकेत प्रदान करता है । विशिष्ट स्थिति के अध्ययन के फलस्वरूप प्रतिपादित सामान्यीकरण नई परिस्थितियों के विश्लेषण के लिए अंतदृष्टि विकसित करने में सहायक होती है । जैसा कि कॉक और फ्रेन्च (Coach and French) ने "टेक्सटाइल प्लाण्ट के लिए तकनीकि परिवर्तन में मानवीय कारक" का अध्ययन किया । अनुसंधानकर्ताओं ने परिवर्तन की इस घटना के संबंध में जो सामान्यीकरण प्रतिपादित किया उसका लाभ विभिन्न क्षेत्रों और उद्योगों में कार्यरत व्यक्तियों को अपनी तत्संबंधी समस्याओं के विश्लेषण में मिला । मनोविज्ञान में पशुओं, कबूतरों, चूहों पर हुए प्रयोगों से प्राप्त सामान्यीकरणों से शिक्षा-वृत्ति के लोगों को शिक्षण अधिगम की समस्यायें सुलझाने और अधिगम को प्रभावी और दक्ष बनाने में सहायता मिल रहीं है, वह सर्वविदित है । सामान्यीकरण भावी अनुसंधानों के लिए आधार तथा दिशा निर्देशन उपलब्ध करता है । 26.2 में स्लमर के कथन में यह स्पष्ट रूप से प्रतिबिम्बित होता है । अगले सोपान में इसपर चर्चा की जा रही है ।

29.4 निहितार्थ (Implications)

सामान्यीकरण की अवधारणा की व्याख्या से स्पष्ट होता है कि यह दो दिशाओं में गतिशील है । प्रथम, सैद्धांतिक तर्कवाक्यों अथवा सम्प्रत्ययों के पारस्परिक संबंधों की स्थापना तथा द्वितीय, सिद्धांत का अनुसंधान जाँच के साथ बंधन । यहाँ के साथ बंधन । यहाँ हम

द्वितीय भाग की विवेचना कर रहे हैं । प्रथम दिशा पर पूर्व में चर्चा की जा चुकी है । स्पष्टत: अनुसंधान में सदा ही सिद्धान्त और आनुभविक प्रेक्षणों में अंत'-क्रीड़ा चलती रहती है । अनुसंधान प्रक्रिया के विभिन्न सोपानों में सामान्यीकरण की प्रविष्टि अलग-अलग प्रकार की होती है । अत: अनुसंधानकर्ता अपनी समस्या का अभिविन्यास संबंधित वर्तमान सिद्धान्त के अनुरूप अथवा समानान्तर स्थिति में वास्तविक तथ्यात्मक प्रेक्षणों के आधार पर कर सकता है । वह अपने अन्वेषण कार्य के द्वारा पूर्व स्थापित सिद्धात का परीक्षण कर सकता है अथवा वह किसी विशिष्ट समस्या का समाधान प्राप्त करने में इसको साधन बना सकता है । अपने अनुसंधान परिणामों की व्याख्या पूर्व निर्धारित सिद्धान्त के आधार पर करने से वह इन परिणामों की बौद्धिक सार्थकता को बढ़ाता है अथवा अपने परिणामों द्वारा वह नवीन तर्कवाक्यों को सूत्रबद्ध करता है । इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि अनुसंधान और सामान्यीकरण का कोई निश्चित संबंधात्मक आरूप नहीं है ।

अनुसंधान और सामान्यीकरण के पारस्परिक संबंधों के लिए प्रमुख रूप से निम्नलिखित का उल्लेख समीचीन है:

1. अनुसंधानकर्ता अपने अनुसंधान क्षेत्र में प्रचलित सिद्धान्त को अपने अध्ययन के लिए चरों के चयन हेतु उपयोग में ला सकता है ।
2. किसी भी अन्वेषक को अध्ययन में आने वाले सम्प्रत्ययों की यथासंभव स्पष्ट करना चाहिए । जिससे कि वह विश्वसनीय और विभेदी ढंग से यह ज्ञात कर सके कि सम्प्रत्यय में अमुक आनुभविक दत्त शामिल है अथवा नहीं । सम्प्रत्यय किसी सिद्धान्त के केन्द्रीय महत्व के अंग है । फलस्वरूप, आनुभविक तथ्यों में उनकी विश्वसनीयता और उपयोग सिद्धान्त को सूत्रबद्ध करने और उसके विकास के लिए परम महत्व के है ।
3. सिद्धान्त चाहे पूर्व निर्धारित हो या अनुसंधानकर्ता द्वारा प्रतिपादित किया गया हो, इसको अनुसंधानकर्ता द्वारा परिकल्पना के ही रूप में देखा जाना चाहिए । इससे वह प्रेक्षण में अधिक तत्परता से सजग रहता है तथा उसे एक चुनौती के रूप में स्वीकार करता है । फलस्वरूप उसमें प्रेक्षणीय तथ्यों के अनुसार निर्धारित सिद्धान्त को पुनर्व्यस्थित व उसमें आशोधन के लिए सतत् तत्परता सदा बनी रहती है । जो कि एक कुशल अनुसंधानकर्ता का प्रमुख गुण है ।
4. अनुसंधानकर्त्ता को अध्ययन प्रक्रिया में विषय और पहेलीनुमा प्रेक्षण-तथ्यों की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए । उन्हें अनुसंधान प्रक्रिया से हटाने की अपेक्षा उनपर गहन चिंतन अपेक्षित है । ऐसे असाधारण और असामान्य प्रेक्षण कल्पना-शक्ति को अभिप्रेरणा प्रदत्त करते हैं । जिससे नवीन परिप्रेक्ष्यों और सैद्धांतिक उपागमों का उद्भव होता है । ये प्रेक्षण सिद्धांत-निर्माण के लिए नवीन आधार निर्मित करते हैं ।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि सिद्धांत जहां अनुसंधानकर्त्ता के जाँच-कार्य को संगठन और दिशा प्रदान करता है, वहां सिद्धांत के आशोधन और परिष्करण के लिए आनुविक प्रेक्षणों के आधार उपलव्य करता है ।

29.5 स्वमूल्यांकन (Self-Assessment)

1. सामान्यीकरण की अवधारणा को स्पष्ट कीजिए ।
2. सामान्यीकरण के प्रमुख आधार क्या हैं?

3. सैद्धांतिक और सम्प्रत्यय निर्माण किस प्रकार एक ही प्रक्रिया के दो नाम हैं '
4. सामान्यीकरण किस प्रकार अनुसंधान प्रक्रिया का दिशा देकर स्वयं उसके द्वारा परिष्कृत होता है? स्पष्ट कीजिए ।
5. अनुसंधानकर्त्ता किस प्रकार सिद्धांत के द्वारा अपने कार्य को सम्पादित करता हैं?
6. सामान्यीकरण का महत्व स्पष्ट कीजिए ।
7. उदाहरणों द्वारा स्पष्ट कीजिए कि सिद्धांत ज्ञान के भण्डार में वृद्धि करते हैं ।
8. एक अच्छे सामान्यीकरण के अभिलक्षणिक गुण दीजिए ।
9. प्राकल्पना, सिद्धांत और नियम में विभेद कीजिए ।
10. कन्दाट्रक्ट को परिभाषित कीजिए ।

29.6 संदर्भ ग्रन्थ (References)

1. Earmest Greenwood. "Social Sicence and Social Work: A Theory of their Interelationships". The Social Science Review, XXX (1995),20.
2. Braithwaite, Scientific Explanations: A Study of the Function of Theory, Probability and Law in Science: The Progress of Decade, Part! "The Disscipline of Sociology". Prentice Hall.Inc. 1961.
3. 3.Harbert Blumer, "What is Worng with Social Theory".American Sociological Review, XIX,4.
4. D. Compbell and J. Stanley, Experimental and Quasi Experimental Design for Research: Skokle, III; Rand McNally, 1963,PP15.49
5. Coch, L. and French, J.R.P.Jr. Overcoming Resistance to Change, Hum Pal, 1948,I,572-573
6. Compbell, W.Form and style in Thesis Writing, 3rd, Boston:Houghton Miffin, 1969.
7. Festinger, L. and Kartz. D. Research Methods in the Behavioural Sciences. Amerind Publishing Co. Pvt. Ltd. N.D.
8. Kenlinger, Fred N. Foundations of Behavioural Research, 2nd ed. Surjeet Publications, Delhi.
9. Turabian, K.A. Manual for writers of Terms Papers, Thesis, and Dissertations, 12th ed. Chicago University Press Chicago, 1969.
10. Young, Panline, V. and Sahmid, Calvin F. Scientific Social Surveys and Research, Prentice Hall of India Pvt. Ltd. N.D. 1968.

इकाई-30

अनुसंधान प्रायोजना
(Research Proposal)

इकाई की रूपरेखा (Structure of Unit)

30.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)
30.1 अनुसंधान प्रायोजना के सोपान (Steps of Research Project)
30.2 अनुसंधान समस्या का चयन (Selection and Research Problem)
30.3 अनुसंधान प्रस्ताब (Research Proposal)
30.4 अनुसंधान प्रायोजना का क्रियान्वयन (Carrying out Research Project)
30.5 शोध-प्रबंध एवं सारांश (Dissertation and Summery)
30.6 सार (Abstracts)
30.7 बिनिवंध (Monographs)
30.8 स्वमूल्यांकन (Self-Assessment)
30.9 संदर्भ ग्रंथ (References)

30.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

प्रिय अनुसंधानकर्ता, यह इकाई आप जैसे जिज्ञासुओं को अनुसंधान प्रायोजना के सोपानों एवं उसके प्रतिवेदन को लिखने में मार्गदर्शन के उद्देश्य से प्रस्तुत की जा रही है । किसी अनुसंधान की सार्थकता उसकी समस्या, विधा और उपादेयताओं तथा उसके उद्देश्यों, निष्कर्षो सुझावों को अधिक से अधिक जिज्ञासुओं तक पहुंचाने में निहित है। इसके लिए शोध-प्रबंध (Dissertation) तैयार करना होता है ।

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप -

- अनुसंधान प्रायोजना के मुख्य घटकों और अवयवों की पहचान और व्याख्या कर सकेंगे ।
- इसके विभिन्न सोपानों के क्रमिक विकास की व्याख्या कर सकेंगें ।
- अपनी अनुसंधान प्रायोजना के लिए प्रस्ताव तैयार कर सकेंगें
- अनुसंधान प्रायोजना को सोपानों में विकसित कर मूर्त रूप दे सकेंगें ।

30.1 अनुसंधान प्रायोजना के सोपान (Steps of Research Project)

अन्वेषक के रूप में विद्यार्थी का स्वतंत्र कृत्य अथवा क्रिया-कलाप (Steps of Research Project) ही अनुसंधान प्रायोजना है । इसमें विद्यार्थी स्वेच्छा अथवा शिक्षक के मार्गदर्शक सुझाव से संलग्न होता है । अनुसंधान प्रायोजना के प्रमुख अभिलाक्षाणिक गुण इस प्रकार हैं - (अ) इसका उद्भव विद्यार्थी की स्वाभाविक जिज्ञासा से होता हैं-(ब) इसका संबंध

अभिज्ञान (Knowledge) की अपेक्षा अभिवृत्तियों (Attitudes) और कौशलों (Skills) से है । (स) कृत्यक के प्रस्तुतीकरण का स्वरूप स्वयं विद्यार्थी निर्धारित करता है । (द) इसमें शिक्षक की भूमिका अनुदेशन न होकर मार्गदर्शन और संसाधन होती हैं (य) क्रिया-कलाप का व्यवस्थापन और अधिगम का दायित्व स्वयं विद्यार्थी निर्धारित करता है । प्रत्येक अनुसंधान प्रायोजना का उद्भव, विकास और प्रस्तुतीकरण इन्हीं मूलभूत तथ्यों पर आधारित हैं । शिक्षा शास्त्र से संबधित अनुसंधान प्रायोजना के विभिन्न सोपान इस प्रकार हैं:

- समस्या का चयन ।
- अनुसंधान प्रस्ताव ।
- अनुसंधान प्रायोजना का क्रियान्वयन ।
- -शोध-प्रबंध एवं सारांश ।
- सार ।
- विनिबंध ।

30.2 अनुसंधान समस्या का चयन (Selection of Research Problem)

किसी भी अकादमिक (Academic) अनुसंधान प्रस्ताव की सार्थकता और संगति उसके लिए उपयुक्त समस्या के चयन पर निर्भर है । सामान्यत: समस्या चयन का यह कृत्यक आसान नहीं कहा जा सकता । किंतु यह विषय-सामग्री शिक्षा में स्नातकोत्तर उपाधि के लिए अध्ययन कर रहे सेवारत शिक्षकों के लिए लिखी जा रही है तथा इस उपाधि की आंशिक पूर्ति हेतु लघु शोध-प्रबंध (Dissertion) कर प्रस्तुतीकरण एक ऐच्छिक क्रिया-कलाप है । अत: शिक्षकों के लिए यह कार्य कठिन नहीं है । क्योंकि, अपने कार्य (Job) में वे सहज ही अकादमिक समस्याओं का सामना करते रहते हैं । इन समस्याओं के समाधान उनके लिए महत्वपूर्ण हैं । यहां उन्हें अनुसंधान प्रायोजना पर कार्य करने के लिए अवसर उपलव्य किया जा रहा है । इसलिए यह स्वाभाविक है कि ऐसा अवसर मिलने पर शिक्षक उस समस्या के समाधान के लिए अपनी शक्ति का उपयोग करेगा जो कि उसकी व्यावसायिक वृत्ति (Professional Career) की दृष्टि से संगत हो ।

शिक्षक कक्षा, विद्यालय एवं समाज में अपनी नियमित अंतर्क्रियाओं के संदर्भ में अनेक समस्याओं का प्रत्यक्ष अनुभव करता है । कक्षा-शिक्षण की क्रियायें, अनुसंधान, साहित्य का अध्ययन, सहयोगियों विद्यार्थियों, अधिकारियों, का संसर्ग, एवं सामुदायिक जीवन की गतिविधियाँ, अकादमिक अनुभव भी समस्या के अभिज्ञान में सहायक होते है । द्रुत गति से हो रहे जटिल सामाजिक और टेक्मालॉजिकल परिवर्तनों के संदर्भ में शैक्षिक अभ्यास (Educational Practice)) के विभिन्न आयामों में नवाचार अनिवार्य हो गया है । सार्थक नवाचार के लिए अनुसंधान-साक्ष्य (Research evidence) आवश्यक है । यह अकादमिक पक्ष भी अनुसंधान समस्या का एक प्रमुख स्रोत बन गया है ।

एक अच्छी अनुसंधान समस्या में सार्थकता (Significance), मौलिकता (Originality)और साध्यता (Feasibility) के गुण होते हैं । अनुसंधान समस्या पर कार्य आरंभ करने से पूर्व अनुसंधानकर्ता को समस्या का मूल्यांकन करना चाहिए । इस मूल्यांकन के लिए प्रमुख कसौटियाँ स्वयं की समर्थता (Competence), दत्त की प्राप्यता (Availability of data), प्रायोजना की वित्तीय मांग, समय-सीमा, संभावित कठिनाइयाँ एवं निहित सामाजिक जोखिम हैं ।

30.3 अनुसंधान प्रस्ताव (Research Proposal)

अनुसंधान समस्या के चयन के बाद अगला कदम इस समस्या की समाधान प्रक्रिया के विषय में निर्णय लेना है । इस स्तर पर अनुसंधानकर्ता अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिए आवश्यक व्यूह-रचना करता है । जिससे कि वह अपने अनुसंधान कार्य के लिए योजना तैयार करता है । जिससे कि वह प्रभावी और दक्ष ढंग से अपने निर्धारित लक्ष्य पर पहुंच सके । साथ ही अनुसंधानकर्ता को पर्यवेक्षक से आवश्यक सुझाव प्राप्त करने में आसानी होती है अनुसंधान कार्य जिस पाठ्यक्रम और संस्था के अंतर्गत लिया जा रहा है वे भी प्रायोजना की स्वीकृति के लिए इस प्रकार के प्रस्ताव को अनिवार्य मानते हैं । सभी विश्वविद्यालयों और उच्च शिक्षा के संस्थानों में अधिस्नातक और पी0एच0डी0 की उपाधियों के लिए ऐसी अनिवार्य शर्त विद्यमान हैं । इस अनुसंधान प्रस्ताव के लिए प्रयुक्त होने वाले प्रमुख नाम - शोध-रूपरेखा (Synopsis), और-कार्यसूची (Agendum), अनुसंधान प्रस्ताव, है ।

अनुसंधान प्रस्ताव विभिन्न स्तरों पर कार्य के मूल्यांकन के लिए आधार प्रदान करता है । इसी के अनुसार 'गाइड' अपना मार्गदर्शन-कार्य सम्पन्न करता है । यह अनुसंधानकर्ता के अनुगमन के लिए व्यवस्थित कार्यपद्धति की योजना उपलव्य करता है । प्रारंभिक मसौदा-प्रस्ताव (Draft Proposal) के विश्लेषण से प्रस्तावित अनुसंधान प्रक्रिया की व्यवहारिकता, उपयोगिता और सार्थकता संबंधी कमियाँ स्पष्ट हो जाती हैं । जिन्हें गाइड तथा संस्था द्वारा नियुक्त विशेषज्ञ व्यक्ति अथवा समिति के सुझावों के आधार पर दूर किया जा सकता है । इससे अनुसंधान प्रक्रिया में किसी भी कठिनाई या जोखिम की संभावना समाप्त हो जाती है । सावधानीपूर्वक नियोजन और व्यवस्थित वहन एक अच्छे अनुसंधान के लक्षण हैं । पद अनन्तर पद कामचलाऊ कार्यपद्धति से अनुसंधान कार्य नहीं हो सकता । हमेशा ठीक ढंग से डिजाइन किए गए प्रस्ताव से ही एक सार्थक और उपयुक्त अनुसंधान प्रायोजना संभव है ।

यहाँ अनुसंधान प्रस्ताव के लिए प्रारूप (फार्मेट format) दिया जा रहा है । इसमें निहित पदों के क्रम को अंतिम न माना जाय । अनुसंधानकर्ता, गाइड और संबंधित संस्था के अनुसार इस क्रम में परिवर्तन स्वाभाविक है । प्रस्ताव के फार्मेट में भिन्नता को असंगत नहीं समझा जाना चाहिए।

प्रस्तुत अनुसंधान प्रस्ताव के फार्मेट में सम्मिलित विभिन्न पद इस प्रकार हैं - 1 समस्या का कथन 2. परिकल्पनायें 3. समस्या की सार्थकता 4. परिभाषायें, अभिग्रह (Assumptions), सीमाये (Limitation), परिसीमाये (Delimitations; 5. संबंधित साहित्य की समीक्षा, 6. अनुसंधान कार्यविधि (Procedure); 7. समय अनुसूची (Time schedule) । एक

अन्य फार्मेट इस प्रकार है - 1. भूमिका, 2 संबंधित साहित्य की समीक्षा तथा समस्या का कथन, 3. उद्देश्य और परिकल्पनायें, औचित्य, 4. परिभाषायें, अभिग्रह सीमायें, परिसीमायें, 5. कार्य-योजना, 6. उपकरण और सांख्यिकीय तकनीके, 7. दत्त का संग्रहण और विश्लेषण, 8. परिणाम, निहितार्थ और सुझाव ।

इन दोनों फार्मेटों में दिए गए पद सार रूप में समान है । दोनों की विषय वस्तु एक दूसरे के सदृश्य है । विहंगम दृष्टि से पता चलता है कि दूसरे फार्मेट में वित्तीय निहितार्थ अतिरिक्त सामग्री है । जिसका कि अनुसंधान प्रक्रिया से कोई संरचनात्मक संबंध नहीं है ।

30.3.1 समस्या का कथन. समस्या का कथन अपने आप में एक महत्वपूर्ण कृत्यक है । इसके प्रस्तुतीकरण में किसी भी प्रकार की अस्पष्टता और संदिग्धता नहीं होनी चाहिए । इसमें प्रयुक्त सभी पद सुपरिभाषित हों । अनुसंधान समस्या का वाच्य प्रत्यक्ष रूप में ध्येय-अभिविन्यस्त (Goal Oriented) होना चाहिए । इसको प्रस्तुत करते समय यह बात ध्यान में हो कि समस्या संपूर्ण अनुसंधान प्रक्रिया को दिशा देती है । इसका सीमित क्षेत्र निश्चित निष्कर्ष पर पहुंचने में सहायक हो । समस्या के अच्छे कथन में विशिष्ट उत्तर अथवा निष्कर्ष निहित होता है । जहाँ तक संभव हो यह दो या अधिक चरों के पारस्परिक संबंध -साहचर्यात्मक सहसंबंधात्मक, कार्य-कारण संबंधात्मक के अन्वेषण से संलग्न हो तथा इसमें आनुभविक परीक्षण (Empirical testing) के स्पष्ट प्रावधान अपेक्षित है । समस्या का कथन प्रश्नवाचक (Interrogative) अथवा ज्ञापक (Declarative) किसी भी प्रकार के वाक्य में प्रस्तुत किया जा सकता है । मुख्य (Major) कथन अथवा प्रश्न के बाद गौण (minor) कथनों अथवा प्रश्नों का उल्लेख होना चाहिए । उदाहरणार्थ समस्या का ज्ञापक स्वरूप इस प्रकार है - "पूर्व सेवा और सेवारत शिक्षकों की अध्ययन आदतों तथा शिक्षण के प्रति उनकी अभिवृत्ति की तुलना करना ।" इसी समस्या को प्रश्नवाचक रूप में इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है - "शिक्षण अनुभव शिक्षकों की अध्ययन आदतों और शिक्षण के प्रति उनकी अभिवृत्ति को किस सीमा तक प्रभावित करता है?" इनके लिए अनुवर्ती कथन प्रश्न इस प्रकार है।

(i) पूर्व सेवा सेवारत शिक्षकों की अध्ययन आदतों की तुलना क्या पूर्व सेवा और सेवारत शिक्षकों की तुलना क्या पूर्व सेवा और सेवारत शिक्षकों की अध्ययन-आदतों में अंतर है?

(ii) पूर्व सेवा और सेवारत शिक्षकों की शिक्षण के प्रति अभिवृत्ति में अंतर है?

30.3.2 परिकल्पनायें : जिस मुख्य प्रश्न का उत्तर अनुसंधान के द्वारा ज्ञात करना है, उसका परीक्षात्मक (tentative) उत्तर मुख्य परिकल्पना कहलाती है । किसी भी परिकल्पना का आधार अनुसंधानकर्ता का अनुभव, अंदाज और जन-धारणायें होती है । मुख्य परिकल्पना के साथ -साथ गौण परिकल्पनायें भी सूत्रबद्ध की जाती हैं । इन परिकल्पनाओं की जाँच आनुभविक परीक्षणों (Tentative) के द्वारा की जाती है । इन्हें हमेंशा ज्ञापक वाक्य में ही सूत्रबद्ध किया जाता है । परिकल्पना चरों के पारस्परिक संबंधों को दर्शाती है । प्रदर्शित संबंध की जांच के लिए परिकल्पना में उपयुक्त परीक्षण युक्ति निहित होती है । इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि परिकल्पना दो या अधिक चरों के पारस्परिक संबंधों को ही दर्शाती है तथा इन चरों को उपयुक्त उपकरण के द्वारा मापा जाना स्वाभाविक है । चरों के मापन की विधि और प्राप्त दत्त के विश्लेषण की तकनीके भी परिकल्पना से ही प्रतिबिम्बित होती हैं ।

स्पष्ट है कि परिकल्पना चरों के पारस्परिक संबंधों के विषय में अनुसंधान के परिणामों की भविष्यवाणी है । इससे अनुसंधानकर्ता को मुख्य रूप से दो लाभ होते हैं । प्रथम, उसको यह स्पष्ट हो जाता है कि उसको परिकल्पना के परीक्षण के लिए क्या करना हैं। द्वितीय, इससे आप अनुसंधान के उपभोक्ता (Consumer) बन जाते हैं । क्योंकि अनुसंधान परिणाम की भविष्यवाणी के लिए आप किसी अनुसंधानकर्ता द्वारा निकाले गए निष्कर्षो को आधार बनाते हैं । एक अच्छे परिकल्पना में निम्नलिखित अभिलाक्षणिक गुण होते हैं -

(i) तर्कसंगत (म०क्ष०ण्प्तह1०)

(ii) ज्ञात तथ्यों और सिद्धांतों से (Consistent) हो ।

(iii) इसकी प्रायिक (probable) सत्यता और मिथ्यापन को जाँचने के लिए परीक्षण स्वयं परिकल्पना में निहित हों ।

(iv) इसका कथन सरल और बोधगम्य पदों में हो ।

30.3.3 समस्या की सार्थकता : अनुसंधान समस्या के महत्व को अनुसंधानकर्ता द्वारा स्पष्ट करना आवश्यक और महत्वपूर्ण है । उसके लिए इस ओर इंगित करना अनिवार्य है कि निहित प्रश्न का उत्तर अथवा समस्या का समाधान शिक्षा के सिद्वांत या पद्धति (Practice) को किस प्रकार प्रभावित करता है । इसके निहितार्थो और अनुप्रयोगों को सावधानी से सूत्रबद्ध करना चाहिए । जिससे कि प्रायोजना का औचित्य सिद्ध हो सके । प्रस्ताव में इस सोपान के अभाव में प्रायोजन बिना किसी महत्व और व्यवहारिक उपयोगिता के दिखलाई देती है । ऐसी अनुसंधान प्रायोजना में समय, शक्ति और धन लगाना व्यर्थ है ।

30.3.4 परिभाषायें, अभिग्रह सीमायें और परिसीमायें: अनुसंधान समस्या तथा प्रक्रिया में अंतर्भावित पदों की परिभाषायें देना आवश्यक है। ये सभी परिभाषायें संक्रियात्मक (Operational) रूप में हो । अनुसंधान में अवधारणात्मक परिभाषायें उसके स्वरूप को विकृत कर देती हैं । यथा बुद्धि की संक्रियात्मक परिभाषा वह होगी जिसका मापन प्रस्तावित बुद्धि परीक्षण से हो रहा है । ये परिभाषायें उस प्रसंग के ढाँचे को स्थापित करने में सहायक होती हैं जिनकी सहायता से अनुसंधानकर्ता समस्या की ओर बढ़ता है ।

अभिग्रह वे तथ्यात्मक कथन हैं जिनपर अनुसंधानकर्ता विश्वास करता है । किंतु उनका सत्यापन (Verification) नहीं कर सकता । जैसे कि कक्षागत व्यवहार के अध्ययन के अंतर्गत अनुसंधानकर्ता यह मानकर चलता है कि तीन दिन के बाद प्रेक्षक की उपस्थिति का शिक्षक और कक्षा पर कोई प्रतिक्रियात्मक प्रभाव नहीं पड़ता ।

सीमायें ऐसी दशायें (Conditions) हैं, जो कि अनुसंधानकर्ता के नियंत्रण में नहीं होतीं । इनसे अध्ययन के निष्कर्ष और अन्य स्थितियों में उनके अनुप्रयोग सीमित हो जाते हैं । विद्यालय की प्रशासनिक नीति जो कि किसी अध्ययन के लिए प्रतिदर्श (सैंपल - Sample) को सीमित कर देती हैं, दत्त-एकत्रीकरण के लिए बिना वैधीकृत उपकरण का उपयोग, प्रयोग समूह और नियंत्रित समूह के लिए यादृच्छिक (Random) चयन करने में असमर्थता अनुसंधान प्रक्रिया को 'सीमा' के कुछ उदाहरण हैं ।

परिसीमाये वे सरहदें हैं जिनके बाहर अध्ययन का कोई सरोकार नहीं होता । जनसंख्या-शिक्षा के प्रति किशोर विद्यार्थियों की अभिवृति केवल बारहवीं कक्षा के छात्रों तक ही सीमित हों, धर्म के प्रति दृष्टिकोण केवल नियमित प्रार्थना अथवा मध्यवर्गी परिवार से ही सरोकार रखे । ऐसी स्थिति में निष्कर्ष केवल जनसंख्या के प्रदर्शित भाग के अलावा दूसरे भागों के लिए निरर्थक हैं।

30.3.5 संबंधित साहित्य की समीक्षा : ज्ञान के जिस क्षेत्र से समस्या का चयन किया गया है, उस पद में उपलब्ध सामान्य अध्ययन और अनुसंधान परिणाम संबंधित साहित्य की श्रेणी में आता है । इसका अध्ययन और विमर्श महत्वपूर्ण अनुसंधान-पद है । सामान्य साहित्य की समीक्षा अनुसंधान समस्या के सैद्धांतिक तर्काधार की व्याख्या और स्पष्टीकरण के लिए आवश्यक है । यथा, कक्षा का व्यवहारगत ढाँचा (Classroom Behaviour Pattern) पर अन्वेषण के लिए जहाँ शिक्षण प्रक्रिया का अध्ययन जरूरी है, वहाँ कक्षा के समाजशास्त्रीय स्वरूप और मनोवैज्ञानिक पर्यावरण की जानकारी भी आवश्यक हैं । ये अध्ययन क्षेत्र समस्या के संदर्भ में सामान्य साहित्य के वर्ग में आते हैं । समस्या से जुड़े हुए अनुसंधानात्मक संबंधित साहित्य भी इसी श्रेणी में आता है । उपरोक्त उदाहरण में कक्षा के व्यवहारगत ढाँचे का अंतक्रिया विश्लेषण (Interaction Analysis of Classroom Behaviour Pattern) पूर्व में हुए अनुसंधानों का विवरण इसमें शामिल है । इसके कई प्रयोजन हैं । इनमें प्रमुख इस प्रकार हैं -

(i) समस्या में निहित चर-संबंधों के सत्रिकट पूर्व में हुए अन्वेषण की जानकारी ।

(ii) अनुसंधान डिजाइन, प्रयुक्त पद्धति एवं दत्त-एकत्रीकरण उपकरण, जनसंख्या और प्रतिदर्श की तकनीक, अध्ययन में सम्मिलित चर, कठिनाइयों, त्रुटियों, भावी अनुसंधान के लिए सुझावों का विवरण उपलब्ध होना ।

इन जानकारियों से अन्वेषक को यह साक्ष्य प्राप्त हो जाता है कि उसकी समस्या मौलिक और नवीन है । यह पूर्व में हुए अनुसंधान की नकल या अनावश्यक पुनरावृत्ति नहीं है । एक महत्वपूर्ण लाभ यह है कि अनुसंधानकर्ता को विषय-क्षेत्र में अपनी अनुसंधान सामग्री को व्यवस्थित (Locate) करना आसान हो जाता है । साथ ही इस क्षेत्र में अपने योगदान के स्वरूप और महत्व को भी वह प्रभावी ढंग से प्रस्तुत कर सकता है ।

30.3.6 अनुसंधान-कार्यविधि : अनुसंधान प्रस्ताव का यह सोपान संपूर्ण प्रक्रिया की योजना का खाका प्रस्तुत करता है । इसमें स्पष्ट रूप से यह विवरण होता है कि - क्या करना है, यह कैसे करना है, किन- किन आधारभूत सामग्रियों और आँकडे की आवश्यकता है । इसके साथ-साथ इसके अंतर्गत प्रयुक्त होने वाले दत्त-एकत्रीकरण युक्तियों एवं उपकरणों, प्रतिदर्श-तकनीकों (Sampling techniques), दत्त-विश्लेषण की विधियों और तकनीकों के विवरण दिए जाते हैं। इसके अनंतर परिणामों और निष्कर्षो एवं निर्वचन का स्पष्ट उल्लेख होता है । अंत में शैक्षिक निहितार्थ और भावी अनुसंधानों के लिए सुझाव दिए जाते हैं ।

30.3.7 समय अनुसूची : यह पद अनुसंधान की आंतरिक रचना का अंग नहीं है । इसलिए कुछ गाइड इसको अनुसंधान प्रस्ताव में शामिल करना पसंद नहीं करते । किंतु कुछ विश्वविद्यालयों, विभागों और संस्थाओं में ऐसे प्रावधान है कि समय-सूची को प्रस्ताव में शामिल करना अपरिहार्य हो जाता है । इससे अनुसंधानकर्ता को अपने समय और अपनी शक्ति के

नियोजन में सहायता मिलती है । प्रायोजना की प्रबंधीय काल-खण्डों में आवंटित करने से अनुसंधान कार्य व्यवस्थित ढंग से समयबद्ध तरीके से कार्य-खण्डों में पूरा हो जाता है । इससे स्वाभाविक विलम्ब की मानवीय प्रवृत्ति को न्यूनतम करना संभव है । इससे गाइड/विभाग को अनुसंधान प्रक्रिया की प्रगति के मूल्यांकन और मार्गदर्शन कृत्यक के लिए आधार उपलव्य होता।

30.4 अनुसंधान प्रायोजना का क्रियान्वयन (Carrying out Research Project)

प्रस्ताव स्वीकार होने के अनंतर प्रायोजन पर क्रियान्वयन कर देना चाहिए । समय अनुसूची के अनुसार कार्य सम्पादित करने चाहिए । अधिक से अधिक प्रस्तावित योजना के अनुरूप ही अनुसंधान कार्य किया जाय । किसी अपरिहार्य कठिनाई अथवा प्रतिकूल परिस्थिति के अकस्मात् उत्पन्न होने से यदि मामूली परिवर्तन करने पड़े तो गाइड के सुझाव के अनुसार ऐसा किया जा सकता है । किंतु यह ध्यान में रखना चाहिए कि अनुसंधान के मूल ढाँचें में कोई परिवर्तन न हों। हाँ, इसमें संशोधन अवश्य स्वीकार किया जाय । संशोधन कार्य योजना के किसी भी स्तर पर किया जा सकता है । किए गए परिवर्तनों और अध्ययन पर उसके प्रभावों के विश्लेषण-अभिलेख रखे जाये ।

30.5 शोध, प्रबंध एवं सारांश (Dissertation and Summary)

किसी विषय-क्षेत्र की चयनित समस्या के मौलिक अध्ययन में अपनाई गई सम्पूर्ण प्रक्रिया के लिखित स्वरूप को शोध-प्रबंध (Thesis), लघु शोध-प्रबंध (Dissertation), अल्पकालिक शोध पत्र (Short Term Research Paper) अनुसंधान प्रतिवेदन (Research Report) के नामों से जाना जाता है । यह वास्तव में अनुसंधान प्रतिवेदन ही अनुसंधान के क्षेत्र (Scope) के विस्तार के आधार पर इस प्रतिवेदन को शोध-प्रबंध अथवा लघु शोध-प्रबंध या अल्पकालिक शोध पत्र कहा जाता है । ये प्रतिवेदन आकार और क्षेत्र में विभिन्न होते हैं । किंतु इनका संरचनात्मक स्वरूप समान होता है ।

प्रायोजन अनुसंधान प्रक्रिया पूर्ण करने के बाद अन्वेषक के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि समस्या, समस्या-समाधान की प्रक्रिया उसके परिणामों, निष्कर्षो, सुझावों आदि को दूसरे तक सम्प्रेषित किया जाय । अन्यथा यह अनुप्रयोग के बिना व्यर्थ हो जावेगा । अन्वेषक का यह प्रकार्य नहीं है कि अनुसंधान के निष्कर्षो पर दूसरों को विश्वास करने के लिए प्रचार या प्रयास करे। उसका कार्य तो इतना मात्र है कि वस्तुनिष्ठता से स्पष्ट और संक्षिप्त ढंग से यह बतलाए कि क्या किया गया, क्यों किया गया, इस कृत्यक के क्या परिणाम निकाले तथा परिणामों के आधार पर क्या निर्वाचनात्मक निष्कर्ष निकाले गए ।

प्रारूप और संरचना (Format and Structure) : कुछ विश्वविद्यालयों उनकी संकायों विभागों और उच्च शिक्षा की अन्य संस्थाओं ने शोध-प्रबंधों के आरूप अपनी नियम पुस्तिकाओं में प्रस्तावित किए हैं । यह मुसंधानकर्ता और उसके गाइड पर निर्भर करता है कि उसको कौन सा प्रारूप सुविधाजनक लगता है । विभिन्न आरूपों के विश्लेषणात्मक अध्ययन से पता चलता है कि उन सभी में संरचनात्मक दृष्टि से समानता है । अंतर केवल विभिन्न सोपानों के प्रकरणात्मक

नामों या सोपानों में विषय-वस्तु के आबंटन के ही हैं । उदाहरणार्थ कुछ विभाग संस्थाये/गाइड समस्या-कथन से पूर्व संबंधित साहित्य की समीक्षा लिखकर उसके आधार पर समस्या को उजागर करते हैं । जबकि दूसरे समस्या-कथन के अध्याय को लिखकर उसके आधार पर समस्या को उजागर करते हैं । जबकि दूसरे समस्या-कथन के अध्याय को पहले और साहित्य-समीक्षा के अध्याय को बाद में प्रस्तुत करना अधिक पसंद करते हैं दोनों के विचारों के लिए प्रभावी तार्किक कारण हैं । यहाँ एक आरूप प्रस्तुत किया जा रहा है । इसके अनुसार शोध-प्रबंध के संरचनात्मक स्वरूप को निम्नांकित क्रमबद्ध अंगो-उपागों में प्रस्तुत किया जा रहा है -

(अ) आवरण एवं प्रारम्भिक अनुभाग :

1. आवरण एवं मुख्य पृष्ठ (Title page)
2. अभिस्वीकृति (Acknowledgement)
3. विषय-वस्तु की सूची ।
4. सारणी-सूची ।
5. रेखाचित्र-सूची ।

(ब) मुख्य भाग

(क) समस्या का कथन ।

(ख) परिकल्पनायें ।

(ग) समस्या की सार्थकता ।

(घ) अध्ययन-प्रयोजन ।

(ङ) अभिग्रह सीमायें, परिसीमाये ।

(च) मुख्य पद-परिभाषायें ।

(i) संदर्भ साहित्य की समीक्षा ।

(ii) अध्ययन अभिकल्प (डिजाइन).

(क) प्रयुक्त पद्धति ।

(ख) दत्त-स्रोत - जनसंख्या एवं प्रतिदर्श ।

(ग) दत्त-एकत्रीकरण - विधि ।

(घ) प्रयुक्त उपकरण-निर्माण, उपार्जन एवं विवरण ।

(iii) दत्त का प्रस्तुतीकरण एवं विश्लेषण.

(क) मूल पाठ ।

(ख) सारणियाँ ।

(ग) चित्रांकन ।

(घ) सांख्यिकीय विश्लेषण ।

(ङ) विमर्श एवं निर्वचन ।

(iv) निष्कर्ष एवं सुझाव :

(क) मुख्य प्राप्त परिणाम (Findings)

(ख) आगे अनुसंधानार्थ सुझाव ।

(स) संदर्भ अनुभाग

(क) गन्थ-सूची ।

(ख) परिशिष्ट ।

(द) अनुसंधान-सारांश.

(क) समस्या का पुनर्कथन ।

(ख) पद्धति का विवरण ।

(ग) प्रमुख प्राप्त परिणाम, निष्कर्ष, सुझाव ।

(अ) आवरण एवं प्रारम्भिक अनुभाग :

शोध-प्रबंध की बाहा सज्जा आकर्षक एवं मुद्रण एवं जिल्दसाजी की तकनीकी दृष्टियों से त्रुटिहीन होनी चाहिए । हमारी संस्थाओं में इस दिशा में लगभग समान प्रतिरूप अपनाया जाता है । इसमें उल्लिखित सूचनायें इस प्रकार हैं - समस्या, शोध-प्रबंध का संस्थागत संबंध, अनुसंधानकर्ता तथा गाइड, संस्था का नाम जिसमें शोध प्रबंध प्रस्तुत करना है, प्रस्तुतीकरण का वर्ष । आवरण की ही प्रतिलिपि मुखपृष्ठ होता है । इसके नमूने सभी महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों के पुस्तकालयों तथा गाइड से उपलव्य हो सकते हैं ।

अनुसंधान के क्रियान्वयन में यदि अन्वेषक को किसी व्यक्ति, संस्था अथवा संगठन द्वारा अनियत (Unusual) सहयोग प्राप्त हुआ है तो उसका आभार ज्ञापित किया जाय । यदि ऐसा है तो अभिग्रहण सरल और संयत होना चाहिए । अनुसंधानकर्ता के परिवार के सदस्यों, संकाय के सदस्यों, पुस्तकालय स्टाफ, क्लर्कों के नैतिक सहयोग के लिए चापलूसी और अतिश्योक्तिपूर्ण आभार अनावश्यक और भद्दा समझा जाता है । विषय-वस्तु सूची का महत्व अपने आप में स्पष्ट है। इसमें सबसे उपर प्रारंभिक अनुभाग का उल्लेख होना चाहिए । कुछ विशेषज्ञ अभिग्रहण से पहले ही विषय सूची को रखना पसंद करते है । किन्तु अन्य अभिग्रहण को विषय-वस्तु का भाग नहीं मानते । इसलिए इसको विषय-वस्तु से पहले देकर विषय-वस्तु सूची में इसको शामिल नहीं करते । विषय-वस्तु सूची के प्रथम पृष्ठ को भी क्रम संख्या दी जाती है । इसके बाद सारणी-सूची और रेखाचित्र सूची को स्थान दिया जाता है । इन्हें बारीक छोटे टेढ़े अक्षरों में लिखा जाता है । इसके बाद मुख्य भाग को विस्तार से प्रस्तुत किया जाता हे । इसको आरूप के अनुसार पाँच मुख्य शीर्षकों मे बाँटा गया है । विषय-वस्तु सूची मे इन शीर्षकों को मोटे और बड़े अक्षरों में लिखा जाता है । जबकि उपशीर्षक नियमानुसार छोटे अक्षरों में लिखे जाते हैं । मुख्य शीर्षक के सामने पृष्ठ संख्या के स्थान पर उन पृष्ठ संख्याओं को लिखा जाता है, जिनके अन्दर इसकी सामग्री आती है । यथा-प्रस्तावना (1 -8) उपशीर्षकों के सामने वे पृष्ठांक होते हैं जिनमें वे उल्लिखित हैं । प्रारंभिक अनुभाग के शीर्षकों - विषय-वस्तु की सूची, सारणी सूची, रेखाचित्र-सूची के लिए पृष्ठ संख्यांक लोअर केस रोमन संख्यांक (Lower case Roman numerals- (i), (ii), (iii), (iv),.... होते हैं । सारणी सूची और रेखाचित्र सूची के विवरण अलग अलग पृष्ठों में होते हैं । इनके शीर्षक ठीक वही हों जो कि विषय-वस्तु के मूल पाठ में दिए गए हैं । पृष्ठ संख्या नियमानुसार दी जाय ।

(ब) मुख्य भाग.

जैसा आरूप और संरचना के अंतर्गत दिया गया है, शोध-प्रबंध के इस भाग को पाँच मुख्य शीर्षकों में बाँटा गया है । ये पाँच भाग शोध-प्रबंध के पाँच अध्याय बनते हैं । किसी अल्पकालिक शोध पत्र के लिए यही शीर्षक उसके पाँच अनुभाग होते हैं ।

प्रथम अध्याय में अध्ययन क्षेत्र का परिचय और शिक्षा क्रम में उसके महत्व पर प्रकाश डाला जाता है । तदनंतर समस्या को इसके प्रमुख अंग के रूप में दर्शाते हुए प्रस्तुत किया जाता है । समस्या कथन से पूर्व इससे संबंधित सिद्धांतों एवं कतिपय पूर्व अनुसंधानों के निष्कर्षो का उल्लेख किया जाना समीचीन है । जिससे कि यह स्पष्ट हो सके कि समस्या संबंधित कुछ महत्वपूर्ण प्रश्न ऐसे हैं, जो कि अभी तक अनुत्तरित हैं तथा स्वाभाविक रूप में इन प्रश्नों के उत्तर ढूँढने के लिए प्रस्तुत समस्या उभर कर सामने आई है । उसी क्रम में परिकल्पनायें सूत्रबद्ध की जानी चाहिए तथा मुख्य समस्या आदि प्रश्न रूप में है तो उन उप प्रश्नों को यहाँ दिया जाना चाहिए जिनके उत्तर प्राप्त करना अभीष्ट है । समस्या की सार्थकता और अध्ययन प्रयोजन भी संक्षिप्त एवं स्पष्ट रूप में दिए जाये । अभिग्रह सीमायें परिसिमायें बिंदुगत रूप में उल्लिखित हों । सभी मुख्य पदों के लिए उपयुक्त सही संक्रियात्मक परिभाषायें (Operational Definitions) X हों ।

द्वितीय अध्याय संदर्भ साहित्य की समीक्षा का है । यह भाग वर्तमान अध्ययन के लिए पृष्ठभूमि का कार्य करता है । इससे अन्वेषक समस्या संबंधी अद्यतन ज्ञान से भली प्रकार अभिज्ञ हो जाता है । परीक्षणांतर्गत सूत्रबद्ध परिकल्पनाओं को सही प्रसंगों के साथ जोड़ने में भी यह समीक्षात्मक विवरण प्रमुख भूमिका निभाता है । यहाँ समस्या के संबंध में पूर्व में किए गए अन्वेषणों से प्राप्त निष्कर्ष दिए जाते हैं । इन्हें लिखने की विभिन्न शैलियाँ हैं । किंतु अमेरिकन साइक्लोजिकल ऐसोसिएशन के पब्लिकेशन मैनुअल (Publication Manual of the American Psychological Association) द्वारा दी गई उद्धारण-शैली सर्वाधिक लोकप्रिय हुई हैं नमूने के लिए एक उदाहरण दिया जा रहा है

Kosmoski and Vockell (1978) found that learning centers stimulated both cognitive and affective growth among elementary school students..

उद्धरण में दी गई सामग्री को कुछ लोग सिंगल स्पेस में टाइप या मुद्रित करना पसंद करते है । ऐसे उद्धरण से स्पष्ट हो जाता है कि समस्या के संबंध में किसने, कब, क्या निष्कर्ष हो जाता है कि समस्या के संबंध मे किसने, कब, क्या निष्कर्ष निकाला । यदि पाठक इसके संबंध में अधिक जानकारी चाहता है तो संदर्भ साहित्य में इसको प्राप्त किया जा सकता है । यहाँ उसको लेख या प्रबंध का सही -सही शीर्षक, जर्नल/पुस्तक / मैडअल का नाम, उसका संस्करण और संस्करण वर्ष, पृष्ठ संख्या, प्रकाशक का पता सभी की जानकारी हो जावेगी ।

तृतीय अध्याय में अध्ययन के लिए प्रयुक्त डिजाइन का विस्तृत विवरण दिया जाता है । इसमें दत्त के लिए चयनित प्रतिदर्श की मूल जनसंख्या, प्रतिदर्श-तकनीक, दत्त एकत्रीकरण विधि, प्रयुक्त उपकरण की निर्माण विधि, उनका उपार्जन एवं उनकी वैधता और सत्यता के संबंध में समूचित ढंग से जानकारियाँ दी जाती है ।

चतुर्थ अध्याय में दत्त का प्रस्तुतीकरण एवं विश्लेषण दिया जाता है । दत्त को समुचित सारणियों एवं सांख्यिकीय चित्रों में प्रस्तुत और प्रदर्शित किया जाता हैं दत्त के सांख्यिकीय

विश्लेषण के आधार पर परिणामों पर विचार-विमर्श किया जाता है । इसके बाद समुचित निर्वचन दिया जाता है । निर्वचन में संबंधित पूर्व अन्वेषण प्राप्तियों के साथ समानता या भिन्नता के लिए भी कारण दिए जाने चाहिए । अधिस्नातक और यहाँ तक की कुछ डॉक्टोरल उपाधियों के लिए प्रस्तुत शोध-प्रबंधों में कुछ अन्वेषक सांख्यिकीय ग्राक्रस अनावश्यक और असंगत है । यहाँ तो केवल परिणाम ही दिए जाने चाहिएं । कल्कुलेटरों और कम्प्यूटरों को अधिक स्पष्टता प्रदान करने के लिए उन्हें भी समुचित सारणियों मे प्रस्तुत करना चाहिए ।अध्याय पंचम में अध्याय चार के विमर्श और निर्वचन के आधार पर निष्कर्ष दिए जाते हैं । कुछ लोग चतुर्थ और पंचम अध्याय को एक साथ रखते हैं । क्योकि निष्कर्ष तो निर्वचन की ही परिणिति है । किंतु यह अध्याय आकार में बड़ा हो जाता है । इसलिए मुख्य प्राप्त परिणाम (Findings) के उल्लेख के अनंतर निष्कर्षो को सूत्रबद्ध किया जाना चाहिए । इसके बाद आगे भविष्य में समस्या से संबंधित विषयों पर चयनित अनुसंधान कार्यो के लिए सुझाव दिए जाते है । ये सुझाव वस्तुनिष्ठ हों तथा इनके लिए अध्ययन में आनुभविक आधार होना आवश्यक है ।

(स) संदर्भ अनुभाग

इसके अंतर्गत ग्रंथसूची (Bibliography) और परिशिष्ट आते हैं । ग्रंथसूची के पहले पृष्ठ में बीचोबीच केवल "ग्रंथसूची" मोटे अक्षरों में लिखा जाता । इसके बाद अगले पृष्ठ से प्रसंग सामग्री को वर्णमाला के क्रम में लिखा जाता है । यह क्रम लेखक के उपनाम अथवा अंतिम नाम से जमाया जाता है । प्रत्येक प्रसंग को हाँसिए के तत्काल बाद लिखना आरम्भ करना चाहिए । फिर आगे की पंक्ति को बायी ओर एक शब्द खाली स्थान छोड़कर शुरू करना अभीष्ट है । दो प्रसंगों के मध्य डबल स्पेस हो । जबकि एक प्रसंग की पंक्तियों के बीच सिंगल स्पेस अपेक्षित है । उदाहरणार्थ -

King, Edmond J. Other Schools and Qurs 4th ed. New York:Holt, Rinehart And Winston, 1973, 360PP.

सुखिया, एस० पी०, महरोत्रा, पी०बी० महरोत्रा, आर० एन० । **शैक्षिक अनुसंधान के मूल तत्व** । प्रथम सं० आगरा, विनोद पुस्तक मंदिर, 1971.

इसके बाद परिशिष्ट आते है । ग्रंथसूची की समाप्ति के बाद आगे के पृष्ठ पर बीचोबीच बड़े अक्षरों में परिशिष्ट APPENDIX लिखकर छोड़ दिया जाता है । आगे के पृष्ठ में परिशिष्ट (अ) - A परिशिष्ट ब - B.....शीर्षकों के अंतर्गत संबंधित सामग्रियाँ दी जाती हैं । परिशिष्ट के अंतर्गत वे दत्त सारणियाँ दी जाती हैं, जो शोध निबंध के मुख्य भाग के लिए स्वयं आवश्यक नहीं है । किंतु उसके लिए आधार अवश्य होते हैं । जैसे विद्यार्थियों के परीक्षण -अंक, प्रयुक्त प्रश्नावलियाँ, परीक्षण व अन्य दत्त-एकत्रीकरण युक्ति भी परिशिष्ट में दिए जाते हैं । प्रत्येक परिशिष्ट सामग्री अलग पृष्ठ में दी जाती है ।

(द) अनुसंधान सारांश

शोध सारांश का उपयोग सर्वाधिक होता है । अन्य अभिकरण जब भी किसी अनुसंधान के प्राप्त परिणामों को चाहते हैं, वे सारांश में ही उनको प्राप्त करने की अपेक्षा करते हैं । इसलिए शोध सारांश को लिखने में सावधानी और परिश्रम दोनों ही आवश्यक हैं । इसमें समस्या का स्पष्ट मूल्यांकन होता है । साथ ही परिकल्पनायें मूलरूप में ही दी जाती हैं । उन्हें स्वीकार अथवा

अस्वीकार करने के लिए तार्किक/सांख्यिकीय/ वैज्ञानिक आधार दिए जाते हैं । दत्त-एकत्रीकरण के लिए प्रयुक्त विधि और उपकरणों का भी संक्षिप्त विवरण इसमें दिया जाता है । इसमें उन ज्वलंत उपांत समस्याओं (side problems) का उल्लेख भी किया जाना चाहिए जो कि सीमाओं और परिसीमाओं के कारण प्रयुक्त शोध-कार्य में अशुरइत (Uncovered) रह गई हैं । जिससे कि आगे उन पर अनुसंधान के लिए मार्ग प्रशस्त हो सके । सारांश सारगर्भित, संक्षिप्त और अपने आप में पूर्ण होना चाहिए । कुछ लोग शोध सारांश को शोध प्रबंध के अंतिम अनुभाग के रूप में ग्रंथसूची से पूर्व प्रस्तुत करते हैं । जबकि अन्य शोध प्रबंध के अतिरिक्त पठन सामग्री के रूप में इसको तैयार करते हैं ।

(य) लेखन शैली :

शोध प्रबंध की भाषा सरल, बोधगम्य, स्पष्ट एवं संक्षिप्त होनी चाहिए । यह सरल हो । आवश्यक अलंकार और विशेषण इसमें जबर्दस्ती न ठूँसे जाये । इसमें सृजनात्मक हो । इसमें तथ्यों का प्रस्तुतीकरण और व्याख्या हो । शोध प्रबंध का आलेख वस्तुनिष्ठ हो । इसको हमेशा अन्य पुरूष के रूप में प्रस्तुत किया जाय । कभी भी मै, मैने, हम, हमने, मेरा, हमारा, हमको जैसे सर्वनाम उपयोग में न लाए जाये । इनके बजाय अनुसंधानकर्ता अथवा अन्वेषक या प्रेक्षक जैसे शब्द उपयोग में लावे । क्रियायें भूतकाल में हों । वाक्य कर्मवाच्य रूप में प्रस्तुत किए जाये । यथा- "दस विद्यार्थियों को यादृच्छ प्रतिदर्श से चयनित किया गया । "अन्वेषक ने शिक्षकों से साक्षात्कार किया" । "परीक्षण की वैधता की जाँच .....द्वारा की गई" । इत्यादि । किसी प्राधिकार को उद्धृत करते हुए उसके पूरे नाम को लिखने के बजाय अंतिम/उपनाम ही लिखना चाहिए । उस नाम के पूर्व श्री, माननीय, डा० जैसे प्रत्यय न लगाये जाये ।

पद टिप्पणियों, सारणियों एवं रेखचित्रों में शब्दों के लिए संकेताक्षर दिए जाये । किंतु मूल पाठ्य में इन्हें न दिया जाये । हाँ, IQ, U.G.C., N.C..E.R.T. जैसे संकेताक्षर मूलपाठ में दिए जाये ।

संख्यात्मक पदों को लिखने में भी सावधानी अपेक्षित है । संख्या में कम' और परिमाण में न्यून' जैसे शब्द अपनाना अधिक श्रेयस्कर है । यदि कोई वाक्य संख्यात्मक पद से आरंभ हो तो इसको शब्दों में लिखा जाय । यथा-"पचास शिक्षक प्रतिदर्श में सम्मिलित किए गए" । वाक्य के मध्य में आने पर संख्यात्मक पद को संख्यांक में लिखा जाय । भिन्न के स्थान पर दशमलव पद्धति को प्राथमिकता दी जायें ।

एम० एड० और शिक्षा में पी० एच० डी० के शोध-प्रबंधों में देखा गया है कि अन्वेषक सांख्यिकीय सुत्र लिखने में उत्सुकता दिखलाते हैं । यह प्रैक्टिस असंगत और अनावश्यक है । ऐसा कभी भी न किया जाय । इसी प्रकार गणनाओं को भी पद-प्रतिपद प्रबंध में सम्मिलित करना अनुचित है । केवल परिणामों का ही समुचित ढंग से उल्लेख किया जाय ।

इस इकाई के लेखक ने अपने समीक्षात्मक अध्ययन में पाया कि अधिकतर शिक्षा-शोध प्रबंधो मे त्रुटिपूर्ण ढंग से परिकल्पनायें सूत्रबद्ध होती हैं । इन्हें स्वीकारात्मक रूप में प्रस्तुत किया जाता है । जबकि इनके परीक्षण के लिए वे तकनीकें प्रयुक्त होती हैं, जो कि निराकरणीय

परिकलपनाओं (Null Hypothesis) के लिए उपयोगी हैं । इसलिए परिकल्पनाओं को निराकरणीय स्वरूप में ही सूत्रबद्ध किया जाय ।

पाद टिप्पणियों को प्रस्तुत करने के लिए भी कुछ मानक परंपरागत रूप से मान्य हैं । एक अनुसार उद्धारण की समाप्ति पर छोटे कोष्ठक मे संबंधित स्रोत को ग्रंथसूची के अंक दिए जायँ, यथा (10,109) का अर्थ हैं । कि इस उद्धरण का स्रोत पृष्ठ 109 की गंथ सूची के क्रम संख्या 10 है । दूसरी परम्परा के अनुसार किसी पृष्ठ में आने वाले उद्धरणों के स्त्रोत उसी पृष्ठ में नीचे दिए जाते हैं। इनको इस प्रकार प्रस्तुत किया जाता है ।

पृष्ठ के नीचे से लगभग 6 सेमी. ऊपर रेखा खीची जाती हैं । प्रत्येक उद्धरण के अंत में ऊपर उस अध्याय के उद्धरण की क्रम संख्या लिख दी जाती है । यथा-"शिक्षा के मेरा.....है ।" पाद टिप्पणी के लिए पृष्ठ के नीचे भाग में खींची गई सीमारेखा के बाद आधा स्पेस के अंतराल पर पृष्ठ के पहले उद्धरण के स्त्रोत का अनुलेखन किया जाय । इसके बाद निर्धारित अंक को लिखकर स्त्रोत विवरण दिया जाय । किन्हीं भी दो पाद टिप्पणियों के अनुलेखनो के मध्य अंतराल डबल स्पेस हो। उसी उनुलेखन की दों पंक्तियो के बीच अंतराल सिंगल स्पेस हो । यथा -

Fred N. Lerlinger, Foundations of Behaviour Research (N.Y.:Holt, Rinehart & Winston, 1973),P. 24

Clinto I, Chase, Elementary Statical Procedures (N.Y.:Mc Graw-Hill Book Co. 1967).P.24

यदि उद्धरण लगातार क्रम में ऐसे हों कि उनका स्त्रोत एक ही है तो ऐसे उद्धरणों के अनुलेखन के लिए पहले को प्रस्तुत करने के बाद आगे लिखने के लिए उद्धरण का क्रमांक लिखकर Ibid लिख देते हैं । यथा :-

1. Edward L. Vockel, **Educational Research** (N.Y.: Macmillan Publishing Co.. Inc., 1983), P.78
2. Ibid (वही पृष्ठ वही स्रोत)
3. Ibid, P.100 (पृष्ठ 100 वही स्रोत)
4. Chase. op.cit 34 (पूर्व में अनुलेखित पृष्ठ 34)
5. Adams loc, cit. 20 (यह प्रसंग पृष्ठ 24 का है)

शोध प्रबंध में प्रयुका किए जाने वाले संकेताक्षरों और संकेतक अक्षर समूहों के लिए अनुसंधान के ग्रंथों को देखा जाना अपेक्षित है ।

सारणियाँ शोध प्रबंध की महत्वपूर्ण विधा है । यह आँकडों को समग्र किंतु संक्षेप में प्रस्तुत करने की तकनीकी युक्ति है । सारणी हमेशा एक पृष्ठीय ही हो । पृष्ठ पर तालिका उपयुक्त स्थान पर बनाई जाय । यदि सारणी आधे पृष्ठ से अधिक स्थान घेरती है । तो उस पृष्ठ में केवल तालिका को ही पृष्ठ के मध्य भाग में आकर्षक ढंग से स्थापित कर इसके बाद या पूर्व उससे संबंधित पाठ्य वस्तु को स्पष्ट रूप से प्रसंगानुसार दिया जाय । सारणी को क्रमांक शोध प्रबंध में उसके क्रम के अनुसार दिया जाय । ये क्रमांक रोमन पद्धति के हों । इसको सबसे उपर मोटे और कैपिटल अक्षरों में लिखा जाय । यथा-सारणी **(Table -II)** । इसके बाद आकर्षक ढंग से सारणी का शीर्षक लिखना चाहिए । पूरे शोध प्रबंध मे तालिकाओं को एक ही क्रम में

रखना चाहिए । अलग-अलग अध्याय के लिए ऐसे अलग-अलग क्रम न हों । स्तम्भों और पंक्तियों को समुचित और स्पष्ट शीर्षक दें ।

शोध से संबंधित सारणीबद्ध आकड़ों को चित्रांकित करने से अध्ययन के प्रतिदर्श की प्रकृति का सहज ज्ञान हो जाता है । चित्र (Figure) के अंतर्गत लेखाचित्र (Graphs), चार्ट (charts), मानचित्र (Maps), रेखाचित्र (Sketches), आरेख (Diagrams) आते हैं । एक अच्छे चित्र के प्रस्तुतीकरण में निम्नांकित गुण होते हैं-

1. चित्र से ठीक पहले उसके आधार- आँकड़े की सारणी होनी चाहिए ।
2. यह अपने आप में स्पष्ट और आकर्षक हो ।
3. चित्र में यथा स्थान स्केल दिया जाना चाहिए ।
4. चित्र में ठीक बाद उससे संबंधित पाठ्य-वस्तु हो ।
5. व्याख्या में चित्र संख्या का हवाला दिया जाय । 'उपर्युक्त चित्र' जैसी भाषा का प्रयोग न किया जाय ।
6. चित्र संख्या चित्र के नीचे उसके शीर्षक से पहले हो । क्रमांक संख्या में हो । यथा चित्र संख्या 1.1 (प्रथम अध्याय का चित्र क्रमांक 1) चित्र सं. 3.4 (तीसरे अध्याय का चौथा चित्र)
7. चित्र का शीर्षक उसके नीचे क्रम संख्या के बाद दिया जाय । यथा

   चित्र 10.6 A Hypothetical Diagram showing a Less than perfect relationship between level of Arousal and Ability to learn.

अंत में इस बात पर विशेष बल दिया जा रहा है कि भाषा शुद्ध, स्पष्ट हो । ग्रामीण या लोक भाषा का प्रयोग शोध प्रबंध में न किया जाय । हिन्दी में शोध प्रबंध लिखते समय यह ध्यान रखा जाय कि अंग्रेजी के शब्दों का सही और मानक रूपांतर हो । यह रूपांतर वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, केन्द्रीय हिंदी निदेशालय, शिक्षा तथा समाज कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा निर्मित 'वृहत्' पारिभाषिक शब्द संग्रह मानविकी से ही ग्रहण किया जाय ।

शोध-प्रबंध में पृष्ठांकन में सावधानी रखी जाय । पृष्ठ का क्रमांक उसके ऊपरी भाग में दायें हासिये में लगभग 2 से0मी0 नीचे हो । प्रारंभिक अनुभाग में पृष्ठों का क्रम रोमन पद्धति i, ii, iii..... में दिया जाय । प्रबंध के मुख्य भाग में प्रारंभ से पृष्ठ संख्या 1 से आरंभ की जाय । यह क्रम परिशिष्ट कें अंतिम पृष्ठ तक रखा जाय । अध्याय पृष्ठ एक से शुरू होता हैं । किंतु इस पृष्ठ 1 को अंकित नहीं किया जाता । अगला पृष्ठ 2 होता है । इसी पृष्ठ 2 से पृष्ठाकंन शुरू करते हैं ।

नया अध्याय नए पृष्ठ से शुरू किया जाता है । इसको टाइप करने का तरीका यह है कि सामान्य प्रथम पंक्ति के नीचे चार स्पेस छोडकर पृष्ठ के मध्य में बड़े अक्षरों में रोमन कैपिटल पद्धति में संख्या के बाद 'अध्याय' लिखा जाता है । अब डबल स्पेस छोडकर बड़े अक्षरों में शीर्षक को बीचोबीच लिखा जाता है । इसके तीन स्पेस अंतराल पर ही पाठ्य वस्तु का विवरण शुरू किया जाय । पाठ्य वस्तु के विवरण में अध्याय के उप खंडों के शीर्षक हासिये के बाद बड़े अक्षरों में दिए जाये ।आगे दूसरी पंक्ति में लिखना आरंभ किया जाय तथा आगे उसी पंक्ति से सामग्री दी जाय। जैसा प्रस्तुत इकाई में किया गया है ।

30.6 सार (Abstracts)

शोध-प्रबंध के ज्वलंत बिंदुओं को अति संक्षिप्त रूप में प्रभावी ढंग से प्रस्तुत करना ही सार लेखन है । इसकी शब्द सीमा सामान्यत: 100-150 है । इसको इस प्रकार लिखा जाना चाहिए कि पाठ्य पढ़ते ही समझ जाए अनुसंधान प्रतिवेदन में क्या है । शोध-सार में अनुसंधान के सभी मुख्य संघटक - समस्या, परिकल्पनाये, शोध-परिणाम, महत्व और सुझाव सम्मिलित हों । इनको अलग अलग घटक के बजाय एकीकृत स्वरूप में प्रस्तुत करना ही सार्थक है । प्रथम 50 शब्दों में प्रयोजन स्पष्ट करते हुए स्वाभाविक रूप में इससे ही मुख्य समस्या का अवतरण होना चाहिए । शेष 100 शब्दों में अन्य भागों का सार प्रस्तुत किया जाय ।

प्रत्येक शोध-प्रबंध के साथ सार-लेख अनिवार्य रूप से प्रस्तुत किया जाना चाहिए ।इसके पाठक को संपूर्ण अनुसंधान प्रक्रिया और उसके परिणामों का बिहगम दृष्टि से अभिज्ञान हो जाता है । यही एक अध्ययन है, जिसके द्वारा अनुसंधानकर्ता दूसरों को अपने शोधकार्य के संबंध में विश्रवास में ला सकता है । यह शोध-प्रबंध के अध्ययन के लिए एक प्रभावी उत्प्रेरनात्मक युक्ति है ।

सार तो अनुसंधान प्रस्ताव का भी दिया जाना चाहिए । क्योंकि जिन विशेषज्ञों के पास इसको भेजा जाता है, इसको पढ़कर वे संपूर्ण प्रस्ताव के गम्भीर अध्ययन के लिए प्रेरित होते हैं । साथ ही शोध के लिए वित्तीय सहायता देने वाली संस्थायें भी प्रस्ताव के सार को प्राथमिकता देती है । क्योंकि उनकी विशेषज्ञ समिति के पास कोई आवेदन विचारार्थ होते हैं । उनके पास विस्तृत प्रस्तावों के अध्ययन के लिए पर्याप्त समय नहीं होता । निर्देशीकरण और विनिबंध तथा-सर्वेक्षण संस्थायें भी हमेशा शोध-सार की मांग करती है ।

30.7 विनिबंध (Monographs)

अनुसंधान के क्षेत्र में संदर्भ सामग्रियों में विनिबंध भी प्रमुख है । यह किसी क्षेत्र के विशिष्ट विषय पर क्रमबद्ध ढंग से प्रस्तुत अनुसंधान सामग्री का संक्षिप्त विवरण है । इसमें इस विषय पर किसी अवधि में किए गए अनुसंधानों का सार संक्षेप होता है । यह मुद्रित सामग्री है । इसका स्वरूप परिवर्धित बुलेटिन या लघु पुस्तिका होता है । यह किसी एक ही विषय पर हुए अनुसंधान कार्य का प्रतिवेदन है । इसमें यह एक ही समस्या पर आधारित होता हैं । अमेरिका यू0के0 और भारत में विभिन्न संस्थायें अलग -अलग विषयों पर जर्नल, ग्रंथसूची आदि के साथ साथ विनिबंध प्रकाशित करती आ रही हैं ।

30.8 स्वमूल्यांकन (Self Assessment)

1. अनुसंधान समस्या के विभिन्न आधार क्या हैं ।
2. अनुसंधान प्रस्ताव क्यों आवश्यक हैं ? इसकी संरचनात्मक विवेचना कीजिए ।
3. शोध-साराश के लेखन में किन -किन बातों को ध्यान में रखना चाहिए '
4. पाद-टिप्पणी, संदर्भ साहित्य और ग्रंथ-सूची क्या हैं? इन्हें शोध-प्रबंध में कैसे लिखते हैं?
5. अनुसंधान-प्रतिवेदन में सारणीयन और चित्रांकन कैसे किए जाने चाहिए?
6. अनुसंधान-प्रतिवेदन की लेखन-शैली की विस्तृत विवेचना कीजिए ।
7. शोध-सार, सारांश और विनिबंध की विशेषताओं और महत्व की व्याख्या कीजिए ।

8. किसी भी उपलब्ध शोध-प्रबंध के लिए समालोचनात्मक समीक्षा प्रस्तुत कीजिए ।

30.9 संदर्भ ग्रंथ (references)

1. अमेरिकन साइकॉलाजिकल ऐसोसिएशन, इथिकल प्रिंसिप्लस इन द कन्डक्त ऑफ रिसर्च विद ह्यूमन पार्तिसिपेण्ट्स (वाशिंगटन डी सी० 1973) ।
2. अमेरिकन साइकॉलाजिकल ऐसोसिएशन, पब्लिकेशन मैडअल ऑफ द अमेरिकन सॉइकॉलाजिकल ऐसोसिएशन (द्वि० संस्करण, वाशिंगटन डी सी० 1974) ।
3. ऐण्डर्सन, बी०एफ० दि सॉइकॉलाजिकल ऐक्सपेरिमेण्ट (बेलमॉण्ट, कैल. बुकाकोल, 1971) ।
4. गुड, कार्टर वी एण्ड डगलस ई० स्केटस, मेथड्स ऑफ रिसर्च (न्यूयार्क, ऐप्लटन सैन्बुअरी, क्राफाट्स, 1954) ।
5. गुड, कार्टर, बार, ए० एस० और डगलस ई०स्केट?स, मेथडॉलॉजी ऑफ एजुकेशनल रिसर्च (न्यूर्याक सैन्बुअरी क्रफटस, इंक, 1941) ।
6. टेरेबियन, केट एल ०: ए मैत्युअल फॉर राइटर्स टर्म पेपर्स : थीसिस एण्ड डिजर्टेशन्स (शिकागो यूनीवर्सीटी ऑफ शिकॉगो प्रेस, 1973) ।
7. बेस्ट, जॉन बी ० : रिसर्च इन एजूकेश्न (न्यू दिल्ली, प्रिण्टिस हॉल ऑफ इण्डिया प्राइवेट लि ०, 1983) ।
8. वोकल एडवर्ड एल० : एजूकेशनल रिसर्च (न्यूयार्क, मैक्मिलन पब्लिशिंग क ०, ईक 1983) ।
9. सुखिया, एस पी ०, मेहरोत्रा, आर० एन० शैक्षिक अनुसंधान के मूल सिद्धांत (आगरा, विनोद पुस्तक मंदिर, 1971) ।
10. केंद्रीय हिंदी निदेशालय, शिक्षा तथा समाज कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार : वृहत् पारिभाषिक शब्द-संग्रह मानविकी खंड । एवं खंड । । ।

इकाई-31

शोध प्रबन्ध

(The Research Report)

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

31.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)
31.1 शोध प्रबन्ध का अर्थ (Meaning of Research Report)
31.2 शोध प्रबन्ध लेखन की आवश्यकता (Need of Research Report)
31.3 शोध-प्रबन्ध का प्रारूप (Format of Research Report)
31.3.1 प्राथमिकताएँ (Preliminaries)
31.3.2 पठन योग्य प्रमुख भाग (Main Body)
31.3.3 सन्दर्भ भाग (Reference Section)
31.4 शोध प्रबन्ध लेखन की प्रविधि (Techniques of Report Writing)
31.5 शोध प्रबन्ध की लेखन शैली (Style of writing Report)
31.6 शोध प्रबन्ध का मूल्यांकन (Evaluation of Research Report)
31.7 सारांश (Summary)
31.8 स्वमूल्यांकन (Self Assesment)
31.9 सन्दर्भ ग्रन्थ (References)

31.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

इस इकाई के अध्ययन की समाप्ति पर विद्यार्थी -

1. शोध प्रबन्ध की अवधारणा को समझ सकेगें ।
2. शोध प्रबन्ध के लेखन की आवश्यकता जान सकेगें ।
3. शोध प्रबन्ध के प्रारूप को समझ सकेगें ।
4. शोध प्रबन्ध के लेखन की प्रविधि एवं शैली की व्याख्या कर सकेगें ।
5. शोध प्रबन्ध का मूल्यांकन कर सकेगें ।

भूमिका: शोधकार्य की समाप्ति के पश्चात् शोध कार्य को लिखित रूप में प्रस्तुत करने की प्रक्रिया होती है । किसी भी शोध समस्या की उपयोगिता एवं पर्याप्तता की जानकारी शोध प्रारूप (Research Proposal) के द्वारा प्राप्त होती है । और किसी भी शोधकार्य के योगदान की जानकारी शोध प्रबन्ध द्वारा प्राप्त की जा सकती है ।

शोधकार्य को लिखित रूप से प्रस्तुत करने के अनके तरीके है जो लिखने के तरीके या उद्देश्य के अनुरूप हो सकते है । कई संस्थाएँ एवं विश्वविद्यालय ऐसे है जिन्होंने अपने शोधकर्ताओं के लिए निश्चित प्रारूप Format) का निर्माण कर दिया है जिसका अनुसरण शोधकर्ताओं को अनिवार्य रूप से करना पड़ता है ।

31.1 शोध प्रबन्ध का अर्थ (Meaning of Research Report)

शोध प्रबन्ध के अन्तर्गत शोध कार्य की समाप्ति पर उसके परिणाम की जानकारी प्रदान की जाती हैं । इसमें शोध उसके परिणाम की जानकारी प्रदान की जाती है । इसमें शोध सम्बन्धी समस्त गतिविधियों का पूरा विवरण होता है । इसको लिखने के कई प्रारूप हैं ।

शोध प्रबन्ध लेखन का कार्य अत्यन्त चुनौतीपूर्ण है । एक अच्छी शोध प्रबन्ध लिखने के लिए शोधकर्ता अनुभवी एवं सूझ वाला व्यक्ति होना चाहिए जिसे अपने शोध कार्य में गहन रूचि एवं उसकी जानकारी हो ।

31.2 शोध प्रबन्ध लेखन की आवश्यकता (Need of Research Report)

(1) शोधप्रबन्ध के द्वारा शोध कार्य के सम्बन्ध में समस्त जानकारी हासिल हो जाती है । जैसे शोध कार्य की पद्वति, प्रतिदर्श और प्रविधियों जो शोधकार्य में काम ली गई है ।

(2) शोधप्रबन्ध द्वारा अनुसन्धान कार्य को निश्चित स्वरूप एवं आकार प्राप्त होता है जो इसे सुदृढ करने के लिए आवश्यक है ।

(3) शोध प्रबन्ध में शोधकर्ता अपने मौलिक चिन्तन के आधार पर सम्बन्धित साहित्य का पुनरावलोकन (Review) करता है तथा प्राप्त परिणामों की चर्चा करते हुए भावी अध्ययन के लिए नई समस्याओं का भी उल्लेख करता है ।

(4) शोध प्रबन्ध ऐसा होना चाहिए जो कि अन्य व्यक्तियों को अनुसन्धान कार्य करने के लिए प्रेरित या उत्साहित करता है ।

(5) शोध कार्य मानव मात्र के लिए उपयोगी होते है । अत: शोधप्रबन्ध द्वारा इनकी व्यावहारिक उपयोगिता का प्रचार-प्रसार जनसामान्य में किया जा सकता है ।

(6) शोध प्रबन्ध के माध्यम से शोधकार्य का पूर्ण विवरण प्राप्त होता है तथा इसके परिणामों की समालोचना भी होती है ।

31.3 शोध प्रबन्ध का प्रारूप (Format for Research Report)

अनुसन्धान कार्य का लिखित प्रारूप शोध प्रबन्ध कहलाता है । ये प्रारूप अनेक प्रकार के होते है । लेकिन फिर भी इन सब प्रारूपों में कुछ भाग एक समान होते है । एक बहुप्रचलित शोध प्रबन्ध प्रारूप निम्नलिखित है -

31.3.1 प्राथमिकतायें (Preliminaries)

1. मुख्य पृष्ठ (Title page)
2. अनुमोदन पत्र (Approval letter) (आवश्यक होने पर)
3. प्रस्तावना या आभार प्रदर्शन (Preface)
4. पाठ सामग्री (Content)
5. सारणी सूची (Tables)
6. आकृति अथवा लेखाचित्र या चित्रण की सूची (Presentation)

7. निष्कर्ष अथवा सारांश (Conclusion)

31.3.2 पठन योग्य प्रमुख भाग (Main Body or Textual Part)

(1) भूमिका (Introduction)

(अ) समस्या कथन (Structure of the problem)

(ब) उद्देश्य (Objectives of the Study)

(स) परिकल्पना (Hypothesis)

(द) समस्या का औचित्य (Significance of the Problem)

(य) अवधारणा एवं परिसीमन (Assumptions of the delimitation)

(र) तकनीकी शब्दों का परिभाषीकरण (Definitions of Technical terms)

(2) सम्बन्धित साहित्य का पुनरावलोकन (Review of Related Literature)

(3) अध्ययन का प्रारूप (Design of the study)

(अ) अध्ययन की विधि (Method)

(ब) अध्ययन के उपकरण एवं प्रविधियां (Tools and Techniques)

(4) तथ्यों का प्रस्तुतीकरण एवं विश्लेषण (Presentation and Analysis of data)

(अ) तथ्यों का विश्लेषण (Analysis of data)

(ब) सारणियाँ एवं विश्लेषण (Tables and interpretation)

(5) निष्कर्ष (Conclusion)

(अ) परिणामों की चर्चा (Discussion of results)

(ब) प्रमुख परिणाम एवं निष्कर्ष (Main finding and inferences)

(स) परिणामों का अनुप्रयोग एवं परिसीमन (Implication of the finding and limitation)

(द) अग्रिम अध्ययन हेतु सुझाव (Suggestions for further studies)

31.3.3 संदर्भ भाग (Reference section)

(अ) संदर्भ ग्रंथ सूची (Bibliography)

(ब) परिशिष्ट (Appendix)

(स) सूचाँक (Index)

31.3.3.1 प्राथमिकतायें (Preliminaries) - यह शोध प्रबन्ध का महत्वपूर्ण भाग है इसलिए इसकी व्यवस्था करने में विशेष सावधानी रखनी चाहिए । यदि कोई संस्था/विश्वविद्यालय द्वारा किसी विशेष प्रारूप का निर्धारण किया हुआ हो तो उन्हें उस प्रारूप को भी ध्यान में रखना चाहिये।

(1) **मुख्य पृष्ठ (Title Page) -** ये शोध प्रबन्ध का प्रथम पृष्ठ होता है ।

(i) शोध प्रबन्ध का शीर्षक

(ii) अभ्यार्थी का नाम

(iii) वांछित उपाधि की आवश्यकता अथवा निर्धारित पाठ्यक्रम का शोध प्रबन्ध से सम्बन्ध अथवा उनका उद्देश्य

(iv) महाविद्यालय/विभाग जिसमें कि अभ्यार्थी वांछित उपाधि के लिए प्रवष्टि हुआ है ।

(v) विश्वविद्यालय का नाम जिसमें कि शोध प्रबन्ध प्रस्तुत करना है

(vi) जमा करने या स्वीकृत होने का वर्ष ।

शीर्षक प्रकरण समुचित, शुद्ध, लघु तथा स्पष्ट होने चाहिये और बडे अक्षरों में छपे हुए अथवा टाइप किए हुए होने चाहिये । शीर्षक में शोध की समस्या का मुख्य विचार व्यक्त होना चाहिये और यदि सम्भव हो तो शोध कार्य की विधि अथवा रीति का संकेत भी होना चाहिये ।

मुख्य पृष्ठ का नमूना

मानसिक रूप से पिछड़े हुए बालकों के समायोजन एवं व्यक्तित्व का अध्ययन राजस्थान विश्वविद्यालय से शिक्षाशस्त्र मे पी. एच। डी. उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध प्रबन्ध (तिथि व वर्ष)
निर्देशक का नाम शोधकर्ता का नाम) पद योग्यता विभाग

(2) **अनुमोदन पत्र (Approval letter) -** कुछ संस्थाओं/विश्व विद्यालयों में अनुमोदन पत्र लगवाने की प्रथा है, जिस पर निर्देशक, प्राध्यापक या परामर्शदात्री समिति या विभागाध्यक्ष अपने हस्ताक्षर कर सकें ।

(3) **प्राक्कलन अथवा आभार प्रदर्शन (Preface or Acknowledgement) -** इसमें शोध प्रबन्ध के प्रस्तुतीकरण के सम्बन्ध में उसके उद्देश्य अथवा स्त्रोत और अध्ययन की उपयोगिता का सूक्ष्म विवरण होता है ।

इसमें उन व्यक्तियों के प्रति आभार प्रदर्शन तथा स्त्रोतों का समावेश होता है जो शोध कर्ता के लिए सहायक हुए है ।

'प्राक्कथन' अथवा 'आभार प्रदर्शन' बडे अक्षरों में मुद्रण होना चाहिए ।

(4) **विषय सारणी (List of Contents) -** इस भाग में सब मुख्य अध्यायों के शीर्षकों तथा आवश्यक उप शीर्षक की सूची होती है जिसमें प्रत्येक में उसी के सम्मुख समुचित पृष्ठ संख्या दी जाती है । प्रारम्भिक आवश्यकताओं जैसे-प्रस्तावना या आभार प्रदर्शन, सारणी सूची, आकृति सूची, सारांश सूची अथवा निष्कर्ष उनके पृष्ठ क्रमानुसार रोमन संख्या में दिये जाते है । मुख्य तथा उपशीर्षकों के मध्य सम्बन्धें का दिग्दर्शन सामान्यत: मुख्य अध्याय की क्रम संख्याओं को बडे अक्षरों में लिखकर किया जाता है तथा शीर्षकों, उपशीर्षकों को लघु अक्षरों में इस प्रकार अंकित किया जाता है कि प्रथम अक्षर बडा हो । विषय-वस्तु न तो विस्तृत हो और न ही संक्षिप्त हो, वस्तु की तालिका का मुख्य उद्देश्य शोद्य प्रबन्ध की विषय सामग्री की रूपरेखा प्रदान करनी चाहिये । अध्याय के शीर्षक तथा उपशीर्षकों के मध्य केवल एक स्थान का अन्तर होना चाहिए । बड़े अक्षरों में लिखे हुए शीर्षकों की सम्बन्धित 'विषयवस्तु' पृष्ठ का केन्द्रीय शीर्षक होना चाहिये

तथा बड़े शब्दों में अध्याय एवं पृष्ठ क्रमश: अध्यायों की संख्या गयी ओर तथा पृष्ठ संख्या दाहिनी ओर अंकित होनी चाहिए ।

(5) **तालिकासूची (List of Tables) -** पाठ सूची के पश्चात् पृथक पृष्ठ पर तालिका सूची अंकित की जाती हैं । सारणी सूची में सभी सारणियों के शीर्षक अथवा सारांश होते है जो कि शोध प्रबन्ध में सम्मिलित किये गये है, जिनके साथ पृष्ठ संख्या भी दी जाती है जिससे कि उनका ठीक से पता लग सके । प्रत्येक सारणी के बडे अक्षरों में रोमनलिपि की संख्या तथा उसके सम्मुख पृष्ठ संख्या दी जाती है । ठीक-ठीक शीर्षक अथवा उसका सार और उनके अनुकूल पृष्ठ संख्या को जो कि शोध प्रबन्ध में प्रयोग की गयी है, दिया जाता है ।

तालिका सूची में बडे अक्षरों में लिखा हुआ शीर्षक प्रत्येक पृष्ठ के ऊपरी भाग में अंकित होना चाहिए तथा शब्द सारणी के अनुसार प्रत्येक पृष्ठ के बायीं ओर तथा पृष्ठ संख्या दाहिनी ओर अंकित होनी चाहिए ।

(6) **आकृति तथा चित्रण सूची (List of figures) -** यदि शोध प्रबन्ध में किसी प्रकार के मानचित्र, लेखाचित्र अथवा अन्य प्रकार के चित्रणों का प्रयोग हुआ हो, चित्रों की सूची तथा सारणी सूची के रूप में भी उसी प्रकार प्रथम पृष्ठ पर बनायी जाती है, लेकिन हिन्दू अरबी संख्याओं का प्रयोग अवश्य होता है ।

उदाहरण स्वरूप प्रारूप नीचे दिया गया है -

विषय सारणी

(Table of Content)

प्राक्कलन/प्रस्तावना (Preface) पृष्ठ संख्या

तालिका सूची (List of Table)

आकृति तथा चित्रण सूची (List of Figures)

(7) **सारांश एवं निष्कर्ष (Summary and conclusion) -** कई विश्वविद्यालय/संस्थाऐं ये चाहते है कि शोध प्रबन्ध के साथ-साथ समस्त अध्ययन का सारांश भी दिया जाये । अध्ययन का लक्ष्य, क्षेत्र तथा विधि की रूपरेखा, निष्कर्ष, सामान्यीकरण एवं सुझाव बहुत ही संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत किया जाता है उसे ही सारांश कहा जाता है ।

31.3.3.2 शोधप्रबन्ध का मुख्य भाग (Main body of Report) - शोध प्रबन्ध के मुख्य भाग का गठन सबसे अधिक महत्वपूर्ण होता है । अपने समस्त शोध प्रबन्ध में आवश्यक बिन्दुओं के सम्बन्ध में विचार-विमर्श करते समय तथा उन्हे अपने कार्य तथा विषय के अनुरूप तार्किक क्रम में लिखते समय शोधकर्ता को निरन्तर अपनी निर्णय शक्ति का प्रयोग करना पडता है । इस मुख्य भाग के पुन: उपभाग किये जाते है जो कि निम्नलिखित है -

(1) **भूमिका (Introduction) -** शोध प्रबन्ध का यह भाग भी महत्वपूर्ण होता है जो अध्ययन सम्बन्धी विवरण प्रस्तुत करता है । वास्तव में इस अध्याय में निम्नलिखित प्रवृति के तत्वों का तार्किक विधि से विचार विमर्श किया जाता है -

(i) समस्या कथन

(ii) उद्देश्य

(iii) परिकल्पना

(iv) समस्या का औचित्य

(v) अवधारणा एवं परिसीमन

(vi) तकनीकी शब्दों का परिभाषीकरण

(2) **सम्बन्धित साहित्य का पुनरावलोकन (Review of Related Literature) -** इस अध्याय से इस तथ्य के संकेत मिलते है कि दूसरों के द्वारा अब तक पहले ही कितना अध्ययन किया जा चुका है, जो कि शोध कर्ता की समस्या पर आधारित होता है । इसके द्वारा यह पता चलता है कि वर्तमान अध्ययन और अधिक योगदान अथवा प्राप्त ज्ञान में निर्धारित अध्ययन किए क्षेत्रों में किस प्रकार वृद्धि करता है)

इसके अन्तर्गत शोध कार्यो के विवरण भी सम्मिलित होते है जिनमें इसी प्रकार की विचारधाराओं, मन्त्रों तथा प्रविधियों का सफलता से प्रयोग किया गया है । उनका उपयोग शोधकर्ता अपने शोध कार्य में प्रयोग करता है । ये सभी विचार-विमर्श शोध कार्य के लिए पृष्ठ भूमि तैयार करते है ।

(3) **अध्ययन का प्रारूप (Design of the study) -** इसके अन्तर्गत शोध कार्य में प्रयोग की गई विधियों तथा प्रविधियों तथा प्रदलो के संकलन करने के लिए प्रयुक्त यंत्रो अथवा विधियों के सम्बन्ध में व्यवस्था का समावेश होता है ।

न्यादर्श का चयन, प्रयोगात्मक अभिकल्प, प्रदत्तों केर स्त्रोत, प्रदत्तों के अंकन की विधि इत्यादि इसके अन्तर्गत उल्लेखित किये जाते है ।

(4) **तथ्यों का प्रस्तुतीकरण एवं विश्लेषण (Presentation and Analysis of Data)** उपयुक्त विधियों द्वारा एकत्रित किए गए प्रदत्तों पर आधारित सभी परिणामों का इस अध्याय में विवरण होता है । इसी अध्याय में तथ्यों को प्रस्तुत करने वाली सारणियों का भी विश्लेषण उनके साथ-साथ प्रस्तुत किया जाता है ।

(5) **निष्कर्ष (conclusion) -** यह अत्यन्त महत्वपूर्ण भाग है । चूंकि शोद्ध प्रबन्ध का यह अन्तिम भाग होता है अत: शोद्ध से सम्बन्धित परिणामों तथा सुझावों का वर्णन इसमें किया जाता है । परिणामों (Results/Finding) की परिसीमाए एवं उपयोगिता का भी वर्णन इसमें किया जाता है । इसमें मुख्य रूप से शोध समस्या का समाधान या शोध सम्बन्धी प्रश्नों के प्रतिउत्तरों का वर्णन भी होता है । परिणामों की वैधता भी दर्शायी जाती है । भावी अध्याय के लिए सुझाव भी दिये जाते है ।

31.3.3. सन्दर्भ भाग (Reference Section) - इसके अन्तर्गत तीन भाग होते है । ये तीनों भाग अलग- अलग पृष्ठों पर लिखे जाते है तथा बड़े अक्षरों में पृष्ठों के मध्य भाग में लिख जाता है ।

(1) **संदर्भ ग्रन्थ (Bibliography) -** इसमें वे सब संदर्भ कृतियों आ जानी चाहिये जिनका कि शोद्ध -विवरण में उल्लेख किया गया है इनके अतिरिक्त अन्य सामग्रियों अथवा प्रसंगों के महत्वपूर्ण स्त्रोतों का संकेत हो जाना चाहिए । यदि सूची अत्यधिक बडी हो तो ग्रन्थ-सूची को निम्नलिखित भागो में विभक्त कर देना चाहिए ।

- पुस्तकें
- शोध ग्रन्थ एवं विशिष्ट चित्र

- हस्तलिपि तथा विवरण
- सामायिक पत्रिकायें
- निबन्ध तथा लेख
- अप्रकाशित सामग्री (शोध प्रबन्ध इत्यादि)
- समाचार पत्र

संदर्भ ग्रन्थ सूची में वर्णमाला क्रमानुसार ही नामों का उल्लेख किया जाता है । लेखक के नाम के अन्तिम भाग (उपनाम) को पहले लिखा जाता है । उसके पश्चात् प्रकाशन का वर्ष, पुस्तक का शीर्षक, प्रकाशक का नाम, स्थान, पृष्ठों की संख्या लिखी जाती है ।

उदाहरण -

(1) Best, John,W(1977)= Research in Education, 3rd ed.

New Jersey, Prentice-Hall Inc. Engle wood cliffs-403p.p.

परिशिष्ट (Appendix)- संदर्भ भाग का यह एक महत्वपूर्ण भाग है। इसके अन्तर्गत वो आती है जिसकी तर्कसंगत ढंग से शोध प्रबन्ध के प्रमुख भाग के एसजीटीएच नहीं लगाया गया है। जो सामग्री न्यूनतम महत्व की है जिसे प्रपत्र, सूची, प्रश्नावली पत्र, स्मृति पत्र, साक्षात्कार, सम्बन्धी पत्र, विस्तृत सारणी या मानचित्र, लंबे प्रश्न, फोलोअप वर्क, व्योक्तिक अध्ययन इत्यादि।

सबसे पहले उपकरण तथाअन्य सामग्रियों को लगाना चाहिए। तत्पश्चात सरणियोंको रखा जाना चाहिए. पृष्ट संख्या रोमन संख्या (I, ii, lv) में लिखी जानी चाहिए।

परिशिष्ठ सोध प्रबन्ध के सम्बन्ध में स्पष्टता एवं प्रामाणिकता को दर्शाता है।

सूचंक (Index)- शब्दकोष या विषय सूची का निर्माण सावधानीपूर्वक वर्णमाला क्रम के अनुसार तैयार की जानी चाहिए।

31.4 शोध प्रबन्ध लेखन की प्रविधि (Techniques ofReport Writing)

शोध प्रबन्ध लेखन का काम अत्यन्त मत्वपूर्ण है। शोध प्रबन्ध की गति का प्रवाह बनाये रखने के लिए सही तकनीकी को काम में लाया जाना चाहिए । इस उदेश्य से विभिन्न साधनो द्वारा शोध प्रबन्ध की रूपरेखा को निर्मित करने के लिए ऐसे मानक निर्धारित किये गये है, जिन्हें साधारणतया: सभी ने अनुमोदित किया है प्रत्येक शोधकर्ता से यह आशा की जाती हैकि वह सत्कर्तापूर्वक तथा यंत्रवत इन विवरणो अथवालेखन की तकनीकी का अनुसरण करें। जो कि निम्न लिखित है-

(i) पद टिप्पणी Foot notes)- प्रत्येक उदाहरण की पद टिप्पणी होनी चाहिए जिसमे इस बात का संकेत हो कि उन्हे किन स्त्रोतों से प्रपट किया गया है। सोध करी में बोद्धिक निष्ठा के रूप मे प्रस्तुत किया जाता है। पद टिप्पणी के माध्यम से सोधकर्ता अपने सोध कार्य में विभिन्न प्रकार लिखित सामग्री मे से काम में ली गई सामग्री का विवरण प्रस्तुत कर सकता है जिससे काम ली गई सामग्री की authenticity और accurancy के सम्बन्ध मे पढ़ने वालो को कही शंका ना रहे। ओर अन्य लोग उन स्त्रोतों के बारे मे भी जान जाते है, जहाँ से वो उदाहरण इत्यादि काम लिये गये है।

पद टिप्पणी पृष्ट के सबसे नीचे वाले भाग मे दी जाती है और यह मुख्य वस्तु से अलग हटकर प्रस्तुत की जाती है। एक पाठ की पद-टिप्पणी को क्रमानुसार अंकित की जाती है। कई बार प्रत्येक अध्याय के अन्त मे एक पृष्ठ पर सभी संदर्भ/ पद टिप्पणियों को एक साथ भी दे दिया जाता है। विषयवस्तु को डबलस्पेस (double Space) मे जबकि उदाहरण सिंगल स्पेस (Single space) मे लिखा जाता है।

(i) पद-टिप्पणी मे लेखक का नाम, प्रथम नाम के पश्चात उसका अन्तिम नाम (उपनाम) लघु विराम सहित लिखा जबें

(ii) प्रकाशन का वर्ष

(iii) कृति का शीर्षक जिसके नीचे पंक्ति खीची हो उसके बाद लघु विराम।

(iv) प्रकाशन का स्थान जिसके पश्चात कोलन लिखा हुआ हो।

(v) प्रकाशन संख्या का नाम जिसके पीछे लिघु विराम का प्रयोग किया गया हो।

(vi) निश्चित पृष्ठ संख्या या संखाये जिनके पश्चात विराम चिन्ह लगा हो ।

उदाहरण:

(1) एक लेखक-

John (West (1977), research in Education 3rd ed.

New jersey : Prentice - Hall, Inc. Englewood Cliff, 84p

(2) दो लेखक होने पर

J.H. Me. Granth and D.Gere Wattson (1970), Research Methods and Design for Education, Pennsylvania International Text Book Company, 124P.

(vii) सारणी तथा आकृति की पद-टिप्पणी को एक ही स्थान छोड्कर उसके नीचे ही अंकित करना चाहिए ।

ग्रंथ सूची तथा पद-टिप्पणियों में पुनरावृत्तियों से बचने के लिए कुछ संक्षिप्त तत्वों का प्रयोग किया जाता है जैसे-

(अ) वही (Ibid) - निरन्तर एक ही कृति के प्रसंगो का उद्वरण करने में कठिन भाषा के संक्षिप्त आइबिड (इसका अर्थ है वही) का प्रयोग किया जाताहै । यदि पृष्ठ संख्या भिन्न हो तो संक्षिप्त तत्व के तुरन्त पश्चात् पृष्ठ संख्या अंकित होनी चाहिए ।

(ब) पूर्वाकित (OP.Ci) - जब किसी संदर्भ का प्रयोग (क्रमानुसार) लगातार न होकर बाद में वापस उसी संदर्भ का प्रयोग किया जाता है तो लेटिन शब्द ओप. सिट. (जिसका अर्थ है वही रचना जिसका पूर्व उद्वरण हो) का प्रयोग किया जाता है । विशेषत: उस अवस्था में जबकि विभिन्न पृष्ठों के प्रसंगों मे उसका समावेश हो, पृष्ठ संख्या दी जाती है तथा लेखक का अन्तिम नाम (उपनाम) संक्षिप्त शब्द से पहले आता है ।

उदाहरण - भट्टाचार्या, पूर्वाकित (OP.Ci) पृष्ठ संख्या 16

(स) लोक.सिट (Loc.cit) - जब किसी भी रचना के प्रसंग के अनुसार उल्लेख नही होता परन्तु सभी ग्रन्थ तथा पृष्ठ के अनुकूल होता है तो लैटिन भाषा का संक्षिप्त शब्द लोक सिट (जिसका अर्थ है उद्दवरित स्थान) का प्रयोग होता है, लेखक का अन्तिम नाम (उपनाम) ही संक्षिप्त शब्द के पूर्व में आता है ।

उदाहरण - चतुर्वेदी, (Loe.cit) (पहले पृष्ठ सं. 50 पर)

(ii) **शीर्षक तथा उपशीर्षक (Heading and Sub heading) -** शोध प्रबन्ध कई अध्यायों में विभक्त होती है । प्रत्येक अध्याय का शीर्षक होता है । उसे पृष्ठ पर बडे अक्षर में तथा बीच में लिखा जाता हैं । अध्याय के शीर्षक को 'अध्याय' के तीन स्थान नीचे रखा जाता है।

अध्याय - दो

प्राथमिक शिक्षा का इतिहास

मुख्य शीर्षक (Main Heading) - जहाँ कहीं भी शोद्ध प्रबन्ध के मुख्य भाग होते है उनके शीर्षक भी पृष्ठ के मध्य से बडे अक्षरों में लिखा जाना चाहिए ।

लघु शीर्षक (Minor Heading) - यह पृष्ठ के बायी तरफ से प्रारम्भ होता है । इस शीर्षक के उपरान्त दो स्थानों को छोडकर अनुच्छेद प्रारम्भ होता है तथा पांच स्थानों तक सीमित रहता है ।

अनुच्छेद शीर्षक (Paragraph Heading) - इस प्रकार के शीर्षक के उपरान्त पूर्ण विराम चिन्ह तथा अवरोध (dash) पंक्ति का प्रयोग किया जाता है तथा इनको पांच स्थान से सीमित करके रेखांकित किया जाता है और लिखित सामग्री इसी पंक्ति से प्रारम्भ होती है ।

शोध प्रबन्ध में शीर्षक - उपशीर्षक को क्रमांक अंको द्वारा प्रदान किया जाता है ।
जैसे- मुख्य शीर्षक को - 1,2,3 में लिखा जायेगा ।

लघु शीर्षक को - 11, 12, 13 इस क्रम में लिखा जायेगा ।

अनुच्छेद शीर्षक को - 1, 1, 1, 1, 1 .2, 1. 1. 3 इस क्रम में लिखा जायेगा ।

तालिकाएं (Tables) - शोध प्रबन्ध में एकत्रित प्रदत्तों को व्यवस्थित ढंग से प्रस्तुत करने के लिए सारणीयन की सहायता ली जाती है । सारणी ऐसी हो जिसको देखकर ही पाठक समझ सकें । सारणी शब्द पृष्ठ के मध्य में लिखा जाना चाहिए तथा इसका क्रमांक रोमन अक्षरों में, जो कि दो स्थान छोडकर लिखा जाना चाहिए । सारणी का शीर्षक बडे अक्षरों में तथा पृष्ठ के मध्य में लिखा जाना चाहिए । यदि शीर्षक दो या अधिक पंक्तियों में होता है, तो इसकी आकृति उल्टे त्रिकोणात्मक शंकु के समान होगी ।

सारणी में सांख्यिकी प्रदत्तों को क्षैतिज पंक्तियों (Horizontal rows) तथा लम्बवत स्तम्भों (Vertical Columns) में दर्शाया जाता है तथा इनके भी शीर्षक होते है ।

उदाहरण

सारणी-X

न्यादर्श का चयन

विद्यालयों के प्रकार के आधार पर

कक्षा	सरकारी विद्यालय की संख्या	निजी विद्यालय की संख्या

VI	20	20
VII	20	20

आकृतियाँ (Figures) - शोध प्रबन्धों में रेखाचित्र, ग्राफ, फोटोग्राफ, मानचित्र, चार्ट, चित्र इत्यादि का प्रयोग भी किया जाता है । प्रत्येक चित्रण स्पष्ट, सरल एवं बोधगम्य होना चाहिए । केवल एक ही तथ्य या विचार को एक ही चित्र द्वारा प्रदर्शित किया जाना चाहिए ।

आकृति का वर्णन मुख्य भाग, में भी किया जाना चाहिए तथा उसे उस पृष्ठ पर दर्शाया जाना चाहिए ।

'आकृति या चित्र - शब्द को पृष्ठ के मध्य के ऊपरी भाग में बडे अक्षर में लिखा जाना चाहिए । आकृति का शीर्षक 'आकृति'/ चित्र शब्द के दो स्थान नीचे लिखा जाना चाहिए । आवश्यकता होने पर आकृति/ चित्र के पैमाने, सन्दर्भ इत्यादि का उल्लेख किया जाना चाहिए ताकि उसकी वैधता स्थापित की जा सके ।

पृष्ठांकन (paging) - शोध प्रबन्ध के प्रत्येक पृष्ठ पर क्रम संख्या प्रदान करना लेखक, पाठक एवं जिल्द बांधने वाले के लिए अत्यन्त आवश्यक है । शोध प्रबन्ध में शीर्षक पृष्ठ तथा प्रारम्भिक पृष्ठ (किसी भी अध्याय का) को क्रम संख्या प्रदान नही की जाती है यद्यपि पृष्ठो के क्रम में इस पृष्ठ को भी गिना जाता है । पृष्ठ संख्याएँ पृष्ठ के ऊपरी भाग के (एक इन्च पृष्ठ के अन्तिम भाग से नीचे) दाहिनी तरफ लिखी जाती है । ये हिन्दू अरबी लिपी में लिखी जाती है।

शोध के प्रारम्भिक भाग (Preliminary Section) के पृष्ठों के लिए रोमन संख्याएँ प्रयोग में लायी जाती है । जबकि शोध प्रबन्ध के मुख्य भाग (Proof Reading) के लिए हिन्दू अरबी संख्या (1, 2, 3, 4) का प्रयोग किया जाता है । परिशिष्ट के लिए भी रोमन संख्या का प्रयोग किया जाता है । सही पृष्ठांकन अन्तिम चरण में होना चाहिए ।

प्रूफ रीडिंग (Proof Reading) - शोध प्रबन्ध में किसी भी प्रकार की त्रुटि नही पाई जानी चाहिए । इसके लिए टाइप किए हुए शोध प्रबन्ध को ध्यानपूर्वक पढा जाना चाहिए । टाइप (टंकण) सम्बन्धित त्रुटियां का निवारण किया जाना चाहिए । ये प्रूफ रीडिंग दो-तीन बार की जानी चाहिए । इसमें शोध प्रबन्ध की टाइप की हुई प्रति को ध्यानपूर्वक पढकर उसकी त्रुटियों को अलग से एक पृष्ठ पर विशिष्ट ढंग से अंकित कर ली जानी चाहिए । जैसे अध्याय संख्या, पृष्ठ संख्या, पैरेग्राफ किसी प्रकार की त्रुटि है इत्यादि ।

जिल्द बांधना तथा जमा कराना (Binding and Submission) - यह सम्पूर्ण प्रक्रिया का अन्तिम चरण है । कुछ विश्वविद्यालय जिल्द बांधने के सम्बन्ध में विशिष्ट प्रकार के आदेश भी देते है । ऐसे में शोधकर्ता को उनकी पालना करनी चाहिए अन्यथा एक अनुभवी जिल्द बांधने वाले का चयन करना चाहिए । जिल्द के लिए देने से पूर्व शोध प्रबन्ध को अध्याय क्रम मे व्यवस्थित कर लेना चाहिए । जिल्द बांधने के समय यह जांच लेवे कि शोधकार्य का शीर्षक वही है जो कि 'शोध समिति' के द्वारा अनुमोदित किया गया है । ऊपरी आवरण पृष्ठ के अन्तर्गत निम्न तथ्य होते है ।

(अ) ऊपर की ओर बडे अक्षरों में शोध प्रबन्ध का शीर्षक ।

(ब) उपाधि तथा विश्वविद्यालय का नाम जिसमें उसे जमा करवाना है । ये या तो मध्य में होगा या फिर नीचे की तरफ ।

(स) 'विद्यार्थी का नाम' जिसके नीचे वर्ष का भी उल्लेख होगा ।

जिल्द होने के पश्चात् शोध प्रबन्ध की जांचकर उसे सम्बन्धित विश्वविद्यालय में जमा कराना होता है । शोध प्रबन्ध को निर्धारित समय पर ही जमा करा देना चाहिए तथा जमा कराने की रसीद भी प्राप्त कर ली जानी चाहिए ।

31.5 शोध प्रबन्ध की लेखन शैली (Style of Writing Report):

शोध प्रबन्ध को लिखते समय निम्न बातों का विशेष ध्यान रखें :

(1) शोधकर्ता को अपने परिणामों की विस्तृत जानकारी देनी चाहिए जिनकी समालोचना तथा जांच की जा सके ।

(2) शोध प्रबन्ध भूतकाल (Past tense) तथा तृतीय पुरूष (Third Person) में लिखा जाना चाहिए ।

(3) शोध प्रबन्ध में वैज्ञानिक भाषा (Scientific Language) का प्रयोग किया जावे बजाय साहित्यिक भाषा (Literacy language) के ।

(4) शोध प्रबन्ध की विषय वस्तु में एक प्रवाहशीलता Floating sequence) तथा क्रमबद्धता (Consistency) तथा विषय वस्तु में संगठन भी होना चाहिए ।

(5) शोध प्रबन्ध के लिए एक उपयुक्त (Appropriate) तथा पर्याप्त (Proper) प्रारूप (Format) का उपयोग किया जाना चाहिए ।

(6) पद टिप्पणियाँ, संदर्भ, तालिकाएं. शीर्षक एवं उपशीर्षक इत्यादि सभी को एक प्रामाणिक ढंग से प्रस्तुत किया जाना चाहिए ।

(7) शोध प्रबन्ध को टाइप अनुभवी एवं कुशल व्यक्ति से ही करवाया जाना चाहिए । कुछ टाइपिस्ट केवल शोध कार्यो से सम्बन्धित कार्य करते है उन्हे ही यह कार्य सौंपा जावे क्योंकि शोध टाइप के नियम इत्यादि की पूरी जानकारी उसे होती है ।

(8) शोध प्रबन्ध को बॉन्ड पेपर (Bond Paper) जिसका आकार 11" 9" पर टाइप किया जाना चाहिए । शोध प्रबन्ध में पृष्ट पर बायी तरफ 1"-1/2" तथा दायीं तरफ 1" का स्थान छोड़ दिया जाना चाहिए । पृष्ठ के ऊपरी भाग तथा नीचे के तरफ एक-एक इंच जगह छोडी जानी चाहिए । एक ही टाइपिंग मशीन का प्रयोग पूरे प्रबन्ध को टाइप करते समय काम में लिया जाना चाहिए ।

(9) एक अच्छे शोध प्रबन्ध लेखन के लिए जल्दबाजी नही की जानी चाहिए । एवं अनुभवी शोधकर्ता शोध प्रबन्ध को दो-तीन बार अच्छी तरह से पढ़ता है फिर टाइपिंग के लिए देता है।

31.6 शोध प्रबन्ध का मूल्यांकन (Evaluation of a Research Report):

शोध प्रबन्ध का मूल्यांकन कर यह देखा जाता है कि शोध प्रबन्ध कितने अच्छे ढंग से किया गया है। इसके अन्तर्गत निम्न तथ्य आते है ।

(1) शीर्षक (The Title) - (अ) क्या शीर्षक संक्षिप्त एवं स्पष्ट है ।

(2) समस्या (The Problem) -

(अ) क्या यह स्पष्ट रूप से है?

(ब) क्या इसकी सीमांकन सही ढंग से किया है।

(स) इसकी सार्थकता कितनी है?

(द) क्या विशिष्ट प्रश्न पूछे गये है तथा उनसे सम्बन्धित 'परिकल्पनाएँ' बनाई गई है?

(य) क्या महत्वपूर्ण तकनीकी शब्दों को परिभाषित किया गया है।

(3) सम्बन्धित साहित्य का पुर्नमूल्यांकन (Review of Related Literature)

(अ) क्या ये साहित्य पर्याप्त है ।

(ब) क्या इन शोध से सम्बन्धित महत्वपूर्ण परिणामों को अंकित किया गया है।

(स) क्या यह शोध पूर्व में किये गये अन्य शोधो से अलग नवीन जानकारी प्रदान करेगी

(द) क्या ये साहित्य पूर्ण ढंग से व्यवस्थित है।

(4) विधि (Methodology)

(अ) क्या शोध प्रारूप का विस्तृत उल्लेख किया गया है?

(ब) क्या अपनाई गई विधि पर्याप्त है?

(स) क्या जनसंख्या को सही ढंग से परिभाषित किया है?

(द) क्या प्रतिदर्श का सही ढंग से चयनित किया गया है?

(य) क्या प्रासंगिक चरो को पहचाना गया है?

(र) क्या प्रदत्तों के संकलन के लिए सही उपकरण को चुना गया है?

(ल) क्या इनकी वैद्यता एवं विश्वसनीयता निश्चिता/स्थापित की गई है?

(5) प्रदत्तों का विश्लेषण (Analysis of Data)

(अ) क्या सारणियां एवं आकृतियों का उपयोग सही ढंग से किया गया है।

(ब) क्या तथ्यों का विश्लेषण सही ढंग से किया गया है?

(स)क्या प्रदत्तों का विश्लेषण तर्कसंगत ढंग से किया गया है?

(द) क्या सांख्यिकी विश्लेषण सही ढंग से विश्लेषित किया गया है?

(6) निष्कर्ष एवं सुझाव (Conclusions and Suggestions)

(अ) क्या परिणामों की विवेचना उपयुक्त एवं विस्तृत तरीके से की गई है?

(ब) क्या उपयुक्त तरीके से निष्कर्ष निकाले गये है?

(स) क्या परिणामों (finding/results) के अनुप्रयोग (application)के बारे में पर्याप्त सुझाव दिये गये है।

(द) क्या परिणामों की परिसीमाओं का उल्लेख किया गया है?

(य) क्या अग्रिम शोध कार्यो के लिए कोई पर्याप्त सुझाव दिये गये है?

इसके अलावा भाषा सम्बन्धी त्रुटियां, प्रस्तुतीकरण का ढंग, टाइपिंग की त्रुटियां इत्यादि पर भी विचार किया जाता है । अत: शोधकर्ता को शोध प्रबन्ध लिखते समय इन सभी बातों को क में रखकर कार्य करना चाहिए ।

31.7 साराश (Summary):

शोध कार्य की समाप्ति पर किये गये कार्य को लिखित रूप में प्रस्तुत किया जाता है जिसे शोध प्रबन्ध (Research Report) कहा जाता है । इसके अन्तर्गत समस्त शोध कार्य का लिखित विवरण रहता है । जैसे-समस्या, विधि, परिसीमाएं, प्रतिदर्श एवं तथ्यों का विश्लेषण इत्यादि ।

शोध प्रबन्ध प्रस्तुत करने का तरीका विभिन्न विश्वविद्यालयों में थोड़ा बहुत अलग हो सकता है लेकिन सर्वसम्मति से एक प्रारूप (Format) का निर्माण किया गया है ।

प्रारूप के अनुसार शोध प्रबन्ध लिखने के पश्चात् उसे टाइप के लिए दिया जाता है उस समय भी अनेक बातों को ध्यान में रखा जाता हैं

एक शोध प्रबन्ध के मूल्यांकन कार्य किया जाता है जिससे पता लगता है कि यह शोध प्रबन्ध कैसा है।

31.8 स्वमूल्यांकन (Self-Assessment)

1. शोध प्रबन्ध के प्रारूप का चित्र बनावे और उसे स्पष्ट करें ।
   Draw a sketch of format of Research Report and Explain?
2. शोध प्रबन्ध लेखन की आवश्यकता का वर्णन कीजिए ।
   Describe the need of Research report?
3. शोध प्रबन्ध का आप मूल्यांकन कैसे करेगें 7
   How will you evaluate the research report?

31.9 सन्दर्भ (References)

1. Best, J.W.:Research in Education
2. Sharma, R.A.: Fundamental of Educational Research.

ISBN - 13/978-81-8496-074-7